प्रकाशक :

देवप्रिय वलीसिंह

मंत्री,

महाबोधि सभा, कलकत्ता

मुद्रक

मोहनलाल भट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेस, वर्धा

* * *

•

विद्यालकारपरिवेणाधिपति

किरिवत्तुडुवे पञ्ञासार नायकमहास्थविर पादयन्वहंसे

वेतटयि

•

प्रकाशकीय

पवित्र पालि-त्रिपिटकके सुत्त पिटकके पाँच निकायोमे अगुत्तर-निकायका विशिष्ट स्थान है। शेष चार निकायोका अधिकाश भाग अनूदित हो चकने पर भी अंगुत्तर-निकाय अभी तक हिन्दीमे अनूदित नही ही हुआ था। हम भदन्त आनन्द कौसल्यायनके चिर-कृतज्ञ है कि उन्होने 'जातक' जैसे महान अनुवाद-कार्यको समाप्त कर अब अगुत्तर-निकायके अनुवाद-कार्यको हाथमे लिया और हमे यह सूचना देते हुए हर्ष होता है कि प्रथम-भाग और दूसरे-भागके अनन्तर उन्होने तीसरा-भाग और चौथा-भाग भी समाप्त कर दिया है। पहले और दूसरे भागके अनन्तर यह तीसरा भाग पाठकोके हाथमे है। चौथे और अतिम भागकी भी वे शीघ्र ही प्रतीक्षा कर सकते है।

हम केन्द्रीय सरकारके भी कृतज्ञ है जिसकी कृपासे हमे शास्त्रीय ग्रन्थोके मूल तथा अनुवाद छापनेके लिये चार हजार रुपये वार्षिकका अनुदान प्राप्त है।

यदि हमे यह सरकारी अनुदान प्राप्त न हो तो हमे इसमे बडा सन्देह है कि हम इस पवित्र कार्य को करनेमे समर्थ सिद्ध होगे।

४ ए, बकिम चटर्जी स्ट्रीट,
कलकत्ता—१२

मत्री
महाबोधि सभा

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स

प्रस्तावना

अंगुत्तर-निकायके प्रथम-भागका अनुवाद १९५७ ई मे प्रकाशित हो गया था। द्वितीय-भागका अनुवाद पूरे छह वर्षके वाद १९६३ ई. मे ही प्रकाशित हो सकता था। अब तीसरे-भागका अनुवाद १९६६ ई में प्रकाशित हो रहा है। सापेक्ष दृष्टिसे इसे जल्दी ही मानना चाहिए।

सूत्र-पिटकमें जो पांच निकाय है, यद्यपि अगुत्तर-निकाय स्वय उनमेंसे एक निकाय है, लेकिन कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि अन्य निकायोमे जो देशना है उसीको अकोत्तर-वृद्धि-क्रमसे व्यवस्थित कर उसे एक पृथक निकायका नाम दे दिया गया है।

ठीक-ठीक ऐसा भी नही कहा जा सकता, क्योकि कालाम-सूत्र जैसे अनेक सूत्र ऐसे भी है, जो 'अगुत्तर-निकाय' की अपनी निधि मालूम देते है।

अभी तो नागरी अक्षरोमे मूल त्रिपिटकका अध्ययन-अध्यापन आरम्भ ही हुआ है। इस प्रकारकी विश्लेषणात्मक जिज्ञासाओकी शान्तिके लिए हमें उस समयकी प्रतीक्षा करनी होगी, जब इस देशमे त्रिपिटकके भी विवेचनात्मक अध्ययनकी परम्परा दृढ होगी।

'तृतीय-भाग' का अनुवाद तो बहुत पहले हो चुका था। ठीक बात तो यह है कि 'चतुर्थ-भाग' का अनुवाद भी कबसे पूरा हो चुका है, लेकिन जब प्रेस वर्धामें हो, प्रकाशक कलकत्तामे हो और स्वय अनुवादक सिहल-द्वीपमे हो तो किसी भी ग्रन्थके मुद्रण-प्रकाशनमें अधिक समय लगना स्वाभाविक है।

'राष्ट्रभाषा-प्रेस' शेष दो भागोकी तरह इसे भी अनेक आकस्मिक बाधाओके बावजूद छाप सका, इसके लिए मै प्रेसके मैनेजर श्री देशपाण्डेय जी का कृतज्ञ हूँ।

सम्भवतः यह अभी भी प्रकाशित न हो पाता, यदि राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके श्री राधेश्याम सिंह गौतम, एम ए ने इधर इसके प्रूफ देखनेकी जिम्मेदारी अपने सिर न ले ली होती। मैं तो उनका ऋणी हूँ ही, पाठकोंके भी वह धन्यवादके पात्र हैं।

मेरे प्रमादसे इस भागमें एक-एक निपातके सूत्रोंको उनके संख्या-क्रमसे पृथक-पृथक नहीं दिया जा सका। जब आरम्भमें एकाध फार्म छप गया, तब एक-रूपताके लिए सारी पुस्तकको उसी तरह छपवाना अनिवार्य हो गया।

'अनुक्रमणिका' की भी कमी एक बड़ी कमी है। वह और अधिक विलम्बका कारण हो सकती है। सम्भव हुआ तो अन्तिम चतुर्थ-भागके साथ शेष तीनों भागोंकी भी अनुक्रमणिका देनेका प्रयास किया जायगा।

महाबोधि सभाके मन्त्री, श्री देवप्रिय वलीसिंहका मैं विशेष कृतज्ञ हूँ, क्योंकि सारे अंगुत्तर-निकायको हिन्दी-रूपमें प्रकाशित करानेका सारा श्रेय उन्हींको है।

विद्यालंकार विश्वविद्यालय
कैलानिय (श्री. लंका)
५-२-६६

आनन्द कौसल्यायन

अंगुत्तर निकाय

तीसरा भाग

पाँचवाँ निपात

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

प्रथम पण्णासक

१. आहुणेय्य-वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथ-पिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ।" उन भिक्षुओंने भगवान्को प्रत्युत्तर दिया—"भदन्त।" भगवान्ने यह कहा—"भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोडकर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु जब आँखसे किसी रूपको देखता है तो उसके मनमें न राग ही उत्पन्न होता है और न द्वेष ही उत्पन्न होता है, वह स्मृति-प्रज्ञा सहित उपेक्षावान् हो विहार करता है। जब कानसे किसी शब्दको सुनता है . नाकसे किसी गंधको सूँघता है . जिह्वासे किसी रसको चखता है शरीरसे किसीका स्पर्श करता है तथा मनसे किसी विषयको ग्रहण करता है तो उसके मनमें न राग ही उत्पन्न होता है और न द्वेष ही उत्पन्न होता है, वह स्मृति-प्रज्ञा सहित उपेक्षावान् हो विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोडकर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।" भगवान्के ऐसा कहनेपर भिक्षुओंने उनके कथनका प्रसन्न चित्त हो अनुमोदन किया।

भिक्षुओ, जिन भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु नाना प्रकारकी ऋद्धियोंका स्वामी होता है—एकसे अनेक हो जाता है, अनेकसे फिर एक हो जाता है, प्रकट हो जाता है, छिप जाता है, दीवारके पार, प्राकारके पार, पर्वतके पार उन्हें छूता हुआ चला जाता है, जैसे आकाशमें, पृथ्वीपर भी तैरना-डूबना करता है जैसे पानीमें; पानीके भी ऊपर चलता है जैसे पृथ्वीपर, आकाशमें भी पालथी मारकर जाता है जैसे कोई पक्षी हो, इस प्रकारके ऋद्धिमान्, इस प्रकारके चन्द्र-सूर्यको भी हाथसे छूता है, ब्रह्म लोक तक भी सशरीर पहुँच जाता है।

वह दिव्य श्रोत-धातुसे, विशुद्ध श्रोत-धातुसे, अलौकिक श्रोत-धातुसे दिव्य तथा मानुष दोनों प्रकारके शब्दोंका श्रवण करता है, दूर तथा समीपके।

वह दूसरे प्राणियोंके, दूसरे व्यक्तियोंके चित्तको अपने चित्तसे जान लेता है, राग-युक्त चित्त होनेसे जान लेता है कि यह राग-युक्त चित्त है, राग-विमुक्त चित्त होनेसे जान लेता है कि यह राग-विमुक्त चित्त है, द्वेष-युक्त चित्त होनेसे . .. द्वेष-विमुक्त चित्त होनेसे, मोह-युक्त चित्त होनेसे ..... मोह-विमुक्त चित्त होनेसे, एकाग्र-चित्त होनेसे . ... विक्षिप्त चित्त होनेसे, ... विशाल चित्त होनेसे . ... क्षुद्र चित्त होनेसे .. श्रेष्ठतम चित्त न होनेसे . . श्रेष्ठतम चित्त होनेसे .. .. समाहित चित्त होनेसे . ..असमाहित (=अस्थिर) चित्त होनेसे ..... विमुक्त चित्त होनेसे ... अविमुक्त चित्त होनेसे जान लेता है कि यह अविमुक्त-चित्त है।

वह अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है—जैसे एक जन्म भी, दो जन्म भी, तीन जन्म भी, चार जन्म भी, पाँच जन्म भी, दस जन्म भी, बीस जन्म भी, तीस जन्म भी, चालीस जन्म भी, पचास जन्म भी, सौ जन्म भी, हजार जन्म भी, लाख जन्म भी, अनेक संवर्त-कल्प, अनेक विवर्त-कल्प, अनेक संवर्त-विवर्त-कल्प—मैं अमुक स्थानपर था, यह नाम था, यह गोत्र था, ऐसा वर्ण था, ऐसा खाना था, इस प्रकारका सुख-दुःख भोगा था, इतनी आयु तक जीता रहा, फिर वहाँसे च्युत होकर अमुक जगह उत्पन्न हुआ, वहाँ भी यह नाम था, यह गोत्र था, ऐसा वर्ण था, ऐसा आहार था, ऐसा सुख-दुःख भोगा, इतनी आयु-पर्यंत, फिर वहाँसे च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ। इस प्रकार वह आकार तथा उद्देश्य सहित अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंका स्मरण करता है।

वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे च्युत होते तथा उन्त्पन्न होते प्राणियोको देखता है। वह निकृष्ठ-श्रेष्ठ, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त प्राणियोको जानता है—ये प्राणी शारीरिक दुष्कर्मसे युक्त है, वाणीके दुष्कर्मसे युक्त है, मनके दुष्कर्मसे युक्त है, आर्यो (= श्रेष्ठजनो)के निन्दक है, मिथ्या-दृष्टि है तथा मिथ्या-कर्मी है। ये शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, नरक, दुर्गति, दोजख-जहन्नुममे उत्पन्न हुए है अथवा ये प्राणी शारीरिक शुभ-कर्मसे युक्त है, वाणीके शुभ-कर्मसे युक्त है, मनके शुभ-कर्मसे युक्त है, आर्यो (= श्रेष्ठजनो) के प्रशसक है, सम्यक्-दृष्टि है तथा सम्यक्-कर्मी है। ये शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, सुगति, स्वर्ग लोकमे उत्पन्न हुए। इस प्रकार वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे च्युत होते तथा उत्पन्न होते प्राणियोको देखता है। वह निकृष्ठ-श्रेष्ठ, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त प्राणियोको जानता है।

वह आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमोक्ष, प्रज्ञा-विमोक्षको, इसी जन्ममे, यही जानकर, यही साक्षात् कर विहार करता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे यह छह बाते होती है, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे यह छह बाते होती है, वह सत्कारके योग्य होता है . . . लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह? वह श्रद्धा-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह वीर्य-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह स्मृति-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह समाधि-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह प्रज्ञा-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्तकी विमुक्ति, प्रज्ञाकी विमुक्ति, इसी शरीरमे स्वय साक्षात्कार, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे यह छह बाते होती है, वह सत्कारके योग्य होता है . लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, वह सत्कारके योग्य होता है . . . लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह? वह श्रद्धा-बलसे युक्त होता है, वह वीर्य-बलसे युक्त होता है, वह स्मृति-बलसे युक्त होता है, वह समाधि-बलसे युक्त होता है, वह प्रज्ञा-बलसे युक्त होता है, वह आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्तकी विमुक्ति, प्रज्ञाकी विमुक्ति, इसी शरीरमें स्वय साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे यह छह बातें होती है, वह सत्कारके योग्य होता है . . . . . लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोडेमें ये छह बातें होती हैं,वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अग ही गिना जाता है। कौनसी छह? भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोडा रूपोको सहन करनेवाला होता है,शव्दोको सहन करनेवाला होता है, गधोको सहन करनेवाला होता है, रसोको सहन करनेवाला होता है, स्पर्शोको सहन करने वाला होता है तथा रूप-सम्पन्न होता है। भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोडेमें यह छह बातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अग ही गिना जाता है। उसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है .. लोगोंके लिए अनुपम पुण्य क्षेत्र होता है। कौनसी छह वाते? भिक्षुओ, भिक्षु रूपोका सहन करने वाला होता है, शव्दोका सहन करने वाला होता है, गन्धोका सहन करने वाला होता है, रसोका सहन करने वाला होता है, स्पर्शोका सहन करने वाला होता है तथा धर्मों (=चिन्तन-विषयो) का सहन करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह वाते होती हैं वह सत्कारके योग्य होता है. . लोगोके लिए अनुपम पुण्य क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोडेमें ये छह वातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजा का भोग्य होता है, वह राजाका एक अग ही गिना जाता है। कौनसी छह? भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोडा रूपोको सहन करने वाला होता है, शव्दोको सहन करने वाला होता है, गन्धोको सहन करने वाला होता है, स्पर्शोको सहन करने वाला होता है तथा वल-सम्पन्न होता है। भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोडेमें ये छह वातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अग ही गिना जाता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह वातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है. . . . लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसी छह वातें? भिक्षुओ, भिक्षु रूपोका सहन करने वाला होता है, शव्दोका सहन करने वाला होता है, गन्धोका सहन करने वाला होता है, रसोका सहन करने वाला होता है, स्पर्शोका सहन करनेवाला होता है तथा धर्मो (=चिन्तन-विषयो) का सहन करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह वातें होती हैं वह सत्कारके योग्य होता है. . .. लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोडेमें ये छह वातें होती है, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अग ही गिना जाता है। कौन-सी छह? भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोडा रूपोको सहन करनेवाला होता है, शव्दोको सहन करने-वाला होता है, गन्धोको सहन करनेवाला होता है, रसोको सहन करनेवाला होता है,

स्पर्शोको सहन करनेवाला होता है तथा गति-सम्पन्न होता है। भक्षिुओ, जिस श्रेष्ठ घोड़ेमे ये छह वाते होती है, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अग ही गिना जाता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह वाते होती है, वह सत्कारके योग्य होता है . लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह वाते ? भिक्षुओ, भिक्षु रूपोका सहन करनेवाला होता है, शव्दोका सहन करनेवाला होता है, गन्धोका सहन करनेवाला होता है, रसोका सहन करनेवाला होता है, स्पर्शोका सहन करनेवाला होता है तथा धर्मों (=चिन्तन-विषयो) का सहन करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह वाते होती है, वह सत्कारके योग्य होता है लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम (वाते) है। कौन-सी छह ? श्रेष्ठतम दर्शन, श्रेष्ठतम श्रवण, श्रेष्ठतम लाभ, श्रेष्ठतम शिक्षा, श्रेष्ठतम परिचर्य्या तथा श्रेष्ठतम अनुस्मरण। भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम (वाते) है।

भिक्षुओ, ये छह अनुस्मृति-स्थान है। कौनसे छह ? वुद्धानुस्मृति, धर्मानुस्मृति, सघानुस्मृति, शीलानुस्मृति, त्यागानुस्मृति तथा देवतानुस्मृति। भिक्षुओ, ये छह अनुस्मृति-स्थान है।

एक समय भगवान् शाक्य (जनपद) के कपिलवस्तु नगरके न्यग्रोधाराममें विहार कर रहे थे। तव महानाम शाक्य[1] जहाँ भगवान थे, वहाँ आया। पास आकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर वैठा। एक ओर वैठे महानाम शाक्यने भगवान्से यह निवेदन किया—"भन्ते ! जिस आर्य-श्रावकने मार्ग-फल प्राप्त कर लिया है, जिसे शिक्षात्रय युक्त (वुद्ध-देशना) सुपरिचित है, वह वहुधा किस प्रकार विहार करता है, उसकी चर्या प्राय क्या होती है ?"

"महानाम ! जिस आर्य-श्रावकने मार्ग-फल प्राप्त कर लिया है, जिसे शिक्षात्रय युक्त (वुद्ध-देशना) सुपरिचित है, वह वहुधा इस प्रकार विहार करता है, उसकी चर्या वहुधा इस प्रकार होती है। हे महानाम ! वह आर्य-श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है कि वे भगवान् अर्हत् है, सम्यक् सम्वुद्ध है, विद्या तथा आचरणसे युक्त है, सुगति-प्राप्त है, लोकोके जानकार है, अनुपम है, (दुष्ट-) पुरुषोका दमन करनेवाले सारथी है, देवताओ तथा मनुष्योके शास्ता है, वे वुद्ध है, वे भगवान् है।

---

१ अट्ठकथाके अनुसार महानाम शाक्य भगवानके चचाका लडका था और एक शाक्य राजा (=सामन्त) था।

महानाम! जिस समय आर्य-श्रावक तथागत का अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त रागमुक्त रहता है, द्वेष (=दोष) मुक्त रहता है, मोहमुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु ही रहता है। हे महानाम! तथागतका ध्यान कर जिस आर्य-श्रावकका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-प्रीति प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय (=चित्त) शान्त होता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम! उसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह बुद्धानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम! आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है कि यह धर्म भगवान् बुद्धके द्वारा सु-आख्यात है, सादृष्टिक (=इसी लोकमे फल देनेवाला है), कालकी सीमासे परे है, इसके बारेमे यह कहा जा सकता है कि आओ और स्वय परीक्षा कर लो, ऊपर उठानेवाला है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा स्वय साक्षात् किया जा सकता है। महानाम! जिस समय आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-प्रीति प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त होता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह धर्मानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम! आर्य-श्रावक सघका अनुस्मरण करता है कि भगवान्का श्रावक-सघ सुप्रतिपन्न है, भगवान्का श्रावक-सघ ऋजु-प्रतिपन्न है, भगवानका श्रावक-सघ न्याय-प्रतिपन्न है, भगवान्का श्रावक सघ समीचीन मार्गपर प्रतिपन्न है, यह जो पुरुषोंके स्रोतापन्न मार्ग-फल-प्राप्त आदि चार जोडे है, यह जो आठ प्रकारके लोग है, यही भगवान्का श्रावक सघ है, यह सत्कार करने योग्य है, यह आतिथ्य करने योग्य है, यह दक्षिणाके योग्य है, यह हाथ जोडकर नमस्कार करनेके योग्य है, यह लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। महानाम! जिस समय आर्य-श्रावक सघका अनुस्मरण

करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष मुक्त रहता है, मोह मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-प्रीति प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त होता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम ! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमे आपन्न रहकर विचरता है। वह सघानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम ! आर्य-श्रावक अपने शीलका अनुस्मरण करता है, जो अखण्ड होता है, जो छिद्र रहित होता है, जो धब्बे रहित होता है, जो अकलुषित होता है, जो मुक्त होता है, जो विज्ञो द्वारा प्रशसित होता है, जो निर्मल होता है, जो समाधि-मार्गी होता है। महानाम ! जिस समय आर्य-श्रावक अपने शीलका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त रागमुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त रहता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम ! इसे ही कहते है कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमे आपन्न रहकर विचरता है। वह शीलानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम ! आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, वह सोचता है यह मेरे बडे लाभकी बात है, यह विशेष लाभकी बात है कि जो मै लोभ-मात्सर्यसे युक्त प्रजाके बीच रहता हुआ लोभ-मात्सर्यसे रहित होकर गृहस्थ-जीवन व्यतीत कर रहा हूँ—मुक्तहस्त, खुले हाथ, त्यागी, (याचको द्वारा) याचना किये जानेके योग्य, दान शील, योग्य-पदार्थोको बाँटाकर भोगनेवाला। महानाम ! जिस समय आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, प्रमुदित होने-पर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त रहता है, शान्त रहनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुख की अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है।

महानाम ! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमे आपन्न रहकर विचरता है। वह त्यागानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम ! आर्य-श्रावक देवताओका अनुस्मरण करता है। वह सोचता है—चातुर्महाराजिक देवता हैं, त्रयोत्रिंश देवता हैं, याम देवता हैं, तुषित देवता हैं, निर्माणरति देवता हैं, परनिर्मित वशवर्ती देवता हैं, ब्रह्मकायिक देवता हैं, और उनसे ऊपर के देवता हैं। जिस प्रकारकी श्रद्धासे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, हम मे भी वैसी श्रद्धा है, जिस प्रकारके शीलसे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, हममें भी वैसा शील है, जिस प्रकारके श्रुत (=ज्ञान)से युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत हो कर वहाँ उत्पन्न हुए, हम मे भी वैसा श्रुत (=ज्ञान) है, जिस प्रकारके त्यागसे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, हममें भी वैसा त्याग है, जिस प्रकारकी प्रज्ञासे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए हममें भी उस प्रकारकी प्रज्ञा है। महानाम ! जिस समय आर्य-श्रावक अपनी और उन देवताओकी श्रद्धा, शील, श्रुत (=ज्ञान), त्याग और प्रज्ञा की अपनी श्रद्धा, शील, श्रुत (=ज्ञान) त्याग और प्रज्ञामे तुलना करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त रहता है, शान्त रहनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम ! इसे ही कहते है कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह देवतानुस्मृतिकी भावना करता है। महानाम ! जिस आर्य-श्रावकने मार्ग-फल प्राप्त कर लिया है, जिसे शिक्षात्रय युक्त (=बुद्ध देशना) सुपरिचित है, वह बहुधा इसी प्रकार विहार करता है, उसकी चर्या बहुधा इसी प्रकार होती है।

(२) साराणीय वर्ग

भिक्षुओ, ये छह बातें स्मरणीय हैं। कौन-सी छह ? भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मैत्री-भाव युक्त शारीरिक व्यवहार

रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट अप्रकट रूपसे मैत्री-भाव युक्त वाणीका व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मैत्री-भाव युक्त मानसिक व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुअको जो कुछ भी धार्मिक विधिसे प्राप्त होता है, यहाँ तक कि भिक्षा-पात्रमे प्राप्त भिक्षा भी, वह उसे अपने सदाचारी साथियोको बिना बाँटे अकेला ग्रहण नही करता, वह बाँट कर खानेवाला होता है, भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, भिक्षु अपने अखण्ड छिद्र-रहित धब्बे-रहित, अकलुषित, मुक्त, विज्ञो द्वारा प्रशसित, निर्मल, समाधि-मार्गी शीलोको ले अपने वैसे ही शीलवान् साथियोके साथ अप्रकट और प्रकट रूपसे सदाचार पूर्ण व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षु, जो यह आर्य-दृष्टि है, जो तदनुसार आचरण करनेवालेका दु ख क्षय कर देनेवाली है,वैसी दृष्टि-युक्त हो अपने साथियोके प्रति प्रकट तथा अप्रकट रूपसे व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। भिक्षुओ, ये छह बाते स्मरणीय है।

भिक्षुओ, ये छह बाते स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। कौन-सी छह बातें ? भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओके प्रति प्रकट अप्रकट रूपसे मैत्री-युक्त शारीरिक व्यवहोर रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मैत्री भाव युक्त वाणीका व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मत्री-भाव-युक्त मानसिक व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, सममग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुको जो कुछ भी धार्मिक विधिसे प्राप्त होता है, यहाँ तक कि भिक्षा-पात्रमे प्राप्त भिक्षा भी, वह उसे अपने सदाचारी साथियोको बिना बाँटे अकेला ग्रहण नही करता, वह बाँट कर खानेवाला होता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगने वाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र भावके लिये तथा

एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, भिक्षु अपने अखण्ड, छिद्र-रहित, धब्बे-रहित, अकलुपित, मुक्त, विज्ञो द्वारा प्रशसित, निर्मल, समाधि-मार्गी शीलोसे युक्त होकर अपने वैसे ही शीलवान् साथियोंके साथ प्रकट अप्रकट रूपसे सदाचार पूर्ण व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह वात भी स्मरणीय है, प्रिय लगने वाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओं एक भिक्षु, जो यह आर्य-दृप्टि है, जो तदनुसार आचरण करने वालेका, दु ख क्षय कर देनेवाली है, वैसी दृप्टिसे युक्त हो अपने साथियोके प्रति प्रकट तथा अप्रकट रूपसे व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह वात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, सगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है।

भिक्षुओ, ये छह मोक्ष-मार्गी धातुये है। कौन-सी छह ? भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने मैत्री चित्त-विमुक्तिका अभ्यास किया, वढाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुप्ठान किया, परिचित किया तथा सम्यक् प्रकार से ग्रहण किया, तो भी क्रोध मेरे चित्तको व्याप्त किये रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नही है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्यान् ऐसा मत कहो, भगवानपर दोपारोपण मत करो, भगवान्पर दोपारोपण करना ठीक नही, भगवान ऐसा नही कहते। आयुप्यान्, इसकी कोई सभावना नही है, इसके लिये कही गुंजायश नही है कि कोई मैत्री चित्त-विमुक्ति का आभ्यास करे, वढाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुप्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तको क्रोध व्याप्त किये रहे। आयुप्मान! मैत्री चित्त-विमुक्ति द्वेपकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने करुणा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास किया, वढाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुप्ठान किया, परिचित किया, तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया, तो भी खेद मेरे चित्तको व्याप्त किये रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नही है। उसे कहना चाहिए कि आयुप्मान्, ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोपारोपण मत करो, भगवान्पर दोपारोपण करना ठीक नही। भगवान् ऐसा नहीं कहते। आयुप्मान्! इसकी कोई सभावना नही है, इसके लिये कही गुंजायश नही है कि कोई करुणा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, वढाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुप्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तको खेद व्याप्त किये रहे। करुणा चित्त-विमुक्ति खेदकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने मुदिता चित्त-विमुक्तिका अभ्यास किया, वढाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया तो भी अरुचि मेरे चित्तको व्याप्त किये रहती है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नही है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान् ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोपारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नही, भगवान् ऐसा नही कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई सभावना नही है, इसके लिये कोई गुंजायश नही है कि कोई मुदिता चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, वढाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तमे अरुची वनी रहे। मुदिता चित्त-विमुक्ति अरुची की सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने उपेक्षा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास किया, वढाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया, तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया तो भी राग मेरे चित्तको व्याप्त किये रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नही है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान् ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोपारोपण मत करो, भगवान्पर दोपारोपण करना ठीक नही। भगवान् ऐसा नही कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई सम्भावना नही है, इसके लिये कोई गुंजायश नही है कि कोई उपेक्षा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, वढाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तको राग ग्रसे रहे। उपेक्षा चित्त-विमुक्ति रागकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने अनिमित्त (=ध्यानके विपय रहित) चित्त विमुक्तिका अभ्यास किया, वढाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया, तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया तो भी मेरा विज्ञान (=चित्त) ध्यानके विपयका अनुसरण करता है। उसे कहना चाहिये कि यह ऐसा नही है। उसे कहना चाहिये कि आयुष्मान् ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोपारोपण मत करो, भगवान्पर दोपारोपण करना ठीक नही, भगवान् ऐसा नही कहते। आयुष्मान् इसकी कोई सम्भावना नही है, इसके लिये कोई गुंजायश नही है कि कोई अनिमित्त चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, वढाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसका चित्त ध्यानके विपय (=निमित्त) का अनुसरण करनेवाला वना रहे। आयुष्मान्! अनिमित्त चित्त-विमुक्ति सभी निमित्तोकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मेरा अहकार जाता रहा, मुझे ऐसा नही दिखाई देता कि यह "मै" हूँ, किन्तु तो भी विचिकित्सा, यह कैसे, यह कैसे रूपी शल्य, चित्तको वीधता रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नही है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान्! ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोपारोपण करना ठीक नही। भगवान् ऐसा नही कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई सम्भावना नही है, इसके लिये कोई गुँजायश नही है कि कोई कहे कि मेरा अहकार जाता रहा, मुझे ऐसा नही दिखाई देता कि यह मै हूँ, किन्तु तो भी विचि-कित्सा, यह कैसे, यह कैसे रूपी शल्य चित्तको वीधता रहे। आयुष्मान्! अहकारका नाश विचिकित्साकी, यह कैसे, यह कैसे शल्यकी सम्पूर्ण दवा है। भिक्षुओ ये छह मोक्ष-मार्गी धातुयें हैं।

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ।" उन भिक्षुओने आयुष्मान सारिपुत्रको प्रतिवचन दिया—"हाँ, आयुष्मान्।" तव आयुष्मान् सारिपुत्रने यह कहा—"भिक्षुओ, एक भिक्षु उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे न उसकी मृत्यु ही भली प्रकार होती है और न उसकी परलोक-यात्रा ही भली प्रकार होती है।"

"आयुष्मान्! एक भिक्षु कैसे उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे न उसकी मृत्यु ही भली प्रकार होती है, न उसकी परलोक-यात्रा ही भली प्रकार होती है?"

"आयुष्मानो! एक भिक्षु कार्य-वहुल होता है, कार्योमे ही रत, कार्योमे ही आसक्त, वार्तालाप-वहुल होता है, वार्तालापमे ही रत, वार्तालापमे ही आसक्त, निद्रा-वहुल होता है, निद्रामें ही रत, निद्रामे ही आसक्त, मण्डली-वहुल होता है, मण्डलीमे ही रत, मण्डलीमें ही आसक्त, ससर्ग-वहुल होता है, ससर्गमे ही रत, ससर्गमे ही आसक्त, प्रपच वहुल होता है, प्रपचमे ही रत, प्रपचमे ही आसक्त। इस प्रकार आयुष्मानो! एक भिक्षु ऐसा जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे न उसकी मृत्यु ही भली प्रकारकी होती है, न उसकी परलोक यात्रा ही भली प्रकार होती है। आयुष्मानो! इसे ही कहते है कि वह भिक्षु सत्काय-दृष्टिमे अनुरक्त है, उसने दु खका सम्पूर्ण रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग नही किया।

"भिक्षुओ, एक भिक्षु उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी भली प्रकारसे होती है और उसकी परलोक-यात्रा भी भली प्रकार से होती है।"

"आयुष्मान् ! एक भिक्षु कैसे उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी भली प्रकार होती है और उसकी परलोक यात्रा भी भली प्राकार होती है ? "

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु न कार्य-बहुल होता है, न कार्योमें ही रत, न कार्योमे ही आसक्त, न वार्तालाप-बहुल होता है, न वार्तालापमे ही रत, न वार्तालापमे ही आसक्त, न निद्रा-बहुल होता है, न निद्रामे ही रत, न निद्रामे ही आसक्त; न मण्डली-बहुल होता है, न मण्डलीमे ही रत, न मण्डलीमें ही आसक्त, न ससर्ग-बहुल होता है, न ससर्गमे ही रत, न ससर्गमे ही आसक्त; न प्रपच बहुल होता है, न प्रपचमे ही रत, न प्रपचमें ही आसक्त। इस प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षु ऐसा जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी भली प्रकार होती है और उसकी परलोक-यात्रा भी भली प्रकार होती है। आयुष्मानो ! इसे ही कहते हैं कि वह भिक्षु निर्वाण-मार्गी है और उसने दु खका सम्पूर्ण रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग कर दिया।

यो पपञ्चमनुयुत्तो पपञ्चाभिरतो मगो,
विराधयी सो निव्वाण योगक्खेम अनुत्तर ॥
यो पपञ्च हित्वान निप्पपञ्चपदे रतो,
आराधयी सो निव्वाण योगक्खेम अनुत्तर ॥

[जो मृग सदृश मूर्ख आदमी प्रपञ्चमे ही उलझा रहता है, प्रपञ्चमे ही फसा रहता है, वह अनुपम योगक्षेम निर्वाण-प्राप्तिके पथपर न चलनेवाला होता है। जो प्रपञ्च छोड निष्प्रपञ्च जीवन व्यतीत करता है, वह अनुपम योगक्षेम निर्वाण प्राप्तिके पथपर चलनेवाला स्होता है।]

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओको सम्बोन्धित किया—"भिक्षुओ, एक भिक्षु उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप पूर्ण होती है और उसकी परलोक यात्रा भी अनुतापपूर्ण होती है।"

"आयुष्मान ! एक भिक्षु कैसे उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण होती है और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण होती है ? "

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु कार्य-बहुल होता है, कार्योमें ही रत, कार्योमें ही आसक्त, वार्तालाप-बहुल होता है .. ... निद्रा-बहुल होता है ..... मण्डली-

वहुल होता है . ससर्ग-बहुल होता है . . प्रपञ्च-बहुल होता है, प्रपञ्चमें ही रत, प्रपञ्चमे ही आसक्त। इस प्रकार आयुष्मानो ! एक भिक्षु जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण होती है और उसकी पर लोक यात्रा भी अनुताप पूर्ण होती है। आयुष्मानो ! इसे ही कहते हैं कि वह भिक्षु सत्काय-दृष्टिमे अनुरक्त है, उसने दु खका सम्पूर्ण रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग नही किया।

"आयुष्मानो। एक भिक्षु इस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेमे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण नही होती, और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण नही होती।"

"आयुष्मान ! एक भिक्षु कैसे इस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण नही होती, और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण नही होती ?"

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु न कार्य-बहुल होता है, न कार्योमे ही रत रहता है, न कार्योमे ही आसक्त रहता है, व वार्तालाप-बहुल होता है.. .. न निद्रा-बहुल होता है . ... न मण्डली-बहुल होता है . ...न ससर्ग-बहुल होता है . न प्रपञ्च बहुल होता है, न प्रपञ्चमें ही रत, न प्रपञ्चमें ही आसक्त। इस प्रकार आयुष्मानो ! एक भिक्षु जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेमे, उसकी मृत्यु भी अनुताप पूर्ण नही होती, और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण नहीं होती। इसे ही कहते है कि वह भिक्षु निर्वाण-गामी है और उसने दु खका सम्पूर्ण-रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग कर दिया है।

यो पपञ्चमनुयुत्तो पपञ्चाभिरतो मगो,
विराधयी सो निब्बाण योगक्खेम अनुत्तर ॥
यो पपञ्च हित्वान निप्पपञ्चपदे रतो,
आराधयी सो निब्बाण योगक्खेम अनुत्तर ॥

[जो मृग सदृश मूर्ख आदमी प्रपञ्चमें ही उलझा रहता है, प्रपञ्चमे ही फँसा रहता है, वह अनुपम योग-क्षेम निर्वाण-प्राप्तिके पथपर न चलने वाला होता है। जो प्रपञ्च छोडकर निष्प्रपञ्च जीवन व्यतीत करता है, वह अनुपम योग-क्षेम निर्वाण-प्राप्तिके पथपर चलने वाला होता है।]

एक समय भगवान् भग्ग जनपदके, सुंसुमार गिरिके भेसकळा नामक वनमें मृगदावमें विहार कर रहे थे। उस समय नकुलपिता गृहपति अस्वस्थ था, दुखित था,

अत्यन्त रुग्ण था। तब नकुल माता गृहपत्नि ने नकुल पिता गृहपतिको ऐसा कहा—
"हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग न करे। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग दुखद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग करनेकी निन्दा की है। हे गृहपति! हो सकता है कि आप यह सोचते हो कि मेरे मरनेके वाद नकुल माता गृहपत्नि वच्चोका पालन-पोषण नही कर सकेगी, घरको नही सम्भाल सकेगी। हे गृहपति! ऐसा नही सोचना चाहिए। हे गृहपति! मै कपास कातनेमे कुशल हूँ। भेडके वालोकी वेणियाँ वनानेमे कुशल हूँ। हे गृहपति! मै तुम्हारे न रहनेपर वच्चोका पालन पोषण कर सकूंगी, घरको सम्भाल सकूंगी। इसलिये हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग न करे। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करना दुखद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता हो कि आप यह सोचते हो कि मेरे मरनेके वाद नकुल माता गृहपत्नि दूसरा पति कर लेगी। हे गृहपति! ऐसा नही सोचना चाहिये। हे गृहपति! इस वातको या तो तुम ही जानते हो या मै जानती हूँ कि मैने सोलह वर्ष तक गृहस्थ-ब्रह्मचर्यका पालन किया है। इसलिए हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग न करे। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करना दु खद होता है। भगवान्‌ने, भी चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हो कि मेरे न रहनेपर नकुल माता गृहपत्नि वुद्ध तथा सघका दर्शन करनेके लिये इतनी उत्सुक नही रहेगी। हे गृहपति! ऐसा नही सोचना चाहिए। हे गृहपति! तुम्हारे न रहनेपर मै वुद्ध और भिक्षु सघका दर्शन करनेके लिये और भी अधिक उत्सुक हो जाऊँगी। इसलिए हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग न करे। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करना दु खद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हो कि मेरे न रहनेपर नकुल माता गृहपत्नि शीलोका पालन करनेके प्रति उदासीन हो जायेगी। हे गृहपति! ऐसा नही सोचना चाहिए। हे गृहपति! उन भगवान्‌की जितनी भी श्वेत वस्त्र धारिणी शीलवती उपासिकाये है, मै उनमेसे एक हूँ। जिस किसीको इस विषयमे शक हो, सन्देह हो, तो भग्ग जनपदके सुंसुमार गिरिके भेसकळा नामक मृगदावमे भगवान् सम्यक् सम्वुद्ध विहार करते है, उनके पास जाकर पूछ ले। इसलिये हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग न करे। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करना दु खद होता है। भगवान् ने भी चिन्ता लेकर प्राणोका-परित्याग करनेकी निन्दा की-है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हो कि नकुल माता गृहपत्निको चित्तकी शान्ति प्राप्त नही है। हे गृहपति! ऐसा नहीं सोचना चाहिए। हे गृहपति! उन भगवान्‌की जितनी भी श्वेत वस्त्र धारिणी शान्त चित्त उपासिकायें हैं, मैं उनमेंसे एक हूँ। जिस किसीको इस विषयमें शक हो, सन्देह हो, तो भग्ग जनपदके सुंसुमार गिरिके भेसकळा नामक मृगदावमें भगवान् सम्यक् सम्बुद्ध विहार करते हैं, उनके पास जाकर पूछ ले। इसलिये हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हो कि नकुल माता गृहपत्निका इस धर्म-विनयमें प्रवेश नही है, वह इसमें प्रतिष्ठित नहीं है, उनका इसमें विश्वास नही है, वह इसमें सन्देह रहित नहीं है, उसके शक दूर नही हुए, हैं, वह इसमें विशारद नही है, वह अभी अन्य-विश्वासोंसे मुक्त नही हुई है। हे गृहपति! इस प्रकार नही सोचना चाहिए। हे गृहपति! उन भगवान्‌की जितनी भी श्वेत वस्त्र धारिणी ऐसी उपासिकायें हैं जिन्होंने इस धर्म-विनयमें प्रवेश पाया है, जो इसमे प्रतिष्ठित हैं, जिनका इसमें विश्वास है, जो इसमें सन्देह रहित हैं, जिनके शक दूर हो गये हैं, जो विशारद हैं, जो अन्य-विश्वासोंसे सर्वथा मुक्त हैं, मैं उनमेंसे एक हूँ। जिस किसीको इस विषयमें शक हो, सन्देह हो, तो भग्ग जनपदके सुंसुमार गिरिके भेसकळा नामक मृगदावमें भगवान् सम्यक् सम्बुद्ध विहार करते हैं, उनके पास जाकर पूछ ले। इसलिये हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लेकर प्राणोका परित्याग करनेकी निन्दा की है।"

जिस समय नकुल माता गृहपत्नि नकुल पिता गृहपतिको इस प्रकार सान्त्वना दे रही थी, नकुलपिता गृहपतिका रोग सर्वथा शान्त हो गया। उस नकुलपिता गृहपतिकी उस व्याधीका ऐसा शमन हुआ कि वह रोग-शैय्यासे उठ खडा हुआ। तब रोग-शैय्या छोडनेके थोडे ही समय बाद नकुल पिता गृहपति लाठी टेकता हुआ, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्‌को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस नकुल पिता गृहपतिको भगवान्‌ने ऐसा कहा—हे गृहपति! तुझे बडा लाभ है, तू बडा भाग्यवान् है जो नकुल माता जैसी गृहपत्नि है, जो तुझपर अनुकम्पा करने-वाली है, जो तेरी हितचिंतक है, जो तुझे सान्त्वना देनेवाली है तथा जो तुझे उपदेश देनेवाली है। हे गृहपति! जितनी भी मेरी श्वेत वस्त्र धारिणी शीलवती उपासिकायें हैं, नकुल माता गृहपत्नि उनमेंसे एक है, जितनी भी मेरी श्वेत वस्त्र धारिणी शान्त

चिन्त उपासिकाये हैं नकुल माता गृहपत्नि उनमे से एक है,, जितनी भी मेरी श्वेत वस्त्र धारिणी ऐसी उपासिकाये है, जिन्होने इस धर्म-विनयमे प्रवेश पाया है, जो इसमे प्रतिष्ठित है, जिनका इसमे विश्वास है, जो इसमे सन्देह-रहित है, जिनके शक दूर हो गये है, जो विशारद है, तथा जो अन्य विश्वासोसे सर्वथा मुक्त है, नकुल माता गृहपत्नि उनमेंसे एक है। हे गृहपति! तुझे वडा लाभ है, तू वडा भाग्यवान् है, जो नकुल माता जैसी गृहपत्नि है, जो तुझपर अनुकम्पा करनेवाली है, जो तेरी हितचिंतक है, जो तुझे सान्त्वना देनेवाली है तथा जो तुझे उपदेश देनेवाली है।

एक वार भगवान् श्रावस्तीमे अनाथपिण्डकके जेतवनाराममे विहार कर रहे थे। शाम होनेपर, भगवान् ध्यानावस्थित रह चुकनेके अनन्तर, उपस्थान शालामे पहुँचे। वहाँ पहुँचनेपर विछे आसनपर वैठे। आयुष्मान् सारिपुत्र भी शाम होनेपर, ध्यानावस्थित रह चुकनेके अनन्तर, जहाँ उपस्थान शाला थी, वहाँ पहुँचे। जाकर, भगवान्को अभिवादन कर, एक ओर वैठे। आयुष्मान् महामोग्गल्लान भी, आयुष्मान् महाकाश्यप भी, आयुष्मान् महाकात्यायन भी, आयुष्मान् महाकोट्ठित भी, आयुष्मान् महाचुन्द भी, आयुष्मान् महाकप्पिन भी, आयुष्मान् अनुरुद्ध भी, आयुष्मान् रेवत भी तथा आयुष्मान् आनन्द भी, शाम होनेपर, ध्यानावस्थित रह चुकनेके अनन्तर, जहाँ उपस्थान-शाला थी, वहाँ पहुँचे और वहाँ पहुँचकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर वैठ गये।

तव भगवान् रात्रिका अधिकाश समय वैठे ही वैठे विताकर, आसनसे उठनेके अनन्तर विहारमे प्रविष्ट हुए। भगवानके चले जानेके थोडी देर वाद ही वे आयुष्मान् भी उठकर अपने अपने विहरमे चले गये। लेकिन वहाँ जो नये भिक्षु थे, जिन्हे प्रव्रजित हुए अभी थोड़ा ही समय हुआ था, जो अभी धर्म-विनयमे प्रविष्ट हुए ही थे, वे सूर्योदय होने तक कौओकी-सी दान्त कटकटानेकी आवाज करते हुए पडे सोते रहे। भगवान्ने अलौकिक, दिव्य, विशुद्ध चक्षुसे उन भिक्षुओको सूर्योदय होने तक कौओकी तरह दान्त कटकटानेकी आवाज करते हुए सोते देखा। देखकर जहाँ उपस्थान-शाला थी, वहाँ पहुँचे। जाकर विछे आसनपर वैठे। वैठ कर भगवान्ने उन भिक्षुओको वुलवाया—
"भिक्षुओ, सारिपुत्र कहाँ है? मोग्गल्लान कहाँ है? महाकाश्यप कहाँ है? महाकात्यायन कहाँ है? महाकोट्ठित कहाँ है? महाचुन्द कहाँ है? महाकप्पिन कहाँ है? अनुरुद्ध कहाँ है? रेवत कहाँ है? आनन्द कहाँ है? भिक्षुओ, वे सव स्थविर श्रावक कहाँ गये?"

"भन्ते! आपके चले जानेके थोडे ही समय बाद वे आयुष्मान् भी उठकर अपने विहारको चले गये। इसीलिये आप नये स्थविर भिक्षु सूर्योदय होने तक कौओंकी तरह दान्त कटकटाते हुए पडे सोते रहे।"

"तो भिक्षुओ, तुम क्या मानते हो, क्या तुमने कहीं देखा है या सुना है कि मुकुट धारी क्षत्रिय राजा हुआ हो, जो मनचाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तद्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्म भर राज्य करते रहने पर भी, जनपद के लोगो को प्रिय लगने वाला, अच्छा लगने वाला हुआ हो?"

"भन्ते! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है, न सुना है कि कोई मुकुट-धारी क्षत्रिय राजा हुआ हो, जो मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तन्द्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्म भर राज्य करते रहनेपर भी जनपदके लोगोको प्रिय लगनेवाला, अच्छा लगनेवाला हुआ हो?

"तो भिक्षुओ, तुम क्या मानते हो, क्या तुमने कहीं देखा है या सुना है कि कोई राष्ट्रिक हो, कोई बापदादाकी अर्जित कमाई खानेवाला हो, कोई सेनापति हो, कोई गाँवका मुखिया हो, कोई पूग (=गण)का मुखिया हो और वह मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तन्द्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्म भर पूगका मुखिया रहा हो, तो भी वह पूगके लोगोंको प्रिय लगने वाला, अच्छा लगनेवाला हुआ हो?"

"भन्ते! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है, न सुना है कि कोई पूगका मुखिया हो और वह मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तन्द्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्मभर पूगका मुखिया रहा हो, तो भी वह पूगके लोगोंको प्रिय लगने वाला, अच्छा लगने वाला हुआ हो।

"तो भिक्षुओ, तुम क्या मानते हो, क्या तुमने कहीं देखा है या सुना है कि कोई श्रमण या ब्राह्मण हो और वह मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख तथा तन्द्रा-सुखका अनुभव करता हो, इन्द्रिय सयम रहित हो, भोजनकी उचित मात्रासे अनभिज्ञ हो, जाग्रत न रहता हो, कुशल (=शुभ) बातोंके पर्येषणमें न लगा रहता हो, हरसमय बोधि-पक्षीय धर्मोंकी भावना करनेमें न लगा रहता हो और वह इसी जन्ममें आस्रवोका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको जानकर साक्षात् कर विचर रहा हो?"

"भन्ते! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कही देखा है, न सुना है कि कोई श्रमण या ब्राम्हण हो और वह मन-चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख तथा तन्द्रा-सुखका अनुभव करता हो, इन्द्रिय-सयम रहित हो, भोजनकी उचित मात्रासे अनभिज्ञ हो, जाग्रत न रहता हो, कुशल (=शुभ) वातोके पर्येपणमें न लगा रहता हो, हर समय बोधि-पक्षीय धर्मोंकी भावना करनेमें न लगा रहता हो और वह इसी जन्ममे आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्तिको जानकर, साक्षात कर विचर रहा हो।

"इसलिए भिक्षुओ, यह सीखना चाहिए कि हम सयतेन्द्रिय होगे, भोजनके विषय मे मात्रज्ञ होगे, जागरूक रहेगे, कुशल (=शुभ) वातोके पर्येपणमे लगे रहेगे, हर समय बोधि-पक्षीय धर्मोंकी भावना करनेमे लगे रहेगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए।"

एक वार महान भिक्षु सघके साथ भगवान कोशल जनपदमे विचर रहे थे। रास्ते चलते भगवानने एक प्रदेश–विशेषमे एक मछुएको देखा, मछली पकडनेवालेको देखा कि वह मछलियोको मार मार कर वेच रहा है। भगवान एक वृक्षके नीचे विछे आसन पर जा विराजमान हुए। बैठकर भगवानने भिक्षुओको सम्बोधित किया––
"भिक्षुओ, इस मछुवेको, मछली पकडने वालेको, मछलियाँ मार मार कर वेचने वाले को देखते हो?"

"भन्ते! हाँ।"

"तो भिक्षुओ, क्या मानते हो? क्या तुमने कही देखा या सुना है कि कोई मछुवा हो, मछली पकडने वाला हो, मछली मार मार कर वेचने वाला हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे हाथी पर चढनेवाला हो गया हो, घोडेपर चढ़ने-वाला हो, रथपर चढनेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारी पर चढनेवाला हो, भोग्य-पदार्थोका स्वामी हो गया हो अथवा वहुत ऐश्वर्य शाली हो गया हो?"

"भन्ते! नही।"

"भिक्षुओ! ठीक है। मैंने भी न कही देखा है और न सुना है कि कोई मछुवा हो, मछली पकडनेवाला हो, मछली मार मारकर वेचनेवाला हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे, हाथीपर चढनेवाला हो गया हो, घोडेपर चढने-वाला हो गया हो, रथपर चढनेवाला हो गया हो (या किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला हो गया हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा वहुत ऐश्वर्यशाली हो गया हो। इसका क्या कारण है? भिक्षुओ, वह मछुवा उन वध करनेके लिये लाई गई मछलियोको पाप-पूर्ण दृष्टिसे देखता है। इसीसे वह न हाथीपर चढनेवाला होता है, न घोड़ेपर चढनेवाला होता है, न रथपर चढनेवाला होता, न (किसी दूसरी)

सवारीपर चढनेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य-शाली होता है।

"तो भिक्षुओ, क्या मानते हो? क्या तुमने कही देखा या सुना है कि कोई गौ-घातक हो और वह गौओंको काट काट कर बेचता हो, और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोडेपर चढनेवाला हो गया हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढनेवाला हो गया हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य-शाली हो गया हो?"

"भन्ते! नही।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कही देखा है और न सुना है कि कोई गो-घातक हो और वह गौओंको काट काटकर बेचता हो, और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोडेपर चढ़नेवाला हो गया हो, रथपर चढनेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढनेवाला हो गया हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य-शाली हो गया हो। इसका क्या कारण है? भिक्षुओ, वह गो-घातक उन काटनेके लिये लाई गई गौओंको पापपूर्ण दृष्टिसे देखता है। इसीसे वह न हाथीपर चढनेवाला होता है, न घोडेपर चढनेवाला होता है, न रथपर चढनेवाला होता है, न (किसी दूसरी) सवारीपर चढनेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य-शाली होता है।

"तो भिक्षुओ, क्या मानते हो। क्या तुमने कहीं देखा या सुना है कि कोई भेड़ मारने वाला हो.... कोई सूअर मारनेवाला हो . कोई चिड़ीमार हो.... कोई हिरन मारनेवाला हो और वह मृगोंको मार मारकर बेचता हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे, हाथीपर चढनेवाला हो गया हो, घोडेपर चढनेवाला हो गया हो, रथपर चढनेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढनेवाला हो गया हो, भोग्य पदार्थोका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्यशाली हो गया हो?"

"भन्ते! नही।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कही देखा है और न सुना है कि कोई हिरन मारनेवाला हो और वह मृगोंको मार मारकर बेचता हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे, हाथीपर चढनेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढनेवाला हो गया हो, रथपर चढनेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढनेवाला हो गया हो, भोग्य पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य-शाली हो गया हो। इसका क्या कारण है? भिक्षुओ, वह मृग मारनेवाला उन मारनेके लिए लाये गये मृगोंको

पापपूर्ण दृष्टिसे देखता है। इसीसे वह न हाथीपर चढनेवाला होता है, न घोडेपर चढने वाला होता है, न रथपर चढ़नेवाला होता है, न (किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य-शाली होता है।

"भिक्षुओ, जब एक आदमी पशु-पक्षियोंको वध करनेके लिये ले जाता है और उन्हे पाप पूर्ण दृष्टिसे देखता है तो जब वह भी न हाथीपर चढनेवाला होता है, न रथपर चढनेवाला होता है, न घोडेपर चढनेवाला होता है, न रथपर चढनेवाला होता है, न (किसी दूसरी) सवारीपर चढनेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य शाली होता है तो फिर उसका तो कहना ही क्या कि जो मनुष्यको मारनेके लिये ले जाता है और उसे पाप-पूर्ण दृष्टिसे देखता है। भिक्षुओ, यह उसके दीर्घ कालीन दुःख और अहितका कारण होता है। वह शरीर न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय, दुर्गतिको प्राप्त होता है और नरकमें जन्म ग्रहण करता है।"

एक समय भगवान् नादिका नामके गाँवमें गिजका नामक निवासस्थानपर विराज रहे थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको आमन्त्रित किया—भिक्षुओ। उन भिक्षुओंने प्रतिवचन दिया—"भदन्त।" तब भगवान्ने यह कहा—"भिक्षुओ, मरणानुस्मृतिकी भावनासे, वृद्धि करनेसे महान् फलकी प्राप्ति होती है, महान शुभ परिणाम होता है अमृत (=निर्वाण) प्राप्त करा देनेवाली होती है। भिक्षुओ, तुम मरणानुस्मृतिकी भावना करो।" ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने भगवानसे यह निवेदन किया—"भन्ते! मैं मरणास्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं एक रात, एक दिन जीता रहूँ, भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा बडा उपकार हो। भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं एक दिन जीता रहूँ, भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा बडा उपकार हो। भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक तीसरे भिक्षुने भी भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें भिक्षा (=पिण्डपात) ग्रहण करता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करू, इससे मेरा वडा उपकार हो। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक चौथे भिक्षुने भी भगवान्‌से निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें मै चार पाँच कौर ग्रहण करता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा वडा उपकार हो। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक पाँचवें भिक्षुने भी भगवान्‌से निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमे होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें मैं एक कौर ग्रहण करता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करू, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक छठे भिक्षुने भी भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें एक बार साँस लेता और साँस छोडता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करू, इससे मेरा बडा उपकार होगा। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

ऐसा कहनेपर भगवान्‌ने उन भिक्षुओंसे कहा—हे भिक्षुओ, जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं रात-दिन जीवित रहूँ, उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करू, इससे मेरा वडा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं एक दिन जीवित रहूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा वडा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित

रहूँ, जितनी देरमें भिक्षा ग्रहण करता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा वडा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमे चार पाँच कौर ग्रहण करता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करू, इससे मेरा वडा उपकार होगा—ये सव भिक्षु प्रमादी हैं, वडे प्रमादके साथ दु खके क्षयके लिए मरणानुस्मृतिकी भावना करते हैं।

"किन्तु भिक्षुओ, जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमे मैं एक कौर ग्रहण करता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करु, इससे मेरा वडा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमे एक वार साँस लेता और साँस छोडता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा वडा उपकार होगा—ये भिक्षु अप्रमादी है, ये आस्रवोके क्षय करनेके लिये अप्रमाद पूर्वक मरणानुस्मृतिकी भावना करते है। इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम अप्रमादी होंगे और आस्रवोका क्षय करनेके लिये, अप्रमाद-पूर्वक मरणानुस्मृतिकी भावना करेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए।"

एक समय भगवान् नादिका ग्रामसे गिंजका भवनमे निवास कर रहे थे। वहाँ भगवानने भिक्षुओको सम्वोधित किया—"भिक्षुओ, मरणानुस्मृतिकी भावनासे, वृद्धि करनेसे महान् फलकी प्राप्ति होती है, महान् शुभ-परिणाम होता है, यह अमृत (=निर्वाण) प्राप्त करा देनेवाली होती है। भिक्षुओ, कैसे भावना करनेसे, कैसे वृद्धि करनेसे, मरणानुस्मृति माहन फलकी दाता होती है, महान् शुभ परिणामकी दाता होती है, अमृत (=निर्वाण) प्राप्त करा देनेवाली होती है? भिक्षुओ, भिक्षुको चाहिए कि वह दिनके अस्त हो जानेपर, रात्रिका आगमन हो जानेपर, इस प्रकार विचार करे कि मेरी मृत्युके वहुतसे कारण हो सकते हैं, मुझे साँप डस ले सकता है, मुझे विच्छु डस ले सकता है, मुझे शतपदी डस ले सकती है, उससे मेरा मरना हो जा सकता है, और वह मेरे निर्वाण-पथका वाधक हो सकता है। इसी प्रकार मैं कही फिसल कर गिर सकता हूँ, खाया हुआ भोजन भी मेरा विना पचे रह जाय, अथवा मेरा पित्त ही कुपित हो जाय, अथवा मेरा श्लेष्म ही कुपित हो जाय, अथवा मेरा शरीर-गत वायु कुपित हो जाय और उससे मेरा मरना हो जाय तो यह मेरे निर्वाण-पथका वाधक हो सकता है। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिए कि क्या मुझमे अभी कुछ ऐसे अकुशल-धर्म हैं, जिनका प्रहाण नही हुआ है और जो मेरे रातके समय

ही मर जानेपर मेरे निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं? जब उस भिक्षुको यह पता लगे कि उसमें अभी ऐसे कुछ अकुशल-धर्म हैं, जिनका प्रहाण नही हुआ है और जो रातके समय ही उसकी मृत्यु हो जाने पर उसके निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं। तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन्ही अकुशल-धर्मोका प्रहाण करनेके लिये, वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमगसे काम ले, विशेष प्रयास करे, तथा स्मृति और सप्रजन्यसे युक्त हो। जैसे भिक्षुओ, किसीके कपडोमे आग लगी हो, वा सिरमे आग लगी हो, वह कपडोकी उसी आग वा सिरकी आगको बुझानेके लिये विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमगसे काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और सप्रजन्यसे युक्त हो। इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन अकुशल-धर्मोका प्रहाण करनेके लिये, वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमगसे काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और सप्रजन्यसे युक्त हो। और भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर उस भिक्षुको ऐसा लगे कि मुझमें कोई ऐसे अकुशल-धर्म नही हैं, जिनका प्रहाण न हुआ हो, जो मेरे रातको ही मर जानेपर मेरे निर्वाण पथके बाधक बन सके तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि वह उसी आनन्द और प्रीतिमे मस्त रहे और दिन रात कुशल-धर्मो (=शुभ कार्यो) मे ही लगा रहे।

"भिक्षुओ, भिक्षुको चाहिए कि वह रातके बीत जानेपर, दिन उदय हो जानेपर, इस प्रकार विचार करे कि मेरी मृत्युके बहुतसे कारण हो सकते है, मुझे साँप डस ले सकता है, मुझे बिच्छु डस ले सकता है, मुझे शतपदी डस ले सकती है, इससे मेरा मरना हो जा सकता है और वह मेरे निर्वाण-पथका बाधक हो सकता है। इसी प्रकार मै कही फिसल कर गिर सकता हूँ, खाया हुआ मेरा भोजन भी बिना पचे रह जा सकता है, मेरा पित्त ही कुपित हो जा सकता है, मेरा श्लेष्म ही कुपित हो जा सकता है, मेरा शरीर-गत वायु ही कुपित हो जा सकता हैऔर उससे मेरा मरना हो जाय तो यह मेरे निर्वाण-पथका बाधक हो सकताहै। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिए कि क्या मुझमें अभी कुछ ऐसे अकुशल धर्म है जिनका प्रहाण नहीं हुआ है और जो मेरे दिनके समय ही मर जानेपर मेरे निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं। जब उस भिक्षुको यह पता लगे कि उसमे अभी ऐसे कुछ अकुशल-धर्म है,जिनका प्रहाण नही हुआ है और जो दिनके समय ही उसकी मृत्यु हो जानेपर उसके निर्वाण-पथके बाधक हो सकते है। तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन्ही अकुशल धर्मोका प्रहाण करनेके लिये, वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह

दिखाये, विशेप उमगसे काम ले, विशेप प्रयास करे तथा स्मृति और सप्रजन्यसे युक्त हो। जैसे भिक्षुओ किसीके कपडोमे आग लगी हो वा सिरमे आग लगी हो, वह उसी कपडोकी वा सिरकी आगको वुझानेके लिये विशेप इच्छा करे, विशेप प्रयत्न करे, विशेप उत्साह दिखाये, विशेप उमग से काम ले, विशेप प्रयास करे तथा स्मृति और सप्रजन्यसे युक्त हो। इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन अकुशल-धर्मोका प्रहाण करनेके लिये वह विशेप इच्छा करे, विशेप प्रयत्न करे, विशेप उत्साह दिखाये, विशेप उमगसे काम ले, विशेप प्रयास करे तथा स्मृति और सप्रजन्यसे युवत हो। और भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर उन भिक्षुको ऐसा लगे कि मुझमे कोई ऐसे अकुशल-धर्म नही है, जिनका प्रहाण न हुआ हो, जो मेरे दिनको ही मर जाने पर मेरे निर्वाण-पथके वाधक वन सके तो भिक्षुओ,उस भिक्षुको चाहिए कि वह उसी आनन्द और प्रीतिमे मस्त रहे और दिन-रात कुशल-धर्मो (=शुभ कार्यो)मे ही लगा रहे।

(३) अनुत्तरिय वर्ग

एक समय भगवान् शाक्य जनपदके शामग्रामकी पुष्करिणीपर विहार करते थे। उस समय एक प्रकाशमान देवता प्रकाशमान रात्रिको सारी पुष्करिणीको आलोकित करता हुआ जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्‌को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए देवताने भगवान्‌से यह निवेदन किया—भन्ते ! तीन वाते भिक्षुकी अवनतिका कारण होती है। कौन-सी तीन वाते ? कार्य-वहुलता, वचन-वहुलता तथा निद्रा-वहुलता। भन्ते ! ये तीन वाते भिक्षुकी अवनतिका कारण होती है। उस देवताने यह कहा। भगवान उससे सहमत हुए। जव उस देवताने यह जाना कि भगवान् मुझसे सहमत है तो वह भगवान्‌को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर वही अन्तर्धान हो गया। तव भगवान्‌ने उस रात्रिके व्यतीत होनेपर भिक्षुओको सम्वोधित किया—"भिक्षुओ ! आजकी प्रकाशपूर्ण रातमे एक प्रकाशमान् देवता समस्त पुष्करिणीको प्रकाश-युक्त करता हुआ जहाँ मै था, वहाँ पहुँचा। पास जाकर मुझे प्रणाम कर एक ओर खडा हुआ। भिक्षुओ, एक ओर खडे हुए, उस देवताने मुझे यह कहा– "भन्ते ! तीन वाते भिक्षुकी अवनतिका कारण होती है। कौन-सी तीन वाते ? कार्य-वहुलता, वचन-वहुलता तथा निद्रा-वहुलता। भन्ते ! ये तीन वाते भिक्षुकी अवनतिका कारण होती है। भिक्षुओ, उस देवताने ऐसा कहा और इतना कहकर तथा मुझे अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर वही अन्तर्धान हो गया। भिक्षुओ, यह उन भिक्षुओके लिये अच्छी वात नही है, यह उन भिक्षुओका सौभाग्य नही है, जिनके वारेमें देवता भी जानते है कि उनकी कुशल-धर्मोसे अवनति हो रही है।

"भिक्षुओ, मैं दुसरी भी ऐसी तीन वातोका उपदेश करता हूँ जो अवनतिका कारण होती है, उन्हे सुनो और अपने मनमें स्थिर रूपसे धारण करो।"

उन भिक्षुओने भगवानको प्रति-वचन दिया—"भन्ते! वहुत अच्छा।"

तव भगवानने कहा—"भिक्षुओ! वे दूसरी तीन वातें कौनसी है जो अवनतिका कारण होती हैं? मण्डली-वाहुल्य, दुर्वचनीय होना, कुसगति। भिक्षुओ, जितने भी लोग भूत कालमें कुशल धर्मोसे पतित हुए वे इन्ही छ कारणोसे पतित हुए, और भिक्षुओ, जो भविष्य मे कुशल-धर्मोसे पतित होगे, वे भी इन्ही छ कारणोसे ही पतित होगे, और भिक्षुओ, जो वर्तमानमे कुशल-धर्मोसे पतित होगे, वेभी इन छ कारणोसे ही कुशल-धर्मोसे पतित होगे।

"भिक्षुओ, मै छह वातोका उपदेश देता हूँ जो उन्नतिका कारण होती है। उन्हें सुनो। अच्छी तरह मनमें जगह दो। कहता हूँ।"

उन भिक्षुओने भगवान्‌को प्रतिवचन दिया—"भन्ते! वहुत अच्छा।"

भगवानने कहा—"भिक्षुओ, वे कौनसी छ वातें है जो उन्नतिका कारण होती है? कार्य-वहुल न होना, वार्ता-लाप-वहुल न होना, निद्रा-वहुल न होना, मण्डली-वहुल न होना, सुवचनीय होना तथा सत्सगति। भिक्षुओ, ये छ वातें उन्नतिका कारण हैं। भिक्षुओ, भूतकालमें जिनका कुशल-धर्मोसे पतन नही हुआ, वह इन्ही छह वातोके कारण नही हुआ, भविष्यमें भी जिनका भविष्यमें कुशल-धर्मोसे पतन नही होगा वह भी इन्ही छह वातोंके कारण नही होगा, वर्तमानमें भी जिन का कुशल-धर्मोसे पतन नहीं होगा वह भी इन्ही छह वातोके कारण नही होगा।

भिक्षुओ, 'भय' शब्द कामनाओका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'दु ख' शब्द कामनाओका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'राग' शब्द कामनाओका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'गण्ड' (फोडा) शब्द कामनाओका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'शका' शब्द कामनाओका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'पक' शब्द कामनाओका ही पर्याय है। भिक्षुओ 'भय' शब्द कामनाओका पर्याय क्यो है? भिक्षुओ, जो काम-रागसे वधे होते है, जो छन्द-रागमे वधे होते है, वे इसी जन्ममें जो 'भय' होता है उससे भी मुक्त नही होते है और पार-लौकिक भयसे भी मुक्त नही होते है। इस लिये भिक्षुओ, 'भय' शब्द कामनाओका ही पर्याय है। भिक्षुओ, 'दु ख' शब्द क्यो 'रोग' शब्द क्यो 'गण्ड' शब्द क्यो 'शका' (या सग) शब्द क्यो 'पक' शब्द क्यो कामनाओका पर्याय है? भिक्षुओ, जो काम-रागसे वधे होते है, जो छन्द-रागमे वधे होते है, वे इसी जन्ममें जो भय पैदा होता है, उससे भी मुक्त नही होते है। (और पारलौकिक भयसे भी मुक्त नही होते है) इसीलिये पक शब्द कामनाओका ही पर्याय है।

भय दुक्ख च रोगो च गण्डो सगो पको च उभय,
एते कामा पवुच्चन्ति यत्थ सत्तो पुथुज्जनो ।।
उपादाने भय दिस्वा जातिमरणसम्भवे
अनुपादा विमुच्चन्ति जातिमरण सखये ।।
ते खेमपत्ता सुखिनो दिट्ठधम्माभिनिव्वुता,
सव्ववेरभयातीता सव्वदुक्ख उपच्चगु ।।

[भय, दुक्ख, रोग, गण्ड, सग तथा पक ये सव कामनाओके ही पर्याय हैं। पृथक जन इनमे आसक्त हो रहते हैं। पाच उपादान-स्कन्धोके रहते जाति-मरण रूपी भय लगा ही रहता हैं। पाच उपादना-स्कन्धोके न रहने पर जाति-मरणका भय नही रहता। जिनके उपादान-स्कन्ध नष्ट हो गये है, वे कल्याण-प्राप्त है, सुखी हैं, इसी जन्ममे शरीरके रहते ही निर्वाण-प्राप्त है,। वे सभी अवैर तथा भयसे परे पहुँच गये है और समस्त दु खका अन्त कर चुके है।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह वाते होती हैं वह पर्वतराज हिमालयको भी विदीर्ण कर सकता है, इस निकम्मी अविद्याका तो कहना ही क्या ? कौनसी छ वातें ? भिक्षुओ, भिक्षु समाधि अवस्थाके प्राप्त करनेमे कुशल (=दक्ष) होता है, समाधि अवस्थामें स्थिर रहनेमे कुशल होता है, समाधि-अवस्था से उठनेमे कुशल होता है, समाधिको उपयुक्त वनानेमे समर्थ होता है, समाधि-अवस्थाकी प्राप्तिके अनुकूल प्रतिकूल चर्यामें कुशल होता है, उच्चतर समाधि-अवस्थाकी प्राप्तिके लिये प्रथम ध्यान, द्वितीय-ध्यान आदिसे आगे वढनेमे समर्थ होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह वातें होती हैं वह पर्वत-राज हिमायलको भी विदीर्ण कर सकता है, इस निकम्मी अविद्याका तो कहना ही क्या ?

भिक्षुओ, ये छह अनुस्मरणके स्थान हैं। कौनसे छह ? भिक्षुओ, एक आर्य श्रावक तथागतका अनुसस्मरण करता है, वे भगवान देवताओ तथा मनुष्यो के शास्ता हैं, वुद्ध भगवान है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है,और न मोहके आधीन होता है,उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मक्त हो गया रहता है, परिमुक्त हो गया रहता है, भिक्षुओ लोभ (=गेध) तो पाचो कामनाओका पर्याय ही है। भिक्षुओ, बुद्धानस्मृति को भी चित्तका आलम्वन वनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धि को प्राप्त हो जाते है।

फिर भिक्षुओ, आर्य श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, भगवान द्वारा धर्म सु-आख्यात है।.......प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात्कार किया जा सकता है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है, और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पाचो कामनाओका पर्याय ही है। भिक्षुओ, धर्मानुस्मृतिको भी चित्तका आलम्बन बनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाते है।

फिर भिक्षुओ, आर्यश्रावक सघका अनुस्मरण करता है, कि भगवानका श्रावक-सघ सुप्रतिपन्न है लोगोका अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक सघका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेपके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ लोभ (गेध) तो पाचो कामनाओका पर्याय ही है। भिक्षुओ, सघानुस्मृतिको भी चित्तका आलम्बन बना कर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाते है।

फिर भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अपने अखण्डित शीलोका स्मरण करता है . समाधिपरक। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक अपने शीलोका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेपके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है। वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पाचो कामनाओका पर्याय ही है। भिक्षुओ, अपने शीलकी अनु-स्मृतिको भी चित्तका आलम्बन बनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाता है।

फिर भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है कि यह मेरे लिये बडे लाभकी बात है यह मेरा बडा सौभाग्य है . याचना किये जानेके योग्य हूँ, बराबर बाँटकर खाने वाला हूँ। भिक्षुओ जिस समय आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेपके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पाचो कामनाओका पर्याय ही है।

भिक्षुओ, अपने त्यागकी अनुस्मृतिको चित्तका आलम्बन वनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाते है।

फिर भिक्षुओ, आर्य श्रावक देवताओका अनुस्मरण करता है कि चातुर्महाराजिक देवता है, त्रयोत्रिंश देवता है, याम देवता है, तुपित देवता है, निर्माण-रति देवता है, परनिर्मित वशवर्ती देवता है, ब्रह्मकायिक देवता है, और उनसे भी वढकर देवता है—और ये सव देवता-गण जैसी श्रद्धासे युक्त है, वैसी श्रद्धा मुझमे भी है, जैसे शील . . . . जैसे श्रुत (=ज्ञान) मे . जैसे त्यागसे जैसी प्रज्ञासे युक्त होनेके कारण ये देवता-गण यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, मुझमे भी वैसी प्रज्ञा है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक अपनी और उन देवताओकी श्रद्धाका, श्रुत=ज्ञानका, त्यागका और प्रज्ञाका स्मरण करता है उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है, और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभ से स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पाचो कामनाओका पर्याय ही है। भिक्षुओ इस प्रकार देवताओका स्मरण कर भी कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त होते है। भिक्षुओ, ये छ. अनुस्मृतियाँ है।"

उस समय आयुष्मान महाकात्यायनने भिक्षुओको सवोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ!" उन भिक्षुओने आयुष्मान् महाकात्यायन को प्रतिवचन दिया—"हाँ आयुष्मान।" आयुष्मान् महाकात्यायनने कहा—"आयुष्मानो! आश्चर्यकर है। आयुष्मानो! अद्भुत है। जो यह उन भगवान्, जानकार, द्रष्टा, अर्हत, सम्यक् सम्बुद्धका जो यह सुभाषित है, यह जो जजालसे विमुक्ति है, यह जो ज्ञान है, यह जो प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक तथा अनुतापका शमन करनेके लिये, दुख तथा दौर्मनस्यका अन्त करनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात् करनेके लिये यह जो छह अनुस्मृतियोकी देशना है। कौन सी छह अनुस्मृतियाँ? भिक्षुओ, एक आर्य श्रावक तथागतका अनुश्रमण करता है, वे भगवान् देवताओ तथा मनुष्योके शास्ता है, बुद्ध भअगवान है। आयुष्मानो जिस समय आर्य-श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्त की अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, परिमुक्त हो गया रहता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पाच कामगुणोका पर्याय ही है। आयुष्मानो! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित

क्रोधरहित आकाश-सदृश चित्तसे युक्त होकर विचरता है तो आयष्मानो! इस एक आलम्वण से भी कुछ प्राणी विशुद्धि को प्राप्त होते है।

फिर आयुष्मानो, आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किया जा सकता है। आयुष्मानो! जिस समय आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेपके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, पीरमुक्त हो गया रहता है। भिक्षुओ, लोभ (= गेध) तो पाचकामगुणोका पर्याय ही है। आयुष्मानो! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान् वैर-रहित क्रोध-रहित आकाश सदृश चित्तसे युक्त होकर विचरता है तो आयुष्मानो! इस एक आलम्वनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धिको प्राप्त होते है।

फिर आयुष्मानो, आर्य-श्रावक सघका अनुस्मरण करता है, कि भगवान्का श्रावक-सघ सुप्रतिपन्न है लोगोका अनुपम पुण्यक्षेत्र है। आयुष्मानो! जिस समय आर्य-श्रावक सघका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेपके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्रता हो गया रहता है। मुक्त हो गया रहता है, परिमुक्त हो गया रहता है। भिक्षुओ 'लोभ' (= गेध) तो पाच कामगुणोका पर्याय ही है। आयुष्मानो! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित, क्रोध-रहित आकाश-सदृश चित्तसे युक्त विचरता है तो आयुष्मानो! इस एक आलम्वनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धि को प्राप्त होते है।

फिर आयुष्मानो! आर्य-श्रावक अपने अखण्डित शीलोका स्मरण करता है समाधि-परक। आयुष्मानो! जिस समय आर्य-श्रावक अपने शीलोका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न राग के आधीन होता है, न द्वेपके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, पीरमुक्त हो गया रहता है। आयुष्मानो लोभ तो पाच कामनाओका पर्याय हीहै। आयुष्मानो! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैरहित, क्रोध-रहित आकाश सदृश चित्तसे युक्त हो विचरता है तो आयुष्मानो! इस एक आलम्वनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धि को प्राप्त होते है।

फिर आयुष्मानो ! आर्य श्रावक अपने त्यागका अनस्मरण करता है कि यह मेरे लिये वडे लाभकी वात है, यह मेरा वडा सौभाग्य है .. याचना किये जानेके योग्य हूँ, वरावर वाट कर खाने वाला हूँ। भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है, और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, पीरमुक्त हो गया रहता है। आयुष्मानो ! लोभ तो पाच कामनाओका पर्याय ही है। आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित क्रोध-रहित आकाश सदृश चित्तसे युक्त हो विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्वन से भी कुछ प्राणी विशुद्धिको प्राप्त होते है।

फिर आयुष्मानो ! आर्य श्रावक देवताओका अनुस्मरण करता है कि चातुर्महाराजिक देवता है, त्रयोत्रिंश देवता है, याम देवता है, तुषित देवता है, निर्माण-रति देवता है, पर-निर्मीत-वशवर्ती देवता है, ब्रह्मकायिक देवता है और उनसे भी वढकर देवता है— और ये सव देवता गण जैसी श्रद्धासे युक्त है, वैसी श्रद्धा मुझमे भी है, जैसे शीलसे   जैसे श्रुत (=ज्ञान) से . जैसे त्यागसे   जैसी प्रज्ञा से युक्त होनेके कारण ये देवता गण यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, मझमे भी वैसी प्रज्ञा है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक अपनी और उन देवताओकी श्रद्धा का, श्रुत्-ज्ञानका, त्यागका और प्रज्ञाका स्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, व न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पाच कामनाओका पर्याय ही है। आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित, क्रोध-रहित आकाश-सदृश चित्तसे युक्त हो विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्वनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धिको प्राप्त होते है।

आयुष्मानो ! आश्चर्यकर है। आयुष्मानो ! अद्‌भुत है। जो यह उन भगवान्, जानकार, द्रष्टा, अर्हत्, सम्यक् सम्वुद्धका जो यह सुभाषित है, जो यह जजालसेसे विमुक्ति है, जो यह ज्ञान है, जो यह प्राणियो की विशुद्धिके लिये, शोक तथा अनुतापका शमन करनेके लिये, दु ख तथा दौर्मनस्यका अन्त करनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात् करनेके लिये जो यह इन छह अनुस्मृतियोकी देशना है।

तब एक भिक्षु जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने भगवानसे यह निवेदन किया—"भन्ते! मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका कौन कौन सा समय (उपयुक्त) होता है?"

भिक्षुओ! मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेके ये छ उपयुक्त समय हैं। कौनसे छः? जिस समय भिक्षुके मनमे काम-राग-उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन काम-रागसे युक्त हो और जिस समय उसे कामरागके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमें कामराग उत्पन्न हुआ है, मेरा मन काम-रागसे युक्त है, और मैं कामरागके उपशमनका यथार्थ उपाय नही जानता हूँ। आयुष्मान् बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे काम-रागका उपशमन हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे कामरागके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह पहला उपयुक्त समय है, मनकी साधनाकरनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमें क्रोध (= व्यापाद) उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन क्रोधसे युक्त हो और जिस समय उसे क्रोधके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान् मेरे मनमें क्रोध उत्पन्न हुआ है, मेरा मन क्रोधसे युक्त है, और मैं क्रोधके उपशमनका यथार्थ उपाय नही जानता हूँ। आयुष्मान् बहुत अच्छा होगा कि यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करे जिससे क्रोधका उपशमन हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे क्रोधके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह दूसरा उपयुक्त समय है मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमें आलस्य (= थीनमिद्ध) उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उस का मन आलस्यसे युक्त हो और जिस समय उसे आलस्य के उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमें आलस्य उत्पन्न हुआ है, मेरा मन आलस्यसे युक्त है, और मैं आलस्यके उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान्, बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे आलस्यका उपशमन हो सके। मन की साधना करनेवाला भिक्षु उसे आलस्य के उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह तीसरा उपयुक्त समय है मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमे औद्धत्य-कौकृत्य उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन औद्धत्य-कौकृत्य से युक्त हो, और जिस समय उसे औद्धत्य-कौकृत्यके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान् मेरे मनमे औद्धत्य-कौकृत्य उत्पन्न हुआ है, मेरा मन औद्धत्य-कौकृत्यसे युक्त है, और मैं औद्धत्य--कौकृत्यके उपशमनका यथार्थ उपाय नही जानता हूँ। आयुष्मान्, बहुत अच्छा होगा कि यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करे जिससे औद्धत्य-कौकृत्यका उपशमन हो सके। मनकी साधना करने वाला भिक्षु उसे औद्धत्य-कौकृत्यके उपशमन का उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह चौथा उपयुक्त समय है, मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमे विचिकित्सा उत्पन्न हुई हो, जिस समय उसका मन विचिकित्सासे युक्त हो और जिस समय उसे विचिकित्साके शमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान्! मेरे मनमें विचिकित्सा उत्पन्न हुई है, मेरा मन विचिकित्सासे युक्त है, और मैं विचिकित्सा के उपशमनका यथार्थ उपाय नही जानता हूँ। आयुष्मान्! बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करे जिससे विचिकित्सा का उपशमन हो सके। मनकी साधना करने वाला भिक्षु उसे विचिकित्सा के उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह पाँचवा उपयुक्त समय है, मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुको इस बातका ज्ञान न हो, वह देखता न हो कि किस निमित्त (=विषय) पर चित्त एकाग्र करनेसे, बिना किसी बाधाके उसके आश्रवो (=चित्त-मलो) का क्षय हो सकेगा, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान्! मैं नही जानता, मै नही देखता कि किस निमित्तकी भावना (=अभ्यास) करनेसे, बिना किसी बाधा के मेरे आस्रवोका क्षय होगा? आयुष्मान्! बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करे जिससे बिना किसी बाधाके मेरे आश्रवोका क्षय हो सके। मनकी साधना करने वाला भिक्षु उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है जिससे बिना किसी बाधाके आश्रवोका क्षय हो सके। भिक्षुओ, यह छठा उपयुक्त समय है, मन की साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

एक समय बहुतसे स्थविर भिक्षु वाराणसीमें विहार कर रहे थे—ऋषि पतन में मृगदायमें। तब जिस समय वे भिक्षाटनसे लौट आये थे, जिस समय वे भोजन-शाला में इकट्ठे बैठे थे, उनके बीचमें यह बातचीत चली कि आयुष्मानो! मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जानेका उपयुक्त समय कौन सा है? ऐसा प्रश्न उठने पर उनमेंसे एक भिक्षुने कहा—आयुष्मानो! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह है, जब वह भिक्षाटनके बाद, भोजन कर चुकनेके अनन्तर पाँव धोकर, शरीरको सीधा कर, पालथी मारकर, स्मृति को सामने करके बैठा हो। उसके ऐसा कहने पर एक दूसरे भिक्षुने कहा—आयुष्मानो! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नहीं है, जब वह भिक्षाटनके बाद, भोजन कर चुकनेके अनन्तर, पाँव धोकर, शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृति को सामने करके बैठा हो। आयुष्मानो! जिस समय मनकी साधनामे लगा हुआ भिक्षु, भिक्षाटन के बाद, भोजनकर चुकनेके अनन्तर, पाँव धोकर, शरीरको सीधा कर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, उस समय उसकी भिक्षाटनकी थकावट भी दूर हुई नही रहती, भोजनानन्तर होने वाली तन्द्रा भी दूर हुई नही रहती, इसलिये मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नही है, बल्कि आयुष्मानो! मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु जब सन्ध्याके समय, ध्यान भावना कर चुकनेपर, विहारकेपीछे छायामें शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, वह समय मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका है।

ऐसा कहनेपर एक और भिक्षुने उस भिक्षुको कहा—आयुष्मान्! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नही है जिस समय आयुष्मान्! मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु सन्ध्याके समय, ध्यान भावनाकर चुकने पर, विहारके पीछे, छायामें शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, क्योंकि दिनमें उसने ध्यानके जिस निमित्त को मनमें जगह दी होती है, वही उस समय उसके मनमें व्याप्त रहता है, इसलिये मनकीसाधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका वह उपयुक्त समय नहीं है, बल्कि आयुष्मान! जिस समय मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु रात्रिके ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर, शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, वह समय मनकी साधना में लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका है।

ऐसा कहने पर एक और भिक्षुने उस भिक्षुको कहा—आयुष्मान! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नही है, जिस समय

आयुष्मान मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु रात्रिके ब्राह्म-मुहूर्तमे उठकर शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृति को सामने करके बैठा होता है, क्योकि उस समय उसका शरीर ओजपूर्ण होता है और वह समय बुद्धोकी देशना (= शासन)पर विचार करनेके लिये योग्य होता है, इसलिये मनकी साधनामे लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका वह उपयुक्त समय नही है।

ऐसा कहनेपर आयुष्मान महाकात्यायनने स्थिवर भिक्षुओको यह कहा—आयुष्मानो ! मैंने स्वय भगवानके मुखसे सुना है, भगवानके मुखसे ग्रहण किया है कि मनकी साधना करन वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेके ये छह उपयुक्त समय हैं। कौनसे छह ? जिस समय भिक्षुके मनमे काम-राग उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन काम-रागसे युक्त हो और जिस समय उसे काम-रागके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमे काम-राग उत्पन्न हुआ है, मेरा मन काम-रागसे युक्त है, और मैं काम-रागके उपशमनका यथार्थ उपाय नही जानता हूँ। आयुष्मान ! वहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करे,जिससे काम-रागका उपशमन हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे कामरागके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ,यह पहला उपयुक्त समय है मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षु ! जिस समय भिक्षुके मनमे क्रोध (= व्यापद) उत्पन्न हुआ हो.. आलस्य (= थीन मिद्ध) उत्पन्न हुआ हो औद्धत्य -कौकृत्य (= पश्चाताप) उत्पन्न हुआ हो विचिकित्सा उत्पन्न हुई हो . . . जिस समय भिक्षुको इस बातका ज्ञान न हो, वह देखता न हो कि किस निमित्त पर चित्त एकाग्र करनेसे बिना किसी वाधाके उसके आस्रवो (= चित्तमलो)का क्षय हो सकेगा,उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान ! मैं नही जानता, मैं नही देखता कि किस निमित्तकी भावना (= अभ्यास) करनेसे बिना किसी वाधाके मेरे आस्रवोका क्षय होगा। आयुष्मान ! बहुत अच्छा होगा, यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करे, जिससे बिना किसी बाधाके मेरे आस्रवोका क्षय हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है जिससे बिना किसी बाधाके आस्रवोका क्षय हो सके। भिक्षुओ, यह छठा समय है, मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका। आयुष्मानो ! मैंने स्वय भगवानके मुखसे सुना है, भगवान के मुखसे ग्रहण किया है कि मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जाने के ये छह उपयुक्त समय है।

तव भगवान्‌ने आयुष्मान उदायीको सम्वोधित किया—उदायी! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं? ऐसा कहनेपर आयुष्मान् उदायी चुप रहे। दूसरी वार भी भगवानने आयुष्मान् उदायीसे प्रश्न किया—उदायी! अनुस्मृतियाँ कितनी है? दूसरी वार भी आयुष्मान् उदायी चुप रहे। तीसरी वार भी भगवान्‌ने आयुष्मान् उदायीसे प्रश्न किया—उदायी! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं? तीसरी वार भी आयुष्मान् उदायी चुप रहे।

तव आयुष्मान् आनन्दने आयुष्मान् उदायीसे कहा—"आयुष्मान् उदायी, शास्ता तुमसे प्रश्न पूछ रहे हैं।" "आयुष्मान् आनन्द! मैं भगवान्‌का कथन सुन रहा हूँ।" (उसने भगवान्‌को उत्तर दिया—) 'भन्ते! एक भिक्षु अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करता है। . जैसे .एक जन्मका भी, दो जन्मोका भी—इस प्रकार आकार और उद्देश्य सहित वहुतसे जन्मोका अनुस्मरण करता है—यह भन्ते! अनुस्मृतियाँ हैं।"

तव भगवान्‌ने आयुष्मान् आनन्दको सम्वोधित किया—"आयष्मान् आनन्द! मैंने जान लिया है कि यह निकम्मा उदायी मनकी साधना करनेमें नही लगा है। आनन्द! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं?' "भन्ते! अनुस्मृतियाँ पाँच हैं। कौन-सी पाँच? भन्ते! एक भिक्षु काम-भोगोंसे दूर रह तृतीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। भन्ते! यह एक अनुस्मृति है, इसका अभ्यास करनेसे, इसे वढानेसे इसी शरीरमें सुखगकी प्राप्ति होती है। फिर भन्ते! भिक्षु आलोक-सञ्ज्ञापर चित्त एकाग्र करता है, दिवस-सञ्ज्ञापर चित्तको एकाग्र करता है, वह जैसा दिनको समझता है, रातको भी वैसा ही दिन समझता है, वह रातको भी वैसा ही दिन समझता है जैसा दिनको दिन समझता है, वह खुले चित्तसे, वाधा रहित चित्तसे, प्रभास्वर चित्तकी भावना करता है। भन्ते! यह एक अनुस्मृति है। इस प्रकार इसका अभ्यास करनेसे, इस प्रकार इसमें वृद्धि करनेसे ज्ञान-दर्शनका लाभ होता है।

और फिर भन्ते! भिक्षु पैरके तलवेसे ऊपर केश-मस्तकसे नीचे, त्वचासे घिरे हुए इस कायाको नाना प्रकारकी गन्दगीसे पूर्ण देखता है—इस कायामें है—केश, रोम, नख, दाँत, चमडी (=त्वक), माँस, स्नायु, हड्डी (के भीतर) की मज्जा, वृक्क, कलेजा, यकृत, क्लोमक, तिल्ली, फुफ्फुस, आँत, पतली आँत (=अन्त-गुण), उदरस्थ (=वस्तुयें) पाखाना, पित्त, कफ, पीप, लोहू, पसीना, वर (=भेद) आँसु, चरवी (=वसा), लाट, नासा-मल, जोडोमेंका तरल पदार्थ, और मूत्र। भन्ते! यह भी एक अनुस्मृति है। भन्ते! इसका अभ्यास करनेसे, इसकी वृद्धि करनेसे काम-रागका शमन होता है।

फिर भन्ते! भिक्षु श्मशानमे फेंके हुए एक दिनके मरे, दो दिनके मरे, तीन दिनके मरे, फूले, नीले पड गये, पीव-भरे, (मृत-) शरीरको देखे (और
तीन दिनके मरे, फूले, नीले पड गये, पीव-भरे, (मृत-) शरीरको देखे (और
उससे), वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इससे न बच सकनेवाली है। अथवा भन्ते! भिक्षु श्मशानमें फेंके कौओ द्वारा खाये जाते, चीलो द्वारा खाये जाते, गीधो द्वारा खाये जाते, कुत्तो द्वारा खाये जाते, गीदडो द्वारा खाये जाते अथवा अन्य नाना प्रकारके प्राणियो द्वारा खाये जाते हुए (शरीरको) देखे (और उससे) वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इसीसे न बच सकनेवाली है। अथवा भन्ते! श्मशानमें फेंके हुए, हड्डियोके ढांचे मात्र शरीरको देखे, जो मांस और रक्तसे युक्त हो तथा जो नसोसे परस्पर जुडा हो, हड्डियोके ढांचे मात्र शरीरको देखे, जो मांस और रक्तसे रहित हो किन्तु नसोसे परस्पर जुडा हो, हड्डियोके ढांचे मात्र शरीरको देखे, जो मांस और रक्तसे भी रहित हो और जो नसोसे भी परस्पर जुडा न हो, सर्वथा असम्बद्ध इधर-उधर बिखरी हुई हड्डियोको देखे, हाथकी हड्डी कही पडी हो, पांवकी हड्डी कही पडी हो, जांघकी हड्डी कही पडी हो, छातीकी हड्डी कही पडी हो चूतडपरकी हड्डी कही पडी हो, पीठकी हड्डी कही पडी हो, खोपडी कही पडी हो—(और उससे) वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाव-वाली, ऐसे ही होनेवाली, इसीसे न बच सकनेवाली है। अथवा वह श्मशानमें फेंके हुए शरीरको देखे, जिसकी हड्डियां शखके समान श्वेत हो, जिनका ढेर लगा हो, जिन्हे वहां पडे वर्षसे भी अधिक हो गया हो, जो सड गई हो, जो चूर्ण-विचूर्ण हो गई हो—(और उससे) वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इसीसे न बच सकनेवाली है। भन्ते! यह भी एक अनुस्मृति है। इसका अभ्यास, इसकी वृद्धि करनेसे अहकार की भावनाका नाश होता है।

फिर भन्ते! भिक्षु सुखके प्रहाणसे . चतुर्थ-ध्यान को प्राप्त कर विहर करता है। भन्ते! यह भी एक अनुस्मृति है। इसका अभ्यास करनेसे, इसकी वृद्धि करनेसे अनेक धातुओका ज्ञान प्राप्त होगा। भन्ते! ये पाँच अनुस्मृतियाँ है।"

"बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! आनन्द! तो आनन्द! तू यह एक और छठी अनुस्मृति याद कर ले। आनन्द! भिक्षु स्मृतिमान होकर ही आता है, स्मृतिमान होकर ही जाता है, स्मृतिमान होकर ही खडा होता है, स्मृतिमान होकर ही

बैठता है, स्मृतिमान होकर ही लेटता है, स्मृतिमान होकर सभी कर्म करता है। आनन्द! यह भी एक अनुस्मृति है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढानेसे स्मृति-संप्रजन्यकी प्राप्ति होती है।

भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम बातें है। कौन-सी छह? श्रेष्ठतम-दर्शन, श्रेष्ठतम-श्रवण, श्रेष्ठतम-लाभ, श्रेष्ठतम-शिक्षा, श्रेष्ठतम-परिचर्या (= सेवा), तथा श्रेष्ठतम-अनुस्मरण। भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-दर्शन कौन-सा है? भिक्षुओ, एक आदमी हाथी-रत्नको भी देखनेके लिये जाता है, अश्व-रत्नको भी देखनेके लिये जाता है, मणि-रत्नको भी देखनेके लिये जाता है, किसी छोटी-बडी चीजको देखने जाता है अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि, मिथ्याचारी श्रमण वा ब्राह्मणको देखने जाता है। भिक्षुओ, यह भी एक प्रकारका दर्शन ही है, नही है, ऐसा मै नही कहता हूँ। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारके जो ये दर्शन है, ये हीन है, ग्राम्य है, पृथक जनोंके ही योग्य है, अनार्यजनोके ही योग्य है—अनर्थ कर है, न निर्वेदके लिये है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है, न ज्ञानके लिये है, न सम्बोधिके लिये है और न निर्वाणके लिये ही होते है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत वा तथागतके श्रावकके दर्शनार्थ जाना है, यही दर्शनोमें श्रेष्ठतम दर्शन है, और यही प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दु:ख दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम-दर्शन कहलाता है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन।

श्रेष्ठतम-श्रवण किसे कहते है? भिक्षुओ, एक आदमी भेरी-शब्द सुननेके लिये भी जाता है, वीणा-शब्द सुननेके लिए भी जाता है, गीत-शब्द सुननेके लिये भी जाता है, कोई और ऊँची-नीची आवाज सुननेवके लिये जाता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि, मिथ्याचारी श्रमण वा ब्राह्मणका उपदेश सुननेके लिये जाता है। भिक्षुओ, यह भी श्रवण ही है, श्रवण नही है, ऐसा मै नही कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारके जो ये श्रवण है, ये हीन है, ये ग्राम्य है, पृथक्जनोंके योग्य है, अनार्यजनोके ही योग्य है, अनर्थकर है, न निर्वेदके लिये है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है, न ज्ञानके लिये है, न सम्बोधिके लिये है, और न निर्वाणके लिये ही होते है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नतायुक्त चित्तसे तथागत वा तथागतके श्रावककी धर्म-देशना सुनना है, यही श्रवणोमें श्रेष्ठतम-श्रवण है, और यही प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक-परिताप के उपशमनके लिये, दु:ख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात् करनेके लिये

होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम श्रवण कहलाता है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-लाभ कैसे होता है? भिक्षुओ, एक आदमीको पुत्रका लाभ होता है, स्त्रीका लाभ होता है, धन-लाभ भी होता है, किसीछोटी-बडी वस्तुका लाभ भी होता है,अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणके प्रति श्रद्धाका लाभ होता है। भिक्षुओ, ये भी लाभ ही है, लाभ नही है, ऐसा मै नही कहता। किन्तु भिक्षुओ, इन प्रकारके जो ये लाभ है, ये हीन है, ग्राम्य है, पृथकजनोके योग्य है, अनार्य जनोके ही योग्य है, अनर्थकर है, न निर्वेदके लिये है और न निर्वाणके लिये ही होते है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्य-मनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत वा तथागतके श्रावकके प्रति श्रद्धाका लाभ है, यही लाभोमे श्रेष्ठतम लाभ है, और यही प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दु ख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये, तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम-लाभ कहा जाता है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण, यह हुआ श्रेष्ठतम-लाभ।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-शिक्षा कैसे होती है? भिक्षुओ, एक आदमी हाथियोके विषयमें सीखता है, घोडोके विषयमे सीखता है, रथ चलाना सीखता है, धनुष चलाना सीखता है, परशु (=कुल्हाडी) चलाना सीखता है, अन्य भी कोई छोटा-मोटा शस्त्र चलाना सीखता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणसे शिक्षा लाभ करता है। भिक्षुओ, ये भी शिक्षा ही है, शिक्षा नही है, ऐसा मै नही कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारकी जो ये शिक्षाये है, ये हीन है, ग्राम्य है, पृथक जनोके योग्य है, अनार्यजनोके योग्य है, अनर्थकर है, न निर्वेदके लिये है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है, न अभिज्ञाके लिये है, न सम्बोधिके लिये है और न निर्वाणके लिये है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनयके अनुसार शीलकी शिक्षा ग्रहण करना है, चित्त (=समाधि) की शिक्षा ग्रहण करना है, प्रज्ञाकी शिक्षा ग्रहण करना है, यही शिक्षाओमे श्रेष्ठतम-शिक्षा है। यही प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दु ख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होती है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम शिक्षा कही जाती है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण, यह हुआ श्रेष्ठतम-लाभ, यह हुई श्रेष्ठतम शिक्षा।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-परिचर्या कैसे होती है ? भिक्षुओ, एक आदमी क्षत्रिय-सेवा करता है, ब्राह्मण-सेवा करता है, गृहपति (—वैश्य) सेवा करता है, अन्य किसी छोटे-बडेकी सेवा करता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणकी सेवा करता है। भिक्षुओ, ये भी सेवा ही हैं, सेवा नही हैं, ऐसा मैं नही कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारकी जो यह परिचर्या है, यह हीन है, यह ग्राम्य है, पृथक जनोंके योग्य है, अनार्य-जनोंके योग्य है, अनर्थकर है, न निर्वेदके लिये है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है,न अभिञ्ञाके लिये है,न सम्बोधिके लिये है, और न निर्वाणके लिये है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नतायुक्त चित्तसे, तथागत वा तथागतके श्रावककी परिचर्या करना है, यही परिचर्याओमे श्रेष्ठतम परिचर्या है। यही प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दु ख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होती है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम परिचर्या, कहलाती है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण, यह हुआ श्रेष्ठतम लाभ, यह हुई श्रेष्ठतम-शिक्षा, यह हुई श्रेष्ठतम-परिचर्या।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम अनुस्मरण कैसे होता है ? भिक्षुओ, एक आदमी पुत्र-लाभका अनुस्मरण करता है, स्त्री-लाभका अनुस्मरण करता है, धन-लाभका अनुस्मरण करता है, किसी छोटे-बडे लाभका अनुस्मरण करता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणका अनुस्मरण करता है। भिक्षुओ, ये भी अनुस्सरण ही है, ये अनुस्मरण नही है, ऐसा मै नही कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारका जो यह अनुस्मरण है, यह हीन है, यह ग्राम्य है, पृथकजनोंके योग्य है, अनार्य-जनोंके योग्य है, अनर्थ कर है, न निर्वेदके लिए है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है, न अभिञ्ञाके लिये है, न सम्बोधिके लिये है और न र्विाणके लिये है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्य मनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत वा तथा-गतके श्रावकका अनुस्मरण करना है, यही अनुस्मरणोमे श्रेष्ठतम, अनुस्मरण है। यही प्राणियोकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दु ख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम-अनुस्मरण कहलाता है। भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम-बातें है।

यो दस्सन वर लद्धा सवणञ्च अनुत्तर,
लाभानुत्तरिय लद्धा सिक्खानुत्तरिये रता,
उपट्ठिता पारिचरिये भावयन्ति अनुस्सतिं,

विवेक पटिसञ्जुत्त खेम अमतगामिनिं
अप्पमादे पमुदित निपका सील सवुता
ते वे कालेन पच्चन्ती यत्थ दुक्ख निरुज्झति ॥

[जो श्रेष्ठतम-दर्शन के लाभी होते है, जो श्रेष्ठतम-श्रवणके लाभी होते है, जो श्रेष्ठतम-लाभके लाभी होते है, जो श्रेष्ठतम-शिक्षाके लाभी होते है, जो श्रेष्ठतम-परिचर्यामें युक्त होते है तथा जो विवेक-सयुक्त, क्षेमकर, अमृत प्राप्त करा देनेवाले अनुस्मरणकी भावना करते है, वे अप्रमादी, प्रमुदित, प्रज्ञावान्, शीवलान् (जन) समय पाकर उस स्थलको प्राप्त होते है जहाँ दु खका सर्वथा निरोध हो जाता है ।]

(४) देवता वर्ग

भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी अवनतिका कारण होती है। कौन-सी छह? कार्य-बहुलता, वचन-बहुलता, निद्रा-बहुलता, मण्डलीकी बहुलता, इन्द्रियोका अरक्षित रहना तथा भोजनके विषयमे मात्रज्ञ न होना। भिक्षुओ, ये छह बाते शैक्ष भिक्षुकी अवनति का कारण होती है।

भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। कौन-सी छह? कार्य-बहुलता न होना, वचन-बहुलता न होना, निद्रा-बहुल न होना, मण्डली-बहुलता न होना, इन्द्रियोका रक्षित रहना तथा भोजनके विषयमे मात्रज्ञ होना। भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है।

तब उस प्रकाशमान् रात्रिमे एक तेजपुज देवता सारे जेतवनको प्रकाशित करता हुआ जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर, भगवान्‌को अभिवादन कर एक ओर खडा हुआ। एक ओर खडे हुए उस देवताने भगवान्‌से यह निवेदन किया—भन्ते, ये छह बाते ऐसी है जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। कौन-सी छह? शास्ताके प्रति गौरव, धर्मके प्रति गौरव, सघके प्रति गौरव, शिक्षाओके प्रति गौरव, अप्रमादके प्रति गौरव, तथा मित्र-भावके प्रति गौरव। भन्ते! ये छह बाते ऐसी है जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। शास्ताने देवताके इस कथनका समर्थन किया। जब उस देवताने यह जाना कि शास्ताने मेरे कथनका समर्थन किया तो वह भगवान्‌को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, वही अन्तर्धान हो गया।

तब भगवान्‌ने उस रात्रिके बीत जानेपर भिक्षुओको निमन्त्रित किया—भिक्षुओ, आजकी इस प्रकाशमान रात्रिमे एक तेजपुज देवता सारे जेतवनको प्रकाशित करता हुआ मेरे पास आया। पास आकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खडा हो गया। एक ओर खडे हुए उस देवताने मुझे यह कहा—"भन्ते! ये छह बातें ऐसी है जो

भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह? शास्ताके प्रति गौरव, धर्मके प्रति गौरव, संघके प्रति गौरव, शिक्षाओंके प्रति गौरव, अप्रमादके प्रति गौरव तथा मित्र-भावके प्रति गौरव। भन्ते! ये छह बातें ऐसी हैं, जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने ऐसा कहा, इतना कहकर, मुझे अभिवादन कर, वहीं अन्तर्धान हो गया।

सत्थुगरु धम्मगरू संघे च तिब्बगारवो,
अप्पमादगरु भिक्खु पटिसन्थारगारवो,
अभव्वो परिहानाय निब्बाणस्सेव सन्तिके ॥

[अर्थ—जिस भिक्षुके मनमें शास्ताके प्रति गौरवका भाव है, धर्मके प्रति गौरवका भाव है, संघके प्रति तीव्र गौरवका भाव है, अप्रमादके प्रति गौरवका भाव है, मैत्रीके प्रति गौरवका भाव है, उसकी अवनति नहीं हो सकती। उसे निर्वाणके समीप पहुँचा हुआ ही जानना चाहिए।]

भिक्षुओ, आजकी इस प्रकाशमान रात्रिमें एक तेजपुंज देवता सारे जेतवनको प्रकाशित करता हुआ मेरे पास आया। पास आकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े हुए उस देवताने मुझे यह कहा—"भन्ते! ये छह बातें ऐसी होती हैं जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह? शास्ताके प्रति गौरव, धर्मके प्रति गौरव, संघके प्रति गौरव, शिक्षाके प्रति गौरव, (पाप कर्म करनेमें) लज्जाके प्रति गौरव, (पाप कर्म करनेमें) भयके प्रति गौरव, भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने ऐसा कहा, इतना कहकर, मुझे अभिवादन कर, वहीं अन्तर्धान हो गया—

सत्थगरु धम्मगरू संघे च तिब्बगारवो,
हिरिओतप्पसम्पन्नो सप्पतिस्सो सगारवो,
अभव्वो परिहानाय निब्बाणस्सेव सन्तिके ॥

[अर्थ—जिस भिक्षुके मनमें शास्ताके प्रति गौरवका भाव है 'धर्मके प्रति गौरवका भाव है, संघके प्रति तीव्र गौरवका भाव है, लज्जा तथा भयसे युक्त है, बड़ोंके प्रति गौरवका भाव है—उसकी अवनति असम्भव है। उसे निर्वाणके समीप पहुँचा हुआ ही जानना चाहिए।]

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथ पिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। उस समय एकान्त-सेवी ध्यानारूढ महा मौद्गल्यायनके मनमें यह वितर्क पैदा हुआ? किन किन देवताओंको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमार

पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ? उस समय तिस्स नामक एक भिक्षुका अचिर मरण हुआ था। वह ब्रह्मलोकमें उत्पन्न हुआ था। वहाँ ब्रह्मलोकमें भी उसकी इस प्रकारकी ख्याति थी कि तिस्स ब्रह्मा महाऋद्धिवान् है और महा प्रतापी है।

उस समय आयुष्मान् महा मौद्गल्यायन, जैसे कोई बलवान् पुरुष समेटी हुई बाँहको फैला ले, वा फैलाई हुई बाँहको समेट ले, उसी प्रकार जेतवनसे अन्तर्धान होकर उस ब्रह्म लोकमें उत्पन्न हुआ। तिस्स ब्रह्माने दूरसे ही देखा कि आयुष्मान् महा मौद्गल्यायन चले आ रहे है। उसने महा मौद्गल्यायन को चले आते देख कहा—मित्र मौद्गल्यायन पधारे। मित्र मौद्गल्यायन! आपका स्वागत है। बहुत समयके बाद आपका यहाँ आना हुआ। मित्र मौद्गल्यायन! यहाँ बैठे, यह आसन बिछा है। आयुष्मान् महामौद्गल्यायन बिछे आसनपर बैठे। तिस्स ब्रह्मा भी आयुष्मान् महामौद्गल्यायनको नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे तिस्स ब्रह्माको आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने यह कहा—हे तिस्स! किन किन देवताओको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि लाभ निश्चित है ?

"मित्र मौद्गल्यायन! चातुर्महाराजिक देवताओको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"तिस्स! क्या सभी चातुर्महाराजिक देवताओको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ?"

"मित्र मौद्गल्यायन! सभी चातुर्महाराजिक देवताओको ऐसा ज्ञान नही होता कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन! जिन चातुर्महाराजिक देवताओकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा नही होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा नही होती है, सघके प्रति अविचल श्रद्धा नही होती है, जो श्रेष्ठ आर्यशीलसे युक्त नही होते है, उन्हे यह ज्ञान नही होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधिलाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन! जिन चातुर्महाराजिक देवताओकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, सघके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, जो श्रेष्ठ आर्य शील से युक्त होते है, उन्हे यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"तिस्स! क्या केवल चातुर्महाजिक देवताओको ही यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ?

अथवा त्र्योत्रिंश देवताओको भी ? याम देवताओको भी ? तुषित देवताओको भी ? निर्माण रति देवताओको भी ? और क्या परनिर्मितवशवर्ती देवताओको भी यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ? "

"मित्र मौद्गल्यायन ! परनिर्मितवशवर्ती देवताओको भी इस प्रकारका ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"तिस्स ! क्या सभी परनिर्मितवशवर्ती देवताओको इस प्रकारका ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"मित्र मौद्गल्यायन ! सभी परनिर्मितवशवर्ती देवताओको इस प्रकारका ज्ञान नही होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन ! जिन परनिर्मितवशवर्ती देवताओकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा नही होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा नही होती है, सघके प्रति अविचल श्रद्धा नही होती है, जो श्रेष्ठ आर्य-शीलसे युक्त नही होते है, उन्हे यह ज्ञान नही होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन ! जिन परनिर्मितवशवर्ती देवताओकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, सघके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, जो श्रेष्ठ आर्य-शीलसे युक्त होते है, उन्हे यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न है, हमारा पतन नही हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने तिस्स ब्रह्माके भाषणका अभिनन्दन किया, अनुमोदन किया और जैसे कोई बलवान आदमी सिमटी हुई बाँहको पसारे अथवा पसारी हुई बाँहको समेटे उसी प्रकार वे ब्रह्मलोकमे अन्तर्धान हो कर जेतवनमें प्रगट हुए।

भिक्षुओ, ये छह बातें विद्यापक्षीय है। कौन-सी छह ? अनित्य-सज्ञा, अनित्यके प्रति दुःख-सज्ञा, दुःखके प्रति अनात्म-सज्ञा, प्रहाण-सज्ञा, वैराग्य-सज्ञा तथा निरोध-सज्ञा। भिक्षुओ, ये छह बातें विद्यापक्षीय है।

भिक्षुओ, ये छह बातें झगडेकी जड है। कौन-सी छह ? भिक्षुओ, एक भिक्षु क्रोधी-स्वभावका होता है, द्वेषी-स्वभावका होता है। भिक्षुओ, जो भिक्षु क्रोधी तथा द्वेषी होता है उसके मनमे न शास्ताके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न

धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है और न सघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है। वह शिक्षाओका भी अच्छी तरह पालन नही करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुके मनमे न शास्ताके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न सघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है तथा जो शिक्षाओका भी अच्छी तरह पालन नही करता, वह सघ मे ऐसा कलह उत्पन्न करता है, जो वहुत जनोंके अहित के लिये, वहुत जनोके अकल्याणके लिये, वहुत जनोंके अनर्थके लिये तथा देवमनुष्योके अकल्याण तथा अहितके लिये होता है।

भिक्षुओ, यदि तुम्हे अपनेमे या अपनेसे वाहर इस प्रकार झगडेकी जड दिखाई दे, तो भिक्षुओ, तुम्हे कोशिश करनी चाहिए कि तुम इस झगडेकी जडरूपी वुराईको नष्ट कर डालो। यदि भिक्षुओ, तुम अपनेमे या अपने से वाहर इस प्रकार झगडेकी जडरूपी वुराईको न देखो तो भिक्षुओ, तुम्हे ऐसी कोशिश करनी चाहिए कि यह झगडेकी जड़ रूपी वुराई भविष्यमे उत्पन्न न हो—इसी प्रकार भिक्षुओ, यह झगडेकी जड रूपी वुराई नष्ट होती है, इसी प्रकार भिक्षुओ, यह झगडेकी जड-रूपी वुराई पुन उत्पन्न नही होती है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु ढोंगी होता है . निर्दयी होता है . ईर्ष्यालु होता है . कजूस होता है शठ होता है मायावी होता है पापेच्छ होता है मिथ्या-दृष्टि होता है .. दुनियादार होता है जिद्दी होता है तथा दुराग्रही होता है। भिक्षुओ, जो भिक्षु जिद्दी तथा दुराग्रही होता है उसके मनमे न शास्ता के प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्म के प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है और न सघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है। वह शिक्षाओका भी अच्छी तरह पालन नही करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुके मनमें न शास्ता के प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है और न सघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, वह शिक्षाओका भी अच्छी तरह पालन नही करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुके मनमें न शास्ताके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न सघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है तथा जो शिक्षाओका भी अच्छी तरह पालन नही करता, वह सघमे ऐसा कलह उत्पन्न करता है, जो वहुत जनोके अहितके लिये, वहुत जनोके अकल्याणके लिये, वहुत जनोंके अनर्थके लिये तथा देव-मनुष्योके अकल्याण तथा अहितके लिये होता है।

भिक्षुओ, यदि तुम्हे अपनेमें या अपनेसे वाहर इस प्रकार झगडेकी जड दिखाई दे, तो भिक्षुओ, तुम्हे कोशिश करनी चाहिए कि तुम इस झगडेकी जडरूपी बुराईको नष्ट कर डालो। भिक्षुओ, यदि तुम अपनेमे या अपनेसे वाहर इस प्रकार झगडेकी जड-रूपी बुराईको न देखो तो भिक्षुओ, तुम्हे ऐसी कोशिश करनी चाहिए कि यह झगडेकी जडरूपी बुराई भविष्यमे उत्पन्न न हो—इसी प्रकार भिक्षुओ, यह झगडेकी जडरूपी बुराई पुन उत्पन्न नही होती है। भिक्षुओ, ये छह बाते झगडेकी जड है।

एक समय भगवान श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। उस समय वेळुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-सघको षडङ्ग-दक्षिणा देती थी। भगवान्‌ने दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे देखा कि वेळुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-सघको षडग-दक्षिणा देती है। यह देख उन्होने भिक्षु-सघको आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ, यह वेळुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-सघको षडग-दक्षिणा देती है। भिक्षुओ, दक्षिणा किस प्रकार षडग-दक्षिणा होती है? भिक्षुओ, तीन अग तो दाताके होते हैं और तीन अग प्रतिग्राहकके होते है। दाताके तीन अग कौनसे होते है? भिक्षुओ, दाता दान देने से पूर्व प्रसन्न-चित्त रहता है, दान देते समय प्रसन्न चित्त रहता है, दान दे चुकनेपर प्रसन्न चित्त रहता है। ये दाताके तीन अग होते हैं। प्रति ग्राहकोंके तीन अग कौनसे होते हैं? भिक्षुओ, प्रति ग्राहक या तो वीतराग होते हैं, या रागके शमनमें लगे हुए, या तो वीत-द्वेष होते है, या द्वेषके शमनमें लगे हुए, या तो वीत-मोह होते हैं, या मोहके शमनमें लगे हुए। ये प्रति ग्राहकोंके तीन अग है। इस प्रकार दाताके तीन अग और प्रति ग्राहक के तीन अग भिक्षुओ, इस तरह दक्षिणा छह अगोंसे युक्त होती है। भिक्षुओ, इस प्रकारकी छह अगोवाली दक्षिणाके पुण्यका अन्दाजा लगाना आसान नही कि इतना पुण्य हुआ, इतना कुशल-कर्म हुआ, इतना सुख-साधन हुआ, इतना स्वर्गका सहारा हुआ, इतना सुख-परिणाम हुआ, इतना स्वर्ग-सोपान हुआ, यह इतनी मात्रामें इष्टतर होता है, सुन्दरतर होता है, अनुकूल होता है, हितके लिये होता है तथा कल्याणके लिये होता है। उसके वारेमें यही कहा जाता है कि यह गणनातीत है, सीमातीत है, महान पुण्य-राशि है। भिक्षुओ, जैसे महा समुद्रके पानीकी मात्राका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता कि यह पानी इतने आळहक है, इतने सौ आळहक हैं, इतने हजार आळहक हैं, इतने लाख आळहक है। उसके वारेमें यही कहा जाता है कि यह गणनातीत है, यह सीमातीत है, यह महान् जल-राशि है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, छह अगोवाली दक्षिणाके पुण्यका अन्दाजा लगाना आसान नही कि इतना पुण्य हुआ, इतना कुशल-कर्म हुआ, इतना सुख-साधन हुआ, इतना स्वर्गका सहारा हुआ, इतना सुख-परिणाम हुआ, इतना स्वर्ग-सोपान हुआ, यह इतनी मात्रामे इष्टकर होता है, सुन्दरतर होता है, अनुकूल होता है, हितके लिये होता है तथा कल्याणके लिये होता है। इसके बारेमे यही कहा जा सकता है कि यह गणनातीत है सीमातीत है, महान् पुण्य राशि है।

पुब्वेव दाना सुमनो दद चित्त पसादये,
दत्वा अत्तमनो होति एसा यञ्ञस्स सम्पदा ॥
वीतरागा वीतदोसा वीतमोहा अनासवा,
खेत्त यञ्ञस्स सम्पन्न सञ्ञता ब्रह्मचारिनो ॥
सय आचमयित्वान दत्वा सके हि पाणिहि,
अत्तनो परतो चेसो यञ्ञो होति महप्फलो ॥
एव यजित्वा मेधावी सद्धो मुत्तेन चेतसा,
अव्यापज्झ सुख लोक पण्डितो उपपज्जति ॥

[जो दानदेनेसे पूर्व तथा दान देते समय प्रसन्नचित्त रहता है और दान दे चुकनेपर भी सन्तुष्ट रहता है—यही यज्ञकी सम्पदा है। दान रूपी यज्ञ करनेके लिये योग्य क्षेत्र हैं वीत-राग, वीतद्वेष, वीतमोह सयत ब्रह्म चारिगण, स्वय आचमन करके, अपने ही हाथोसे जो दान दिया जाता है वह अपने लिये तथा दूसरेके लिये महान् फलदायी होता है। जो मेधावी जो श्रद्धावान् मुक्त चित्तसे इस प्रकार दान देता है वह पण्डित व्यापाद-रहित सुखद लोकमे उत्पन्न होता है।]

उस समय एक ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान्का कुशल-क्षेम पूछा। भगवान्का कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर वह जाकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मणने भगवान्से यह कहा—"हे गौतम! मेरा यह मत है, मेरी यह दृष्टि है कि न कही कोई आत्म-कृत्य है और न पर-कृत्य है।"

"मैने ऐसे मतवाला, ऐसी दृष्टि वाला न कोई ब्राह्मण देखा और न सुना। कोई भी स्वय अभि-क्रमण तथा प्रतिक्रमण करनेवाला कैसे कह सकता है कि न कही कोई आत्म-कृत्य है और न परकृत्य है। हे ब्राह्मण! तो तू क्या मानता है, क्या किसी भी कार्यका आरम्भ करना होता है?"

"भो! कार्योका आरम्भ होना होनेसे ही उन कार्योके आरम्भ करने-वाले प्राणी दिखाई देते हैं।"

"इस प्रकार हे ब्राह्मण! यह जो कार्य्योका आरम्भ होनेसे उन कार्य्योके करनेवाले प्राणी दिखाई देते है, यही प्राणियोका आत्मकृत्य है तथा यही प्राणियोका पर-कृत्य है। तो हे ब्राह्मण क्या मानते हो निष्क्रमण (–धातु) होता है, पराक्रम (–धातु) होता है, धैर्य (–धातु) होता है, स्थिति (धातु) होता है, उपाक्रम (धातु) होता है?"

"भो! होता है।"

"उपाक्रम (–धातु) के ही होनेसे उपाक्रम करनेवाले प्राणी दिखाई देते हैं। यही प्राणियोका आत्म-कृत्य है और यही प्राणियोका पर-कृत्य है। मैंने ऐसे मत वाला, ऐसी दृष्टि वाला न कोई ब्राह्मण देखा और न सुना। कोई भी स्वय अभि-क्रमण तथा प्रति- क्रमण करनेवाला कैसे कह सकता है कि न कही कोई आत्म-कृत्य है और न पर-कृत्य है।"

"बहुत सुन्दर है हे गौतम! आजसे प्राणान्त होने तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

भिक्षुओ, कर्मोकी उत्पत्तिके तीन हेतु (=निदान) हैं। कौनसे तीन? कर्मोकी उत्पत्तिका एक हेतु है, लोभ, कर्मोकी उत्पत्तिका दूसरा हेतु है द्वेष, कर्मोकी उत्पत्तिका तीसरा हेतु है मोह। भिक्षुओ, लोभसे अलोभकी उत्पत्ति नही होती, भिक्षुओ लोभसे लोभकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, द्वेपसे अद्वेपकी उत्पत्ति नही होती, द्वेषसे द्वेषकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, मोहसे अमोहकी उत्पत्ति नही होती, मोहसे मोहकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, लोभ-जनित कर्मसे, द्वेष-जनित कर्मसे, मोह जनित कर्मसे न देव-योनिके दर्शन होते है, न मनुष्य-योनिके और न किसी अन्य ही सुगतिके। भिक्षुओ, लोभ-जनित कर्मसे, द्वेष-जनित कर्मसे (तथा मोहजनित कर्मसे) नरक-योनिके दर्शन होते हैं, प्रेत-योनिके दर्शन होते है अथवा अन्य किसी दुर्गतिके। भिक्षुओ, कर्मोकी उत्पत्तिके ये तीन हेतु (=निदान) हैं।

भिक्षुओ, कर्मोकी उत्पत्तिके ये तीन हेतु (=निदान) है। कौनसे तीन? कर्मोकी उत्पत्तिका एक हेतु है अलोभ, कर्मोकी उत्पत्तिका दूसरा हेतु है अद्वेष, कर्मोकी उत्पत्तिका तीसरा हेतु है अमोह। भिक्षुओ, अलोभसे लोभकी उत्पत्ति नही होती, भिक्षुओ, अलोभसे अलोभकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, अद्वेषसे द्वेषकी उत्पति नहीं होती, अद्वेपसे अद्वेषकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, अमोहसे मोहकी उत्पत्ति नही होती, अमोहसे अमोहकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, अलोभ-जनित कर्मसे, अद्वेष-जनित कर्मसे, अमोह-जनित कर्मसे, न नरक-योनिके दर्शन होते है, न पशु-

योनिके दर्शन होते हैं, न प्रेत-योनिके दर्शन होते हैं और न अन्य किसी दुर्गतिके। भिक्षुओ, अलोभ-जनित कर्मसे, अद्वेष-जनित कर्मसे, अमोह-जनित कर्मसे देव-योनि के दर्शन होते हैं, मनुष्य-योनिके दर्शन होते हैं अथवा अन्य किसी सुगतिके। भिक्षुओ, कर्मोकी उत्पत्तिके ये तीन हेतु हैं।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् किम्बिल (जनपद) के निवुल वनमे विहार करते थे। तव आयुष्मान् किम्बिल जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे हुए आयुष्मान् किम्बिलने भगवान्से यह कहा—"भगवान्, किस हेतुसे, किस कारणसे भगवान्का परिनिर्वाण हो चुकनेपर सद्धर्म चिर-स्थायी नही रहता ?"

"किम्बिल! तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर (यदि) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक तथा उपसिकाये, शास्ताके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकरविचरने लगती है, धर्मके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरने लगती है, सघके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरने लगती है, शिक्षाओके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरने लगती है तथा आगन्तुकोका स्वागत करनेके प्रति-उपेक्षा-युक्त होकर विचरने लगती है, तो हे किम्बिल! यही हेतु है, यही कारण है जिससे तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर सद्धर्म चिरस्थायी नही रहता।"

"भन्ते! वह कौन-सा हेतु है, वह कौन-सा कारण है जिससे तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर भी सद्धर्म चिरस्थायी रहता है ?"

"किम्बिल! तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर (यदि) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक तथा उपासिकाये शास्ताके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती है, धर्मके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती है, सघके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती है, शिक्षाओके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती है, अप्रमादके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती है तथा आगन्तुकोका स्वागत करनेके प्रति उपेक्षावान् नही रहती है तो हे किम्बिल! यही हेतु है, यही कारण है जिससे तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर सद्धर्म चिर-स्थायी रहता है।"

ऐसा मैने सुना। एक समय आयुष्मान सारिपुत्र राजगृहमें विहार करते थे, गृध्र कूट पर्वत पर। तब आयुष्मान सारिपुत्रने पूर्वान्हि समय पहनकर, पात्र चीवर ले, बहुतसे भिक्षुओके साथ गृध्रकूट पर्वतसे उतरते समय एक जगह बहुत बडा लकडियोका

ढेर देखा। उसे देख सारिपुत्रने भिक्षुओंको सम्बोधित किया–"आयुष्मानो! तुम सब इस लकडियोंके वडे ढेरको देख रहे हो?"

"आयुष्मान्! हाँ।"

"भिक्षुओ, यदि कोई ऋद्धिप्राप्त चित्तवशी भिक्षु चाहे तो वह लकडियोंके इस वडे ढेरको पृथ्वीधातुके ही रूपमे ग्रहण कर सकता है। ऐसा किस लिये? आयुष्मानो! उस लकडियोंके वडे ढेरमें पृथ्वी-धातु (=ठोसपन) है जिससे यदि कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्तवशी भिक्षु चाहे तो वह लकडियोंके इस ढेरको पृथ्वी-धातुके ही रूपमें ग्रहण करा सकता है। भिक्षुओ, यदि कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्तवशी भिक्षु चाहे तो वह लकडियोंके इस वडे ढेरको जल (=अप्) करके भी ग्रहण कर सकता है ...अग्नि (=तेज) करके भी ग्रहण कर सकता है... वायु करके भी ग्रहण कर सकता है, शुभ करके भी ग्रहण कर सकता है, अशुभ करके भी ग्रहण कर सकता है। ऐसा किस लिये? भिक्षुओ, इस लकडियोंके वडे ढेरमें अशुभ भी है, जिससे यदि कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्त-वशी भिक्षु चाहे तो वह लकडियोंके इस ढेरको अशुभ करके भी ग्रहण कर सकता है।

(१२)

ऐसा मैंने सुना। एक समय महान् भिक्षु सघके साथ भगवान् कोशल जनपदमें चारिका करते हुए जहाँ कोशल (जनपद) का इच्छानगल नामक ब्राह्मण-ग्राम था, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् इच्छानगलके वन-खण्ड मे विहार करते थे। इच्छानगलके ब्राह्मण-गृहपतियोंने सुना कि शाक्य-कुल प्रव्रजित शाक्य-पुत्र श्रमण गौतम इच्छानगल पधारे हैं और इच्छानगलके वन-खण्डमे विहार कर रहे हैं। उन भगवान् गौतमका इस प्रकार का यश, इस प्रकार की कीर्ति सुनाई देती है कि वे भगवान् अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं, विद्या तथा आचरणसे युक्त हैं, सुगति-प्राप्त हैं, लोकके ज्ञाता हैं, अनुपम पुरुष-दमन-सार्थी हैं, देव-मनुष्योंके शास्ता हैं, वुद्ध भगवान् हैं। वे इस देव-सहित मार-सहित लोकको ..ऐसे अर्हतोंका दर्शन करना अच्छा होता है।

तव इच्छानगलके ब्राह्मण-गृहपति उस रातके वीत जाने पर वहुत सी खाद्य-भोज्य सामग्री ले जहाँ इच्छानगल वन-खण्ड था, वहाँ पहुँचे। जाकर वे हल्ला करते हुए, शोर मचाते हुए, दरवाजे वाले प्रकोष्ठके वाहर खडे हुए। उस समय आयुष्मान् नागित भगवान्के उपस्थापक (सेवक) थे। तव भगवान् ने आयुष्मान् नागितको सम्बोधित किया–"नागित! ये कौन हैं जो इतना हल्ला मचा रहे हैं, इतना शोर मचा रहे हैं, मानो मछुवे मछलियोंके लिये ले-दे कर रहे हो?"

"भन्ते ! ये इच्छानगलके ब्राह्मण-गृहपति है जो आपके तथा भिक्षु सघके लिये वहुत सी खाद्य-भोज्य सामग्री लेकर आये हैं और द्वारके बाहर खडे है।"

"नागित ! मुझे ऐश्वर्य (यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रखो। नागित ! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मात्रामें प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, वहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवाञ्छित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशसा रूपी सुखका स्वागत करे।"

"भगवान् ! इस समय इसे स्वीकार करे। सुगत ! इस समय इसे ग्रहण करें। भन्ते ! यह आपके इसे सहन करनेका समय है। भन्ते ! अव आप जिस जिस ओर भी पधारेंगे, उस उस ओरके ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकीओर झुक जायेंगे। जिस प्रकार मूसलाधार वर्षाके होनेपर, जिधर ढलवान होता है, पानी उधर ही वह जाता है, उसी प्रकार आप जिस जिस ओर भी पधारेंगे उस उस ओरके ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकी ओर झुक जायेंगे। ऐसा किसलिये ? भगवान् आपका शील तथा प्रज्ञा ऐसी ही है।"

"नागित ! मुझे ऐश्वर्य (यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रखो। नागित ! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मत्रामे प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, वहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवाञ्छित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशसा रूपी सुखका स्वागत करे।

"नागित ! मै एक भिक्षुको देखता हूँ, जो ग्रामकी सीमापर एकाग्र चित्त वैठा होता है। तव मेरे मनमे होता है कि अब विहारमे रहने वाला भिक्षु या श्रमण वननेकी प्रतीक्षा करने वाला इस आयुष्मान्‌को चिढायेगा और इसके चित्तकी एकाग्रताको नष्ट कर देगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे ग्रामकी सीमा पर के विहरणसे मैं प्रसन्न नही होता।

"नागित ! मै एक भिक्षुको देखता हूँ जो जगलमे वैठा ऊघ रहा है। उस समय नागित ! मेरे मनमे यह होता है—अव यह आयुष्मान् इस निद्रा-तन्द्राको जीतकर एकान्त आरण्य-वासका ही ध्यान करेगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मै प्रसन्न होता हूँ।

"नागित ! मै एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो जगलमे अस्थिर चित्त वैठा है। उस समय नागित ! मेरे मनमे यह होता है—अव यह आयुष्मान् अस्थिर चित्तको स्थिर करेगा अथवा स्थिर चित्तको स्थिर वनाये रखेगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मै प्रसन्न होता हूँ।

"नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो जगलमें बैठा है। उस समय नागित! मेरे मनमे यह होता है—अब यह आयुष्मान् अविमुक्त चित्तको विमुक्त करेगा अथवा विमुक्त चित्तको विमुक्त बनाये रखेगा। हे नागित! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मैं प्रसन्न होता हूँ।

"नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो गावकी सीमा पर रहता है। उसे चीवर, पिण्डपात (भोजन) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य परिष्कार आदि की प्राप्ति होती है। वह उस लाभ-सत्कारकी कामनासे ध्यान-मार्गका त्याग करता है, आरण्य-वासके एकान्त जीवनका त्याग करता है, ग्राम-निगम—राजधानियोमें आकर रहने लग जाता है। नागित! मैं ऐसे भिक्षुके उस गाँवकी सीमा पर रहनेसे प्रसन्न नही होता।

"नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो गावकी सीमा पर रहता है। उसे चीवर पिण्डपात (भोजन) शयनासन ग्लान-प्रत्यय भैषज्य-परिष्कार आदिकी प्राप्ति होती है। वह उस लाभ-सत्कारकी उपेक्षाकर ध्यान-मार्गका त्याग नही करता, आरण्य-वासके एकान्त जीवनका त्याग नही करता। नागित! मैं उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे प्रसन्न होता हूँ।

"नागित! जब मैं रास्ते चलता होता हूँ और मुझे आगे पीछे कोई नही दिखाई देता, तो मुझे अच्छा लगता है, यदि और किसी दृष्टिसे नही, तो कमसे कम मल-मूत्र त्यागनेकी सुविधा होनेकी दृष्टिसे ही।"

(५) धार्मिक वर्ग

एक समय भगवान श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिक के जेतवनाराममे विहार करते थे। तब भगवान् ने पूर्वान्हसमय पहनकर पात्र-चीवर ले, श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रवेश किया। श्रावस्तीमें भिक्षाटन कर भोजन कर चुकनेके अनन्तर श्रावस्तीमें वापिस लौटने पर आयुष्मान् आनन्द को सम्बोधित किया—"आनन्द! आ जहाँ मिगार-माताका पूर्वाराम है, दिनमें विहार करनेके लिये वहाँ चले।" "भन्ते! अच्छा" कह आयुष्मान् आनन्दने भगवानको प्रतिवचन दिया। तब भगवान् आयुष्मान आनन्दको साथ ले जहाँ मिगार-माताका पूर्वाराम प्रासाद था, वहाँ पहुँचे। तब भगवान् शाम होनेपर योगाभ्याससे उठे, और उन्होने आनन्दकेको सम्बोधित किया—आनन्द! आ जहाँ पूर्वकी ओरका कोठा है, वहाँ चले, गात धोन को। 'भन्ते! अच्छा' कह आयुष्मान् आनन्दने भगवानको प्रत्युत्तर दिया। तब भगवान आनन्दको साथ ले गात धोनेके लियें जहाँ पूर्वकी ओर का कोठा था, वहाँ गये। पूर्वकी

ओरके कोठेमें स्नानकर चुकनेके अनन्तर बाहर आ शरीर सुखाते हुए एक ही चीवर पहने खडे रहे। उस समय कोशल नरेश प्रसेनजित्का सेत नामका महान् हाथी (नाग) बडे गाजे-बाजेके साथ पूर्व-कोष्ठके पाससे गुजर रहा था। उसे देखकर जनता चिल्लाती थी—राजाका यह नाग सुन्दर है, राजाका हाथी दर्शनीय है, राजाका हाथी अच्छा लगता है, राजाका हाथी (बडे) शरीरवाला है। ऐसा कहने पर आयुष्मान् उदायीने भगवानसे निवेदन किया "भन्ते! क्या बडे शरीरवाले हाथीको ही देखकर लोग 'नाग', 'नाग' का शोर मचाते हैं। अथवा अन्य किसी बडे शरीर वाले प्राणी को देखकर भी लोग 'नाग' 'नाग' का शोर मचाते हैं?"

"उदायी! हाथीको देखकर भी लोग 'नाग' 'नाग' का शोर मचाते हैं, उदायी! अश्वको देखकर भी .. उदायी! बैलको देखकर भी.... उदायी सापको देखकर भी उदायी! वृक्षको देखकर भी. उदायी! बडे शरीर वाले मनुष्यको देखकर भी लोग 'नाग' 'नाग' का शोर माचाते हैं। किन्तु हे उदायी! मैं तो उसीको 'नाग' कहता हुँ कि जो इस देवसहित मार-सहित ब्रह्मसहित लोकमें श्रमण-ब्राह्मणोंसे युक्त, देव मनुष्योंसे युक्त जनतामे शरीर, वाणी तथा मन किसीसे भी पाप-कर्म (आगु) नही करता!"

"भन्ते! आश्चर्य है, भन्ते! अद्भुत् है! भन्ते! यह जो आपका सुभाषित है कि मैं तो उसीको 'नाग' कहता हूँ कि जो इस देव-सहित मार-सहित ब्रह्म-सहित लोकमे, श्रमण-ब्राह्मणोंसे युक्त, देव-मनुष्योंसे युक्त जनतामे शरीर वाणी तथा मन किसीसे भी पाप-कर्म (आगु) नही करता। भन्ते! मैं आपके इस सुभाषितका इन गाथाओ द्वारा, अनुमोदन करता हूँ।

मनुस्सभूत सम्बुद्ध अत्तदन्त समाहित,
इरियमान ब्रह्मपथे चित्तस्सुपसमे रत॥
य मनुस्सा नमस्सन्ति सब्ब धम्मान पारगुं,
देवापि न नमस्सन्ति इति मे अरहतो सुत॥
सब्ब सञ्ञोजनातीत वना निब्बनमागत,
कामेहि नेक्खम्मरत मुत्त सेलाव कचन॥
सब्बे अच्चरुचि नागो हिमवा मञ्ञे सिलुच्चये,
सब्बेस नागनामान सच्चनामो अनुत्तरो॥
नाग वो कित्तयिस्सामि नहि आगु करोति सो,
सोरच्च अविहिंसा च पादा नागस्स ते दुवे॥

तपो च ब्रह्मचरिय चरणा नागस्स त्यापरे,
सद्धा हत्थो महानागो उपेक्खा सेत दन्तवा ॥
मती गीवा सिरो पञ्ञा वीमसा धम्मचिन्तना
धम्मकुच्छि समाचायो विवेको तस्स वालधी ॥
सो झायी अस्सासरतो अज्झत्त सुसमाहितो,
गच्छ समाहितो नागो ठितो नागो समाहितो ॥
सेय्य समाहितो नागो निसिन्नोपि समाहितो,
सव्वत्य सवुतो नागो एसा नागस्स सम्पदा ॥
भुजति अनवज्जानि सावज्जानि न भुञ्जति"
घाम अच्छादन लद्धा सन्निधि परिवज्जये ॥
सञ्ञोजन अणु थूल सव्व छेत्वान वन्धन,
येन येनेव गच्छति अनपेक्खोव गच्छति ॥
यथापि उदके जात पुण्डरीक पवड्ढति,
न वुपलिप्पति तोयेन सुचिगन्ध मनोरम,
तथेव लोके सुजातो वुद्धो लोके विरज्जते,
न वुपलिम्पति लोकेन तोयेन पदुम यथा।
महाग्गिनी पज्जलितो अनाहारूपसम्मति,
सखारेसु पसन्नेसु निव्वुतोति पवुच्चति ॥
अत्यस्साय विञ्ञापनी उपमा विञ्ञुहि देमिता,
विञ्ञस्सन्ति महानागा नाग नागेन देसितं ॥
वीतरागो वीतदोसो वीतमोहो अनासवो,
सरीर विजह नागो परिनिविस्सति अनासवो ॥

[मैंने सुना है कि आप सम्वुद्ध मनुष्य हैं, सयत हैं, एकाग्रचित्त हैं, ब्रह्म-पथ (श्रेष्ठ मार्ग) में विहरण करते हैं, चित्तका शमन किये हैं, आपको सव मनुष्य नमस्कार करते हैं, आप सव धर्मोके पारगत हैं, आपको देवता भी नमस्कार करते हैं, आप अर्हत हैं, आप सव सयोजनोंसे मुक्त हैं, आप निर्वाण-प्राप्त हैं, आप काम-भोगोंके प्रति निष्क्रमा-भिमुख हैं, आप निखरे हुए सोनेके समान हैं, आपकी रुचि अन्य सभीकी रुचियोको अतिक्रान्त कर गई है, जैसे हिमालय पर्वत अन्य सभी पर्वतोको। आपके सभी नामोमें 'नाग' नाम यथार्थ है। मैं 'नाग' के यशका गान करता हूँ। क्योकि वह आगु (पाप-कर्म) नही करता। शुचिता तथा अहिंसा—ये दो नागके पाव माने जायें। तप

और ब्रह्मचर्य—ये दो नागके अन्य दो पाव हैं। श्रद्धा नाग (हाथी) की सूण्ड है, उपेक्षा श्वेत दान्त है। स्मृति ग्रीवा है, प्रज्ञा सिर है, धर्म-चिन्तन सूण्डका आगेका सिरा है। और विवेक उसकी पूंछ है। वह ध्यान करने वाला है, आनापान स्मृतिमे रत है, वह आत्म-संयत है, वह चलता हुआ भी सयत रहता है, वह खडा रहता भी सयत रहता है, वह लेटा हुआ भी सयत रहता है, वह बैठा हुआ भी सयत रहता है—यही नागकी (शील) सम्पदा है। वह निर्दोप आहार ग्रहण करता है, सदोप आहार ग्रहण नही करता। भोजन-छाजन मिलने पर वह उसका सग्रह नही करता। वह सूक्ष्म तथा स्थूल सभी मयोजनो, सभी वधनोका छेदन कर जिस जिस जगह भी विचरता है, सर्वत्र निरपेक्ष होकर ही विचरता है। जैसे सुगन्धित सुन्दर कमल पानीमे पैदा होकर, पानीमे वढता हुआ भी, पानीसे निर्दोप निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार बुद्ध भी लोकमे जन्मग्रहण करते है, लोकमें विचरते है तथापि लोकसे निर्लिप्त रहते है। जैसे प्रज्वलित महा अग्नि ईधन न मिलनेसे शान्त हो जाती है, उसी प्रकार सस्कारोका उपशमन हो जाने पर ही निवृत्त (=निर्वाण प्राप्त) हुआ कहा जाता है। यह अर्थ को प्रकट करने वाली उपमा नाग (=कालुदायी) द्वारा दी गई है। इस नाग द्वारा दी गई उपमा को महा नाग (वुद्ध) जानेगे। राग-विहीन, द्वेप-विहीन, मोह-विहीन, आस्रव-विहीन नाग शरीरका त्याग करेगे।]

तव आयुष्मान आनन्द पूर्वान्हि समय पहन कर पात्र-चीवर ले जहाँ मृगशाला उपासिकाका निवास-स्थान था, वहाँ पहुँचे। जाकर विछे आसनपर बैठे। तव मृगशाला उपासिका जहाँ आयुष्मान आनन्द थे, वहाँ आई। पास आकर आयुष्मान् आनन्दको अभिवादन कर एक ओर वैठी। एक ओर वैठी हुई मृगशाला उपासिकाने आयुष्मान् आनन्दसे यह कहा—

"भन्ते आनन्द! भगवान द्वारा उपदिप्ट इस धर्म-देशना को कैसे समझा जाय जिसमें उन्होने कहा है कि परलोकमे ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोकी समान ही गति होती है? भन्ते! पुराण नामका मेरा पिता, ब्रह्मचारी था, मैथुन ग्राम्य-धर्मसे दूर रहने वाला, विरत रहने वाला। उसके मरने पर भगवान् ने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुपित लोकमे उत्पन्न हुआ है। भन्ते! मेरा जो इसिदत्त पितामह था, वह अब्रह्मचारी था अपनी भार्यासे सतुष्ट रहने वाला। उसके मरने पर भी भगवानने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुपित लोकमें उत्पन्न हुआ है। भन्ते आनन्द! भगवान् द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशनाको कैसे समझा जाय जिसमें उन्होने कहा कि परलोकमे ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोकी समान ही गति होती है?"

"बहन, भगवानने इसी प्रकार उपदेश दिया है।"

तब आयुष्मान आनन्द मृगशाला उपासिकाके घरसे भिक्षा ग्रहण कर, आसनसे उठ चले आये। तब आयुष्मान् आनन्द भिक्षाटन से लौट चुकने पर जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्को यह कहा।

"भन्ते! मैं पूर्वान्ह समय पहन कर, पात्र चीवर लेकर जहाँ मृगशाला उपासिकाका निवासस्थान है, वहाँ पहुँचा। जकार बिछे आसनपर बैठा। तब भन्ते! मृगशाला उपासिका मेरे पास आई। पास आकर मुझे नमस्कार कर एक ओर बैठ गई। एक ओर बैठी हुई मृगशाला उपासिका ने भन्ते! मुझे यह कहा—भन्ते आनन्द! भगवान द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशनाको कैसे समझा जाय जिसमें उन्होने कहा है कि परलोकमें ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोकी समान ही गति होती है? भन्ते! पुराण नामका मेरा पिता ब्रह्मचारी था, मैथुन ग्राम्य-धर्मसे दूर रहनेवाला, विरत रहने वाला। उसके मरने पर भगवानने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुषित लोकमे उत्पन्न हुआ है। भन्ते! मेरा जो इसिदत्त नामका पितामह था, वह अब्रह्मचारी था, अपनी भार्यासे सतुष्ट रहने वाला। उसके मरने पर भी भगवान् ने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुषित लोकमें उत्पन्न हुआ है। भन्ते आनन्द भगवान् द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशनाको कैसे समझा जाय जिसमे उन्होने कहा है कि परलोकमें ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोकी समान ही गति होती है?

"भन्ते! ऐसा कहनेपर मृगशाला उपासिकाको मैने कहा—बहन! भगवानने इसी प्रकार उपदेश दिया है।"

"आनन्द! कहाँ तो वह मूर्खा, अपण्डिता, स्त्रिप्रज्ञा मृगशाला उपासिका और कहाँ आदमियोंकी इन्द्रियोंके बारेमे ज्ञान, कि कौन तीक्ष्ण-इन्द्रिय है, कौन मृदु-इन्द्रिय है? आनन्द! इस लोकमें छ प्रकार के लोग विद्यमान है। कौनसे छ प्रकारके?

"आनन्द! एक आदमी अच्छी तरह रहता है, सुखपूर्वक रहता है। उसके साथी उससे प्रसन्न रहते है। किन्तु उसे जो सुनना चाहिये, वह उसने सुना नही होता, बहुश्रुत होना चाहिये, वह नही होता, (सम्यक्) दृष्टिसे (अन्धकार) विंधा होना चाहिये, वह नही होता, समयानुकूल (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त नही होती। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटने पर, मरने पर, हानिकी ओर ही अग्रसर होता है, विशेषताकी ओर नही। वह हानिको ही प्राप्त होता है, विशेषताको नही।

"आनन्द ! एक दूसरा आदमी अच्छी तरह रहता है, सुखपूर्वक रहता है। उसके साथी उससे प्रसन्न रहते है। उसे जो सुनना चाहिये, वह उसने सुना होता है बहुश्रुत होना चाहिये, वह होता है, सम्यक्-दृष्टिसे अन्धकार बिंधा होना चाहिये, वह होता है, समयानुकूल (धर्म श्रवण से प्राप्त होने वाली) प्रीति प्राप्त होती है। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटनेपर, मरने पर विशेषकी ओर अग्रसर होता है, हानिकी ओर नही। वह विशेषताको ही प्राप्त होता है, हानिको नही।

"हे आनन्द, उनकी तुलना करने वाले तुलना करते है और कहते है कि इसमे भी वे ही बाते थी और दूसरेमे भी वे ही बाते थी, इन दोनोमे से कैसे एक श्रेष्ठ गतिको प्राप्त हुआ, दूसरा निकृष्ठ गतिको ? आनन्द ! उनका यह तुलना करना दीर्घकाल तक उनके अहित के लिये होता है, दु खके लिये होता है।

"हे आनन्द ! जो यह एक आदमी अच्छी तरह रहता है, सुखपूर्वक रहता है, जिसके साथी उससे प्रसन्न रहते है, जिसने जो सुनना चाहिये वह सुना होता है, बहुश्रुत होना चाहिये, वह होता है, (सम्यक्) दृष्टिसे अन्धकार बिंधा होना चाहिये, वह होता है, समयानुकल (धर्म-श्रवणसे प्राप्त होने वाली) प्रीति प्राप्त होती है। हे आनन्द ! ऐसा आदमी उस पहले आदमीकी अपेक्षा बढिया है, श्रेष्ठतर है। ऐसा क्यो ? हे आनन्द ! इस आदमीको धर्म-स्रोत आगे बढाये लिये जाता है। इस रहस्यको तथागतके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकता है। इसलिये आनन्द ! दूसरोकी कीमत मत लगाओ, दूसरोका मुल्याकन न करो। आनन्द ! या तो मै ही मनुष्योका यथार्थ मुल्याकन कर सकता हूँ, अथवा मेरे समान ही अन्य कोई।

"आनन्द ! एक आदमी क्रोध तथा मान (=अहकार)के वशीभूत हुआ रहता है, समय समय पर उसके मनमे लोभ उत्पन्न होता है। उसे जो सुनना चाहिये, वह सुना नही होता, बहुश्रुत होना चाहिये, वह नही होता, (सम्यक्-) दृष्टिसे (अन्धकार) बिंधा होना चाहिये, वह नही होता, समयानुकल (धर्म श्रवण से, प्राप्त होने वाली) प्रीति प्राप्त नही होती। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटने पर, मरने पर, हानिकी ही ओर अग्रसर होता है, विशेषाताकी ओर नही, वह हानिको ही प्राप्त होता है, विशेषताको नही।

"आनन्द ! एक आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत होता हुआ रहता है, समय समयपर उसके मनमे लोभ उत्पन्न होता है। उसको जो सुनना चाहिये, वह सुना होता है . . हानिकी नही।

"हे आनन्द! उनकी तुलना करनेवाले तुलना करते हैं. .. अथवा मेरे समान ही अन्य कोई।

"आनन्द! एक आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत हुआ रहता है, समय समयपर उसके मुँहसे वाणी फूटती है। उसे जो सुनना चाहिए, वह सुना नही होता . .. समयानुकूल (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त नही होती। वह शरीर छूटनेपर, मरनेपर हानिकी ही ओर अग्रसर होता है, विशेषताकी ओर नही, वह हानिको ही प्राप्त होता है, विशेषता को नही।

"आनन्द! एक आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत हुआ रहता है, समय समयपर उसके मुँहसे वाणी फूटती है। उसे जो सुनना चाहिए,सुना होता है, बहुश्रुत, होना चाहिए, वह होता है, (सम्यक्) दृष्टिसे (अन्धकार) विंधा होना चाहिए वह होता है; समयानुकूल (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त होती है। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटनेपर, मरनेपर विशेषकी ओर अग्रसर होता है, हानिकी ओर नही। वह विशेषताको ही प्राप्त होता है, हानिको नही।

"हे आनन्द! उनकी तुलना करनेवाले तुलना करते हैं और कहते हैं कि इसमें भी वे ही बातें थी और दूसरेमें भी वे ही बाते थी, इन दोनोमेंसे कैसे एक श्रेष्ठ गतिको प्राप्त हुआ, दूसरा निकृष्ठ गतिको? आनन्द! उनका यह तुलना करना दीर्घकाल तक उनके अहितके लिये होता है, दु खके लिये होता है।

"हे आनन्द! जो यह दूसरा आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत हुआ रहता है, समय समयपर उसके मुँहसे वाणी फूटती है। उसे जो सुनना चाहिए, सुना होता है, बहुश्रुत होना चाहिए, वह होता है, (सम्यक्–) दृष्टिसे (अन्धकार) विंधा होना चाहिए, वह होता है, समयानुसार (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त होती है। हे आनन्द! ऐसा आदमी उस पहले आदमीकी अपेक्षा बढिया है, श्रेष्ठतर है। ऐसा क्यो? हे आनन्द! इस आदमीको धर्म-स्रोत आगे बढाये लिये जाता है। इस रहस्यको तथागतके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकता है? इस लिये आनन्द! दूसरोकी कीमत मत लगाओ, दूसरोका मूल्यांकन मत करो। आदमियो-का मूल्याकन करनेवाला खेदको प्राप्त होता है। आनन्द! या तो मैं ही मनुष्योका यथार्थ मूल्याकनकर सकता हूँ, अथवा मेरे समान ही अन्य कोई।

"आनन्द! कहाँ तो वह मूर्ख, अपण्डिता, स्त्रि-प्रज्ञा मृगशाला उपासिका और कहाँ आदमियोकी इन्द्रियोंके बारेमें ज्ञान कि कौन तीक्षण-इन्द्रिय है, कौन मृदु इन्द्रिय है? आनन्द! लोकमें ऐसे छ प्रकारके लोग विद्यमान हैं।

"आनन्द ! जिस प्रकारके शीलसे पुराण युक्त था, उसी प्रकारके शीलसे इसिदत्त युक्त हुआ। पुराणको इसिदत्तकी गतिकी जानकारी नही रही। आनन्द ! जिस प्रकारकी प्रज्ञासे इसिदत्त युक्त था, उसी प्रकारकी प्रज्ञासे पुराण युक्त हुआ। इसिदत्तको पुराणकी गति की भी जानकारी नही। आनन्द ! यह दोनो एक एक अग से हीन है।

"भिक्षुओ ! काम भोगी गृहस्थोंके लिये दरिद्रता वडी दुखद होती है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति विहीन होता है, जो निर्धन होता है, उसे ऋण लेना पडता है। भिक्षुओ ! काम भोगी गृहस्थोके लिये ऋण लेना भी दु.खद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, वह ऋण लेकर सूद देनेके लिये वचन-वद्ध होता है। भिक्षुओ ! काम भोगी गृहस्थोके लिए सूद देना भी दु खद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, वह सूद देना स्वीकार कर समयपर सूद नही दे पाता है। उसपर दोषारोपण होता है। भिक्षुओ ! काम-भोगी गृहस्थोके लिये दोषारोपण भी दु खद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, जव वह माँगनेपर नही दे पाता, तो लोग उसका पीछा करते है। भिक्षुओ ! काम-भोगी गृहस्थोके लिये पीछा किया जाना भी दु खद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, जव वह पीछा किये जानेपर भी नही देता है, तो लोग उसे वधनमे बाँधते है। भिक्षुओ, काम-भोगी गृहस्थोके लिये वन्धनमे वाँधा जाना भी दु खद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"इस प्रकार भिक्षुओ ! कामभोगी गृहस्थोके लिये दुनियामे दरिद्रता भी दु खद होती है, कामभोगी गृहस्थोके लिये दुनियामे ऋण लेना भी दु खद होता है कामभोगी गृहस्थोके लिये दुनियाँमें सूद देना भी दु खद होता है, काम भोगी गृहस्थोके

लिये दुनियामें दोषारोपण सुनना भी दु खद होता है,काम भोगी गृहस्थोंके लिये दुनियामें पीछा किया जाना भी दु खद होता है, कामभोगी गृहस्थोके लिये दुनियामें बन्धनमे बाँधा जाना भी दु खद होता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिसके मनमें कुशल-धर्मो (=गुणो) के प्रति श्रद्धा नही, कुशल धर्मोके प्रति लज्जा नही, कुशल धर्मोके प्रति भय नही, कुशल-धर्मोके प्रति वीर्य (=प्रयत्न) नही, कुशल-धर्मोके प्रति प्रज्ञा नही है—भिक्षुओ, ऐसा आदमी आर्य-विनयमें दरिद्र, सम्पत्ति-विहीन तथा निर्धन कहलाता है।

"भिक्षुओ! वह जो दरिद्र होता है,धन-विहीन होता है, निर्धन होता है, कुशल-धर्मोके प्रति श्रद्धा-विहीन होनेसे, कुशल-धर्मोके प्रति लज्जा-विहीन होनेसे, कुशल-धर्मोके प्रति भय-रहित होनेसे, कुशल धर्मोके प्रति प्रयत्न-विहीन होनेसे, कुशल-धर्मोके प्रति प्रज्ञा-रहित होनेसे शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनमे दुष्कर्म करता है। यह मैं उसका ऋण ग्रहण करना कहता हूँ।

"वह उस कायिक दुष्कर्मको ढका रखनेके लिये अनुचित इच्छाको मनमे जगह देता है। उसकी यही कामना होती है कि लोग मुझे नही जानें। उसके यही सकल्प-विकल्प होते हैं कि लोग मुझे नही जानें। उसका ऐसा ही कहना होता है कि लोग मुझे नही जानें। वह यही प्रयत्न करता है कि लोग मुझे नही जानें। वह उस वाणीके दुष्कर्मको ढका रखनेके लिये . वह उस मनके दुष्ट कर्मको ढका रखनेके लिये . कि लोग मुझे न जानें, शरीरसे प्रयत्न करता है, यह मैं उसका सूद देना कहता हूँ।

"उसके सुशील साथी ऐसा कहते हैं कि 'इस आयुष्मानने ऐसा किया है, इसकी ऐसी करनी है।' यह उसपर लगा हुआ 'दोषारोपण' कहता हूँ।

"जब वह आरण्यमें जाता है, वृक्षकी छायाके नीचे बैठता है, शून्यागारमे जाता है, तो उसके मनमें पश्चात्ताप-युक्त बुरे बुरे अकुशल सकल्प-विकल्प पैदा होते हैं। उसे मैं उसका लोगो द्वारा पीछा किया जाना कहता हूँ।

"भिक्षुओ! वह दरिद्र, वह सम्पत्ति-विहीन,वह निर्धन शरीर, वाणी तथा मनमे दुष्ट कर्म कर शरीर छूटनेपर, मरणानन्तर या तो नरकके बन्धनमे बँधता है या पशु योनिके बन्धनमें बँधता है। भिक्षुओ, मैं किसी दूसरे ऐसे एक बन्धनको नही देखता जो इतना कठोर हो, इतना चुभनेवाला हो, इतना बाधक हो अनुपम योग-क्षेमकी प्राप्तिकी दृष्टिसे जितना कि यह नरकका बन्धन है या पशु-योनिका बन्धन है।

दालिद्दिय दुक्ख लोके, इणादाने चवुच्चति,
दलिद्दो इणमादाय, भुञ्जमानो विहञ्ञति ॥
ततो अनुचरन्ति न, वन्धन पि निगच्छति,
एत हि वधन दुक्ख, कामलाभाभिजप्पिन ॥
तथेव अरिय विनये, सद्धा यस्स न विज्जति ।
अहिरीको अनोत्तप्पी, पापकम्म विनिब्बयो ॥
काय दुच्चरित कत्वा, वची दुच्चरितानि च
मनो दुच्चरित कत्वा, 'मा म जञ्ञू' ति इच्छति ॥
मो ससप्पति कायेन, वाचाय उद चेतसा
पापकम्म पवड्ढेन्तो, तत्थ तत्थ पुनप्पुन ॥
सो पापकम्मो दुम्मेधो, जान दुक्कटमत्तनो ।
दलिद्दो इणमादाय, भुञ्जमानो विहञ्ञति ॥
ततो अनुचरन्ति न, सङ्कप्पा मानसा दुखा,
गामे वा यदि वारञ्ञे, यस्स विप्पटिसारजा ।
सो पापकम्मो दुम्मेधो, जान दुक्कटमत्तनो,
योनिमञ्ञतर गन्त्वा, निरये वापि वज्झति ॥
एत हि वधन दुक्ख, यम्हा धीरो पमुच्चति,
धम्मलद्धेहि भोगेहि, दद चित्त पसादय ॥
उभयत्थ कटग्गाहो, सद्धस्स घरमेसिनो,
दिट्ठधम्म हितत्थाय, सम्पराय सुखाय च,
एवमेत गहट्ठान, चागो पुञ्ञ पवड्ढति ॥
तथेव अरियविनये, सद्धा यस्स पतिट्ठिता ।
हिरीमनो च ओत्तप्पी, पञ्ञवा सीलसवुता ॥
एसो खो अरियविनये, सुखजीवी ति वुच्चीति ।
निरामिस सुख लद्धा, उपेक्ख अधितिट्ठति ॥
पञ्च नीवरणे हित्वा, निच्च आरद्धविरियो
झानानि उपसम्पज्ज, एकोदि निपको सतो ।
एव ञत्वा यथाभूत, सब्ब सयोजनक्खये ।
सब्बसो अनुपादाय, सम्मा चित्त विमुच्चति ।
तस्स सम्माविमुत्तस्स, ञाण चे होति तादिनो

अकुप्पा मे विमुत्तीति, भवसयोजनक्खये ।
एत खो परम ञाण, एत सुखमनुत्तर ।
असोक विरज खेम, एत आणण्यमुत्तम ।

[लोकमें दरिद्रता वडा दु ख है और ऋण लेना भी दु ख कहा जाता है । दरिद्र आदमीको ऋण लेकर खाना पडता है, जिससे वह दु खको प्राप्त होता है । तव लोग उसका पीछा करते है । वह वन्धनमे भी वाँधा जाता है । कामभोगी गृहस्थोंके लिये वन्धनमें वाँधा जाना भी दु ख है । उसी प्रकार आर्य-विनय (=बुद्ध शासन) के अनुसार जिस आदमीमें श्रद्धा नही है, लज्जा नही है, भय नही है, पापाभि-मुख है, वह शरीर, वाणी और मनसे दुष्ट कर्म करके चाहता है कि कोई उसे जाने नही । वह शरीर, वाणी और मनसे पाप-कर्मको वार-वार करता, पाप-कर्ममें वृद्धि करता है । वह मूर्ख पापी अपने दुष्कृतको जानता है । यही कहलाता है कि वह दरिद्र ऋण लेकर खाता हुआ कष्ट पाता है । तव वह गाँव या आरण्यमें जहाँ कही भी रहता है वही पश्चाताप रूपी दुखद सकल्प-विकल्प उसका पीछा करते हैं । वह मूर्ख पापी अपने दुष्कृत्यका जानकार होता है और किसी (पशु-) योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा नरकसे वँधता है । यही दु खद वन्धन है, जिनसे धीरजन मोक्ष प्राप्त करते हैं । वे धर्मानुसार प्राप्त ऐश्वर्यमेंसे दान देते हुए प्रमुदित मन रहते हैं । जो गृहस्थ श्रद्धावान् होता है वह उभयत्र विजयी होता है—इस जन्ममें आनदित रहता है तथा परलोकमें सुखी रहता है, इस प्रकार त्याग-शील होनेसे गृहस्थोका पुन्य वढता है । इसी प्रकार आर्य-विनय (=बुद्ध शासन) में जिसकी श्रद्धा स्थिर होती है, जो लज्जा-शील होता है, जो पाप-भीरु होता है, जो प्रज्ञावान् होता है, जो शीलवान होता है—वही आर्य-विनयके अनुसार सुखी कहलाता है । वह निरामिप (=दिव्य) सुखको प्राप्तकर उपेक्षामें प्रतिष्ठित होता है । वह पाँच नीवरणोका त्याग कर, नित्य प्रयत्न-शील रहता है । वह ध्यानोको प्राप्त कर चित्तकी एकाग्रता सम्पादित करता है । वह वुद्धिमान होता है । वह स्मृतिमान होता है । इस प्रकार यथार्थ ज्ञानको प्राप्त कर लेनेसे, सव सयोजनो (=वन्धनो) का मूलोच्छेद कर सकनेसे, सर्वत्र अनासक्त हो जानेसे, वह हर प्रकारसे विमुक्त चित्त हो जाता है । उस स्थिर चित्तको, उस सम्यक् प्रकारसे विमुक्त चित्तको यह अनुभूति होती है कि ससारके सयोजनोका क्षय हो गया और उसे अचल विमुक्ति प्राप्त हो गई । यही ज्ञान है, यही अनुपम सुख है, यही शोक-रहित, रज-रहित कल्याण-पद है और यही श्रेष्ठ प्रकारका उऋण होना है ।]

ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान् महाचुन्द चेदी (जनपद) के सयजाति स्थानपर विहार करते थे। वहाँ आयुष्मान् महाचुन्दने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ।" भिक्षुओने आयष्मान् महाचुन्दको प्रतिवचन दिया—'आयुष्मान्।'

तव आयुष्मान् महाचुन्दने यह कहा—'आयुष्मानो! जो धर्म-कथिक भिक्षु होते हैं, वे ध्यानी भिक्षुओका तिरस्कार करते हैं। वे कहते हैं कि ये अपने आपको ध्यान करनेवाला, ध्यान लगाने वाला, ध्यानमे बैठने वाला कहते हैं, यह क्या ध्यान लगाते हैं, किसका ध्यान लगाते हैं, कैसे ध्यान लगाते हैं? इससे न धर्म-कथिक भिक्षुओको ही प्रसन्नता होती है, न ध्यानी भिक्षओको ही प्रसन्नता होती है। वे वहुतजनोके हितमे रत नही होते हैं। वे वहुत जनोके सुखमें नही लगे होते हैं। वे वहुत जनो तथा देव-मनुष्योके कल्याण, हित और सुखमे नही लगे होते हैं।

"आयुष्मानो! जो ध्यानी भिक्षु होते हैं, वे धर्म-कथिक भिक्षुओका तिरस्कार करते हैं—ये धर्म-कथिक, धर्म-कथिक कहते हैं, किन्तु ये उद्धत हैं, अशान्त हैं, चपल हैं, मुखर हैं, वकवादी हैं, मूढ-स्मृति हैं, अजानकार हैं, असमाहित हैं, भ्रान्त चित्त हैं तथा असयतेन्द्रिय हैं। ये क्या धर्म-कथिक हैं! ये कितने धर्म-कथिक हैं! ये कैसे धर्म-कथिक हैं! इससे न ध्यानी भिक्षुओको ही प्रसन्नता होती है और न धर्म-कथिक भिक्षुओको ही प्रसन्नता होती है। वे वहुत जनोके हितमे रत नही होते हैं। वे वहुत जनोके सुखमे नही लगे होते हैं। वे वहुतजनोके तथा देव-मनुष्योके कल्याण, हित और सुखमे नही लगे होते हैं।

"आयुष्मानो! धर्म-कथिक भिक्षु धर्म-कथिक भिक्षुओका ही यश गाते हैं, वे ध्यानी भिक्षुओके गुणोकी चर्चा नही करते। इससे न धर्म-कथिक भिक्षुओको प्रसन्नता होती है, न ध्यानी भिक्षुओको प्रसन्नता होती है। वे वहुत जनोके हितमे रत नही होते हैं। वे वहुत जनोके सुखमें नही लगे होते हैं। वे वहुत जनोके तथा देव-मनुष्योके कल्याण, हित और सुखमे नही लगे होते हैं।

"आयुष्मानो! ध्यानी भिक्षु ध्यानी भिक्षुओका ही यश गाते हैं, वे धर्म-कथिक भिक्षुओके गणोकी चर्चा नही करते। इससे न ध्यानी भिक्षुओको प्रसन्नता होती है, न धर्म-कथिक भिक्षुओको प्रसन्नता होती है। वे वहुत जनोके हितमे रत नही होते हैं। वे वहुत जनोके सुखमे नही लगे होते हैं। वे वहुत जनो तथा देव-मनुष्योके कल्याण, हित और सुखमे नही लगे होते हैं।

"इसलिये आयुष्मानो ! यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि हम स्वय धर्म-कथिक होते हुए भी ध्यानी भिक्षुओंकी प्रशसा करेंगे। आयुष्मानो ! ऐसी ही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। यह किसलिए ? आयुष्मानो ! अद्भुत हैं वे लोग दुर्लभ हैं वे लोग जो काय (=मन) से अमृत-धातु (=निर्वाण) का स्पर्श करते हुए विचरते हैं।

"इसलिए आयुष्मानो ! यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये कि हम स्वयं ध्यानी भिक्षु होते हुए भी धर्म-कथिक भिक्षुओंकी प्रशसा करेंगे। आयुष्मानो ! ऐसे ही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। यह किसलिये ? आयुष्मानो ! अद्भुत हैं वे लोग, दुर्लभ हैं वे लोग जो गम्भीर विषयोंको प्रज्ञासे बीधकर स्पष्ट रूपसे देखते हैं।"

तब मोळियसीवक परिव्राजक जहाँ भगवान् थे वहाँ गया। जाकर भगवान्के साथ कुशल-क्षेमकी चर्चा की। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए मोळियसीवक परिव्राजकने भगवान्से यह कहा "भन्ते ! सान्दृष्टिक-धर्म, सान्दृष्टिक धर्म कहा जाता है। भन्ते ! धर्म कैसे सान्दृष्टिक होता है, कालतिक्रान्त, 'आओ और स्वय देख लो' विशेषणसे युक्त, (निर्वाणकी ओर) ले जाने वाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किये जानेवाला ?

"तो सीवक ! तुझ से ही प्रश्न करता हूँ, जैसे तुझे लगे वैसा उत्तर देना। सीवक ! तू क्या मानता है, जब तुझमें लोभ होता है तो क्या तू जानता है कि तुझमें लोभ है ? जब तुझमें लोभ नही होता क्या तू नहीं जानता कि तुझमें लोभ है ?"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"सीवक ! यह जो जब तुझमें लोभ होता है, तू जानता है कि तुझमें लोभ है और यह जो जब तुझमें लोभ नही होता तू जानता है कि तुझमें लोभ नही है, सीवक ! ऐसा होनेसे भी धर्म सान्दृष्टिक होता है . . . . होता है।

"तो सीवक ! तू क्या मानता है जब तुझमें द्वेष होता है . . . . जब तुझमें मोह होता है . . . . जब तुझमें लोभ-धर्म (=लोभ) होता है . . . जब तुझमें द्वेष-धर्म होता है जब तुझमें मोह-धर्म होता है, तो क्या तू जानता है कि तुझमें मोह-धर्म है ? जब तुझमें मोह-धर्म नही होता तो क्या तू नही जानता कि तुझमें मोह-धर्म नही है ?"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"सीवक ! यह जो जब तुझमें मोह-धर्म होता है तू जानता है कि तुझमें मोह-धर्म है, और यह जो जब तुझमें मोह-धर्म नही होता तू जानता है कि तुझमें मोह-धर्म नहीं है, सीवक ! ऐसा होनेसे भी धर्म सान्दृष्टिक होता है, कालातिक्रान्त,

'आओ और स्वय देख लो' विशेषणसे युक्त होता है, (निर्वाणकी ओर) ले जाने वाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किये जानेवाला होता है।"

"वहुत सुन्दर भन्ते! वहुत सुन्दर भन्ते! आजसे जीवन पर्यन्त आप मुझे अपना शरणागत उपासक धारण करे।"

तव एक ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्से कुशल-क्षेम वार्ता की। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर वैठा। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मणने भगवान्से यह कहा—"भन्ते! सान्दिृष्टिक धर्म, सान्दिृष्टिक धर्म कहा जाता है। भन्ते! धर्म कैसे सान्दिृष्टिक होता है, कालातिक्रान्त, 'आओ और स्वय देख लो' विशेषणसे युक्त, (निर्वाणकी ओर) ले जाने वाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किये जानेवाला होता है।"

"तो ब्राह्मण! तुझसे ही प्रश्न करता हूँ। जैसा तुझे लगे वैसा उत्तर देना। ब्राह्मण! तू क्या मानता है, जव तुझमे राग होता है तो क्या तू जानता है कि तुझमे राग है? जव तुझमे राग नही होता तो क्या तू नही जानता कि तुझमे राग नही है?"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"ब्राह्मण! यह जो जव तुझमे राग उत्पन्न होता है, तू जानता है कि तुझमे राग है और यह जो जव तुझमे राग नही होता, तू जानता है कि तुझमे राग नही है, ब्राह्मण! ऐसा होनेसे भी धर्म सान्दृष्टिक होता है ले जानेवाला।

"तो ब्राह्मण! तू क्या मानता है जव तुझमे द्वेष उत्पन्न होता है जव तुझमे मोह जव तुझमे शारीरिक दुष्ट-कर्म वाणीका दुष्टकर्म . मानसिक दुष्टकर्म होता है तो क्या तू जानता है कि तुझमे मानसिक दुष्ट-कर्म है, जव तुझमे मानसिक दुष्टकर्म नही होता तो क्या तू नही जानता कि तुझमे मानसिक दुष्टकर्म नही है?"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"ब्राह्मण! यह जो जव तुझमे मानसिक दुष्टकर्म उत्पन्न होता है तू जानता है कि तुझमे मानसिक दुष्टकर्म है और यह जो जव तुझमे मानसिक दुष्टकर्म नही होता तू जानता है कि तुझमे मानसिक-दुष्टकर्म नही है, ब्राह्मण! ऐसा होनेपर भी धर्म सान्दिृष्टिक होता है, कालातिक्रान्त, 'आओ और स्वय देख लो' विशेषणसे युक्त, (निर्वाणकी ओर) ले जानेवाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किये जानेवाला होता है।"

"वहुत सुन्दर है गौतम ! वहुत सुन्दर है गौतम ! हे गौतम ! आजसे आप जीवन पर्यन्त मुझे अपना शरणागत उपासक समझें।"

एक समय भगवान् श्रावस्तीमे अनाथपिण्डकके जेतवनाराममे विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् खेम तथा आयुष्मान सुमन श्रावस्तीमे अन्धवनमे विहार करते थे। तव आयुष्मान् खेम तथा आयुष्मान सुमन जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को नमस्कार कर एक ओर वैठे। एक ओर वैठ हुए आयुष्मान् खेमने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते ! जो भिक्षु अर्हत होता है, क्षीणास्रव होता है, आदर्श जीवन विताने वाला होता है, कृतकृत्य होता है, भारविहीन होता है, सदर्थ (=उद्देश्य) सिद्ध होता है, सयोजन-विहीन होता है तथा जो प्रज्ञासे सम्यक प्रकार विमुक्त होता है, उस के मनमे ऐसा नही होता कि 'अमुक मुझसे वढकर है, अमुक मेरे समान है, अमुक मुझसे निकृष्ट है।' आयुष्मान् खेमने ऐसा कहा। शास्ता सन्तुष्ट हुए। तव आयुष्मान खेम 'शास्ता मुझसे सन्तुष्ट है' सोच आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादन कर चले गये।

आयुष्मान् खेमके चले जानेके थोडी ही देर वाद आयुष्मान् सुमनने भगवान्से कहा—"भन्ते ! जो भिक्षु अर्हत होता है, क्षीणास्रव होता है, आदर्श जीवन विताने वाला होता है, कृतकृत्य होता है, भारविहीन होता है, सदर्थ (=उद्देश) सिद्ध होता है, सयोजन विहीन होता है तथा जो प्रज्ञासे सम्यक् प्रकार विमुक्त होता है, क्या उसके मनमें ऐसा नही होता कि अमुक मुझसे वढकर है, अमुक मेरे समान है, अमुक मुझसे निकृष्ट है ?" आयुष्मान् सुमनने ऐसा कहा। शास्ता सन्तुष्ट हुए। तव आयुष्मान् 'शास्ता मुझसे सन्तुष्ट है' सोच, आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादन कर चले गये।

आयुष्मान खेम और आयुष्मान सुमनके चले जानेके थोडी ही देर वाद भगवानने भिक्षुओको सम्वोधित किया——"भिक्षुओ, जो कुलपुत्र होते हैं, इसी तरह अर्हत्वकी घोषणा करते है। वात भी कह दी गई, और अपने आपको भी वीचमें नही लाया गया। लेकिन कुछ मूर्ख अर्हत्वकी घोषणा ऐसे करते है, मानो यह हँसनेकी वात हो। वे वादमें दु खको प्राप्त होते है।

न उस्सेसु न ओमेसु, समत्ते नोपनीयरे।
खीणा जाति वुसित ब्रह्मचरिय, चरन्ति
सयोजन विप्पमुत्ता॥

[वे अपनेको न श्रेष्ठ, न हीन और न बराबर ही मानते है, जो क्षीण-जन्म हो जाते है, जिन्होने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है तथा जो सयोजन-विहीन होते है।]

"भिक्षुओ! इन्द्रिय सयमके न रहनेपर, इन्द्रिय-सयमकी हानि होनेपर शीलको आघात पहुँचता है, शीलके न रहनेपर, शीलकी हानि होनेपर सम्यक् समाधिको आघात पहुँचता है, सम्यक् समाधिके न रहनेपर, सम्यक् समाधिकी हानि होनेपर यथार्थ ज्ञान-दर्शनको आघात पहुँचता है, यथार्थ ज्ञान-दर्शनके न रहनेपर, यथार्थ ज्ञान-दर्शनकी हानि होनेपर निर्वेद-वैराग्यको आघात पहुँचता है, निर्वेद-वैराग्यके न रहनेपर, निर्वेद-वैराग्यकी हानि होनेपर, विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनको आघात पहुँचता है। भिक्षुओ, जिस प्रकार जिस वृक्षकी शाखाये और पत्ते नही होते, उसकी पपडी भी पूर्णताको प्राप्त नही होती, छाल भी पूर्णताको प्राप्त नही होती, फल भी पूर्णताको प्राप्त नही होता, सार भी पूर्णताको प्राप्त नही होता, इसी प्रकार भिक्षुओ, इन्द्रिय सयमके न रहनेपर, इन्द्रिय-सयमकी हानि होनेपर शीलको आघात पहुँचता है विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनको आघात पहुँचता है।

"भिक्षुओ, इन्द्रिय-सयमके रहनेपर, इन्द्रिय सयमसे युक्त होनेपर, शीलकी सिद्धि होती है, शीलके रहनेपर, शीलसे युक्त होनेपर, सम्यक समाधिकी सिद्धि होती है, सम्यक् समाधिके रहनेपर, सम्यक् समाधिसे युक्त होनेपर, यथार्थ ज्ञान-दर्शनकी सिद्धि होती है, यथार्थ ज्ञान-दर्शनके रहनेपर, यथार्थज्ञान-दर्शनसे युक्त होनेपर, निर्वेद-वैराग्यकी सिद्धि होती है, निर्वेद वैराग्यके रहनेपर, निर्वेद वैराग्यसे युक्त होनेपर, विमुक्ति ज्ञान-दर्शनकी सिद्धि होती है। भिक्षुओ, जिस प्रकार, जिस वृक्षकी शाखाये और पत्ते होते है, उसकी पपडी भी पूर्णताको प्राप्त होती है, छाल भी पूर्णताको प्राप्त होती है, फल्गु भी पूर्णताको प्राप्त होता है, सार भी पूर्णताको प्राप्त होता है, इसी प्रकार भिक्षुओ, इन्द्रिय-सयमके रहनेपर, इन्द्रिय-सयमसे युक्त होनेपर शीलकी सिद्धि होती है विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनकी सिद्धि होती है।

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ आयुष्मान सारिपुत्र थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर आयुष्मान् सारिपुत्रके साथ कुशल-क्षेमकी चर्चा की। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेपर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्दने आयुष्मान् सारिपुत्रसे यह कहा—

"आयुष्मान् सारिपुत्र! कौन-सी बात होनेसे भिक्षु अश्रुत-धर्मको सुनता है, सुने हुए धर्मोको भूलता नही है, जिन धर्मोको उसने पहले अपने चित्तसे स्पर्श किया

है, वे स्पष्ट रूपसे प्रकट रहते है तथा जिन बातोको वह पहले नही जानता उनकी जानकारी प्राप्त करता है ? "

"आयुष्मान आनन्द ! आप बहुश्रुत है। आप ही इस प्रश्न का समाधान करें।"

"तो आयुष्मान सारिपुत्र सुनें, अच्छी तरह मनमे धारण करे, कहता हूँ।"

"बहुत अच्छा" कह आयुष्मान सारिपुत्रने आयुष्मान आनन्दको प्रति-वचन दिया, तब आयुष्मान आनन्दने यह कहा—

"आयुष्मान सारिपुत्र ! यहाँ एक भिक्षु धर्मको सीखता है—सूत्रको, गेय्यको, वेयाकरणको, गाथाको, उदानको, इतिवुत्तकको, जातकको, अद्भुतधर्मको, वेदल्लको। वह सुने अनुसार, सीखे अनुसार, दूसरोको विस्तार पूर्वक धर्मका उपदेश करता है, सुने अनुसार, सीखे अनुसार दूसरोसे धर्म दुहरवाता है, सुने अनुसार, सीखे अनुसार दूसरोके साथ मिलकर धर्मका सज्झायन (= पाठ) करता है, सुने अनुसार, सीखे अनुसार धर्मपर विचार करता है, मनसे मनन करता है। जिस विहारमें बहुश्रुत, आगमके जानकार, धर्मधर, विनय-धर, मातृको (-धर) स्थविर भिक्षु रहते है, वह उसी विहारमें (वर्षा-) वास करता है। वह समय समयपर उनसे जाकर पूछता है, प्रश्न करता है—भन्ते ! यह कैसे, इसका क्या अर्थ है ? वे उस आयुष्मानको जो अप्रकट रहता है, उसे प्रकट कर देते है, जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते है, जो शकाओके नाना स्थल होते हैं, उन शकाओका निवारण कर देते है। आयुष्मान् सारिपुत्र ! ये बातें होनेसे भिक्षु अश्रुत-धर्मको सुनता है, सुने हुए धर्मोको भूलता नही है, जिन धर्मोंको उसने पहले अपने चित्तसे स्पर्श किया है, वे स्पष्टरूपसे प्रकट रहते है तथा जिन बातोको वह पहले नही जानता उनकी जानकारी प्राप्त करता है।"

"आयुष्मान् आश्चर्यकर है, आयुष्मान अद्भुत है यह जो आयुष्मान आनन्दका सुभाषित है। हमारी मान्यता है कि आयुमान आनन्द इन छह धर्मोंसे युक्त है। आयुष्मान आनन्द धर्मको सीखते है—सूत्रको, गेय्यको, वेयाकरणको, गाथाको, उदानको, इतिवुत्तकको, जातकको, अद्भुत धर्मको, वेदल्लको। आयुष्मान आनन्द सुने अनुसार, सीखे अनुसार, दूसरोको विस्तार पूर्वक धर्मको उपदेश करते है, आयुष्मान् आनन्द सुने अनुसार सीखे अनुसार दूसरोसे धर्म दुहरवाते हैं, आयुष्मान् आनन्द सुने अनुसार,

---

१ सम्भवत अभिधर्म पिटकका पूर्व-रूप।

सीखे अनुसार दुसरोके साथ मिलकर धर्मका सज्झायन (= पाठ) करते हैं, आयुष्माने आनन्द सुने अनुसार, सीखे अनुसार, धर्मपर विचार करते है, मनसे मनन करते हैं। आयुष्मान् आनन्द जिस विहारमे वहु-श्रुत,आगमनके जानकार, धर्मधर, विनय-घर, मातृका-घर भिक्षु रहते है, उसी विहारमे (वर्षा-) वास करते है। वे समय समयपर उनसे जाकर पूछते हैं। प्रश्न करते है—भन्ते! यह कैसे, इसका क्या अर्थ है? वे आयुष्मान् आनन्द को जो अप्रकट रहता है उसे प्रकट कर देते है, जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते है, शकाओके जो नाना-स्थल होते है, उन शकाओका समाधान कर देने है।"

तव जाणुस्सोणि ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे, वहाँ आया। आकर भगवान्का कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर वैठ गया। एक ओर वैठे हुए जाणुस्सोणि ब्राह्मणने भगवान्से यह पूछा—

"हे गौतम! क्षत्रिय जनोके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस वातसे होती है? उनकी नजर किस वातपर रहती है? उनकी पर सतुष्टि किस वातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! क्षत्रियोके जीवनका उद्देश्य भोग्य-पदार्थोका सग्रह करना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान वनना होता है। उनकी प्रतिष्ठा वलवान् वननेसे होती है। उनकी नजर पृथ्वीका स्वामी वननेपर होती है। उनकी पर सतुष्टि राज्याभिषेक आदि ऐश्वर्यकी प्राप्तिसे होती है।"

"हे गौतम! ब्राह्मणोके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस वातसे होती है? उनकी नजर किस वातपर रहती है? उनकी पर सतुष्टि किस वातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! ब्राह्मणोके जीवनका उद्देश्य भोग्य-पदार्थोका सग्रह करना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान वनना होता है। उनकी प्रतिष्ठा (वेद-) मन्त्रोके जानकार होनेसे होती है। उनकी नजर यज्ञोपर लगी रहती है। उनकी पर सतुष्टि ब्रह्म-लोकगामी होनेसे होती है।"

"हे गौतम! वैश्यो (= गृहपतियो) के जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस वातपर रहती है? उनकी पर सतुष्टि किस वातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण वैश्यो (=गृहपतियो) के जीवनका उद्देश्य भोग्य पदार्थोका सग्रह करना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान बननेका होता है। उनकी प्रतिष्ठा शिल्पका जानकार होनेसे होती है। उनकी नजर कर्मान्त (=गृहस्थीके कामो) पर रहती है। उनकी पर सतुष्टि गृहस्थीके कामोके समाप्त होनेसे होती है।"

"हे गौतम! स्त्रियोंके जीवनका अभिप्राय (=उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस बातपर रहती है? उनकी पर सतुष्टि किस बातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! स्त्रियोंका अभिप्राय (=उद्देश्य) पुरुषकी प्राप्ति होती है। उनका प्रधान विचार अलकार-युक्त रहना होता है। उनकी प्रतिष्ठा पुत्र होनेसे होती है। उनकी नजर असपत्नीक बनी रहनेपर रहती है। उनकी पर-सतुष्टि ऐश्वर्य-प्राप्तिसे होती है।"

"हे गौतम! चोरोंके जीवनका अभिप्राय (=उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस बातपर रहती है? उनकी पर सतुष्टि किस बातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! चोरोंके जीवनका अभिप्राय (=उद्देश्य) चोरी करना होता है। उनका प्रधान विचार छिपे रहनेका होता है। उनका बल शस्त्रधारी होनेसे बढता है। उनकी नजर अन्धेरेपर लगी रहती है। उनकी पर सतुष्टि किसीके भी द्वारा न देखे जानेसे होती है।"

"हे गौतम! श्रमणोंके जीवनका अभिप्राय (=उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस बातपर रहती है? उनकी पर सन्तुष्टि किस बातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! श्रमणोंके जीवनका अभिप्राय (=उद्देश्य) क्षमावान् तथा शीलवान् बनना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान् बननेका होता है। उनकी प्रतिष्ठा शीलवान् होनेसे होती है। उनकी नजर अकिञ्चन बने रहनेपर रहती है। उनकी पर सन्तुष्टि निर्वाण-प्राप्तिसे होती है।"

"हे गौतम! आश्चर्य है। हे गौतम! अद्भुत है। हे गौतम! आप क्षत्रियोका भी अभिप्राय, विचार, बल, प्रधान-सकल्प तथा परमोद्देश्य जानते हैं। हे गौतम! आप ब्राह्मणोका भी अभिप्राय, विचार, बल प्रधान-सकल्प तथा परमोद्देश्य जानते हैं। हे गौतम! आप गृहपतियोका भी . . . स्त्रियोका भी . . . चोरोका

भी तथा श्रमणोका भी अभिप्राय, विचार, वल, प्रधान-सकल्प तथा परमोद्देश्य जानते हैं। हे गौतम ! यह वहुत सुन्दर है हे गौतम ! आजसे शरीरान्त होने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक जाने।"

तव एक व्राह्मण जहाँ भगवान थे वहाँ आया। पास आकर भगवान्का कुशलक्षेम पूछा। कुशल-समाचार पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर वैठ गया। एक ओर वैठे हुए उस व्राह्मणने भगवान्से पूछा—

"हे गौतम ! क्या कोई ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे वढानेसे, लौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है ?"

"हे व्राह्मण ! ऐसा एक गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे वढानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है।"

"हे गौतम ! वह कौन-सा एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे वढानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है ?"

"हे व्राह्मण ! अप्रमाद एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे वढानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है।"

"हे व्राह्मण ! जगलमे जानवरोके जितने भी पैर होते है वे छोटे वडेके हिसावमे सभी हाथीके पाँवोके अन्तर्गत आ जाते है। वडे-पनकी दृष्टिसे हाथीका पाँव ही उन सवमे मुख्य है। इसी प्रकार हे व्राह्मण ! अप्रमाद एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे वढानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है।

"हे व्राह्मण ! जैसे किसी शिखरवाले भवनकी सभी कडियाँ शिखरकी ही ओर मुडी रहती है, शिखरकी ही ओर मुँह किये रहती है, शिखरकी ही ओर झुकी रहती है, शिखर ही उनमे मुख्य कहलाता है। इसी प्रकार हे व्राह्मण ! अप्रमाद

"हे व्राह्मण ! जैसे वब्भड घासके काटनेवाला, वब्भडको काटकर, उसीके सिरेको पकडकर कूटता है, पीटता है, छाँटता है, इसी प्रकार हे व्राह्मण ! अप्रमाद .

"हे व्राह्मण ! जैसे आमकी डठलके टूटनेसे जितने भी आम उस डण्ठलमें लगे रहते है सभी गिर पडते है, इसी प्रकार हे व्राह्मण ! अप्रमाद

"हे व्राह्मण ! जैसे जितने भी छोटे-मोटे राजा होते है, वे सभी चक्रवर्ती नरेशका अनुगमन करते है, उनमे चक्रवर्ती राजा ही श्रेष्ठ कहलाता है, इसी प्रकार हे व्राह्मण ! अप्रमाद

"हे ब्राह्मण! जैसे जितने भी तारागण है, उन सभीकी चमक चन्द्रमाकी चमकके सोलहवे हिस्सेके भी बराबर नही होती, चन्द्रप्रभा ही उन सबमे मुख्य मानी जाती है, इसी प्रकार हे ब्राह्मण! अप्रमाद एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढानेमे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है।

"हे ब्राह्मण! यह एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढानेसे इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनो उद्देश्योकी सिद्धि होती है।"

"हे गौतम! बहुत सुन्दर है। हे गौतम! बहुत सुन्दर है। आजसे शरीरान्त होने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक जाने।"

एक समय भगवान राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् धार्मिक अपनी जाति-भूमिके सात निवास-स्थानोमे नैवासिक भिक्षु थे। उस समय किसी अतिथि भिक्षुके आने पर आयुष्मान् धार्मिक उसे बुरा-भला कहते, गाली देते, कष्ट देते, क्रोधित कर देते, वचनोंसे बीधते। आयुष्मान धार्मिक द्वारा बुरा-भला कहे जानेके कारण, गाली दिये जानेके कारण, कष्ट दिये जानेके कारण, क्रोधित किये जानेके कारण, वचनोंसे बीधे जानेके कारण, वे अतिथि-भिक्षु इस निवास-स्थानसे चले जाते, न ठहरते, उस निवास-स्थान को खाली कर देते।

तब जाति-भूमिके उपासकोंके मनमे यह हुआ—हमने भिक्षु-सघकी चीवर, भिक्षा, शयनासन, रोगीका पथ्य तथा दवाई आदिसे सेवा की है। लेकिन तब भी अतिथि-भिक्षु चले जाते है, ठहरते नही है, आवास खाली कर देते है। इसका क्या हेतु है, क्या कारण है जिससे अतिथि-भिक्षु चले जाते है, ठहरते नही है, निवास-स्थान खाली कर देते है? तब जाति-भूमिके उपासकोंके मनमे यह हुआ—यह आयुष्मान् धार्मिक अतिथि-भिक्षुओको बुरा भला कहते है, गाली देते है, कष्ट देते है, क्रोधित कर देते है तथा वचनोसे बीधते है। आयुष्मान् धार्मिक द्वारा बुरा-भला कहे जानेके कारण, गाली दिये जानेके कारण, क्रोधित किये जानेके कारण तथा वचनोसे बीधे जानेके कारण, वे अतिथि-भिक्षु इस निवास-स्थानसे चले जाते है, ठहरते नही है, उस निवास-स्थान को खाली कर देते है। हम आयुष्मान् धार्मिक को यहांसे चलता करे।

तब जाति-भूमिके उपासक जहाँ आयुष्मान् धार्मिक था, वहाँ गये। जाकर आयुष्मान् धार्मिक से कहा—'आयुष्मान धार्मिक आप इस निवास-स्थानसे पधारें। आपको और यहाँ रहना नही है।' तब आयुष्मान् धार्मिक उस निवास-स्थानसे भी दूसरे निवास-स्थान चले गये। वहाँ भी आयुष्मान धार्मिक अतिथि-भिक्षुओको बुरा-

भला कहते, गाली देते, कष्ट देते, क्रोधित कर देते तथा वचनोसे बीधते। आयुष्मान् धार्मिक द्वारा बुरा-भला कहे जानेके कारण, गाली दिये जानेके कारण, क्रोधित किये जानेके कारण तथा वचनोसे बीधे जानेके कारण, अतिथि-भिक्षु उस निवास-स्थानसे चले जाते, उसे छोड देते, उस निवास-स्थानको खाली कर देते।

तब जाति-भूमिके उपासकोके मनमे यह हुआ—हमने भिक्षु-सघकी चीवर, भिक्षा, शयनासन, रोगीका पथ्य तथा दवाई आदिसे सेवा की है। लेकिन तब भी अतिथि-भिक्षु चले जाते है, ठहरते नही है, निवास-स्थान खाली कर देते है। इसका क्या हेतु है, क्या कारण है जिससे अतिथि-भिक्षु चले जाते है, ठहरते नही है, निवास-स्थान खाली कर देते है। तब जाति-भूमिके उपासकोके मनमे यह हुआ —यह आयुष्मान् धार्मिक अतिथि-भिक्षुओको हम आयुष्मान् धार्मिकको जाति-भूमिके सातो निवास-स्थानोसे चलता करे। तब जाति-भूमिके उपासक जहाँ आयुष्मान् धार्मिक था, वहाँ गये। जाकर आयुष्मान् धार्मिकसे कहा–'आयुष्मान् धार्मिक! आप जाति भूमिके सातो निवास-स्थानोसे विदा हो।' तब आयुष्मान धार्मिक के मनमे हुआ —'मै जाति-भूमिके सातो निवास-स्थानोसे भगा दिया गया हूँ। अब मै कहाँ जाऊँ?' तब आयुष्मान् धार्मिकके मनमे यह हुआ–'मै जहाँ भगवान् है, वहाँ उनके पास जाऊँ।'

तब आयुष्मान् धार्मिक पात्र चीवर ले, जहाँ राजगृह है वहाँ गया। क्रमशः जहाँ राजगृहका गृध्रकूट पर्वत था, जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् धार्मिकसे भगवान्‌ने पूछा—'अरे! हे ब्राह्मण धार्मिक, तू कहाँसे आया है?'

'भन्ते! जाति-भूमिके उपासकोने मुझे जाति-भूमिके सभी सातो निवास-स्थानोसे भगा दिया है।"

"अरे ब्राह्मण धार्मिक! अब बस कर। तुझे इससे क्या? तुझे वे हर जगहसे भगा देते है और तू भगा दिये जाने पर मेरे ही पास आता है।

"ब्राह्मण धार्मिक! पहले ऐसे सामुद्रिक व्यापारी हुए है। वे तट-दर्शी पक्षीको साथ लेकर नौकाको समुद्रमे छोडते थे। उन्हे जब नौका पर बैठे बैठे तट नही दिखाई देता था, तो वह तट-दर्शी पक्षीको छोडते थे। वह पूर्व दिशा को जाता था, पश्चिम दिशाको जाता था, उत्तर दिशाको जाता था, दक्षिण-दिशाको जाता था, ऊपर की ओर जाता था तथा अनु-दिशाओकी ओर जाता था। यदि उसे चारो दिशाओमे किसी एक दिशाकी ओर भी तट दिखाई दे जाता तो वह उसी ओर चला

जाता। यदि उसे किसी ओर तट न दिखाई देता, तो वह उसी नाव पर लौट आता। इसी प्रकार हे ब्राह्मण धार्मिक! वे तुझे जहाँ-जहाँ से भगाते हैं, तू हर जगहसे मेरे ही पास चला आता है।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! पूर्व कालमें कोरव्य राजाका सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) था, जिसकी पाँच शाखायें थी, शीतल छाया थी और था बडा ही मनोरम। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष)का बारह योजन-का फैलाव था और पाँच योजनकी जडे थी। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) के इतने बडे बडे फल थे, मानो भात पकानेकी देगची हो। फल इतने स्वादिष्ट थे जैसे छोटी मधु-मक्खियोका निर्दोष मधु हो। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) के एक तनेको रानियो सहित राजा अपने उपयोगमे लाता था, एक तना सेनाके उपयोगमें आता था, एक तना निगम तथा जन-पदके लोगोंके उपयोगमे आता था, एक तना श्रमण-ब्राह्मणोंके उपयोगमे आता था, तथा एक तना जानवरोके उपयोगमें आता था। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) के फलोको न कोई बचाकर रखता था और न कोई एक दूसरेके हिस्सेके फलोको हानि पहुँचाता था।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! तब एक आदमी सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) के फलोको यथेष्ट खाकर जाता हुआ उसकी शाखा तोड गया। हे ब्राह्मण तब धार्मिक सुप्रतिष्ठित-न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) पर रहनेवाली देवीके मनमें यह हुआ-अरे! यह कितने आश्चर्यकी बात है, यह कितनी अद्भुत बात है कि आदमी कितना पापी हो सकता है कि सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) के यथेष्ट फल खाकर जाता हुआ उस की शाखा भी तोड जा सकता है! अब सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध (राज)-वृक्षको भविष्यमें फल न लगें। हे ब्राह्मण धार्मिक! तबसे सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) को फल लगने बद हो गये।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! तब राजा कोरव्य देवेन्द्र शक्रके पास गया। पास जाकर देवेन्द्र शक्रसे कहा—मित्र! ज्ञात है कि सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) फल नही दे रहा है? हे ब्राह्मण धार्मिक! तब देवेन्द्र शक्रने ऐसे ऋद्धि-बलका उपयोग किया कि ऐसी हवा-वर्षा आई कि सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) जड-मूलसे उखड गया। हे ब्राह्मण धार्मिक! तब उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (-वृक्ष) पर रहनेवाली देवी दुखी हो, चिन्तित हो, एक ओर हो आँसू बहाती हुई खडी रोने लगी।

'हे ब्राह्मण धार्मिक ! तव देवेन्द्र शक्र जहाँ सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) पर रहने वाली देवी थी, वहाँ पहुँचा। पास जाकर सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) पर रहने वाली देवीसे बोला–हे देवी ! तू क्यो दुखी हो, चिन्तित हो, एक ओर आँसू वहाती हुई खडी रो रही है ?

"मित्र ! तेज हवा-पानीने आकर मेरे भवनको जडसे उखाड दिया है।"

"हे देवी ! क्या तेरे वृक्ष-धर्मके पालन करते रहनेपर तेज हवा-पानीने आकर तेरे भवनको जड-मूल से उखाड दिया ?"

"मित्र ! वृक्ष वृक्ष-धर्मका पालन कैसे करता है ?

"हे देवी ! जिन्हे वृक्षकी जडकी आवश्यकता होती है, वे जड ले जाते है ; जिन्हे छालकी जरूरत होती है, वे छाल ले जाते है, जिन्हे पत्तोकी जरूरत होती है, वे पत्ते ले जाते है , जिन्हे फूलोकी जरूरत होती है, वे फूल ले जाते है , जिन्हे फल की जरूरत होती है, वे फल ले जाते है। हे देवी ! उससे असन्तुष्ट होना या अप्रसन्न होना नही चाहिये। हे देवी ! ऐसा होनेसे वृक्ष, वृक्ष-धर्म पर स्थिर होता है।"

"मित्र ! मेरे वृक्ष-धर्मपर स्थिर न रहनेसे ही जोरकी हवा-वर्षाने मेरे भवनको जडसे गिरा दिया।"

"हे देवी ! यदि तू भविष्यमे वृक्ष-धर्मपर स्थिर रहे तो तेरा भवन फिर पूर्ववत हो जा सकता है।" "मित्र ! मै वृक्ष-धर्मपर स्थिर रहूँगी, मेरा भवन फिर पूर्ववत् हो जाय।"

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! तव देवेन्द्र शक्रने ऐसे ऋद्धि-वलका उपयोग किया कि जोरकी हवा-वर्षाने आकर पुन सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) को उठाया, जडें फिर पूर्ववत् स्थिर हो गई। इसी प्रकार हे ब्राह्मण धार्मिक ! क्या तुझे श्रमण-धर्मका पालन करते रहने पर जाति-भूमिके उपासकोने जाति-भूमिके सभी सातों निवास-स्थानोंसे भगाया है ?"

"भन्ते ! श्रमण, श्रमण-धर्ममे स्थित कैसे होता है ?"

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! श्रमण वुरा-भला कहने वालेको वुरा-भला नही कहता, क्रोधित होनेवाले पर क्रोधित नही होता, झगडा करने वालेसे झगडा नही करता।"

"भन्ते ! मै श्रमण-धर्म पर स्थिर नही था, तभी मुझे जाति-भूमिके उपासकोने जाति-भूमिके सभी सातो निवास-स्थानोंसे भगा दिया।"

"हे ब्राह्मण धार्मिक! पहले सुनेत्र नामका शास्ता हुआ है, एक सम्प्रदायका अग्रणी, कामभोगोंके प्रति आसक्ति-रहित। हे ब्राह्मण-धार्मिक! सुनेत्र शास्ताके सैंकड़ो शिष्य थे। सुनेत्र शास्ता शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्य धर्मकी देशना करता था। हे ब्राह्मण धार्मिक! जो लोग सुनेत्र शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्म उपदेश करते समय श्रद्धावान नहीं हुए, वे शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको नरक योनिको प्राप्त हुए। हे ब्राह्मण धार्मिक! जो लोग सुनेत्र शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्म उपदेश करते समय श्रद्धावान हुए, वे शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको, स्वर्ग-लोकको प्राप्त हुए।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! पहले मूगपक्ख नामका शास्ता था . अरनेमि नामका शास्ता था कुद्दालक नामका शास्ता था हस्तिपाल नामका शास्ता था .. जोतिपाल नामका शास्ता था, एक सम्प्रदायका अग्रणी, काम भोगोंके प्रति आसक्ति-रहित। हे ब्राह्मण-धार्मिक! जोतिपाल शास्ताके सैंकड़ो शिष्य थे। जोतिपाल शास्ता शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्य धर्मकी देशना करता था। हे ब्राह्मण-धार्मिक! जो लोग जोतिपाल शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्म उपदेश करते समय श्रद्धावान् नहीं हुए, वे शरीरके छूटनेपर मरनेके अनन्तर दुर्गतिको, नरक-योनिको प्राप्त हुए। हे ब्राह्मण धार्मिक! जो लोग जोतिपाल-शास्ताके ब्रह्म-सायुज्य का उपदेश करते समय श्रद्धावान् हुए, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको स्वर्गलोकको प्राप्त हुए।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! तो तुम क्या मानते हो कि जो इन छह शास्ताओंको —जो एक एक सम्प्रदायके अग्रणी हैं, जो काम-भोगोंके प्रति आसक्ति रहित हैं, जिनके सैंकड़ों शिष्य हैं—द्वेष-युक्त चित्तसे बुरा-भला कहे, उपहास करे, तो क्या वह बहुत अपुण्यका भागी नहीं होगा?"

"भन्ते! होगा।"

"हे ब्राह्मण धार्मिक! जो इन छह शास्ताओंको —जो एक सम्प्रदायके अग्रणी हैं, जो काम-भोगोंके प्रति आसक्ति-रहित हैं, जिनके सैंकड़ो शिष्य हैं—द्वेष-युक्त चित्तसे बुरा-भला कहे, उपहास करे तो वह बहुत अपुण्यका भागी होता है। जो एक (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त आदमीको बुरा-भला कहता है, उपहास करता है, तो वह उससे भी अधिक अपुण्यका भागी होता है। हे ब्राह्मण धार्मिक! जैसी क्षमा मेरे शिष्योंमें है वैसी क्षमा मैं अन्यत्र कहीं नहीं देखता। इसलिये हे ब्राह्मण धार्मिक! ऐसा सीखना चाहिये कि हम अपने साथी शिष्योंके प्रति मनमें द्वेष नहीं रखेंगे। हे ब्राह्मण धार्मिक! तुझे ऐसा ही सीखना चाहिये।

सुनेत्तो मूगपक्खो च, अरनेमि च ब्राह्मणो,
कुद्दालको अहु सत्था, हत्थिपालो च माणवो ॥
जोतिपालोच गोविन्दो, अहु सत्तपुरोहितो
अहिंसका अतीतसे, छ सत्थारो यतस्सिनो ॥
निरामगन्धा करुणेधिमुत्ता, कामसयोजनातिगा,
कामराग विराजेत्वा, ब्रह्मलोकूपगा अहु ॥
अहेसु सावका तेस, अनेकानि सतानि पि ।
निरामगन्धा करुणेधियुत्ता, कामसयोजनातिगा,
कामराग विराजेत्वा, ब्रह्मलोकूपगा अहु ॥
येते इसी वाहिरके, वीतरागे समाहिते ।
पदुट्ठमनसकप्पो, यो नरो परिभासति ।
वहुच सो पसवति, अपुञ्ञ तादिसो नरो ॥
यो चेक दिट्ठिसम्पन्न, भिक्खु वुद्धस्स सावक,
पदुट्ठमनसकप्पो, यो नरो परिभासति ।
अय ततो वहुतर, अपुञ्ञ पसवे नरो ।
न साधुरूप आसीदे, दिट्ठिट्ठानप्पहायिन ।
सत्तमो पुग्गलो एसो, अरियसघस्स वुच्चति ॥
अवीतरागो कामेसु, यस्स पञ्चिन्द्रिया मुदू ।
सद्धा सति च विरिय, समथो च विपस्सना ॥
तादिस भिक्खुमासज्ज, पुब्बेव उपहञ्ञति ।
अत्तान उपहन्त्वान, पच्छा अञ्ञ विहिंसति ॥
यो च रक्खति अत्तान, रक्खितो तस्स वाहिरो,
तस्मा रक्खेय्य अत्तान, अक्खतो पण्डितो सदा ॥

[सुनेत्र, मूगपक्ष, अरनेभि ब्राह्मण तथा कुद्दालक शास्ता हुए और हस्तिपाल नामक (ब्राह्मण–) माणवक भी शास्ता हुआ। गोविन्द जोतिपाल सात राजाओका पुरोहित (भी) था। भूत कालमें ये छह यशस्वी शास्ता हुए। वे आमगन्ध ग्रहण नही करते थे,[1] वे करुणावान् थे तथा काम-सयोजनसे मुक्त थे। वे काम-रागको जीतपकर ब्रह्मलोकगामी हुए। उनके सैकडो शिष्य हुए। वे भी आम-

---

१ थे शाकाहारी वा क्रोधरहित रहित थे ।

गन्ध ग्रहण नही करते थे। वे भी करुणावान् थे तथा काम सयोजनसे मुक्त थे। वे भी काम-रागको जीत कर ब्रह्मलोक गामी हुए। जो ये सयतेन्द्रिय, वीतराग वाहरी ऋषी थे, उन्हे भी द्वेषयुक्त चित्तसे जो आदमी भला-वुरा कहता है, वैसा मनुष्य वहुत अपुण्यका भागी होता है। लेकिन जो आदमी किसी (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त वुद्ध-श्रावकको भला वुरा कहता है, वह उसकी अपेक्षा भी वहुत अधिक अपुण्यका लाभ करता है। जो (=मिथ्या-) दृष्टिसे मुक्त है ऐसे साधुरूप नरको कष्ट न दे। ऐसा आदमी आर्य-सघमें सातवाँ (अर्हत्व-मार्ग-प्राप्त) व्यक्ति माना जाता है। जिसका काम-राग अभी नष्ट नही हुआ है जो अभी अनागामी नही हुआ है, परन्तु जिसकी श्रद्धा, स्मृति, वीर्य, शमथ तथा विपश्यना नामकी पाँचो इन्द्रियाँ सुकोमल अवस्थाको प्राप्त है, ऐसे भिक्षुको जो पहले ही आघात पहुँचाता है, वह दूसरेको आघात पहुँचानेसे पहले अपनेको ही आघात पहुँचाता है। जो अपने भीतरको सुरक्षित रखता है, वह वाहरसे सुरक्षित रहता है। इसलिये अक्षत पण्डितको चाहिये कि वह सदा अपने आपको सुरक्षित रखे।]

(६) महावर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् राजगृहमे गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् सोण राजगृहमे शीतवनमे विहार करते थे। जव आयुष्मान् सोण एकान्तमें विचार कर रहे थे, तो उनके मनमे ऐसा वितर्क पैदा हुआ—"भगवान्के जितने भी प्रयत्नशील शिष्य है, मैं उनमें से एक हूँ। लेकिन तव भी चित्त-मलो (=आस्रवो) से मेरा चित्त विमुक्त नही होता। मेरे परिवारमे भोग्य-पदार्थ है। मै उन को भोगते हुए, पुण्य करता हुआ रह सकता हूँ। क्यो न मैं भिक्षु-भावको छोड हीन मार्गी वन भोग्य-पदार्थोंको भोगता हुआ, पुण्य करता हुआ रहूँ?"

तव भगवान्ने अपने चित्तसे आयष्मान् सोणके चित्तमे उठे वितर्कको जान लिया। जैसे कोई आदमी अपनी सिकुडी हुई वाँहको फैलाये, अथवा फैली हुई वाँहको सिकोडे, उसी प्रकार भगवान् गृध्रकूट पर्वतसे अन्तर्धान होकर शीतवनमें आयुष्मान सोणके सम्मुख प्रकट हुए। भगवान् विछे आसनपर वैठे। आयुष्मान सोण भी भगवान्को प्रणामकर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे हुए आयुष्मान सोणको भगवान्ने यह कहा—

'हे सोण! जव तू एकान्तमें विचार कर रहा था, तो क्या तेरे मनमे यह वितर्क पैदा नही हुआ कि भगवान्के जितने भी प्रयत्नशील शिष्य है, मै उनमेंसे एक

हूँ। लेकिन तब भी चित्त-मलोसे मेरा चित्त विमुक्त नही होता। मेरे परिवारमे भोग्य पदार्थ है। मैं उनको भोगते हुए पुण्य करता हुआ रह सकता हूँ। क्यो न मैं भिक्षु-भावको छोड हीन-मार्गी बन भोग्य-पदार्थोको भोगता हुआ, पुण्य करता हुआ रहूँ।"

"भन्ते! हाँ।"

"हे सोण! तो तू क्या मानता है, गृहस्थमे रहते समय तू वीणावादनमे कुशल था, या नही?"

"भन्ते! हाँ।"

"हे सोण! तो तू क्या मानता है, क्या जिस समय वीणाके तार अत्यन्त खिचे रहते थे, तो क्या उस समय वीणासे स्वर निकलता था और वह कमनीय रहती थी!"

"भन्ते! नही?"

"हे सोण! तो तू क्या मानता है, क्या जिस समय वीणाके तार अत्यन्त ढीले रहते थे, तो क्या उस समय वीणासे स्वर निकलता था और वह कमनीय रहती थी?"

"भन्ते! नही।"

"हे सोण! क्या जिस समय वीणाके तार न अत्यन्त खिचे रहते थे, न अत्यन्त ढीले रहते थे, बल्कि सामान्य रूपसे तने रहते थे, तो क्या उस समय तेरी वीणसे स्वर निकलता था और वह कमनीय रहती थी?"

"भन्ते! हाँ।"

"इसी प्रकार हे सोण! अत्यन्त प्रयत्नशील होना उद्धतपनका कारण हो जाता है, अत्यन्त ढील छोड देना आलसीपनका कारण हो जाता है। इसलिए हे सोण! तू सम-प्रयत्नशील बने रहनेका निश्चयकर। श्रद्धा आदि इन्द्रियोमें सम-भाव प्राप्तकर। ऐसा करते हुए ध्यानके विषय (=निमित्त) को ग्रहण कर।"

"भन्ते! अच्छा" कह आयुष्मान सोणने भगवान्‌को प्रति-वचन दिया। तब भगवान् आयुष्मान् सोणको यह उपदेश दे, जिस प्रकार कोई बलवान आदमी सिकुडी हुई बाँहको पसार ले, अथवा पसारी हुई बाँहको सिकोड ले, उसी प्रकार शीतवनसे अन्तर्धान होकर गृध्रकूट पर्वतपर प्रकट हुए।

तब आयुष्मान सोणने आगे चलकर सम-प्रयत्नशील बने रहनेका अभ्यास किया। ऐसा करते हुए ध्यानके विषय (=निमित्त) को ग्रहण किया। तब आयुष्मान्

सोण अकेले, एकान्तमें रहते हुए, अप्रमादी बने रहकर, प्रयत्नवान् हो, अचिरकालमें ही जिस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिये कुल-पुत्र घरसे बेघर हो जाते हैं, उस पर श्रेष्ठ-जीवनको इसी जीवनमें जानकर, साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करने लगा। उसको विश्वास हो गया—जन्म (–मरण) का क्षय हो गया, श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत करनेका उद्देश्य पूरा हो गया, जो करणीय था, वह कर लिया गया, अब इससे आगे और कुछ करणीय नही है। आयुष्मान् सोण भी एक अर्हत हो गये।

जब आयुष्मान् सोण अर्हत हो गये तो उनके मनमें यह हुआ—जहाँ भगवान् हैं, मैं वहाँ जाऊँ। जाकर भगवान्को अपने अर्हत होनेकी सूचना दूँ। तब आयुम्प्मान् सोण जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सोणने भगवासे कहा—

"भन्ते! जो भिक्षु अर्हत्वको प्राप्त हो गया रहता है, जो क्षीणास्रव हो गया रहता है, जिसने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसका भार उतर गया रहता है, जिसने सदर्थ प्राप्त कर लिया होता है, जिसके भव-सयोजन क्षीण हो गये रहते हैं, जो सम्यक् प्रकार ज्ञान द्वारा विमुक्त हुआ रहता है, वह छह प्रकारसे विमुक्त होता है—वह निष्क्रमण-अधिमुक्त होता है, वह प्रविवेक अधिमुक्त होता है, वह अव्यापाद-विमुक्त होता है, वह तृष्णा-क्षय विमुक्त होता है, वह उपादान-क्षय-विमुक्त होता है तथा वह असम्मोह-विमुक्त होता है।

"भन्ते! हो सकता है कि किसी आयुष्मान्के मनमे (मेरे बारेमे) यह हो कि यह आयुष्मान् केवल श्रद्धावान् होनेसे 'निष्क्रमण-विमुक्त हूँ' ऐसा कहता है। भन्ते लेकिन, यह बात ऐसे नही समझी जानी चाहिए। भन्ते! जो भिक्षु क्षीणास्रव होता है, जिसने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसे अब और कुछ करणीय नही दिखाई देता, वा कृत की राशि, जो रागका क्षय होनेसे वीतराग हो गया है, वही निष्क्रमण-विमुक्त होता है, द्वेपका क्षय हो जानेसे वीतद्वेप ही निष्क्रमण-विमुक्त होता है, मोहका क्षय हो जानेसे वीतमोह ही निष्क्रमण-विमुक्त होता है।

भन्ते! हो सकता है कि किसी आयुष्मान्के मनमें (मेरे बारेमें) यह हो कि यह आयुष्मान् लाभ-सत्कार तथा यशकी कामनासे ही 'प्रविवेक-विमुक्त हूँ' ऐसा कहता है। भन्ते! लेकिन यह बात ऐसे नही समझी जानी चाहिए। भन्ते! जो भिक्षु क्षीणास्रव होता है, जिसने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसे अब और कुछ करणीय दिखाई नही देता या कृत की राशि,

जो रागका क्षय होनेसे वीतराग हो गया है, वही प्रविवेक विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय हो जानेसे वीतद्वेष ही प्रविवेक-विमुक्त होता है, मोहका क्षय हो जानेसे वीतमोह ही प्रविवेक-विमुक्त होता है।

भन्ते! हो सकता है कि किसी आयुष्मान्के मनमे (मेरे बारेमे) यह हो कि यह आयुष्मान् शील-व्रत-परामाशको ही सारत ग्रहण करनेके कारण 'अव्यापाद-विमुक्त हूँ' ऐसा कहता है। भन्ते! लेकिन यह बात ऐसे नही समझी जानी चाहिए। भन्ते! जो भिक्षु क्षीणास्रव होता है, जिसने श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसे अब कुछ और करणीय दिखाई नही देता, अथवा कृतकी राशि, जो रागका क्षय होनेसे वीतराग हो गया है, वही अव्यापाद-विमुक्त होता है, द्वेपका क्षय हो जानेसे वीत-द्वेप ही अव्यापाद-विमुक्त होता है, मोहका क्षय हो जानेसे वीत-मोह ही अव्यापाद-विमुक्त होता है।

रागका क्षय होनेसे जो वीगरात हो गया है, वही तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है, द्वेपका क्षय होनेसे वीतद्वेप ही तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है, मोहका क्षय होनेसे वीतमोह ही तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है।

रागका क्षय होनेसे जो वीतराग हो गया है, वही उपादान-क्षय-विमुक्त होता है, द्वेपका क्षय होनेसे वीत-द्वेष ही उपादान-क्षय-विमुक्त होता है, मोहका क्षय होनेसे वीत-मोह ही उपादान-क्षय-विमुक्त होता है।

रागका क्षय होनेसे जो वीतराग हो गया है, वह असम्मोह-विमुक्त होता है, द्वेपका क्षय होनेसे वीतद्वेष ही असम्मोह-विमुक्त होता है, मोहका क्षय होनेसे वीतमोह ही असम्मोह-विमुक्त होता है।

भन्ते! इस प्रकार जिस भिक्षुका चित्त सम्यक् रूपसे विमुक्त हो गया है, उसकी आँखके सामने चाहे जितने भी चक्षु-विज्ञान रूप आये, वे उसके चित्तको भटका नही सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही बना रहता है, वह स्थिर ही रहता है, वह रूपके व्यय (=विनाश) को देखता है। उसकी श्रोत्र इन्द्रिय के सामने चाहे जितने भी श्रोत्र-विज्ञान शब्द आये . घ्राण-विज्ञान गन्ध आयें. . . जिह्वा-विज्ञान रस आयें . काम-विज्ञान स्पर्श आये . . . मनो-विज्ञान धर्म (=मनके विषय) आये, वे उसके चित्तको भटका नही सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही बना रहता है, वह स्थिर ही रहता है, वह धर्मके व्यय (=विनाश) को देखता है।

भन्ते ! जैसे कोई विना छिद्रका, विना सुराखका ठोस पर्वत हो। पूर्व दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये, उससे वह न चचल होगा, न काँपेगा, न हिले-डुलेगा। पश्चिम दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये . उत्तर दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये दक्षिण दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये, उससे वह न चचल होगा, न काँपेगा, न हिले-डुलेगा। भन्ते ! इसी प्रकार जिस भिक्षुका चित्त सम्यक् रूपसे विमुक्त हो गया है, उसकी आँखके सामने चाहे जितने भी चक्षु-विज्ञान रूप आयें, वे उसके चित्तको भटका नही सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही वना रहता है, वह स्थिर ही रहता है, वह रूपके व्यय (= विनाश) को देखता है। उसकी श्रोत्र-इन्द्रिय के सामने चाहे जितने भी श्रोत्र-विज्ञान शब्द आयें घ्राण-विज्ञान गन्ध आये जिह्वा-विज्ञान रस आयें . काम-विज्ञान स्पर्श आयें मनो-विज्ञान धर्म (= मनके विषय) आएँ, वे उसके चित्तको भटका नही सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही वना रहता है। वह स्थिर ही रहता है, वह धर्मके व्यय (= विनाश) को देखता है।

नेक्खम्म अधिमुत्तस्स, पविवेक च चेतसो।
अव्यापज्झाविमुत्तस्स, उपादानक्खयस्स च ॥
तण्हाक्खयाधिमुत्तस्स, असम्मोह च चेतसो,
दिस्वा आयतनुप्पाद, सम्मा चित्त विमुच्चति ॥
तस्स सम्माविमुत्तस्स, सन्तचित्तस्स भिक्खुनो,
कतस्स पटिचयो नत्थि, करणीय न विज्जति।
सेलो यथा एकग्घनो, वातेन न समीरति।
एव रूपा रसा सद्दा, गन्धा फस्सा च केवला ॥
इट्ठा धम्मा अनिट्ठा च, नप्पवेधेन्ति तादिनो।
ठित चित्त विप्पमुत्त, वय चस्सानुपस्सति ॥

[जो निष्क्रमण-विमुक्त है, जो प्रविवेक-विमुक्त है, जो अव्यापाद-विमुक्त है, जो उपादानक्षय-विमुक्त है, जो तृष्णाक्षय-विमुक्त है, जो असम्मोह-विमुक्त है, वह तृष्णादिकी पुनरुत्पत्ति न देखनेके कारण सम्यक रूपसे विमुक्त माना जाता है। उस सम्यक् प्रकारसे विमुक्त, शान्त चित्त भिक्षुके कृत-कर्मोकी राशि नही रहती और उसे कुछ करणीय भी नही रहता। जिस प्रकारसे ठोस पर्वत हवासे कम्पित नही होता, उसी प्रकार जितने भी रूप, रस, गन्ध तथा स्पर्श है—जितने भी इष्ट तथा अनिष्ट धर्म है—वे उस स्थिर-चित्त भिक्षुको कम्पित नही करते। उसका स्थिर

चित्त विप्रमुक्त होता है, वह (रूप, शब्द, रस आदिके) व्यय (= विनाश) को देखता है।]

उस समय आयुष्मान फग्गुन रोगी थे, दुक्खित थे, अत्यन्त रोगी थे। तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवानसे यह कहा—"भन्ते! आयुष्मान फग्गुन रोगी है, दुखित है, अत्यन्त रोगी है। भन्ते! अच्छा होगा यदि आप वहाँ पधारे जहाँ आयुष्मान फग्गुन है।" भगवानने चुप रहकर स्वीकार कर लिया।

तब भगवान शामके समय एकान्त वास कर चुकनेपर आयुष्मान फग्गुनके पास गये। आयुष्मान फग्गुनने भगवानको दूरसे आते हुए देखा। देखकर वे चारपाईसे (उठनेके लिये) हिले। तब भगवानने आयुष्मान फग्गुनको यह कहा—'फग्गुन! बसकर। चारपाईसे मत हिलडोल। यह दूसरो द्वारा विछाये आसन है। मै इनपर बैठूंगा।" भगवान विछे आसनपर बैठे। बैठकर भगवानने आयुष्मान फग्गुनको यह कहा—"फग्गुन! तू ठीक तो है? क्या दुख-वेदना चली जाती है और लौटकर नही आती? चली जाकर समाप्त होती दिखाई देती है, लौटकर नही आती?"

"भन्ते! मै ठीक नही हूँ। मेरे पास वडी तीव्र दुख वेदना आती है, लौटकर नही जाती। चली जाकर समाप्त नही होती, लौटकर आती है।"

"भन्ते! जैसे कोई वलवान आदमी तेज शिखर (?) से सिरको मथता हो, इसी प्रकार भन्ते! जोरकी वायु सिरसे टकराती है। भन्ते! मै ठीक नही हूँ। मेरे पास वडी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नही जाती। चली जाकर समाप्त नही होती, लौटकर आती है।

"भन्ते! जैसे कोई वलवान आदमी चमडेकी पट्टीसे सिरको कसकर उसे लपेटता चला जाय, इसी प्रकार भन्ते! मेरे सिरमे सिरका तीव्र दर्द है। भन्ते! मैं ठीक नही हूँ। मेरे पास वडी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नही जाती। चली जाकर समाप्त नही होती, लौटकर आती है।

"भन्ते! जैसे कोई दक्ष गो-घातक या गो-घातकका शागिर्द तेज कटारसे पेटको चीरे, इसी प्रकार भन्ते! मेरे पेटकी वलवती हवा पेटको काट रही है। भन्ते! मैं ठीक नही हूँ। मेरे पास वडी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नही जाती। चली जाकर समाप्त नही होती, लौटकर आती है।

"भन्ते! जैसे दो बलवान आदमी किसी दुर्बल आदमीको सब ओरसे पकडकर अगारोंके गड्ढेमें डालकर जलायें, उलट पलट कर जलायें। भन्ते! इसी प्रकारकी मेरे शरीरमें भयानक जलन हो रही है। भन्ते! मैं ठीक नही हूँ। मेरे पास बडी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नही जाती। चली जाकर समाप्त नहीं होती, लौटकर आती है।"

तब भगवान धार्मिक कथा द्वारा आयुष्मान फग्गुनको सान्त्वना दे, सतोष दे, बढावा दे, प्रसन्न चित्तकर आसनसे उठकर चले गये।

भगवानके चले जानेके थोडे ही समय बाद आयुष्मान फग्गुनका शरीरान्त हो गया। उसके मरनेके समय उसकी इन्द्रियाँ प्रसन्न (=कान्तिमय) हो गईं।

तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। भगवानके पास जाकर, अभिवादनकर, एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान आनन्दने भगवानसे कहा—"भन्ते! भगवान्‌के चले जानेके थोडी ही देर बाद आयुष्मान फग्गुनका शरीरान्त हो गया। उसके मरनेके समय उसकी इन्द्रियाँ प्रसन्न (=कान्तिमय) हो गईं।"

"आनन्द! भिक्षु फग्गुनकी इन्द्रियाँ क्यो प्रसन्न (=कान्तिमय) न होगी? आनन्द! पहले भिक्षु फग्गुनका चित्त उन्नतिके बाधक सयोजनोंसे मुक्त नही था। मेरी धर्म-देशना सुनकर उसका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त हो गया।

"आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवणके, समय-समयपर उनके अर्थोपर विचार करनेके छह शुभ परिणाम होते हैं। कौनसे छह? आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त नही होता है। उसे मरनेके समय तथागत-का दर्शन हो जाता है। तथागत उसे ऐसे धर्मका उपदेश देते हैं जो आदिमें कल्याण-कारक है, मध्यमें कल्याण-कारक है, अन्तमें कल्याण-कारक है, जो अर्थ-सहित होता है, जो व्यजनासे युक्त होता है। तथागत केवल परिशुद्ध श्रेष्ठजीवनको ही प्रकाशित करते हैं। उस धर्म-देशनाको सुनकर चित्त उन्नतिके बाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवणका यह पहला शुभ परिणाम है।

"आनन्द! फिर एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त नही होता है। उसे मरनेके समय तथागतका दर्शन नही होता, किन्तु उसे तथागतके श्रावकका दर्शन हो जाता है। तथागतका श्रावक उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है, जो आदिमें कल्याणकारक है, मध्यमें कल्याणकारक है, अन्तमें कल्याणकारक है,

जो अर्थ-सहित होता है, जो व्यजनोंसे युक्त होता है। तथागतका श्रावक केवल परिशुद्ध श्रेष्ठ जीवनको ही प्रकाशित करता है। उसकी वह धर्म-देशना सुनकर चित्त उन्नतिके वाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवणका यह दूसरा शुभ परिणाम है।

"आनन्द! फिर एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके वाधक पाँचो सयोजनोसे मुक्त नही होता। उसे मरनेके समय न तयागत का दर्शन होता है, न तथागतके श्रावकका दर्शन होता है, किन्तु उसने जो धर्म (पहले) श्रवण किया है, ग्रहण किया है, उसीपर विचार करता है, उसीका मनसे मनन करता है। उसने जो धर्म (पहले) श्रवण किया है, ग्रहण किया है, उसीपर विचार करनेसे, उसीका मनसे मनन करनेसे चित्त उन्नतिके वाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवण का यह तीसरा शुभ परिणाम है।

"आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके वाधक पाँचो सयोजनोसे मुक्त होता है, किन्तु सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे मुक्त नही होता। उसे मरनेके समय तयागतका दर्शन हो जाता है। तयागत उसे ऐसे धर्मका उपदेश देते है, जो आरम्भमे कल्याणकारक, मध्यमे कल्याणकारक श्रेष्ठ जीवनको ही प्रकाशित करते है। उस धर्म देशनाको सुनकर सर्वोच्च निर्वाण प्राप्तिकी दृष्टिसे चित्त विमुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवणका यह चौथा शुभ-परिणाम है।

"आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके वाधक पाँचो सयोजनोसे मुक्त होता है, किन्तु सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे मुक्त नही होता। उसे मरनेके समय तयागत का दर्शन नही होता। उसे तथागतके श्रावकका दर्शन हो जाता है। तयागतका श्रावक उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है, जो आरम्भमे कल्याणकारक है, - परिशुद्ध श्रेष्ठ जीवनको प्रकाशित करता है। उस धर्म-देशनाको सुनकर सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे चित्त विमुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म श्रवणका यह पाँचवाँ शुभ परिणाम है।

"आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके वाधक पाँचो सयोजनोंसे मुक्त होता है, किन्तु सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे मुक्त नही होता। उसे मरनेके समय न तयागतका दर्शन होता है, न तयागत के श्रावकका दर्शन होता है, किन्तु उसने जो धर्म (पहले) श्रवण किया है, ग्रहण किया है, उसीपर विचार करनेसे, उसीका मनसे मनन करनेसे सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे चित्त विमुक्त हो जाता है।

हे आनन्द ! समय समयपर (धर्मके) अर्थोंपर विचार करनेका यह छठा शुभ परिणाम है। हे आनन्द ! समय समयपर धर्म-श्रवण करनेके, समय समयपर धर्मके अर्थोंपर विचार करनेके ये छह शुभ-परिणाम है।"

एक समय भगवान राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवानसे यह कहा—"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने छह अभिजातियोंका प्रज्ञापन किया है—कृष्णा अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, नीलाभिजातिका प्रज्ञापन किया है, लोहित (=रक्तवर्ण) अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, हलदी (-वर्ण) अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, शुक्ल अभिजाति-का प्रज्ञापन किया है, परशुक्ल अभिजातिका प्रज्ञापन किया है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने भेड मारनेवालोंको, सूअर मारनेवालोंको, मृगोंका शिकार करनेवालोंको, मछली मारनेवालोंको, चोरोंको, जल्लादोंको, जेलरोंको तथा अन्य जो भी क्रूर कर्म करनेवाले हैं, उन सबको कृष्णा अभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने कण्टक-वृत्ति भिक्षुओंको अथवा जो दूसरे भी कर्मवादी हों, क्रियावादी हों नीलाभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने एक लंगोटी पहननेवाले निर्ग्रन्थोंको लोहिताभि-जाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने श्वेत वस्त्र पहननेवाले अचेलक-श्रावक गृहस्थोंको हरिद्राभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने आजीवकों तथा आजीविकियोंको शुक्लाभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने वत्स (गोत्र) के नन्दको, सांकृत्य-गोत्रके कृशको तथा मक्खलि गोसालको परशुक्लाभिजाति कहा है। भन्ते ! पूर्ण काश्यपने ये छह अभिजातियाँ कही हैं।"

"आनन्द ! क्या पूर्ण काश्यपको सारे विश्वका ज्ञान है जो उसने छह अभिजातियोंका विभाजन किया है ?"

"भन्ते ! नहीं ही।"

"आनन्द ! जैसे कोई दरिद्र, गरीब, निर्धन आदमी हो और उसे कोई जबर्दस्ती गोमांसका हिस्सा दे और कहे कि यह तुझे खाना पड़ेगा और इसका दाम

चुकाना पडेगा। आनन्द! ठीक इसी प्रकार उस मूर्ख, अपण्डित, अक्षेत्रज्ञ, अकुशल पूर्ण काश्यपने विना जाने बूझे छह अभिजातियोका विभाजीकरण कर दिया है।

"आनन्द! मैं छह अभिजातियोकी प्रज्ञप्ति करता हूँ। इन्हे सुन, अच्छी तरह मनमे धारणकर, कहता हूँ।"

"भन्ते! अच्छा" कह आयुष्मान आनन्दने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवानने यह कहा—आनन्द! छह अभिजातियाँ कौन-सी है? आनन्द! एक कृष्णाभिजाति होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको प्राप्त करता है। आनन्द! एक कृष्णाभिजातहोकर शुक्ल (=कुशल) कर्मको प्राप्त करता है। आनन्द! एक कृष्णाभिजात होकर अकृष्ण (=जो अकुशल नही) अ-शुक्ल (=जो कुशल नही) निर्वाणको प्राप्त करता है। आनन्द! एक शुक्लाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको प्राप्त होता है। आनन्द! एक शुक्लाभिजात होकर शुक्ल (=कुशल) कर्मको प्राप्त होता है। आनन्द! एक शुक्लाभिजात होकर अकृष्ण (=जो अकुशल नही) अ-शुक्ल (=जो कुशल नही) निर्वाण को प्राप्त करता है।

"आनन्द! एक कृष्णाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको कैसे प्राप्त होता है? आनन्द! एक आदमी नीच कुलमें पैदा होता है—चाण्डाल कुलमे, निषाद कुलमे, बँसफोडोके कुलमे, रथकार कुल वा भर्गी कुलमे, दरिद्र कुलमे, जहाँ खाना-पीना कठिनाईसे मिलता है, जहाँ भोजन-छाजनकी तगी रहती है। वह दुर्वर्ण होता है, दुर्दर्शनीय होता है, ठिंगना होता है, अनेक रोगोसे ग्रसित होता है, काना होता है, लूला होता है, लँगडा होता है, पक्षाघात हो गया होता है, उसे अन्न-दान, वस्त्र, माला-गन्ध विलेपन, शैय्या, निवास-स्थान तथा दिया बत्तीकी तगी रहती है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, मरनेके अनन्तर नरक लोकमे जन्म ग्रहण करता है, दुर्गति को प्राप्त होता है। हे आनन्द! इस प्रकार एक (आदमी) कृष्णाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको प्राप्त होता है।

"आनन्द! एक कृष्णाभिजात होकर शुक्ल (=कुशल) कर्मको कैसे प्राप्त होता है? आनन्द! एक आदमी नीच कुलमें पैदा होता है—चाण्डाल कुलमे तगी रहती है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ-कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करके, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है! स्वर्ग लोकमे जन्म ग्रहण करता है। हे आनन्द! इस प्रकार एक आदमी कृष्णाभिजात होकर शुक्ल (=कुशल) कर्म करता है।

आनन्द! एक कृष्णाभिजात होकर अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाण धर्मको कैसे प्राप्त होता है? आनन्द! एक आदमी नीच कुलमें पैदा होता है—चाण्डाल कुलमे या . । वह दुर्वर्ण होता है, दुर्दर्शनीय होता है, ठिगना होता है। वह केश-दाढी मुड़वा कर, काषाय वस्त्र पहनकर, घरसे बेघर हो जाता है। वह इस प्रकार प्रव्रजित होकर, जो चित्तके उपक्लेश है और जो प्रज्ञाको दुर्बल बनानेवाले है, ऐसे पॉच नीवरणो (=चित्तके बन्धनो) से मुक्त होकर, चार स्मृति उपस्थानोमे प्रतिष्ठित होता है। वह सात बोधि-अगोका यथार्थ-रूपसे अभ्यास कर अकृष्ण अशुक्ल निर्वाणको प्राप्त होता है। आनन्द! इस प्रकार एक कृष्णाभिजात होकर अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण धर्मको प्राप्त होता है।

"आनन्द! शुक्लाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको कैसे प्राप्त होता है? आनन्द! एक आदमीने ऊँचे कुलमें जन्म ग्रहण किया होता है, क्षत्रिय महासारवान् कुलमें, ब्राह्मण महासारवान् कुलमें वा गृहपति महासारवान् कुलमें; ऐसे कुलमें जो सम्पत्तिशाली होता है, धनवान् होता है, भोग्य-सामग्रीसे सम्पन्न होता है, सोने-चॉदीकी कमी नही होती है, जगह-जमीनकी कमी नही होती और धन-धान्य की कमी नही होती। वह सुन्दर होता है, दर्शनीय होता है, प्रसन्न-वदन होता है, पर-श्रेष्ठ वर्ण-युक्त होता है। उसे अन्न-पान, वस्त्र, माला गन्ध-विलेपन, शय्या, निवास स्थान तथा दिया-बत्तीकी तगी नही रहती है। वह शरीर वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, मरनेके अनन्तर नरक लोकमे जन्म ग्रहण करता है, दुर्गतिको प्राप्त होता है। आनन्द! इस प्रकार शुक्लाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको प्राप्त होता है।

"आनन्द! एक शुक्लाभिजात होकर शुक्ल कर्मको कैसे प्राप्त होता है? आनन्द! एक आदमीने ऊँचे कुलमें जन्म ग्रहण किया होता है क्षत्रिय महासारवान् कुलमे दिया बत्तीकी तगी नही रहती है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करके, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है, स्वर्ग लोकमें जन्म ग्रहण करता है। आनन्द! इस प्रकार अभिजात होकर शुक्ल (=कुशल) कर्म को प्राप्त होता है।

"आनन्द! एक शुक्लाभिजात होकर अकृष्ण, अशुक्ल निर्वाण धर्मको कैसे प्राप्त होता है? आनन्द! एक आदमीने ऊँचे कुलमे जन्म ग्रहण किया होता है, क्षत्रिय महासारवान् कुलमें, ब्राह्मण महासारवान कुलमे या गृहपति महासारवान् कुलमें, ऐसे कुलमें जो सम्पत्तिशाली होता है, धनवान् होता है, भोग्य-सामग्रीकी कमी

नहीं होती और धन-धान्यकी कमी नहीं होती। वह सुन्दर होता है, दर्शनीय होता है, प्रसन्न वदन होता है, पर श्रेष्ठ वर्ण-युक्त होता है। उसे अन्न-पान, वस्त्र, माला-गन्ध-विलेपन, शैय्या, निवासस्थान तथा दिया-बत्तीकी तंगी नहीं रहती है। वह केश-दाढी मुंड़वाकर, काषाय वस्त्र पहन कर, घरसे बे-घर हो जाता है। वह इस प्रकार प्रव्रजित होकर जो चित्तके उपक्लेश हैं, और जो प्रज्ञाको दुर्बल बनानेवाले हैं ऐसे पाँच नीवरणों (चित्तके बंधनों) से मुक्त होकर, चार स्मृति-उपस्थानोंमें प्रतिष्ठित होता है। वह सात बोधि-अंगोंका यथार्थ-रूपसे अभ्यास कर अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाणको प्राप्त होता है। आनन्द! इस प्रकार एक शुक्लाभिजात होकर अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाण धर्मको प्राप्त होता है। आनन्द! ये छह अभिजातियाँ हैं।

"भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, गौरव करने योग्य होता है, हाथ जोडने योग्य होता है तथा लोगोंके लिये सर्व श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षुके जो आस्रव संयमके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे संयमके द्वारा नष्ट किये रहते हैं, जो आस्रव वस्तुओंके उपयोगके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे वस्तुओंके उपयोगके द्वारा नष्ट किये रहते हैं, जो आस्रव सहन-शक्तिके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे सहन-शक्तिके द्वारा नष्ट किये रहते हैं, जो आस्रव दूर दूर रहनेसे नष्ट किये जा सकते हैं, वे दूर दूर रहनेसे नष्ट किये रहते हैं, जो आस्रव हटा देनेसे नष्ट किये जा सकते हैं वे वे हटा देनेसे नष्ट किये रहते हैं, जो आस्रव भावना (=चित्त-अभ्यास) द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे चित्त-अभ्यास द्वारा नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव संयमके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो संयमके द्वारा नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, एक भिक्षु ज्ञानपूर्वक अपनी चक्षु-इन्द्रियको संयत रखकर विहार करता है। भिक्षुओ, चक्षु-इन्द्रिय असंयत रखनेके कारण जो जलानेवाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, चक्षु इन्द्रिय संयत रखनेके कारण वे जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते हैं। ज्ञान-पूर्वक अपनी श्रोत-इन्द्रिय को . घ्राण-इन्द्रियको जिह्वा-इन्द्रियको . स्पर्श-इन्द्रियको मन-इन्द्रियको संयत रखकर विहार करता है। भिक्षुओ, भिक्षुके मन-इन्द्रिय असंयत रखनेके कारण जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, मन-इन्द्रिय संयत रखनेके कारण, वे जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते हैं। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो संयमके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो संयमके द्वारा नष्ट किये रहते हैं।

भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव वस्तुओंके उपयोग द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो वस्तुओंके उपयोग द्वारा नष्ट किये रहते हैं ? भिक्षुओ, भिक्षु सोच विचार कर चीवरको उपयोगमें लाता है—ठण्डसे अपनी रक्षा करनेके लिये, ऊष्णतासे अपनी रक्षा करनेके लिये , डाँस, मच्छर, हवा, धूप, रेंगनेवाले जानवरोसे रक्षा करनेके लिये, तथा अपनी लज्जा-शर्म ढकनेके लिये। वह सोच विचार कर पिण्डपात (=भिक्षा) को उपयोगमें लाता है—हँसी मजाकके लिये नही, मदके लिये नही, (शरीरकी) सजावटके लिये नही, उसे अलकृत करनेके लिये नही; जब तक शरीरकी स्थिति है, तब तक इसे बनाये रखेनेके लिये, विहिंसाके के नष्ट करनेके लिये, श्रेष्ठ जीवनपर अनुग्रह करनेके लिये, पुरानी (दुःख–) वेदनाको नष्ट कर देनेके लिये, नई (दुःख–) वेदनाको उत्पन्न न होने देनेके लिये, मेरी (जीवन–) यात्रा निर्दोष होगी और सुखद रहेगी। वह सोच विचार कर शयनासनको उपयोगमे लाता है— ठण्डसे अपनी रक्षा करने के लिये, ऊष्णता से अपनी रक्षा करनेके लिये, डाँस, मच्छर, हवा, धूप, रेंगने वाले जानवरोसे रक्षा करनेके लिये, ऋतु-बाधाओंसे बचे रहनेके लिये तथा योगाभ्यासके लिये एकान्त-सेवनार्थ। वह सोच-विचार कर रोगीकी आवश्यकताओ भैषज्य आदिका सेवन करता है—रोगसे उत्पन्न वेदनाओको दूर करनेके लिये, अदुःखकी प्राप्तिके लिये। भिक्षुओ! इन वस्तुओको इस प्रकार उपयोगमें न लानेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते है, इन वस्तुओको इस प्रकार उपयोगमें लानेसे वे जलानेवाले आस्रव पैदा नही होते हैं। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो वस्तुओंके उपयोगमें लानेसे नष्ट किये जा सकते है, जो वस्तुओंके उपयोग में लानेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव सहन शक्तिके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो सहन-शक्तिके द्वारा नष्ट किये रहते हैं ? भिक्षुओ, भिक्षु विचार पूर्वक सर्दी, गरमी, भूख तथा प्यासका सहन करनेवाला होता है। वह डाँस, मच्छर, हवा, धूप, रेंगने वालाले जानवरोंके स्पर्शको सहन करनेवाला होता है और वह दुर्वचनोको भी सहन करने वाला होता है। वह दुःखद शारीरिक वेदनाओको, तीव्र, कठोर, कटु, प्रतिकूल, बुरी, प्राण हर लेनेवाली वेदनाओको भी सहन करनेवाला होता है। भिक्षुओ, इनको सहन न करनेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, इनको सहन करनेमे वे जलाने वाले आस्रव पैदा नही होते हैं। भिक्षुओ, ये है वे आस्रव जो सहन करनेसे नष्ट किये जा सकते हैं और जो सहन करनेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव दूर दूर रहनेसे नष्ट किये जा सकते है जो दूर दूर रहनेसे नष्ट किये रहते हैं ? भिक्षुओ, भिक्षु सोच-विचार कर मरखने हाथीसे दूर दूर रहता है, मरखने घोडेसे दूर दूर रहता है, मरखने बैलसे दूर दूर रहता है, काट खानेवाले कुत्तेसे दूर दूर रहता है। वह साँपसे बचता है, कीले-खूँटेसे बचता है, गढेसे बचता है, प्रपातसे बचता है, तालाबसे बचता है, जोहडसे बचता है। जैसी जगह पर उठने-बैठनेसे, जैसी जगह पर आने जानेसे, जैसी कुसगतिमे रहनेसे विज्ञ साथी उसे बदनाम कर सके, वह वैसी अयोग्य जगहको, वैसे प्रतिकूल स्थानको तथा वैसी कुसगतिसे विचारपूर्वक दूर दूर रहता है। भिक्षुओ, इनसे दूर दूर न रहनेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते है, इनसे दूर दूर रहने से, वे जलाने वाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ, ये है वे आस्रव जो दूर दूर रहनेसे नष्ट किये जा सकते हैं, और जो दूर दूर रहनेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव हटा देनेसे नष्ट किये जा सकते है ? जो हटा देनेसे नष्ट किये रहते हैं ? भिक्षुओ, भिक्षु पैदा हुए काम-वितर्कको विचार-पूर्वक बना रहने नही देता है, त्याग देता है, हटा देता है, दूर कर देता है, नष्ट कर देता है; वह पैदा हुए द्वेष (=व्यापाद) वितर्क को पैदा हुए विहिंसा-वितर्कको तथा जो भी पापी अकुशल वितर्क पैदा होते है, उन्हे विचार पूर्वक बना रहने नही देता है, त्याग देता है, हटा देता है दूर कर देता है, नष्ट कर देता है। भिक्षुओ, इनके हटा न देनेसे जो जलानेवाले आस्रव पैदा हो सकते है, इनको हटा देनेसे वे जलानेवाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ, ये है वे आस्रव जो हटा देनेसे नष्ट किये जा सकते हैं, और जो हटा देनेसे नष्ट किये रहते है।

भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव चित्त-अभ्यास (=भावना) के द्वारा नष्ट किये जा सकते है, जो भावना द्वारा नष्ट किये रहते हैं ? भिक्षुओ, भिक्षु विचारपूर्वक स्मृति-सम्बोधि अगकी भावना करता है, जो एकान्त-आश्रित होता है, जो विराग-आश्रित होता है, जो निरोध-आश्रित होता है तथा जो परित्याग-परिणामी है, विचार-पूर्वक धर्म-विचय स्मृति-सम्बोधि अगकी भावना करता है वीर्य सम्बोधि-अगकी भावना करता है प्रीति सम्बोधि-अगकी भावना करता है प्रश्रब्धि सम्बोधि अगकी भावना करता है समाधि सम्बोधि-अगकी भावना करता है . उपेक्षा सम्बोधि अगकी भावना करता है, जो एकान्त-आश्रित होता है, जो विराग-आश्रित होता है, जो निरोध आश्रित होता है तथा जो परित्याग-परिणामी है। भिक्षुओ, इन बोधि-अगोका अभ्यास न करनेनेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा

हो सकते हैं, इनका अभ्यास करनेसे वे जलानेवाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो सम्बोधि-अगोका अभ्यास करनेसे नष्ट किये जा सकते है और जो अभ्यास करनेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, गौरव करने योग्य होता है, हाथ जोडने योग्य होता है तथा लोगोके लिये सर्व-श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।"

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान नातिकामे गिञ्जक नामक वासस्थान पर विहार करते थे। तब एक लकडहारा गृहपति जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उस लकडहारे गृहपतिको भगवान्ने यह कहा—हे गृहपति! क्या तेरे कुलमे दान दिया जाता है?"

"भन्ते! मेरे कुलमे दान दिया जाता है। भन्ते! जो भिक्षु आरण्यक होते हैं, जो भिक्षु पिण्डपातिक (=भिक्षाटनसे ही निर्वाह करने वाले) होते हैं, जो भिक्षु पसुकूलिक (=चीथडोका सिला चीवर पहनने वाले) होते है, जो अर्हत होते हैं वा अर्हत्वके मार्गपर आरूढ होते हैं, ऐसे ही भिक्षुओको दान दिया जाता है।"

"हे गृहपति! तू काम भोगी है, तू गृहस्थ है, तू परिवारमें रहने वाला है, तू काशीके चन्दनका लेप करने वाला है, तू माला-गन्ध-विलेपन धारण करने वाला है, तू सोने-चाँदीका व्यवहार करने वाला है,; तेरे लिये यह जानना आसान नही कि ये अर्हत् हैं वा अर्हत्वके मार्गपर आरूढ हैं।

"हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु आरण्यक ही हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो अहकारी हो, चपल हो, मुखर हो, असयत-वाणी हो, मूढ स्मृति वाला हो, अज्ञानी हो, एकाग्र चित्त न हो, भ्रमित-चित्त हो तथा असयतेन्द्रिय हो, तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु आरण्यक न हो, लेकिन वह उद्धत न हो, अहकारी न हो, चपल न हो, मुखर न हो, असयत-वाणी न हो, मूढ-स्मृति न हो, ज्ञानी हो, एकाग्र चित्त हो, भ्रमित–चित्त न हो तथा सयतेन्द्रिय हो, तो वह उतनी सीमा तक प्रशसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई गाँवमें विचरनेवाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो ... तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु गाँवमें विचरनेवाला न हो, लेकिन यदि वह उद्धत न हो ... तो वह उतनी ही सीमा तक प्रशसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षाटनसे ही जीवन यापन करने वाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो . तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु भिक्षाटनसे ही जीवन यापन करने वाला न हो तो वह उतनी सीमा तक प्रशमनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई निमत्रण स्वीकार करने वाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई निमत्रण स्वीकार करने वाला न हो तो वह उतनी सीमा तक प्रशमनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई चीथडोंके सिले चीवर धारण करनेवाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई चीथडोंके सिले चीवर धारण करनेवाला न हो, लेकिन यदि वह उद्धत न हो . . तो वह उतनी सीमा तक प्रशमनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु गृहस्थोंके दिये हुए चीवर धारण करने वाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो, अहकारी हो, चपल हो, मुखर हो, असयत-वाणी हो, मूढ-स्मृति वाला हो, अज्ञानी हो, एकाग्र-चित्त न हो, भ्रमित-चित्त हो तथा असयतेन्द्रिय हो तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु गृहस्थोके दिये हुए चीवर धारण करने वाला न हो, लेकिन यदि वह उद्धत न हो, अहकारी न हो, चपल न हो, मुखर न हो, असयत-वाणी न हो, मूढ-स्मृति न हो, ज्ञानी हो, एकाग्रचित्त हो भ्रमित चित्त न हो तथा सयतेन्द्रिय हो, तो वह उतनी सीमा तक प्रशसनीय है।

"हे गृहपति! तू सघको दान दे। सघको दान देनेसे तेरा चित्त प्रसन्न होगा। प्रसन्न-चित्त होनेसे तू शरीरके न रहने पर, मरने पर, सुगति, स्वर्ग-लोकको प्राप्त होगा।"

"भन्ते! आजसे मैं सघको दान दूंगा।"

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वाराणसीके इसिपतन मृगदायमे विहार करते थे। उस समय पिण्डपातसे लौटे हुए वहुतसे स्थविर भिक्षु गोलाकार-भवनमें इकट्ठे वैठे हुए अभिधर्म सम्वन्धी वातचीत कर रहे थे। उस समय हत्थिसारि-पुत्र आयुष्मान् चित्त अभिधर्म सम्वन्धी वातचीत करने वाले स्थविर भिक्षुओके बीच बीचमें वोल पडते थे। तव आयुष्मान् महाकोट्ठिकने हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्तको यह कहा "हत्थिसारपुत्र आयुष्मान् चित्त! अभिधर्म सम्वन्धी वातचीत करने वाले स्थविरों की वातचीतके वीचमें न वोले। आयुष्मान् चित्त वातचीत की समाप्ति तक रुके रहे।"

ऐसा कहनेपर हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्तके मित्र भिक्षू आयुष्मान् महाकोट्ठिक को कहने लगे—"आयुष्मान् महाकोट्ठिक आप हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्तको अप्रसन्न न करें। हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्त पण्डित है। हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्त स्थविर भिक्षुओंके साथ अभिधर्म सम्बन्धी वातचीत करनेमें समर्थ है।"

"आयुष्मान्! जो दूसरोंके चित्तकी गति-विधिसे अपरिचित हो, उसके लिये यह जानना सहज नही। आयुष्मान्! कोई कोई व्यक्ति तभी तक विनीत, सयत तथा शान्त रहता है जब तक वह शास्ता अथवा अन्य किसी गौरवार्ह ज्येष्ठ सब्रह्मचारी के साथ रहता है। लेकिन ज्यो ही वह शास्ता अथवा अन्य गौरवार्ह सब्रह्मचारियोंसे दूर हट जाता है, तो वह भिक्षुओ, भिक्षुणियो, उपासको, उपासिकाओ, राजाओ, राजाओंके महामात्यो, तैर्थिको तथा तैर्थिकोंके श्रावकोके साथ वहुत घुलमिलकर विचरता है। उसके वहुत घुलमिलकर रहनेसे, विश्वास पूर्वक रहनेसे, असयत रहनेसे, वातूनी वने रहनेसे उसके मनमे राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त होनेके कारण शिक्षा (=नियमो) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो! जैसे कोई अनाज खाने वाला वैल हो, जो रस्सीसे वँधा हो, या 'व्रज' में रुका हो, उसके वारेमें कोई यह कहे कि यह अनाज खानेवाला वैल अव कभी अनाज नही खायेगा, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा?"

"आयुष्मान्! नही।"

"आयुष्मानो! इसके लिये गुंजायश है कि वह अनाज खानेवाला वैल रस्सा तुडाकर, 'व्रज' के वधनसे युक्त हो फिर अनाज खाने लग जाय। इसी प्रकार आयुष्मानो! कोई कोई व्यक्ति तभी तक विनीत, सयत तथा शान्त रहता है, जव तक वह शास्ता अथवा अन्य किसी गौरवार्ह ज्येष्ठ सब्रह्मचारीके साथ रहता है। लेकिन ज्योही वह शास्ता अथवा अन्य गौरवार्ह सब्रह्मचारियोंसे दूर हट जाता है, तो वह भिक्षुओ, भिक्षुणियो, उपासको, उपासिकाओ, राजाओ, राजाओंके महामात्यो, तैर्थिको तथा तैर्थिकोंके श्रावको के साथ वहुत घुल मिल कर रहता है। उसके वहुत घुल मिलकर रहनेसे, विश्वासपूर्वक रहनेसे, असयत रहनेसे, वातूनी वने रहनेसे उसके मनमें राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त होनेके कारण शिक्षा (=नियमो का त्याग कर हीन मार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो! एक व्यक्ति काम-भोगोंसे पृथक् हो प्रथम-ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है। वह 'मै 'प्रथम ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओ, ... घुल-मिलकर रहता है। .. हीन-मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो!

जैसे चौरस्ते पर बडी बडी बूंदे बरसनेसे धूल शान्त हो जाय और वहाँ कीचड हो जाय। अब आयुष्मानो ! यदि कोई ऐसा कहे कि 'अब इस चौरस्ते पर कभी धूल नही उडेगी', तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?"

"आयुष्मान ! नही।"

"आयुष्मानो ! इसकी गुजायश है कि उस चौरस्ते पर लोगोका आना जाना हो, बैल-बकरीका आना जाना हो, अथवा हवा-धूप नमीको सुखा दे और फिर धूल उडने लग जाय। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक व्यक्ति काम भोगोसे पृथक हो, प्रथम ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। वह "मै प्रथम-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ, भिक्षुओ, से . घुल मिल कर रह जाता है। .हीनमार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो ! एक आदमी वितर्क तथा विचारोका उपशयन होनेके अनन्तर द्वितीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। वह "मै द्वितीय-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे . घुल मिलकर रहता है हीन-मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो ! जैसे गाँव या निगमके पास कोई बडा तालाव हो, उसमे खूब पानी बरसे, उससे उस तालावके भीतरके सीपी-शख अदृष्ट हो जायँ, ककर-ठीकरे भी अदृष्ट हो जायँ। आयुष्मानो ! यदि कोई ऐमा कहे कि इस तालावमे अब फिर कभी सीपी-शख या ककर-ठीकरे प्रकट न होगे, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?

"आयुष्मान, नही।"

"आयुष्मानो ! इसकी गुजायश है कि इस तालावमे मनुष्य पानी पीये, बैल-बकरी पानी पीयें, अथवा हवा-धूप नमीको सुखा दे और तब फिर दोबारा सीपी-शख तथा ककर-ठीकरे प्रकट हो जायँ। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक आदमी वितर्क तथा विचारोका उपशमन होनेके अनन्तर द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मै द्वितीय-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओसे घुल मिलकर रहता है, हीन-मार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो ! एक आदमी प्रीतिसे भी विरक्त होकर तृतीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मै तृतीय-ध्यान लाभी हूँ।' सोचता हुआ भिक्षुओ से .. घुल मिलकर रहता हूँ, हीन-मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो, जैसे कोई आदमी बढिया भोजन कर चुकनेके अनन्तर फिर घटिया भोजनकी इच्छा नही करता। आयुष्मानो ! यदि कोई ऐसा कहे कि यह आदमी अब फिर कभी भोजनकी इच्छा नही करेगा, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?"

"आयुष्मान् ! नही।"

"आयुष्मानो! इसकी गुंजायश है कि जिस आदमीने वढिया भोजन खाया हो, जब तक उसके शरीरमें उसका 'ओज' रहे तब तक वह और भोजनकी इच्छा न करे, लेकिन जब उसका 'ओज' अन्तर्धान हो जायगा, तो वह फिर भोजन की इच्छा करेगा। इसी प्रकार आयुष्मानो! एक आदमी प्रीतिसे भी विरक्त होकर . . तृतीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं तृतीय-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे घुल मिलकर रहता है हीनमार्गी हो जाता है।

आयुष्मानो! एक आदमी दुक्ख (—वेदना) तथा सुख (—वेदना) के प्रहाण के अनन्तर चतुर्थ-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है। वह 'मैं चतुर्थ-ध्यान-लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे . घुलमिलकर रहता है, . हीन मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो, जैसे किसी पर्वत-प्रदेशमें वात-रहित स्थानपर कोई तालाव हो, जिसमें लहरें न उठती हो। आयुष्मानो! यदि कोई ऐसा कहे कि अब फिर कभी इस तालावमें लहरें न उठेंगी, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा?

"आयुष्मान्!" नही।

"आयुष्मानो! इसकी गुंजायश है कि पूर्व दिशासे जोरका हवा-पानी आये। उससे उस तालावमें लहरें उठें। पश्चिम दिशासे जोरका हवा-पानी आये .. उत्तर दिशासे आये दक्षिण दिशासे आये। उससे उस तालावमें लहरें उठें। इसी प्रकार आयुष्मानो! एक आदमी दुक्ख (—वेदना) तथा सुख (—वेदना) के प्रहाणके अनन्तर .. चतुर्थ-ध्यान प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं चतुर्थ-ध्यान-लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे. . घुलमिल कर रहता है;.. . हीन मार्गी हो जाता है।

आयुष्मानो! एक आदमी सभी निमित्तो (=ध्यानके विषयो) से चित्त को हटा अनिमित्त चित्त समाधिको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं अनिमित्त चित्त समाधिका लाभी हूँ' सोच भिक्षुओंसे घुलमिलकर रहता है। उसके वहुत घुलमिलकर रहनेसे .. राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त होनेके कारण हीन-मार्गी हो जाता है। जैसे, आयुष्मानो, राजा अथवा राजाका अमात्य अपनी चतुर्विध सेनाको लेकर मार्गारूढ हो और वह किसी एक वन-खण्डमें एक रात गुजारे। वहाँ हाथियोंकी आवाजके कारण, घोडोकी आवाजके कारण, रथोकी आवाजके कारण, पैदलोकी आवाजके कारण, भेरी, ढोल-शख-तिणव आदिकी आवाजके कारण झीगुर की आवाज लुप्त हो जाय। आयुष्मानो, यदि कोई ऐसा कहे कि 'अब फिर कभी

इस वन-खण्डमें झींगुरकी आवाज नही सुनाई देगी', तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?"

"आयुष्मान, नही।"

"आयुष्मानो ! इसकी गुंजाइश है कि वह राजा अथवा उस राजाका अमात्य उस वन-खण्डसे चल दे और तब फिर झिंगुरकी आवाज सुनाई दे। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक आदमी सभी निमित्तो (=ध्यानके विषयो) से चित्तको हटाकर अनिमित्त चित्त-समाधि प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं अनिमित्त चित्त-समाधिका लाभी हूँ' सोच भिक्षुओसे घुला मिला रहता है। उसके बहुत घुल मिलकर रहनेसे . राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त हो जानेके कारण हीन-मार्गी हो जाता है।

तब आगे चलकर हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान चित्तने शिक्षा (=भिक्षु नियमो) का त्यागकर हीन-मार्गका गमन किया। तब हत्थिसारिपुत्र चित्तके भिक्षु-मित्र आयुष्मान् महाकोट्ठिकके पास गये। पास जाकर आयुष्मान महाकोट्ठिकको यह कहा— क्या आयुष्मान महाकोट्ठिकने हत्थिसारिपुत्र चित्तके चित्तको अपने चित्तसे जान लिया था कि हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (=चर्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिये वह शिक्षा (=भिक्षु नियमो) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जायगा, अथवा आपको देवताओने यह सूचना दी थी कि 'भन्ते ! हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (=चर्य्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिये वह शिक्षा (=भिक्षुनियमो) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जाएगा ?

"आयुष्मानो, मैंने अपने चित्तसे उसका चित्त पहचानकर भी यह जानकारी प्राप्त कर ली थी कि हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (=चर्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिए वह शिक्षा (=भिक्षु नियमो) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जायगा; और मुझे देवताओने भी यह सूचना दी थी कि 'भन्ते ! हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (=चर्य्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिए वह शिक्षा (=भिक्षु नियमो) का त्यागकर हीन-मार्गी बन जायगा।'

तब हत्थिसारिपुत्र चित्तके भिक्षु-मित्र जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को अभिवादनकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए उन भिक्षुओने भगवान्को यह कहा, "भन्ते ! हत्थिसारिपुत्र चित्त इन इन ध्यानो (=विहार-समापत्तियो) का लाभी था, लेकिन तब भी शिक्षा (=भिक्षु-नियमो) को छोड हीन-मार्गी हो गया।"

"भिक्षुओ, चित्त नैष्क्रमणसे अधिक काल तक दूर नही रहेगा।"

तब हत्थिसारिपुत्र चित्त शीघ्र ही बाल-दाढी मुण्डवा, काषाय वस्त्र पहन, घरसे बे-घर हो प्रव्रजित हुआ। तब हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान चित्तने अकेले ही एकान्तवासी हो, अप्रमादी हो, प्रयत्नशील हो, साधना करते रहकर जिस अनुपम परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुलपुत्र घरसे बेघर हो जाते है, उस श्रेष्ठ जीवनको इसी शरीरमें जानकर, साक्षात्कर, प्राप्तकर रहने लगा। उसे मालूम हो गया कि जन्म (–मरण) का बन्धन क्षीण हो गया, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत कर लिया गया। जो कर्तृत्व था, वह पूरा हो गया। अब ऐसा कुछ शेष नही रहा, जो पुनर्जन्मका कारण हो। हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान चित्त भी एक अर्हत् हुए।

ऐसा मैने सुना। एक समय भगवान् वाराणसीके ऋषिपतन मृगदायमें विहार करते थे। उस समय भिक्षाटनसे लौटे हुए, मण्डलमाला (–भवन) में बैठे हुए, इकट्ठे हुए, बहुतसे स्थविर भिक्षुओमें यह बातचीत चली—

"आयुष्मानो, भगवानने पारायण मैत्री-प्रश्नमे यह कहा है—

'यो उभोन्ते विदित्वान, मज्झे मन्ता न लिप्पति।

त ब्रूमि महापुरिसो ति, सोध सिब्बिनमच्चगाति" ॥

[जो दोनो अन्तो (=सिरेकी बातो) को जानता है, जो प्रज्ञावान् मध्यमे भी लिप्त नही होता है, उसे मै 'महापुरुष' कहता हूँ। वही तृष्णा (सिब्बिनि) को लाँघ गया है।]

आयुष्मानो, एक अन्त (=सिरा) कौन-सा है? दूसरा अन्त कौन-सा है? मध्यमें क्या है? सिब्बिनि क्या है? ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओको इस प्रकार कहा—"आयुष्मानो, स्पर्श एक 'सिरा' है, स्पर्शका समुदय दूसरा 'सिरा' है, स्पर्श-निरोध मध्य है, तृष्णा ही सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी परिचय करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है, जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो! अतीत एक अन्त है, अनागत (=भविष्यत्) दूसरा अन्त है, वर्तमान मध्यमे है, तृष्णा सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है,

इतनी परिचय करने लायक वातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है, जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमे दुखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओसे कहा—आयुष्मानो! सुख-वेदना एक अन्त है, दुक्ख-वेदना दूसरा अन्त है, अदुक्खमसुखा वेदना मध्यमे है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक वात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करने लायक वातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है, जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमे दुखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओसे कहा—आयुष्मानो, नाम एक अन्त है, रूप दूसरा अन्त है, विज्ञान वीचमे है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक वात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करने लायक वातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमे दुखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो, छह भीतरी आयतन एक अन्त है, छह वाहरके आयतन दूसरा अन्त है, विज्ञान वीचमें है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक वात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करनेलायक वातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है, जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमे दुखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओसे कहा—आयुष्मानो! सक्काय (=सत्काय) एक अन्त है, सक्काय-समुदय दूसरा अन्त है, सक्काय-निरोध वीचमे है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक वात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करने लायक वातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है, जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे यह कहा—आयुष्मानो, हमने अपनी अपनी समझके अनुसार अपना मत व्यक्त कर दिया। आयुष्मानो! आओ, जहाँ भगवान् हैं, वहाँ चलें। जाकर भगवान्से ये सभी मत कहे। फिर जैसा भगवान् कहेगें, उस मतको (ठीक) ग्रहण करेंगे। 'आयुष्मान ऐसा ही हो' कह उन स्थविर भिक्षुओने उस भिक्षुको प्रतिवचन दिया।

तव स्थविर भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान्को प्रणामकर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे हुए उन स्थविर भिक्षुओने सभी भिक्षुओंसे जितनी वातचीत हुई थी, वह सभी भगवान्के सामने निवेदन की और पूछा—

"भन्ते! किसका कथन सुभाषित है?"

"भिक्षुओ, एक एक दृष्टिसे सभीका कहना ठीक है, लेकिन मेरे द्वारा पारायन मैत्री-प्रश्नमें जिस दृष्टिसे यह कहा गया—

"यो उमोन्ते विदित्वान, मज्झे मन्ता न लिप्पति।
तब्रूमि महापुरिसोति, सोध सिब्बिनिमच्चगा।"

उसे सुनो, अच्छी तरहसे मनमें धारण करो, मैं कहूँगा।

"भन्ते! ऐसा ही होगा" कह उन भिक्षुओने भगवान्को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने ऐसा कहा—

"भिक्षुओ, स्पर्श एक अन्त है, स्पर्श-समुदय दूसरा अन्त है, स्पर्श-निरोध वीचमें है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक वात भिक्षु जानता है, इतनी परिच करने लायक वातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है, जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय महान् भिक्षु सघ सहित भगवान् कोशल जनपदमें चारिका करते हुए जहाँ कोशल जनपदवासियोका दण्डकप्पक नामका निगम था, वहाँ पहुँचे। तव भगवान् मार्गसे हटकर एक वृक्षके नीचे विछे आसनपर वैठे। वे भिक्षु निवास-स्थानकी खोज करनेके लिये दण्डकप्पक निगमके भीतर गये।

तव वहुतसे भिक्षुओंके साथ आयुष्मान आनन्द शरीर-सीचने (=नहाने) के लिये अचिरवती नदी पर गये। अचिरवती नदीमें स्नान कर चुकनेके अनन्तर, वाहर निकल, शरीरको पूर्ववत् करनेके लिये, एक ही चीवर धारण किये हुए खडे हुए।

तव एक भिक्षु जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर आयुष्मान् आनन्दसे यह कहा—आयुष्मान् आनन्द! क्या भगवान्‌ने एक दम सोच विचारकर देवदत्तके वारेमे यह कहा है कि 'वह अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्प-भर वही रहनेवाला है, ला-इलाज है', अथवा किसी विशेष अर्थमे कहा है?"

"आयुष्मान्! भगवान्‌ने ऐसा (एकदम सोच विचारकर) ही कहा है।"

तव आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणामकर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे हुए आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से कहा—भन्ते! वहुतसे भिक्षुओके साथ मै अचिरवती नदीमे स्नान करने गया। स्नान कर चुकनेके अनन्तर, वाहर निकल कर, शरीर सुखानेके लिये, एक चीवर पहने खडा था। भन्ते! तव एक भिक्षु, जहाँ मै था, वहाँ आया और पास आकर मुझसे वोला—'आयुष्मान् आनन्द! क्या भगवान्‌ने एक दम सोच विचार कर देवदत्तके वारेमे यह कहा है कि 'वह अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्पभर वही रहनेवाला है, ला-इलाज है' अथवा किसी विशेष अर्थमें कहा है?' ऐसा कहनेपर मैंने उसे कहा—"हाँ आयुष्मान्! भगवान्‌ने ऐसा ही कहा है।"

"आनन्द! वह भिक्षु कोई थोडे ही दिन पूर्व प्रव्रजित तथा भिक्षु होगा, अथवा कोई मूर्ख स्थविर भिक्षु। अन्यथा जो वात मैंने सम्पूर्ण रूपसे कही है, उसे वह आशिक रूपसे कैसे ग्रहण कर सकता है? आनन्द! मै किसी दूसरे ऐसे व्यक्तिको नही देखता, जिसके वारेमें मैंने इस प्रकार सोच विचार कर यह कहा हो जैसे देवदत्तके वारेमें। आनन्द! जव तक मुझे देवदत्तमे वालका सिरा रखने लायक भी शुक्ल-धर्म (=शुभ कार्य) दिखाई दिया, तवतक मैंने कभी यह नही कहा कि देवदत्त अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्प भर वही रहनेवाला है, ला-इलाज है।' लेकिन आनन्द! जव मुझे देवदत्तमें वालका सिरा रखने लायक भी शुक्ल-धर्म (=शुभ कर्म) नही दिखाई दिया, तभी मैंने यह कहा कि देवदत्त अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्प भर वही रहनेवाला है, ला-इलाज है।

"आनन्द! जैसे कोई गुँहका कुआँ हो, पुरुसाभरसे अधिक गहरा हो और किनारे तक गुँहसे लवालव भरा हो। उसमे प्राणी सिर तक डूवा हो। वहाँ कोई आदमी आये जो उसका हित करना चाहता हो, जो उसकी भलाई चाहता हो, जो उसका कल्याण चाहता हो और जो उसे उस कुएँसे निकालना चाहता हो। वह उस कुएँके चारो ओर घूमकर इसकी परीक्षा करे, किन्तु उसे उस आदमीके शरीरका वालका सिरा रख सकने लायक भी कोई अश ऐसा न दिखाई दे जो गुँहसे लिवडा न हो और जिसे

"इसी प्रकार हे आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें वालका सिरा छुआ सकने लायक भी कुशल-धर्म नही है। यह आदमी पूर्णरूपसे अकुशल-धर्मोसे ही युक्त है। यह आदमी शरीर छूटनेपर, मरनेपर, अपाय-गामी होगा, दुर्गति-प्राप्त होगा, नरकमें उत्पन्न होगा। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा आदमी चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है। इस प्रकार भी आनन्द! तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।"

ऐसा कहनेपर आयुष्मान् आनन्दने भगवानेको यह कहा—"भन्ते! क्या इन तीन तरहके व्यक्तियोंके समान ही दूसरे भी तीन तरहके व्यक्तियोका प्रज्ञापन किया जा सकता है?"

भगवान्ने कहा—"हाँ आनन्द! प्रज्ञापन किया जा सकता है। आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके कुशल-धर्म लुप्त हो गये, अकुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका कुशल-मूल अभी सम्पूर्णत नष्ट नही हुआ है। किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार भविष्यमे इस आदमीकी हानि होगी। आनन्द! जैसे अगार जले हो, प्रज्वलित हो, उनमेंसे लाट निकल रही हो, किन्तु वे वडी शिलापर विखेर दिये गये हों। आनन्द! तू जानता है न कि ये अंगार वृद्धि-विपुलताको प्राप्त न होंगे।"

"भन्ते! हाँ।"

"अथवा आनन्द! शामके समय जब सूर्यास्त होने लगता है तब तू जानता है न कि प्रकाशका लोप हो जायेगा और अन्धेरा हो जायेगा?"

"भन्ते! हाँ।"

"अथवा आनन्द! जैसे आधी रातके समय, जव सम्पत्तिशाली लोगोंके खाने पीनेका समय होता है, तब तू जानता है न कि प्रकाश नही रहता, अन्धकार हुआ रहता है?"

"भन्ते! हाँ।"

"इसी प्रकार हे आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानता हूँ कि इस आदमीमे कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके कुशल-धर्म लुप्त हो गये, अकुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका कुशल-मूल अभी सम्पूर्णत नष्ट नही हुआ है। किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार भविष्यमे इस आदमीकी हानि होगी। आनन्द, इस प्रकार भी आदमी तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है।'इस प्रकार भी आनन्द! तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमे कुशल धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके अकुशल धर्म लुप्त हो गये, कुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका अकुशल-मूल सम्पूर्ण रूपसे नष्ट नही हुआ है, किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार इस आदमीकी भविष्यमें हानि नही होगी। आनन्द! जैसे अगार जले हो, प्रज्वलित हो, उनमेंसे लाट निकल रही हो और वे सूखे तिनकोंके ढेरमे वा घास की ढेरीपर डाल दिये जाये। आनन्द! तू जानता है न कि ये अगार वृद्धि, विपुलताको प्राप्त होगे?"

"भन्ते! हां।"

"अथवा आनन्द! जैसे रातके वीत जानेपर, जब सूर्योदय होता है, तो तू जानता है न कि अन्धेरा नही रहेगा और प्रकाश प्रकट होगा?"

"भन्ते, हां।"

"अथवा आनन्द! जैसे दिन का मध्याह्न, भोजनका समय होनेपर, क्या तू जानता है कि अन्धेरा नही रहेगा और प्रकाश प्रकट होगा?"

"भन्ते! हां।"

"इसी प्रकार आनन्द! मै किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके अकुशल-धर्म लुप्त हो गये, कुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका अकुशल-मूल सम्पूर्ण रूपसे नष्ट नही हुआ है। किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार इस आदमीकी भविष्यमे हानि नही होगी। आनन्द! इस प्रकार भी आदमी तथा-

गतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें बालका सिरा घुसा सकने लायक भी अकुशल-धर्म नही है। यह आदमी सम्पूर्ण रूपसे निर्दोष शुक्ल-धर्मसे युक्त है। यह आदमी इसी प्रकार शरीरमे (राग-द्वेष-मोहके क्षय स्वरूप) निर्वाणको प्राप्त होगा। जैसे आनन्द! अगार ठण्डे हो गये हो, बुझ गये हो और वह सूखे तिनकोके ढेर या लकडीके ढेरपर डाले गये हो, तो आनन्द! तुम जानते हो न कि ये अगार वृद्धि, विपुलताको प्राप्त न होगे?"

"भन्ते! हाँ।"

"इसी प्रकार आनन्द! मैं किसी किसी आदमी को ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमे कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म है। इसी आदमी को किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें बालका सिरा घुसा सकने लायक भी अकुशल-धर्म नही है। यह आदमी सम्पूर्ण रूपसे निर्दोष शुक्ल-धर्मसे युक्त है। यह आदमी इसी शरीरमे (राग-द्वेष-मोहके क्षय-स्वरूप) निर्वाणको प्राप्त होगा। आनन्द! इस प्रकार भी आदमी तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात हुआ रहता है। इस प्रकार भी आनन्द! तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द! जिन तीन प्रकारके आदमियोका पहले उल्लेख हुआ, उनमें एक वे है जिनकी हानि नही होती, एक वे है जिनकी हानि होती है तथा एक वे हैं जो नरक-यात्री होते है। इसी प्रकार जिन तीन प्रकारके आदमियोका बादमे उल्लेख हुआ उनमें एक वे है जिनकी हानि होती है, एक वे है जिनकी हानि नही होती तथा एक वे है जो (राग-द्वेष मोह क्षय-स्वरूप) निर्वाणको प्राप्त होते है।

"भिक्षुओ, बीधने वाले धर्म-पर्य्यायका उपदेश करता हूँ। इसे सुनो। अच्छी तरहसे मनमें धारण करो। भाषण करता हूँ।"

"भन्ते ! बहुत अच्छा" कह भिक्षुओने भगवानको प्रतिवचन दिया।

भगवान्ने यह कहा—भिक्षुओ, बीधनेवाला धर्म-पर्य्याय कौनसा है? भिक्षुओ, कामनाओको जानना चाहिये, कामनाओके निदान-कारणको जानना चाहिये, कामनाओंके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, कामनाओंके विपाक को जानना चाहिये, कामनाओके निरोधको जानना चाहिये, कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, वेदनाको जानना चाहिये, वेदनाके निदान-कारणको जानना चाहिये, वेदनाके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, वेदनाके विपाकको जानना चाहिये, वेदनाके निरोध को जानना चाहिये, वेदनाके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, सञ्ज्ञाको जानना चाहिये, सञ्ज्ञाके निदान-कारणको जानना चाहिये, सञ्ज्ञाके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, सञ्ज्ञाके विपाकको जानना चाहिये, सञ्ज्ञाके निरोधको जानना चाहिये, सञ्ज्ञाके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, आस्रवोको जानना चाहिये, आस्रवोके निदान-कारणको जानना चाहिये, आस्रवोके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, आस्रवोके विपाकको जानना चाहिये, आस्रवोके निरोधको जानना चाहिये, आस्रवोके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, कर्मको जानना चाहिये, कर्मके निदान-कारणको जानना चाहिये, कर्मके नाना-स्वरूपोको जानना चाहिये, कर्मके विपाकको जानना चाहिये, कर्मके निरोधको जानना चाहिये, कर्मके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, दुक्खको जानना चाहिये, दुक्खके निदान-कारणको जानना चाहिये, दुक्खके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, दुक्खके विपाकको जानना चाहिये, दुक्खके निरोधको जानना चाहिये, दुक्खके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, कामनाओको जानना चाहिये, कामनाओके निदान-कारणको जानना चाहिये, कामनाओके नाना-स्वरूपोको जानना चाहिये, कामनाओके विपाक को जानना चाहिये, कामनाओंके निरोधको जानना चाहिये, कामनाओके निरोधकी ओर ले जाने वाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह

किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, ये पाँच इन्द्रियोंके विषय (=कामगुण) हैं, चक्षुके विषय रूप, जो इष्ट होते हैं, जो सुन्दर होते हैं, जो अच्छे लगनेवाले होते हैं, जो प्रिय-कर होते हैं, जो काम्य होते हैं तथा जो रजन करते हैं। श्रोतके विषय शब्द. . . . घ्राणके विषय गन्ध . . . जिव्हाके विषय रस. . . . स्पर्शेन्द्रिय (=काय) के विषय स्पृष्टव्य, जो इष्ट होते हैं, जो सुन्दर होते हैं, जो अच्छे लगने वाले होते हैं, जो प्रियकर होते हैं, जो काम्य होते हैं तथा जो रजन करते हैं। भिक्षुओ, ये कामनायें नहीं हैं, ये तो आर्य–विनय (=बुद्ध-देशना) के अनुसार काम-गुण (इन्द्रियोंके विषय) हैं—

सकप्परागो पुरिसस्स कामो,
नेते कामा यानि चित्रानि लोके
सकप्परागो पुरिसस्स कामो
तिट्ठन्ति चित्रानि तथेव लोके
अथेत्थ धीरा विनयन्ति छन्द॥

[पुरुषका सराग-सकल्प ही यथार्थ कामना है। दुनियाके चित्र-विचित्र पदार्थ कामनायें नहीं हैं। पुरुषका सराग-सकल्प ही यथार्थ कामना है। दुनियाके चित्र-विचित्र पदार्थ (=इन्द्रियोंके विषय) तो वैसे ही बने ही रहते हैं। धीर जन इन्हींके विषयमें अपनी कामनाको सयत रखते हैं।]

"भिक्षुओ, कामनाओका निदान-कारण क्या है? भिक्षुओ, कामनाओका निदान-कारण है स्पर्श।

"भिक्षुओ, कामनाओंके नाना-स्वरूप कौनसे हैं? भिक्षुओ, रूपोंकी कामना पृथक है, शब्दोंकी कामना पृथक है, सुगन्धियोंकी कामना पृथक है, रसोंकी कामना पृथक है, स्पृष्टव्योंकी सामना पृथक है। भिक्षुओ, ये कामनाओंके नाना स्वरूप कहलाते हैं।

"भिक्षुओ, कामनाओका विपाक किसे कहते हैं? भिक्षुओ, जिस जिस कामनाके फल स्वरूप जैसा जैसा जन्म ग्रहण करता है पुण्यसे मिलने वाला अथवा अपुण्यसे मिलने वाला। भिक्षुओ, उसे कामनाओका विपाक कहते हैं।

"भिक्षुओ, कामनाओंका निरोध किसे कहते हैं? भिक्षुओ स्पर्श-निरोध ही कामनाओंका निरोध है। यह आर्य अष्टागिक मार्ग ही कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) है, जैसे सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-सकल्प, सम्यक्-वाणी, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यक्-आजीविका, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति, सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक कामनाओको पहचानता है, कामनाओके निदान-कारणको पहचानता है, कामनाओके नाना स्वरूपोको पहचानता है, कामनाओके विपाकको पहचानता है, कामनाओंके निरोधको पहचानता है, कामनाओके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को पहचानता है, वह इस बीधनेवाले कामनाओंके निरोध श्रेष्ठ जीवन (= ब्रह्मचर्य) को पहचानता है। "भिक्षुओ, कामनाओ को जानना चाहिये, . कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमे कहा गया।

"भिक्षुओ, वेदनाको जानना चाहिये वेदनाके निरोध-गामिनी प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये, "यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, ये तीन वेदनायें है—सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना।

"भिक्षुओ, वेदनाओका निदान-कारण क्या है? भिक्षुओ, वेदनाओका निदान-कारण स्पर्श है।

"भिक्षुओ, वेदनाके नाना स्वरूप कौनसे है? भिक्षुओ, सामिष (= भौतिक) सुखा वेदना होती है, निरामिष (= अभौतिक) सुखा वेदना होती है, सामिष दुक्खा वेदन ाहोती है, निरामिष दुक्खा वेदना होती है, सामिप अदुक्खमुसुखा वेदना होती है, निरामिप अदुक्खमुसुखा वेदना होती है। भिक्षुओ, ये वेदनाके नाना स्वरूप है।

"भिक्षुओ, वेदनाओंका विपाक किसे कहते है? वेदनाओको भुगतनेवाला उस उस जन्मको ग्रहण करता है, पुण्यसे मिलनेवाले अथवा अपुण्यसे मिलनेवाले। भिक्षुओ, यह वेदनाओका विपाक कहलाता है।

"भिक्षुओ, वेदनाओका निरोध किसे कहते हैं? भिक्षुओ स्पर्श—निरोध ही वेदना-निरोध है। यह आर्य अष्टागिक मार्ग ही वेदना-निरोध-गामिनी प्रतिपदा है, जैसे सम्यक् दृष्टि सम्यक् समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक् इस प्रकार वेदनाको पहचानता है, वेदनाके निदान-कारणको पहचानता है, वेदना के नाना स्वरूपोको पहचानता है, वेदनाके विपाकको पहचानता है, वेदनाके निरोधको पहचानता है, वेदना-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको पहचानता है, वह इस बीधने वाले वेदना-निरोध श्रेष्ठ-जीवन (= ब्रह्मचर्य) को पहचानता है। "भिक्षुओ, वेदनाको जानना चाहिये . वेदना-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये," यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, सञ्ज्ञाको जानना चाहिये. सञ्ज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदा (मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया?

भिक्षुओ, ये छह सज्ञायें हैं—रूप सज्ञा, शब्द-सज्ञा, गन्ध-सज्ञा, रस-सज्ञा, स्पृष्टव्य-सज्ञा तथा धर्म (=मनके विषयो) की सज्ञा।

"भिक्षुओ, सज्ञाओका निदान-कारण क्या है?

"भिक्षुओ, सज्ञाओका निदान-कारण स्पर्श है।

"भिक्षुओ, सज्ञाओके नाना स्वरूप कौनसे हैं?

"भिक्षुओ, रूपोंके प्रति जो सज्ञा है, वह अन्य है, शब्दोके प्रति जो सज्ञा है, वह अन्य है, सुगन्धियोंके प्रति जो सज्ञा है, वह अन्य है, रसोंके प्रति जो सज्ञा है, वह अन्य है, स्पृष्टव्योंके प्रति जो सज्ञा है, वह अन्य है, धर्मों (=मनके विषयो) के प्रति जो सज्ञा है, वह अन्य है। भिक्षुओ, ये सज्ञाओंके नाना स्वरूप है।

"भिक्षुओ, सज्ञाओका विपाक किसे कहते हैं? भिक्षुओ, व्यवहार ही सज्ञाओ का विपाक है। जैसे जैसे उसे जानता-पहचानता है वैसे वैसे व्यवहार करता है कि मैं इस सज्ञा वाला था। भिक्षुओ, यह सज्ञाओका विपाक कहलाता है।

"भिक्षुओ, सज्ञाओका निरोध किसे कहते है?

"भिक्षुओ, स्पर्शका निरोध सज्ञाओका निरोध है। यह आर्य अष्टागिक मार्ग ही सज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदा है, जैसे सम्यक्-दृष्टि . सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार सज्ञाको पहचानता है, सज्ञाओके निदान-कारणको पहचानता है, सज्ञाओंके नाना स्वरूपोको पहचानता है, सज्ञाओके विपाकको पहचानता है, सज्ञाओंके निरोध को पहचानता है तथा सज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको पहचानता है, वह इस बींधनेवाले सज्ञा-निरोध श्रेष्ठ जीवनको पहचानता है। भिक्षुओ, सज्ञाको जानना चाहिये . सज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये, यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, आस्रवोको जानना चाहिये . . आस्रव-निरोध-गामिनी प्रतिपदा (मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? "भिक्षुओ, आस्रव तीन हैं—कामास्रव, भवास्रव, तथा अविद्यास्रव।

"भिक्षुओ, आस्रवोका निदान-कारण क्या है? भिक्षुओ, अविद्या आस्रवोका निदान-कारण है।

"भिक्षुओ, आस्रवोंके नाना स्वरूप कौनसे है? भिक्षुओ, नरकमें ले जाने वाले आस्रव होते हैं, पशु-पक्षी योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले आस्रव होते है, प्रेत-योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले आस्रव होते हैं, मनुष्य-लोकमें जन्म ग्रहण कराने-

वाले आस्रव होते हैं तथा देवलोकमे जन्म ग्रहण कारनेवाले आस्रव होते है। भिक्षुओ, ये आस्रवोके नाना स्वरूप हैं।

" भिक्षुओ, आस्रवोका विपाक किसे कहते है ?

" भिक्षुओ, जिस जिस आस्रवके फलस्वरूप जैसा जैसा जन्म ग्रहण किया रहता है, पुण्यसे मिलनेवाला अथवा अपुण्यसे मिलनेवाला। भिक्षुओ, इसे आस्रवोका विपाक कहते हैं।

" भिक्षुओ, आस्रवोका निरोध किसे कहते है ?

" भिक्षुओ, अविद्या निरोध ही आस्रवोका निरोध है। यह आर्य अष्टागिक मार्ग ही आस्रवोके निरोध की ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) है, जैसे सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि।

" भिक्षुओ, जव आर्य-श्रावक इस प्रकार आस्रवोको पहचानता है, आस्रवोके निदान-कारणको पहचानता है, आस्रवोके नाना स्वरूपोको पहचानता है, आस्रवोके विपाकको पहचानता है, आस्रवोके निरोधको पहचानता है तथा आस्रव-निरोध-गामिनी प्रतिपदा को पहचानता है, वह इस बीधने वाले आश्रव-निरोध श्रेष्ठ जीवनको को पहचानता है। "भिक्षुओ, आस्रवोको जानना चाहिये . आश्रव-निरोध गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये," यह जो कहा गया, इसी अर्थमे कहा गया ?

"भिक्षुओ, कर्मको जानना चाहिये कर्म-निरोध-गामिनी प्रतिपदा (मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया यह किस अर्थमे कहा गया ?

"भिक्षुओ, मैं चेतना (= सकल्प)को ही कर्म कहता हूँ। (आदमी)सकल्प करके ही कर्म करता है।

"भिक्षुओ, कर्मोका निदान-कारण क्या है ? भिक्षुओ, स्पर्श कर्मोका निदान-कारण है।

"भिक्षुओ, कर्मोके नाना स्वरूप कौनसे हैं ?

"भिक्षुओ, नरकमे ले जानेवाले कर्म होते है, पशु-पक्षी योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते है ?, प्रेत-योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते है, मनुष्य-लोकमे जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते है तथा देव-लोकमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते हैं। भिक्षुओ, ये कर्मोके नाना स्वरूप हैं।

" भिक्षुओ, कर्मोका विपाक (= फल) कैसे होता है ? भिक्षुओ, मै तीन प्रकार से कर्मोका विपाक (= फल) कहता हूँ —इसी जन्म मे, अगले जन्ममे अथवा अन्य किसी जन्ममे।

"भिक्षुओ, यह कर्मोका विपाक (=फल) कहलाता है।

"भिक्षुओ, कर्मका निरोध किसे कहते हैं? भिक्षुओ, स्पर्शका निरोध ही कर्मका निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक-मार्ग ही कर्म-निरोध-गामिनी प्रतिपदा, जैसे सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार कर्मको पहचानता है, कर्मोके निदान-कारणको पहचानता है, कर्मोके नाना स्वरूपोको पहचानता है, कर्मोके विपाकको पहचानता है, कर्मोके निरोधको पहचानता है तथा कर्म-निरोधगामिनी प्रतिपदाको पहचानता है, वह इस बीधने वाले कर्म-निरोध श्रेष्ठ-जीवनको पहचानता है।" "भिक्षुओ, कर्मको जानना चाहिये कर्म-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये," यह जो कहा गया है, यह इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, दुक्खको जानना चाहिये, दुक्खके निदान-कारणको जानना चाहिये, दुक्खके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, दुक्खके विपाक(=फल)को जानना चाहिये, दुक्खके निरोधको जानना चाहिये, दुक्ख निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रति-पदा(=मार्ग)को जानना चाहिये, "यह जो कहा गया, यह किस अर्थमे कहा गया? जन्म भी दुक्ख है, बुढापा भी दुक्ख है, रोग भी दुक्ख है, मरण भी दुक्ख है, रोना-पीटना दुखी होना-पश्चाताप करना भी दुक्ख है, इच्छाकी पूर्ति न होना भी दुक्ख है, संक्षेपमें कहना हो तो पचुपादान स्कन्ध ही दुक्ख है।

"भिक्षुओ, दुक्खका निदान-कारण क्या है?

"भिक्षुओ, तृष्णा दुक्खका निदान-कारण है।

"भिक्षुओ, दुक्खके नाना स्वरूप कौन से है?

"भिक्षुओ, अत्यन्त दुःख, सीमित दुक्ख, चिरकाल तक रहने वाला दुक्ख, तथा अल्प काल तक रहने वाला दुक्ख। भिक्षुओ, ये दुक्खके नाना स्वरूप हैं।

"भिक्षुओ, दुक्खका विपाक (फल) क्या होता है?

"भिक्षुओ, एक आदमी जब किसी दुक्खसे दुखित होता है, पीडित होता है तो वह चिन्ता करता है, कलपता है, रोता-पीटता है, छाती पीटता है, बेहोश हो जाता है, अथवा उस दुक्खसे दुक्खी होनेके कारण इधर-उधर खोजता फिरता है कि कोई एक या दो पदका मन्त्र जानता हो, उस दुक्खको दूर करनेके लिये। भिक्षुओ, दुक्खका विपाक (=फल) या तो बेहोशी है या परियेषण है। भिक्षुओ, यह दुक्खका विपाक (=फल) कहलाता है।

"भिक्षुओ, दुक्खका निरोध किसे कहते हैं?

भिक्षुओ, तृष्णाका निरोध ही दुक्खका निरोध है। यह आर्य अष्टागिक मार्ग ही दुक्ख-निरोध-गामिनी प्रतिपदा, जैसे सम्यक् दृष्टि सम्यक् समाधि।

भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार दुक्खको पहचानता है, दुक्खके निदान-कारणको पहचानता है, दुक्खके नाना स्वरूपोको पहचानता है, दुक्खके विपाकको पहचानता है, दुक्खके निरोधको पहचानता है, दुक्ख निरोध-गामिनी प्रतिपदाको पहचानता है, वह इस वीधनेवाले दुक्ख-निरोध स्वरूप श्रेष्ठ जीवनको पहचानता है।" भिक्षुओ, दुक्खको जानना चाहिये, दुक्खके निदान-कारणको जानना चाहिये, दुक्खके नाना स्वरूपोको जानना चाहिये, दुक्खके विपाक (= फल) को जानना चाहिये, दुक्खके निरोधको जानना चाहिये, दुक्खके निरोध की ओर ले जाननेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमे कहा गया।

भिक्षुओ, यही वीधनेवाला धर्म-पर्य्याय है।

भिक्षुओ, ये छह तथागतके तथागत-बल है, जिन बलोसे युक्त होनेके कारण तथागत दृढ रहते है, परिषदोमे सिंह-नाद करते है तथा ब्रह्म-चक्रको प्रवतित करते है। कौनसे छह? भिक्षुओ, तथागत योग्य बात (= स्थान) को योग्य बातके रूपमे तथा अयोग्य-बातको अयोग्य-बातके रूपमे जानते है। भिक्षुओ, यह जो तथागत योग्य बातको योग्य बातके रूपमें तथा अयोग्य बातको अयोग्य बातके रूपमे जानते है, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ रहते है, परिषदोमे सिंह-नाद करते है, तथा ब्रह्मचक्र प्रवर्तित करते है।

फिर भिक्षुओ, तथागत भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोके विपाक (= फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ रूपसे जानते है। भिक्षुओ, यह जो तथागत भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोके विपाक (= फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ रूपसे जानते है, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ रहते है, परिषदोमे सिंह-नाद करते है तथा ब्रह्मचक्र प्रवर्तित करते है।

फिर भिक्षुओ, तथागत ध्यान-विमोक्ष-समाधि-समापत्तियोके ह्रास, विकास तथा उत्थानको यथार्थ रूपसे जानते है। भिक्षुओ, यह जो तथागत . जानते है, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ रहते है, परिषदोमें सिंह-नाद करते है तथा ब्रह्म-चक्र प्रवर्तित करते है।

फिर भिक्षुओ, तथागत अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोका अनुस्मरण करते हैं, जैसे एक जन्म, दो जन्म इस प्रकार आकार-सहित-उद्देश्य-सहित नाना रूपसे पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करते हैं।

भिक्षुओ, यह जो तथागत अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोका अनुस्मरण करते हैं, जैसे एक जन्म दो जन्म इस प्रकार आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना रूपसे पूर्वजन्मोका अनुस्मरण करते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ रहते हैं, परिषदोमे सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्म-चक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, दिव्य, विशुद्ध, मनुष्य-बलेतर चक्षुसे तथागत यथाकर्म उस उस योनिमे जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणियोको जानते हैं। भिक्षुओ, यह जो दिव्य, विशुद्ध, मनुष्य बलेत्तर चक्षुसे तथागत यथाकर्म उस उस योनिमें जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणियोको जानते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ रहते हैं, परिषदोमे सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्म-चक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, तथागत आस्रवोका क्षयकर साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करते हैं। भिक्षुओ, यह जो तथागत आस्रवोका क्षयकर साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ रहते हैं, परिषदोमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र प्रवर्तित करते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मत) के लोग तथागतसे योग्य-बातके बारेमे योग्यता सम्बन्धी, अयोग्य बातके बारेमे अयोग्यता सम्बन्धी यथार्थ ज्ञानके अनुसार पास आकर प्रश्न पूछते है। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागतको योग्य-बात तथा अयोग्य-बातका यथार्थ-ज्ञान है, वैसे वैसे ही तथागत योग्य बातका योग्य-बातकी तरह अयोग्य-बात को अयोग्य-बातकी तरह यथार्थ ज्ञानके अनुसार, प्रश्न पूछने पर समाधान कर देते है।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोके विपाक (=फल) के कारण तथा हेतुके सम्बन्धमें, यथार्थ ज्ञानको लेकर, पास आकर प्रश्न पूछते हैं। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागत भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोके विपाक (=फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ-रूपसे जानते है, वैसे वैसे ही तथागत भूत-भविष्यत् वर्तमान कर्मोके विपाक (=फल) के बारेमें यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछे जानेपर समाधान कर देते है।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे ध्यान-विमोक्ष-समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थानके बारेमें यथार्थ ज्ञानको लेकर, पास जाकर प्रश्न पूछते

हैं। भिक्षुओ, जैसे-जैसे तथागत ध्यान-विमोक्ष-समाधि-समापत्तियोके ह्रास, विकास तथा उत्थानके वारेमे यथार्थ रूपसे जानते है, वैसे-वैसे ही तथागत ध्यान-विमोक्ष समाधि-समापत्तियोके ह्रास, विकास तथा उत्थान के वारेमे यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछने पर समाधान कर देते है।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे पूर्व जन्मोके अनुस्मरणके वारेमें यथार्थ रूपसे पास आकर प्रश्न पूछते है,। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागत पूर्वजन्मोंके अनुस्मरणके वारेमे, यथार्थ रूपसे जानते है, वैसे वैसे ही तथागत पूर्व जन्मोके वारेमें, यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछनेपर, समाधान कर देते है।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे मरने तथा जन्म ग्रहण करनेके वारेमे, यथार्थ रूपसे, पास आकर, प्रश्न पूछते है। भिक्षुओ, जैसे-जैसे तथागत मरने तथा जन्म ग्रहण करनेके वारेमे यथार्थ रूपसे जानते है, वैसे-वैसे ही तथागत मरने तथा जन्म ग्रहणके वारेमे, यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछनेपर समाधान कर देते है।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे आस्रवोंके क्षय यथार्थ रूपसे, पास आकर, प्रश्न पूछते है। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागत आस्रवोके क्षयके वारेमे .. यथार्थ रूपसे जानते है, वैसे वैसे ही तथागत आस्रवोंके क्षयके वारेमे, यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछनेपर समाधान कर देते है।

भिक्षुओ, यह जो योग्य वातको योग्य-वात के रूपमे तथा अयोग्य वातको अयोग्य वातके रूपमे जानना है, यह एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नही। यह जो भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोके विपाक (= फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ-रूपसे जानना है, यह एकाग्र-चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नही। यह जो ध्यान-विमोक्ष समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थानके वारेमे यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना है, यह भी एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नही। यह जो पूर्व जन्मोके अनुस्मरणके वारेमे यथार्थ ज्ञान है, यह भी एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर चित्तके लिये नही। यह जो मरने तथा जन्म ग्रहणके वारेमे यथार्थ ज्ञान है, यह भी एकाग्र-चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नही। यह जो आस्रवोके क्षय . यथार्थ ज्ञान है, यह भी एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नही।

भिक्षुओं, यह जो समाधि (= चित्तकी एकाग्रता) है, यही मार्ग है तथा यह जो असमाधि (= चित्तकी अस्थिरता) है, यही कुमार्ग है।

(७) देवता-वर्ग

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अनागामि फलकी प्राप्ति असम्भव है। कौन-सी छह बातें? अश्रद्धा, निर्लज्जता, पाप करनेमें भय न मानना, आलस्य, मूढ़-स्मृति तथा दुष्प्रज्ञ होना। इन छह बातोंको बिना छोड़े अनागामि फलकी प्राप्ति असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अनागामि फलकी प्राप्ति सम्भव है। कौन-सी छह बातें? अश्रद्धा, निर्लज्जता, पाप करनेमें भय न मानना, आलस्य, मूढ़-स्मृति तथा दुष्प्रज्ञ होना। इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अनागामि फलकी प्राप्ति सम्भव है।

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अर्हत्वकी प्राप्ति असम्भव है। कौन-सी छह बातें? सुस्ती, आलस्य, उद्धतपन, कौकृत्य, अश्रद्धा तथा प्रमाद। इन छह बातोंको बिना छोड़े अर्हत्वकी प्राप्ति असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अर्हत्वकी प्राप्ति सम्भव है। कौन-सी छह बातें? सुस्ती, आलस्य, उद्धतपन, कौकृत्य, अश्रद्धा तथा प्रमाद। भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अर्हत्वकी प्राप्ति सम्भव है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु बुरे लोगोंकी सगतिमें रहता है, बुरे लोगोंसे दोस्ती रखता है, बुरे लोगोंके आश्रयमें रहता है, कुसगतिमें ही समय बिताता है और बुरे लोगोंका ही अनुकरण करता है, इसकी कोई सम्भावना नहीं कि वह शिष्टाचार (=आभिसमाचारिक शील) का पालन करेगा। जो शिष्टाचारका पालन नहीं करेगा, वह शैक्ष-धर्मका पालन करेगा—इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं। जो शैक्ष-धर्मका पालन नहीं करेगा, वह शीलोंकी रक्षा करेगा—इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं। जो शीलोंकी रक्षा नहीं करेगा, वह काम-राग, रूप-राग तथा अरूप-रागसे मुक्त हो सकेगा—इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं।

भिक्षुओ, जो भिक्षु भले लोगोंकी सगतिमें रहता है, भले लोगोंसे दोस्ती रखता है, भले लोगोंके आश्रयमें रहता है, सत्सगतिमें ही समय बिताता है और भले लोगोंका ही अनुकरण करता है, इसकी सम्भावना है कि वह शिष्टाचार (=आभिसमाचारिक शील) का पालन करेगा। जो शिष्टाचारका पालन करेगा, वह शैक्ष-धर्मका पालन करेगा—इसकी गुंजाइश है। जो शैक्ष-धर्मका पालन करेगा, वह शीलोंकी रक्षा करेगा—इसकी भी गुंजाइश है। जो शीलोंकी रक्षा करेगा, वह काम-राग, रूप-राग तथा अरूप-रागसे मुक्त हो सकेगा—इसकी भी गुंजाइश है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु जमातमे रहनेवाला है, जमातमे रमण करनेवाला है, जमातमे वास करने वाला है; समूहमे रहनेवाला है, समूहमे रमण करनेवाला है, समूहमे वास करनेवाला है, वह एकान्तमे आनन्दसे रहेगा—इसकी गुजाइश नहीं है। जो एकान्तमे आनन्दसे नही रहता, वह चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण करेगा—इसकी गुजाइश नही है। जो चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण नही करता, वह सम्यक् दृष्टिको प्राप्त करेगा—इसकी गुजाइश नही। जो सम्यक्-दृष्टिको प्राप्त नही होता, वह सम्यक् समाधिको प्राप्त होगा—इसकी गुजाइश नही। जो सम्यक् समाधिको प्राप्त नही होता, वह (दस) सयोजनोसे मुक्त होगा—इसकी गुजाइश नही। जो सयोजनोसे मुक्त नही होता, वह निर्वाण साक्षात करेगा—इसकी गुजाइश नही।

भिक्षुओ, जो भिक्षु जमातमे रहनेवाला नही है, जमातमे रमण करनेवाला नही है, जमातमे वास करनेवाला नही है, समूहमे रहने वाला नही है, समूहमें रमण करनेवाला नही है, समूहमे वास करनेवाला नही है, वह एकान्तमे आनन्दसे रहेगा—इसकी गुजाइश है। जो एकान्तमे आनन्दसे रहेगा, वह चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण करेगा—इसकी गुजाइश है। जो चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण करता है, वह सम्यक्-दृष्टिको प्राप्त करेगा—इसकी गुजाइश है। जो सम्यक्-दृष्टिको प्राप्त होता है, वह सम्यक् समाधिको प्राप्त होगा—इसकी गुजाइश है। जो सम्यक् समाधिको प्राप्त होता है, वह (दस) सयोजनोसे मुक्त होगा—इसकी गुजाइश है। जो सयोजनोसे मुक्त होता है, वह निर्वाण साक्षात् करेगा—इसकी गुजाइश है।

उस समय एक देवता प्रकाशपूर्ण रात्रिमे, प्रकाशमान् वर्ण वाला, सारेके सारे जेतवनको प्रकाश-युक्त करते हुए, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्को नमस्कार कर एक ओर खडा हुआ। एक ओर खडे हुए उस देवताने भगवान्से यह कहा—भन्ते! ये छह बाते भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। कौन-सी छह? शास्ताका गौरव करना, धर्मका गौरव करना, सघका गौरव करना, शिक्षाओके प्रति गौरव-युक्त रहना, विनम्र (= सुवच) होना तथा सत्सगति। भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। उस देवताने यह कहा। भगवान्ने समर्थन किया। तब यह जानकर कि भगवान्ने मेरा समर्थन किया है, वह देवता भगवान्को अभिवादनकर, भगवान्की प्रदक्षिणाकर, वही अन्तर्धान हो गया।

तब भगवान्‌ने उस रातके बीतनेपर भिक्षुओको सबोधित किया—भिक्षुओ, आजकी रात, एक देवता, प्रकाशपूर्ण रात्रिमें, प्रकाश-युक्त वर्ण माला, सारेके सारे जेतवनको प्रकाश-युक्त करते हुए, जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा। पास आकर, मुझे प्रणाम कर एक ओर खडा हुआ। एक ओर खडे हुए उस देवताने मुझसे यह कहा—भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। कौन-सी छह? शास्ताका गौरव करना, धर्मका गौरव करना, सघका गौरव करना, शिक्षाओके प्रति गौरव-युक्त रहना, विनम्र (=सुवच) होना तथा सत्सगति। भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है। भिक्षुओ, उस देवताने यह कहा। यह कहकर मुझे प्रणाम कर, प्रदक्षिणा कर, वही अन्तर्धान हो गया।

ऐसा कहनेपर आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवान्‌को नमस्कार कर यह कहा—भन्ते! भगवान्‌ने जो यह सक्षेपमें कहा है, मैं उसे विस्तृत रूप से इस प्रकार समझता हूँ—भन्ते! भिक्षु स्वय शास्ताका गौरव करनेवाला होता है, तथा शास्ताके गौरव करनेका गुणानुवाद करनेवाला होता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताका गौरव करनेवाले नही होते, उन्हे शास्ताका गौरव करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताका गौरव करनेवाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशसा करता है। स्वय धर्मका गौरव करनेवाला होता है ... सघका गौरव करनेवाला होता है ... शिक्षाओके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है ... विनम्र होता है ... सत्सगतिमें रहनेवाला होता है और सत्सगतिमें रहनेका गुणानुवाद करनेवाला। जो दूसरे भिक्षु सत्सगतिमें रहनेवाले नही होते, उन्हें सत्सगतिमें रहनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु सत्सगतिमें रहनेवाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशसा करता है। भन्ते! भगवान्‌ने जो कुछ सक्षिप्त रूपमें कहा, मैं उसका इस प्रकार विस्तार से अर्थ करता हूँ।

सारिपुत्र! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। सारिपुत्र! यह बहुत अच्छा है कि जो कुछ मैंने सक्षेपमें कहा है, तू उसका इस प्रकार विस्तारसे अर्थ जानता है। सारिपुत्र! भिक्षु स्वय शास्ताका गौरव करनेवाला होता है तथा शास्ताके गौरव करनेका गुणानुवाद करनेवाला होता है। जो दूसरे भिक्षु, शास्ताका गौरव करनेवाले नही होते, उन्हे शास्ताका गौरव करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताका गौरव करनेवाले होते है, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशसा करता है। स्वय धर्मका गौरव करने वाला होता है ... सघका गौरव करनेवाला होता है ... शिक्षाओका गौरव करनेवाला होता है ... विनम्र (=सुवच) होता है ... सत्सगतिमें

रहनेवाला होता है और सत्संगतिमें रहनेका गुणानुवाद करने वाला। जो दूसरे भिक्षु सत्सगतिमे रहनेवाले नही होते, उन्हे सत्सगतिमें रहनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु सत्सगतिमे रहनेवाले होते है, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशसा करता है। सारिपुत्र! मैने जो कुछ सक्षेपमे कहा उसे इसी प्रकार विस्तृत रूपसे समझना चाहिए।

भिक्षुओ! अरे जो भिक्षु शान्त, प्रणीत, प्रशान्त, एकाग्रतायुक्त समाधिसे सयुक्त न होगा, वह अनेक प्रकारकी ऋद्धियोको प्राप्त करेगा—एक होकर अनेक होगा, अनेक होकर एक होगा ब्रह्मलोक तक उसके शरीरकी पहुँच होगी, इसकी गुंजाइश नही। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्यकी शक्तिसे परेके श्रोत-धातुसे दिव्य तथा मानुषी, दूरके तथा समीपके शब्दोको सुनेगा,—इसकी गुंजाइश नही। वह दूसरे प्राणियोके, दूसरे व्यक्तियोके चित्तको अपने चित्तसे जान सकेगा—सराग चित्तको सराग चित्त करके जान सकेगा विमुक्त चित्तको विमुक्त चित्त करके जान सकेगा, इसकी गुंजाइश नही। वह अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोका अनुस्मरण करेगा, जैसे एक जन्म, दो जन्म आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना प्रकारके पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करेगा, इसकी गुंजायश नही। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्यकी शक्तिसे परेके चक्षुसे प्राणियोको देखेगा उनकी कर्मानुसार गतिको जानेगा, इसकी गुंजाइश नही। वह आस्रवोका क्षय होनेपर साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करेगा, इसकी गुंजाइश नही।

भिक्षुओ, अरे जो भिक्षु शान्त, प्रणीत, प्रशान्त, एकाग्रतायुक्त समाधिसे सयुक्त होगा, वह अनेक प्रकारकी ऋद्धियोको प्राप्त करेगा—एक होकर अनेक होगा, अनेक होकर एक होगा ब्रह्मलोक तक उसके शरीरकी पहुँच होगी, इसकी सम्भावना है। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्य की शक्तिसे परेके श्रोत-धातुसे दिव्य तथा मानुषी, दूरके तथा समीपके शब्दोको सुनेगा, इसकी सम्भावना है। वह दूसरे प्राणियोके, दूसरे व्यक्तियोके चित्तको अपने चित्तसे जान सकेगा—सराग चित्तको सराग चित्त करके जान सकेगा विमुक्त चित्तको विमुक्त चित्त करके जान सकेगा, इसकी सम्भावना है। वह अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करेगा, जैसे एक जन्म, दो जन्म आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना प्रकारके पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करेगा, इसकी सम्भावना है। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्यकी शक्तिसे परेके चक्षुसे प्राणियोको देखेगा उनकी कर्मानुसार गतिको जानेगा, इसकी सम्भावना है। वह आस्रवोका क्षय होनेपर साक्षात्कर प्राप्तकर विहार करेगा, इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भावको प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु यथार्थ रूपसे यह नहीं जानता कि ये हानिकर बातें हैं, यथार्थरूपसे यह नहीं जानता कि ये स्थितिको यथावत् बनाये रखनेवाली बातें हैं, यथार्थरूपसे यह नहीं जानता कि ये विशेष-प्राप्ति करानेवाली बातें हैं, यथार्थ रूपसे यह नहीं जानते कि ये बींधनेवाली बातें हैं, उत्साही नहीं होता, अपने हितकी बात करनेवाला नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भाव को प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भावको प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु यथार्थरूपसे यह जानता है कि ये हानिकारक बातें हैं, यथार्थरूपसे यह जानता है कि ये स्थितिको यथावत् बनाये रखनेवाली बातें हैं, यथार्थ रूपसे यह जानता है कि ये विशेष-प्राप्ति करानेवाली बातें हैं, यथार्थ रूपसे यह जानता है कि ये बींधनेवाली बातें हैं, उत्साही होता है, हितकी बात करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भावको प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह समाधिके विषयमें सशक्त नहीं हो सकता। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु समाधिकी प्राप्तिमें कुशल नहीं होता, समाधि-अवस्थामें स्थित रहनेमें कुशल नहीं होता, समाधिसे उठनेमें कुशल नहीं होता, सावधानीसे करनेवाला नहीं होता, सतत करने वाला नहीं होता तथा अपने अनुकूल करने वाला नहीं होता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह समाधिके विषयमें सशक्त होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु समाधिकी प्राप्तिमें कुशल होता है, समाधि-अवस्थामें रहनेमें कुशल होता है, समाधिसे उठनेमें कुशल होता है, सावधानीसे करने वाला होता है, सतत करने वाला होता है तथा अपने अनुकूल करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह समाधिके विषयमें सशक्त होता है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको बिना छोड़े प्रथम-ध्यानको प्राप्त कर विचरना असम्भव है। कौन-सी छह बातें? कामच्छन्द (= कामना), व्यापाद (= द्वेष), आलस्य-तन्द्रा, उद्धतपन-कौकृत्य, विचिकित्सा (= शक्कीपन) तथा काम भोगोंके

दुष्परिणामोंके बारेमे यथार्थ जानकारीका न होना। भिक्षुओ, इन छह बातोको बिना छोडे प्रथम-ध्यानको प्राप्तकर विचरना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोको छोड देनेसे प्रथम-ध्यानको प्राप्तकर विचरना सम्भव है। कौन-सी छह बाते ? कामच्छन्द (=कामना), व्यापाद (=द्वेष), आलस्य-तन्द्रा, उद्धतपन-कौकृत्य, विचिकित्सा (=शक्कीपन) तथा काम-भोगोके दुष्परिणामोंके बारेमे यथार्थ जानकारी का होना। भिक्षुओ, इन छह बातोको छोड़ देनेसे प्रथम ध्यानको प्राप्तकर विचरना सम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोको बिना छोडे द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विचरना असम्भव है। कौन-सी छह बाते ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क, काम-सज्ञा, व्यापाद-सज्ञा तथा विहिंसा-सज्ञा। भिक्षुओ, इन छह बातोको बिना छोडे द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विचरना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोको छोड देनेसे द्वितीय-ध्यानको प्राप्त कर विचरना सम्भव है। कौन-सी छह बाते ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क, काम-सज्ञा, व्यापाद-सज्ञा तथा विहिंसा-सज्ञा। भिक्षुओ, इन छह बातोको छोड देनेसे द्वितीय ध्यानको प्राप्तकर विचरना सम्भव है।

(८) अर्हत वर्ग

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है वह इस लोकमे दुखी रहता है, कष्ट पाता है, अनुतप्त होता है, जलता रहता है और उसके बारेमे यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटने पर वह दुर्गतिको प्राप्त होगा। कौन-सी छह बाते ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क, काम-सज्ञा, व्यापाद-सज्ञा, विहिंसा-सज्ञा। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह इस लोकमे दुखी रहता है, कष्ट पाता है, अनुतप्त होता है, जलता रहता है और उसके बारेमे यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटने पर वह दुर्गतिको प्राप्त होगा।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह इस लोकमे सुखी रहता है कष्ट नही पाता है, अनुतप्त नही होता है, जलता नही रहता है और उसके बारेमे यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटनेपर वह सुगतिको प्राप्त होगा। कौनसी छह बाते ? निष्काम-वितर्क, अव्यापाद-वितर्क, अविहिंसा-वितर्क, निष्काम-सज्ञा, अव्यापाद सज्ञा, अविहिंसा-सज्ञा। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह इस लोकमे सुखी रहता है, कष्ट नही पाता है, अनुतप्त नही होता है, जलता नही रहता है और उसके बारेमें यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटनेपर वह सुगतिकोप्राप्त होगा।

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोडे अर्हत्वका साक्षात करना असम्भव है।
कौन-सी छह बातें? मान, ओमान (=हीनमान), अतिमान, अधिमान, स्तब्धता तथा अतिनिपात (=अपने आपको अत्यन्त तुच्छ समझना)। भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोडे अर्हत्वका साक्षात् करना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंके छोड देने पर अर्हत्वका साक्षात करना सम्भव है। कौनसी छह बातें, मान, ओमान, अतिमान, अधिमान, स्तब्धता तथा अतिनिपात। भिक्षुओ, इन छह बातोंके छोड देनेपर अर्हत्वका साक्षात करना सम्भव है।

भिक्षुओ, इसकी सम्भावना नहीं है कि बिना इन छह बातोंको छोडे कोई विशेष आर्य ज्ञान-दर्शनको प्राप्त करनेमे समर्थ हो, मनुष्योत्तर-धर्मका साक्षात कर सके। कौन-सी छह बातें? मूढ-स्मृति, असावधानी, इन्द्रियोका असयम, भोजनकी मात्रा न जानना, ढोग तथा जबानकी लप-लपी। भिक्षुओ, इसकी सम्भावना नहीं है कि बिना इन छह बातोंको छोडे कोई विशेष आर्य-ज्ञान-दर्शनको प्राप्त करनेमे समर्थ हो, मनुष्योत्तर धर्मका साक्षात कर सके।

भिक्षुओ, इसकी सम्भावना है कि इन छह बातोंको छोडकर कोई, विशेष आर्य-ज्ञान-दर्शनको प्राप्त करनेमें समर्थ हो, मनुष्योत्तर-धर्मका साक्षात कर सके। कौन-सी छह बातें? मूढ-स्मृति, असावधानी, इन्द्रियोका असयम, भोजनकी मात्रा न जानना, ढोग तथा जबानकी लपालपी। भिक्षुओ, इस की सम्भावना है कि इन छह बातोको छोड कर कोई, विशेष आर्य-ज्ञान-दर्शन प्राप्त करनेमें समर्थ हो, मनुष्योत्तर-धर्मका साक्षात् कर सके।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह इसी जन्ममें सुखी प्रमुदित रहता है, और उसकी आस्रवोको क्षय करनेकी तैयारी रहती है। कौन-सी छह बाते? भिक्षुओ, भिक्षु धर्ममें रमण करने वाला होता है, योगाभ्यास (=भावना) मे रमण करने वाला होता है, प्रहाण (=त्याग) में रमण करने वाला होता है, प्रविवेक (=एकान्त) में रमण करने वाला होता है, अव्यापज्ज (=दुखरहित होना) में रमण करनेवाला होता है, निष्प्रपच (=निर्वाण) में रमण करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, वह इसी जन्ममें सुखी प्रमुदित रहता है, और उसकी आस्रवोको क्षय करनेकी तैयारी रहती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अप्राप्त कुशल-धर्मको प्राप्त करनेमें तथा प्राप्त कुशल-धर्मोमें वृद्धि करनेमें असमर्थ होता है। कौन-सी छह बातें? सद्गुणोको आने देनेमें कुशल (=आय-कुशल) नही होता, दुर्गुणोंको जाने देनेमें

कुशल (= अपाय कुशल) नही होता, उपाय-कुशल भी नही होता; अप्राप्त-कुशले धर्मोकी प्राप्तिके लिये उत्साह नही दिखाता, प्राप्त कुशल-धर्मो (= गुणो) को सभालकर नही देखता ; सतत प्रयत्नशील नही होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह अप्राप्त कुशल-धर्मो (= गुणो) को प्राप्त करनेमे तथा प्राप्त कुशल-धर्मोमे वृद्धि करनेमे असमर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, वह अप्राप्त कुशल-धर्मोको प्राप्त करनेमे तथा प्राप्त कुशल-धर्मोमे वृद्धि करनेमे समर्थ होता है। कौन-सी छह बातें ? सद्‌गुणोको आने देनेमे कुशल (= आय कुशल) होता है, दुर्गुणोको जाने देनेमे कुशल (= अपाय कुशल) होता है, उपाय-कुशल होता है,, अप्राप्त कुशल धर्मोकी प्राप्तिके लिये उत्साह दिखाता है, प्राप्त कुशल -धर्मो (= गुणो) को सभाल कर रखता है तथा सतत प्रयत्नशील होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, वह अप्राप्त कुशल-धर्मोको प्राप्त करनेमे तथा प्राप्त कुशल-धर्मोमे वृद्धि करनेमें समर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह शीघ्र ही धर्मके विषयमे महानताको विपुलताको प्राप्त कर लेता है। कौन-सी छह बाते ? भिक्षुओ, वह भिक्षु ज्ञानरूपी प्रकाशसे युक्त (= अलोक बहुल) होता है, योगाभ्यासी (= योग बहुल) होता है, प्रमुदित रहने वाला (= वेद बहुल) होता है, कुशल –धर्मोके विषयमे असन्तुष्ट रहने वाला तथा जुआ न रखने वाला, उत्तरोत्तर प्रयत्नशील। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह शीघ्र ही धर्मके विषयमें महानता को, विपुलता को प्राप्त कर लेता है।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमे ये छह बाते होती है, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर नरकमे डाल दिया गया हो। कौनसी छह बाते ? हिंसा करनेवाला होता है, चोरी करने वाला होता है, व्यभिचार करनेवाला होता है, झूठ बोलने वाला-होता है, बुरी इच्छाओ वाला होता है तथा मिथ्या-दृष्टि होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमे ये छह बातें होती है, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर नरकमे डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमे ये छह बातें होती है, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिय गया हो। कौन सी छह बातें ? हिंसा करने वाला नही होता है, चोरी करने वाला नही होता है, व्यभिचार करने वाला नही होता है,झूठ बोलने वाला नही होता है, बुरी इच्छाओ वाला नही होता है तथा मिथ्या-दृष्टि वाला नही

होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमे ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर नरकमे डाल दिया गया है। कौन-सी छह बाते? हिंसा करने वाला होता है, चोरी करने वाला होता है, व्यभिचार करने वाला होता है, झूठ बोलनेवाला होता है, लोभी होता है, असयत (=प्रगल्भ) होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमे ये छह बातें होती है, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बाते होती है, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो। कौनसी छह बाते? हिंसा करनेवाला नही होता है, चोरी करने वाला नही होता है, व्यभिचार करनेवाला नही होता है, झूठ बोलने वाला नही होता है, लोभी नही होता है, असयत नहीं होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बाते होती है, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर स्वर्गमे डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह श्रेष्ठ पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु अश्रद्धावान् होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप-) भीरु नही होता है, आलसी होता है, दुष्प्रज्ञ होता है, तथा शरीर और जीवनके प्रति अपेक्षा-युक्त होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती हैं, वह श्रेष्ठ-पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती है, वह श्रेष्ठ पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु श्रद्धावान होता है, लज्जाशील होता है, (पाप-) भीरु होता है, आलस्य-रहित होता है, प्रज्ञावान् रहता है, तथा शरीर और जीवनके प्रति अपेक्षा-रहित होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती हैं, वह श्रेष्ठ-पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती हैं, उसके लिये जो भी रात-दिन आता है, उसमें कुशल-धर्मोके प्रति उसकी हानि ही होती है, वृद्धि नही होती। कौनसी छह बातें? वह जैसे-तैसे चीवर, पिण्डपात, शयनासन, भैषज्य-परिष्कारको लेकर महेच्छ रहता है, दुखी रहता है, असन्तुष्ट रहता है, अश्रद्धावान् होता है, दुश्शील होता है, आलसी होता है, मूढ-स्मृति होता है तथा दुष्प्रज्ञ होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती हैं, उसके लिये जो भी रात दिन आता है, उसमे कुशल-धर्मोके प्रति उसकी हानि ही होती है, वृद्धि नही होती।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, उसके लिये जो भी रात-दिन आता है, उसमे कुशल-धर्मोके प्रति उसकी वृद्धि ही होती है, हानि नही होती। कौन-सी छह बाते ? वह जैसे -तैसे चीवर, पिण्डपात, शयनासन, भैषज्य-परिष्कारोको लेकर, महेच्छ नही होता, दुखी नही होता, सतुष्ट होता है, श्रद्धावान होता है, शीलवान् होता है, प्रयत्नशील होता है, स्मृतिमान् होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, उसके लिये जो भी रात-दिन आता है, उसमे कुशल-धर्मोके प्रति उसकी वृद्धि ही होती है, हानि नही होती।

९ सीति वर्ग

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बाते ? भिक्षुओ, वह भिक्षु जिस समय चित्तका निग्रह करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्तका निग्रह नही करता ,जिस समय चित्तका प्रग्रह (=प्रेरणा देना) करनेकी आवश्यकता होती है, वह चित्तका प्रग्रह नही करता, जिस समय चित्तको प्रमुदित करनेकी आवश्यकता होती है, चित्तको सप्रहर्षित (=प्रमुदित) नही करता तथा जिस समय चित्तको उपेक्षा-युक्त करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्तको उपेक्षा-युक्त नही करता, हीन-प्रवृत्ति वाला होता है, सत्काय-दृष्टिमे रत। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बाते ? भिक्षुओ, वह भिक्षु, जिस समय चित्तका निग्रह करनेकी आवश्यकता होती है, चित्तका निग्रह करता है, जिस समय चित्तका प्रग्रह करनेकी आवश्यकता होती है, चित्तका प्रग्रह करता है, जिस समय चित्तको सप्रहर्षित (=प्रमुदित) करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्त को सप्रहर्षित (=प्रमुदित) करता है, जिस समय चित्तको उपेक्षायुक्त करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्तको उपेक्षायुक्त करता है, श्रेष्ठ-प्रवृत्तिवाला होता है तथा निर्वाणाभिरत। भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुमें ये छह बातें होती है, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मों में सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बाते ? पाँच आनन्तरिय-कर्मोसे युक्त होता है, मिथ्या दृष्टि (=क्लेशो) से युक्त होता है,(अकुशल-कर्म-) विपाकसे युक्त होता है, अश्रद्धावान् होता है, अप्रयत्नशील होता है तथा दुष्प्रज्ञ होता

है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौनसी छह बाते? पाँच आनन्तरिय-कर्मोसे युक्त नही होता है, मिथ्या-दृष्टि (=क्लेशो)से युक्त नही होता है, (अकुशल-कर्म)-विपाकसे युक्त नही होता है, श्रद्धावान् होता है, प्रयत्नशील होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती है, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल धर्मोमें सम्यक्त्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बाते? मातृ-हत्याकी होती है, पितृ-हत्याकी होती है, अर्हत्की हत्याकी होती है, दुष्ट-चित्तसे तथागतके शरीरमेंसे लहू बहाया होता है, सघ-भेद किया होता है तथा बज्र मूर्ख होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोमे सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती है, वह धर्म सुनता हुआ कुशल-धर्मोमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें? मातृ-हत्या नही की होती है, पितृ-हत्या नही की होती है, अर्हत्की हत्या नही की होती है, दुष्ट चित्तसे तथागतके शरीरमें से लहू नही बहाया होता है, सघ-भेद नही किया होता है, तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ कुशल-धर्मोमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मकी देशनाके समय उसे न सुनना चाहता है, न कान देता है, न ज्ञान प्राप्तिके लिये चित्तको उपस्थित करता है, अनर्थको ग्रहण करता है, अर्थको त्याग देता है, (शासनसे) बेमेल क्षान्तिसे युक्त होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बाते होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोमे सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती है, वह धर्म सुनता हुआ कुशल-धर्मोमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बाते? तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मकी देशनाके समय उसे सुनना चाहता है, उधर कान देता है, ज्ञान-प्राप्तिके लिये चित्तको उपस्थित करता है, अर्थको ग्रहण करता है, अनर्थको त्याग देता है,

(शासनसे) मेल खानेवाली क्षान्तिसे युक्त होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह धर्म सुनता हुआ, कुशल-धर्मोमे सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, विना छह बातोका त्याग किये (सम्यक्) दृष्टिरूपी सम्पदा प्राप्त करना असम्भव है। कौन-सी छह बातोका ? सत्काय-दृष्टिका, विचिकित्साका, शील-व्रत परामाशका, नरककी ओर ले जानेवाले रागका, नरककी ओर ले जानेवाले द्वेषका तथा नरककी ओर ले जानेवाले मोहका। भिक्षुओ, विना इन छह बातोका त्याग किये (सम्यक्) दृष्टिरूपी सम्पदा प्राप्त करना असम्भव है।

भिक्षुओ, छह बातोका त्याग कर देनेसे (सम्यक्) दृष्टिरूपी सम्पदा प्राप्त करना सम्भव है। कौन-सी छह बातोका ? सत्काय-दृष्टिका, विचिकित्साका, शील-व्रत-परामाशका, नरक की ओर ले जानेवाले रागका, नरककी ओर ले जाने-वाले द्वेषका, नरककी ओर ले जानेवाले मोहका। भिक्षुओ, छह बातोका त्याग कर देनेसे (सम्यक्) दृष्टि रूपी सम्पदा प्राप्त करना सम्भव है।

भिक्षुओ, (सम्यक) दृष्टि प्राप्त मनुष्यमे यह छह बाते प्रहीण हो गई रहती है। कौन-सी छह बाते ? सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शील-व्रत परामाश, नरककी ओर ले जानेवाला राग, नरककी ओर ले जानेवाला द्वेष तथा नरककी ओर ले जानेवाला मोह। भिक्षुओ, (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त मनुष्यमे यह छह बाते प्रहीण हो गई रहती है।

भिक्षुओ, (सम्यक्)-दृष्टि मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह इन छह बातोसे युक्त हो। कौन-सी छह बातोसे ? सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शील-व्रत परामाश, नरककी ओर ले जाने वाला राग, नरककी ओर ले जानेवाला द्वेष, नरककी ओर ले जानेवाला मोह। भिक्षुओ, (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह इन छह बातोसे युक्त हो।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बाते है। कौन-सी छह ? (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह शास्ताके प्रति आदर-रहित, गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह धर्मके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह सघके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह शिक्षाओके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक् –) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव

है कि वह वह पुन अकरणीय बातोकी ओर मुडे। (मम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह आठवाँ जन्म धारण करे। भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें है।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें है। कौन-सी छह? (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी भी सस्कारको 'नित्य' करके ग्रहण करे। (सम्यक्–) दृष्टि पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी भी सस्कारको 'सुख' करके ग्रहण करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी भी सस्कृत अथवा असस्कृत धर्मको 'आत्मा' करके ग्रहण करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह पाँच आनन्तरिय-कर्मोंमेंसे कोई एक कर्म करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह भले-बुरे शकुनो (=मगलो) से आत्म-शुद्धिकी आशा करे, (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह (बुद्ध) शासनके बाहर दक्षिणार्ह व्यक्तियोको खोजे।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें है। कौन-सी छह? (सम्यक्)– दृष्टि प्राप्त मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह मातृ-हत्या करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह पितृ-हत्या करे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त मनुष्य के लिये यह असम्भव है कि वह अर्हत्‌की हत्या करे। (सम्यक्)– दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह दुष्ट चित्तसे तथागतके शरीरसे लहू बहाये। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह सघमें भेद पैदा करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी अन्य शास्ताका अनुगामी बने।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें है। कौन-सी छह? (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह स्वयकृत सुख-दुक्खका अनुगमन करे। (सम्यक्)– दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह पर-कृत सुख-दुखका अनुगमन करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह स्वय-कृत तथा पर-कृत सुख-दुक्खका अनुगमन करे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह अस्वय-कृत हेतु-उत्पन्न सुख-दुक्ख का अनुगमन करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह अ-परकृत हेतु-उत्पन्न सुख-दुक्खका अनुगमन करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह अस्वय-कृत अ-परकृत हेतु-उत्पन्न सुख-दुक्खका अनुगमन करे। यह

किसलिये ? भिक्षुओ, (सम्यक्-) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिको हेतुओका तथा हेतुओसे उत्पन्न धर्मो (=अवस्थाओ) का वैसा ही यथार्थ ज्ञान रहता है। भिक्षुओ, ये छह असम्भव बाते है।

१० आनिसंस वर्ग

भिक्षुओ, ससारमे इन छहका प्रादुर्भाव दुर्लभ है। किन छहका ? ससारमे तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका प्रादुर्भाव दुर्लभ है। ससारमे तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मका उपदेश करनेवालोका प्रादुर्भाव दुर्लभ है। ससारमे मध्यमण्डल[1] (=आर्य-आयन) मे जन्म-ग्रहण करना दुर्लभ है। ससारमे चक्षु आदि छह इन्द्रियोका पूर्ण-स्वस्थ रहना (=अविकलता) दुर्लभ है। ससारमे अजडता, अमूर्खता दुर्लभ है। संसारमे कुशल-धर्म (=शुभ-बातो) मे रुचि (= छन्द) दुर्लभ है। भिक्षुओ, ससारमे इन छह का प्रादुर्भाव दुर्लभ है।

भिक्षुओ, स्रोतापत्ति फलके साक्षात् करनेके छह शुभ-परिणाम है। कौनसे छह ? सद्धर्ममे स्थिर होता है, पतनोन्मुख नही रहता, मर्यादित जीवन होनेसे दु खको प्राप्त नही होता, (पृथक जनोकी अपेक्षा) असाधारण ज्ञानको प्राप्त होता है। धर्मो (=अवस्थाओ) का हेतु (=कारण) और उन हेतुओसे उत्पन्न धर्म उसके द्वारा भली प्रकार दृष्ट (=ज्ञात) रहते है। भिक्षुओ, स्रोतापत्ति फलके साक्षात् करनेके छह शुभ-परिणाम है।

---

१ मध्यप्रदेशकी पूर्व दिशामे कजगल (वर्तमान ककजोल, जिला सथाल परगना (विहार), नामक कस्वा है, उसके वाद बडे शाल (वन) है, और फिर आगे सीमान्त देश। मध्यमे सललवती (वर्तमान सिलई नदी, हजारीवाग और मेदनीपुर जिला) नामक नदी है, उसके आगे सीमान्त देश है। दक्षिण दिशामे सेत-कण्णिक (हजारीवाग जिलमे कोई स्थान) नामक कस्वा है, उसके वाद सीमान्त देश है। पश्चिम दिशामे थून (थानेसर, कर्नाल जिला) नामक ब्राह्मणोका ग्राम है, उसके वाद सीमान्त देश है। उत्तर दिशामे उशीरध्वज (हिमालयका कोई पर्वत-भाग) नामक पर्वत है, उसके बाद सीमान्त देश है। यह मध्यदेश (मध्य-मण्डल) लम्बाईमे ३०० योजन, छौडाईमें २५० योजन और घेरेमे ९०० योजन है। (देखो, राहुल साकृत्यायन कृत बुद्ध चर्या पृष्ठ—१)।

भिक्षुओ, जो भिक्षु किसी भी सस्कारको 'नित्य' समझेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त करेगा—इसकी कोई सम्भावना नही है। जो अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त नही होगा, वह सम्यक्जीवी होगा—इसकी कोई सम्भावना नही है। जो सम्यक्-जीवी नही होगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल वा अर्हत्-फल प्राप्त करेगा—इसकी कोई सम्भावना नही है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु किसी भी सस्कारको 'नित्य' नही समझेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना है। जो अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त करेगा, वह सम्यक् जीवी होगा—इसकी सम्भावना है। जो सम्यक्-जीवी होगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल वा अर्हत् फल प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, जो भी भिक्षु किसी भी सस्कारको सुख करके देखेगा सब सस्कारोको दु ख करके देखेगा इसकी सभावना है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु किसी भी धर्म (= मनके विषय) को आत्मा करके देखेगा . सभी धर्मों (= मनके विषयो) को अनात्मक करके देखेगा इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु निर्वाण (= दु खके एकान्तिक निरोध) को दु ख करके जानेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त कर सकेगा—इसकी सम्भावना नही। जो अनुकूल क्षान्तिको नही प्राप्त करेगा, वह सम्यक्जीवी होगा—इसकी सम्भावना नही। जो सम्यक्जीवी नही रहेगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल, अर्हत्-फलको प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना नही।

भिक्षुओ, जो भिक्षु निर्वाण (= दु खके एकान्तिक निरोध) को सुख करके जानेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त कर सकेगा—इसकी सम्भावना है। जो अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त कर सकेगा, वह सम्यक्जीवी होगा—इसकी सम्भावना है। जो सम्यक्जीवी होगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल, अर्हत्-फलकी प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, छह शुभ परिणामोको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह बिना अपवादके सभी सस्कारोको 'अनित्य' करके जाने। कौनसे छह शुभ-परिणाम? मुझे सभी सस्कार अस्थिर (= अनवस्थित) प्रतीत होने लगेगे, समस्त लोकमें मेरा मन कही आसक्त (= रमण) नही होगा, समस्त लोकसे मेरा मन अनासक्त हो जायेगा, मेरा मन निर्वाणाभिमुख हो जायेगा, मेरे सयोजनो (= चित्तके बन्धनो) का

प्रहाण हो जायेगा तथा मैं परम श्रामण्यसे युक्त होऊँगा। भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोको दृष्टिमे रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह बिना अपवादके सभी सस्कारोको 'अनित्य' करके जाने।

भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोको दृष्टिमे रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह विना अपवादके सभी सस्कारोको "दु ख" करके जाने। कौनसे छह परिणामोको? सभी सस्कारोंके प्रति मेरे मनमे वैराग्य (= निर्वेद) की भावना घर कर जायेगी जैसी कि उस वधिकके प्रति जो सिरपर तलवारे उठाये खडा हो। समस्त लोकमे मेरा मन कही आसक्त न होगा। निर्वाणको शान्त-स्वरूप करके देखूंगा। मेरे अनुशय (= चित्तके वन्धन) विनाशको प्राप्त होगे। मै कृतकृत्य होऊँगा। मेरे द्वारा तथागतकी मैत्री-पूर्ण सेवा की जायेगी। भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोको दृष्टिमे रखकर भिक्षु को चाहिए कि वह विना अपवादके सभी सस्कारोको "दु ख" करके जाने।

भिक्षुओ, इन छह-शुभ परिणामोको दृष्टिमे रखकर भिक्षुको चाहिये कि वह विना अपवादके सभी धर्मों (= मनके विषयो) को "अनात्म" करके जाने। कौनसे छह शुभ परिणामोको? मैं समस्त लोकके प्रति तृष्णा-रहित हो जाऊँगा। मेरे अहकारका नाश होगा। मेरे ममत्वका विनाश हो जायगा। मैं असाधारण ज्ञानसे युक्त हो जाऊँगा। सभी धर्मों (= मनके विषयो) का हेतु मेरी दृष्टिमे आ जायगा और हेतुओसे उत्पन्न सभी धर्म (= मनके विषय)। भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोको दृष्टिमे रखकर भिक्षुको चाहिये कि वह विना अपवाद के सभी धर्मों (= मनके विषयो) को "अनात्म" करके जाने।

भिक्षुओ, इन तीन भवोका प्रहाण करना चाहिये और इन तीन शिक्षाओका अभ्यास करना चाहिये। किन तीन भवोका प्रहाण करना चाहिये? काम-भव, रूप-भव तथा अरूप-भवका। इन तीन भवोका प्रहाण करना चाहिये। किन तीन शिक्षाओ का अभ्यास करना चाहिये? शील सम्बन्धी शिक्षाका, चित्त सम्बन्धी शिक्षाका तथा प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षा का। इन तीन शिक्षाओका अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, जब भिक्षुके ये तीन भव प्रहीण हो गये रहते है और जब उसने तीन शिक्षाओका अभ्यास किया रहता है, तो उस भिक्षुके वारेमे कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, सयोजनोका नाश कर दिया तथा मान (= अभिमान) का सम्पूर्ण उन्मूलन कर दु खका अन्त कर दिया।

भिक्षुओ, इन तीन तृष्णाओका प्रहाण करना चाहिये तथा इन तीन मानो (= अहकारो) का। किन तीन तृष्णाओका प्रहाण करना चाहिये? काम-तृष्णा,

भव -तृष्णा तथा विभव-तृष्णा, इन तीन तृष्णाओका प्रहाण करना चाहिये। किन तीन मानोका प्रहाण करना चाहिये ? मान, हीन-मान (=ओमान) तथा अतिमान (=अभिमान) का। इन तीनो मानोका प्रहाण करना का चाहिये। भिक्षुओ, जब भिक्षुकी तीनो प्रकारकी तृष्णाओ तथा तीनो प्रकारके मानोका मूलोच्छेद हो गया रहता है, तो उस भिक्षुके वारेमे कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, सयोजनोका नाश कर दिया तथा मान (=अभिमान) का सपूर्ण रूपसे उन्मूलन कर दु.खका अन्त कर दिया।

११. तिक वर्ग

भिक्षुओ, ये तीन अवगुण (=धर्म) है। कौनसे तीन ? राग, द्वेष तथा मोह। भिक्षुओ, ये तीन अवगुण-धर्म है। भिक्षुओ, इन तीन अवगुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन गुण-धर्मोकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन धर्मोकी ? रागका प्रहाण करनेके लिये अशुभ-भावनाका अभ्यास करना चाहिये। द्वेषका प्रहाण करनेके लिये मैत्री-भावनाका अभ्यास करना चाहिये। मोह (=मूढता) का प्रहाण करनेके लिये प्रज्ञाका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन अवगुण-धर्म है ? कौनसे तीन ? शारीरिक दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मनकी दुश्चरित्रता। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन बातो (=धर्मो) का अभ्यास करना चाहिये। शारीरिक दुश्चरित्रताका प्रहाण करनेके लिये शारीरिक शुभ कर्मोका अभ्यास करना चाहिये, वाणीकी दुश्चरित्रताके प्रहाणके लिये वाणीके शुभ-कर्मोका अभ्यास करना चाहिये, मनकी दुश्चरित्रताके प्रहाणके लिये मनके शुभ कर्मोका अभ्यास करना चाहिये भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये, इन तीन सद्गुणोका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन धर्म है। कौनसे तीन ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क (=क्रोध) तथा विहिंसा-वितर्क। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म है। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोकी भावना करनी चाहिये। किन तीन सद्गुणोकी ? काम-वितर्कका प्रहाण करनेके लिये निष्काम-वितर्कका अभ्यास करना चाहिये, व्यापाद-वितर्कका प्रहाण करनेके लिये अव्यापाद (=अक्रोध) –वितर्कका अभ्यास करना चाहिये, विहिंसा-वितर्कके प्रहाणके लिये अविहिंसा-वितर्क का अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन धर्म हैं। कौनसे तीन? काम-सञ्ञा, व्यापाद-सञ्ञा, विहिंसा-सञ्ञा। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये। किन तीन सद्‌-गुणोकी? काम-सञ्ञाका प्रहाण करनेके लिये निष्काम-सञ्ञाकी, व्यापाद-सञ्ञाका प्रहाण करनेके लिये अव्यापाद-सञ्ञाकी तथा विहिंसा-सञ्ञाका प्रहाण करनेके लिये अविहिंसा-सञ्ञाकी भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीनो सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? काम-धातु, व्यापाद-धातु, विहिंसा-धातु। भिक्षुओ ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये। किन तीन सद्‌गुणोकी? काम-धातुके प्रहाणके लिये निष्काम-धातुकी, व्यापाद-धातुके लिये अव्यापाद-धातुकी, विहिंसा-धातुके लिये अविहिंसा-धातुकी। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? आस्वाद-दृष्टि, आत्म-दृष्टि, तथा मिथ्या-दृष्टि। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिए। कौनसे तीन सद्‌गुणोकी? आस्वाद-दृष्टिके प्रहाणके लिये अनित्य-सञ्ञाकी भावना करनी चाहिये, आत्म-दृष्टिके प्रहाणके लिये अनात्म-सञ्ञाकी भावना करनी चाहिये, तथा मिथ्या-दृष्टिके प्रहाणके लिये सम्यक्‌-दृष्टिकी भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? अरुचि, विहिंसा तथा अधर्म-चर्या। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीनो दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन सद्‌गुणोकी? अरुचि (=अरति) का प्रहाण करनेके लिये मुदिता (=प्रसन्नता) की भावना करनी चाहिये, विहिंसाका प्रहाण करनेके लिये अविहिंसाकी भावना करनी चाहिये, अधर्म-चर्याका प्रहाण करनेके लिये धर्म-चर्याकी भावना (=अभ्यास) करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्‌गुणोकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? असन्तोष, अजागरूकता

(=असम्पजञ्ञ) तथा महेच्छता। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण-) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन सद्गुणोकी? असतोषका प्रहाण करनेके लिये सतोषकी भावना करनी चाहिये, अजागरूकता (=असम्पजञ्ञ) के प्रहाणके लिये जागरूकताकी भावना करनी चाहिये तथा महेच्छताके प्रहाणके लिये अल्पेच्छताकी भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये, इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण-) धर्म हैं। कौनसे तीन? दुर्वच होना, कुसंगति तथा चित्तका विक्षिप्त होना। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण-) धर्म हैं। भिक्षुओ इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन सद्गुणोकी? दुर्वच होनेका प्रहाण करनेके लिये सुवचता (=विनम्रता) का अभ्यास करना चाहिये, कुसगतिका प्रहाण करनेके लिये सत्सगतिका अभ्यास करना चाहिये, तथा चित्तके विक्षेपका प्रहाण करनेके लिये आनापान स्मृति (=स्वास पर ध्यान देना) का अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण-) धर्म हैं। कौनसे तीन? उद्धतपन, असंयम तथा प्रमाद। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण-) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोका प्रहाण करनेके लिये तीन सद्गुणोका अभ्यास करना चाहिये। कौनसे तीन सद्-गुणोका? उद्धतपनका प्रहाण करनेके लिये शमथ-भावनाका अभ्यास करना चाहिये, असयमके प्रहाण करनेके लिये सयमका अभ्यास करना चाहिये तथा प्रमादके प्रहाण करनेके लिये अप्रमादका अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये, इन तीन सद्गुणोका अभ्यास करना चाहिये।

१२. श्रामण्य वर्ग

भिक्षुओ, विना इन छह वातोको छोडे कायमे कायानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है। कौन-सी छह वाते? कार्योमे अत्यधिक सलग्नता, गप्पवाजी, निद्रा-प्रिय होना, सगति-प्रिय होना, इन्द्रियोका असयम तथा भोजनमे मात्रज्ञ न होना। भिक्षुओ, विना इन छह वातोको छोडे कायमें कायानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह वातोका त्याग कर देनेसे कायमे कायानुपश्यी होकर विहार करना सम्भव है। कौन-सी छह वातो का? कार्योमें अत्यधिक सलग्नताका,

गप्पवाजीका, निद्रा-प्रियताका, सगति-प्रियताका, इन्द्रियोके असयमका तथा भोजनमें अमात्रज्ञ होनेका। भिक्षुओ, इन छह वातोका त्याग कर देनेसे कायमे कायानुपश्यी होकर विहार करना सम्भव है।

भिक्षुओ, विना इन छह वातोको छोडे अपने भीतरी-तौरपर कायमे कायानुपश्यी . वाहरी तौरपर कायमे भीतरी-वाहरी तौरपर अपने भीतरी तौरपर वेदनामे वेदनानुपश्यी .. वाहरी तौरपर वेदनामे भीतरी-वाहरी तौरपर . अपने भीतरी-तौरपर चित्तमे चित्तानुपश्यी वाहरी तौरपर चित्तमे भीतरी-वाहरी तौरपर अपने भीतरी-तौरपर धर्मों (=चित्तके विपयो) मे धर्मानुपश्यी वाहरी तौरपर धर्मोमे भीतरी-वाहरी तौरपर धर्मोमे धर्मानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है। कौन-सी वातोको? कार्योमे अत्यधिक सलग्नताको, गप्पवाजीको, निद्रा-प्रियताको, सगति-प्रियताको, इन्द्रियोके असयमको तथा भोजनमे अमात्रज्ञ होनेको। भिक्षुओ, विना इन छह वातोको छोडे भीतरी-वाहरी तौरपर धर्मोमे धर्मानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है।

भिक्षुओ, तपुस्स गृहपतिमे ये छह गुण है, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत-दर्शी है, अमृतका साक्षात्कार कर विहार करता है। कौन-सी वाते? वुद्धके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, धर्मके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, सघके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, आर्य-शीलसे युक्त है, आर्य-ज्ञानसे युक्त है तथा आर्य-विमुक्तिसे युक्त है। भिक्षुओ, तपुस्स गृहपतिमे ये छह गुण है, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत-दर्शी है, अमृतका साक्षात्कार कर विहार करता है।

भिक्षुओ, भल्लिक गृहपतिमे ये छह गुण है सुदत्त अनाथपिण्डिक गृहपतिमे चित्त मच्छिका सण्डिक गृहपतिमे . हत्थक आळवक . महानाम शाक्यमे उग्ग वेसालिक (=वैशालीके) गृहपतिमे उग्गत गृहपतिमे सूर अम्बट्ठमे जीवक कौमारभृत्यमे . नकुलपिता गृहपतिमे तवकण्णिक गृहपतिमे पूरण गृहपतिमे . . इसिदत्त गृहपतिमे सन्धान गृहपतिमे विचय गृहपतिमे . विजय माहिक गृहपतिमें मेण्डक गृहपतिमे वासेट्ठ उपासकमे अरिट्ठ उपासकमे तथा सारग्ग उपासकमे ये छह गुण है, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत-दर्शी है, अमृतका साक्षात्कर विहार करता है। कौन-सी छह वाते? वुद्धके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, धर्मके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है

सघके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, आर्य-शीलसे युक्त है, आर्य-ज्ञानसे युक्त है तथा आर्य-विमुक्तिसे युक्त है। भिक्षुओ, सारङ्ग उपासकमे ये छह गुण है, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत दर्शी है, अमृतका साक्षात्कार कर विहार करता है।

(१३) राग पेय्याल

भिक्षुओ, रागके प्रहाण (=अभिज्ञा=यथार्थ जानकारी) के लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिए। किन छह बातोका? सर्वोत्तम दर्शनका, सर्वोत्तम श्रवणका, सर्वोत्तम लाभका, सर्वोत्तम शिक्षाका, परिचर्य्यका तथा सर्वोत्तम अनुस्मृतिका। भिक्षुओ, रागके प्रहाणके लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, रागके प्रहाण (=अभिज्ञान) के लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिए। किन छह बातोका? बुद्धानुस्मृतिका, धर्मानुस्मृतिका, सघानुस्मृतिका, शीलानुस्मृतिका, त्यागानुस्मृतिका तथा देवतानुस्मृतिका। भिक्षुओ, रागके प्रहाण (=अभिज्ञान) के लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, रागके प्रहाण (=अभिज्ञान) के लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिये। कौन-सी छह बातोका? अनित्य-सज्ञाका, अनित्यके प्रति दुख-सज्ञाका, दुखके प्रति अनात्मसज्ञाका, प्रहाण-सज्ञाका, वैराग्य-सज्ञाका तथा निरोध-सज्ञाका। भिक्षुओ, रागके प्रहाणके लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, रागके परिज्ञानके लिये, . परिक्षयके लिये . प्रहाणके लिये क्षयके लिये व्ययके लिये . विरागके लिये निरोधके लिये . त्यागके लिये परित्यागके लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, द्वेषके मोहके क्रोधके . शत्रुताके ढोग . (=मृक्ष) के निर्दयता (=पळास) के ईर्षाके मात्सर्यके . मायाके शठताके स्तब्धताके कलहके मानके . . अभिमानके मदके प्रमादके परिज्ञानके लिये परिक्षयके लिये . . प्रहाणके लिये क्षयके लिये . व्ययके लिये विरागके लिये . निरोधके लिये त्यागके लिये परित्यागके लिये इन छह बातोका अभ्यास करना चाहिये।

भगवान्ने यह कहा। उन भिक्षुओने प्रमुदित मनसे भगवान्के कथनका समर्थन किया।

सातवाँ निपात

(१) धन वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीके अनाथपिण्डकके जेतवनाराममें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ!" उन भिक्षुओने भगवान्को प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवान्ने ऐसा कहा—

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात वाते होती है, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नही रहता। कौन-सी सात वाते? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला होता है, सत्कारकी इच्छा करनेवाला होता है, प्रसिद्धि (=अनवञ्ञति) की इच्छा करनेवाला होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप-) भीरु नही होता, पापेच्छ होता है तथा मिथ्या-दृष्टि रखता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात वाते होती है, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नही रहता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात वाते होती है, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका प्रिय होता है, उन्हे अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है। कौन-सी सात वाते? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला नही होता है, सत्कारकी इच्छा करनेवाला नही होता है, प्रसिद्धिकी इच्छा करनेवाला नही होता है, लज्जा-शील होता है, (पाप-) भीरु होता है, अल्पेच्छ होता है तथा सम्यक्-दृष्टि रखनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात वाते होती है, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका प्रिय होता है, उन्हे अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात वाते होती है, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नही रहता। कौन-सी सात वाते? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला होता है, सत्कारकी इच्छा करनेवाला होता है, प्रसिद्धि (=अनवञ्ञत्ति) की इच्छा करनेवाला होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप-) भीरु नही होता, ईर्ष्या करनेवाला होता है तथा कजूस होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात वाते होती है, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नही रहता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोका प्रिय होता है, उन्हे अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है। कौन-सी सात बाते? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला नही होता है, सत्कारकी इच्छा करने वाला नही होता, प्रसिद्धिकी इच्छा करनेवाला नही होता, है लज्जा-शील होता है, (पाप-) भीरु होता है, ईर्ष्या करने वाला नही होता तथा कजूस नही होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात बाते होती है, वह अपने स-ब्रह्म-चारियोका प्रिय होता है, उन्हे अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीके अनाथपिण्डिकके जेत-वनाराममे विहार करते थे। । भिक्षुओ, ये सात बल हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, लज्जा-बल, (पाप-) भीरुता बल, स्मृति-बल, समाधि-बल तथा प्रज्ञा-बल। भिक्षुओ, ये सात बल हैं।

सद्धाबल विरिय च, हिरी ओतप्पिय बल।
सतिबल समाधि च, पञ्ञा वे सत्तम बल॥
एतेहि बलवा भिक्खु, सुख जीवति पण्डितो।
योनिसो विचिने धम्म, पञ्ञायत्थ विपस्सति।
पज्जोतस्सेव निब्बान, विमोक्खो होति चेतसो॥

[श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, लज्जा-बल, (पाप-) भीरुता-बल, स्मृति-बल, समाधि-बल, तथा सातवाँ प्रज्ञा-बल। जो भिक्षु इन बलोंसे बलवान् होता है, वह पण्डित (भिक्षु) सुखपूर्वक जीता है। वह सम्यक् प्रकारसे धर्मोका विचार करता है और प्रज्ञासे परीक्षण करता है। उसे प्रदीप (के बुझने) के समान निर्वाण प्राप्त होता तथा उसका चित्त विमुक्त होता है।]

भिक्षुओ, ये सात बल हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, लज्जा-बल, (पाप-) भीरुता-बल, स्मृति-बल, समाधि-बल तथा प्रज्ञा-बल।

भिक्षुओ, श्रद्धा-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक श्रद्धावान् होता है, तथागतके बोधि-लाभके प्रति श्रद्धावान् होता है—यह भी वे भगवान् अर्हत् है, सम्यक् सम्बुद्ध है देव-मनुष्योंके शास्ता, भगवान बुद्ध हैं। भिक्षुओ, इसे श्रद्धा-बल कहते हैं।

भिक्षुओ, वीर्य-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अकुशल धर्मों (=अशुभ-कर्मों) का प्रहाण करनेके लिये, कुशल-धर्मों (=शुभ-कर्मों) का सम्पादन

करनेके लिये प्रयत्नशील होता है। वह कुशल-धर्मोंके प्रति दृढ पराक्रमी होता है।' भिक्षुओ, यह वीर्य-वल कहलाता है।

भिक्षुओ, लज्जा-वल किसे कहते है ? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक लज्जा-शील होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे दुष्कर्म करते हुए लज्जा अनुभव करता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमे लज्जा-शील होता है। भिक्षुओ, इसे लज्जा-वल कहते है।

भिक्षुओ, (पाप–) भीरुता-वल किसे कहते है ! भिक्षुओ, आर्य-श्रावक (पाप–) भीरु होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे पाप-कर्म करनेमें भय मानता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमे भयका अनुभव करता है। भिक्षुओ, इसे (पाप–) भीरुता वल कहते है।

भिक्षुओ, स्मृति-वल किसे कहते है ? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक स्मृतिमान होता है, स्मृति-ज्ञानसे युक्त, उसे चिरकाल पूर्व कहा गया (वचन) चिरकालपूर्व किया गया (कार्य) भी स्मरण रहता है, अनुस्मरण रहता है। भिक्षुओ, इसे स्मृति-वल कहते है।

भिक्षुओ, समाधि-वल किसे कहते है ? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक काम-भोगो से पृथक चतुर्थ ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह समाधि -वल कहलाता है।

भिक्षुओ, प्रज्ञा-वल किसे कहते है ? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक उदय-व्यय सम्वन्धी प्रज्ञासे युक्त होता है, आर्य वीधनेवाली प्रज्ञासे युक्त होता है और युक्त होता है सम्यक् दु खका क्षय करनेवाली प्रज्ञासे। भिक्षुओ, यह प्रज्ञा-वल कहलाता है। भिक्षुओ, ये सात वल है—

सद्धावल विरिय च, हिरी ओत्तप्पिय वल,
सति वल समाधि च, पञ्ञा वे सत्तम वल॥
एतेहि वलवा भिक्खु, सुख जीवति पण्डितो।
योनिसो विचिने धम्म, पञ्ञायत्थ विपस्सति।
पज्जोतस्सेव निब्बान, विमोक्खो होति चेतसो॥

(अर्थ ऊपर आ ही गया है।)

भिक्षुओ, ये सात धन है। कौनसे सात ? श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप–) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा प्रज्ञा-धन।

भिक्षुओ ये सात धन है —

"सद्धाधन सीलधन, हिरी ओत्तप्पियं धन।
सुतधन च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धन॥
यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं।
तस्मा सद्धं च सील च, पसाद धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं।"

[श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप-) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा सातवाँ प्रज्ञा-धन। जिस स्त्री या पुरुषके पास ये धन हों, वह 'दरिद्र' नहीं है। उसका जीवन सफल है। इसलिये आदमीको चाहिए कि वह बुद्धोंके अनुशासनका स्मरण कर श्रद्धा, शील, प्रसाद (=प्रीति) तथा धर्म दर्शनमे अनुयुक्त हो।]

भिक्षुओ, ये सात धन हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप-) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा प्रज्ञा-धन।

भिक्षुओ, श्रद्धा-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक श्रद्धावान होता है, तथागतके बोधि-लाभके प्रति श्रद्धावान् होता है—ये भी वे भगवान् अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं .. देवताओंके शास्ता, भगवान् बुद्ध हैं। भिक्षुओ, इसे श्रद्धा-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, शील-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक हिंसासे विरत होता है . सुरा, मेरय, मद्य आदि नशीली वस्तुओंका सेवन करनेसे विरत होता है। भिक्षुओ, इसे शील-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, लज्जा-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक लज्जा-शील होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे दुष्कर्म करते हुए लज्जा अनुभव करता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमें लज्जा-शील होता है। भिक्षुओ, इसे लज्जा-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, (पाप-) भीरुता धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक (पाप-) भीरु होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे पाप कर्ममें भय मानता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमें भयका अनुभव करता है। भिक्षुओ, इसे (पाप-) भीरुता धन कहते हैं।

भिक्षुओ, श्रुत-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक बहु-श्रुत होता है, श्रुतका धारण करनेवाला, श्रुतका संग्रह करनेवाला। जो धर्म आदि, मध्य तथा अन्तमें कल्याण कारक हैं, जो सार्थ, सव्यञ्जन-धर्म केवल परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य (=श्रेष्ठ जीवन) का स्तवन करते हैं, वैसे धर्मोंको इस आर्य-श्रावकने बहुत सुना

होता है, वहुत धारणा किया होता है, वाणीसे परिचित किया होता, मनसे परीक्षण किया होता है तथा दृष्टिसे वीध कर देखा होता है। भिक्षुओ, इसे श्रुत-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, त्याग-धन किसे कहते है। भिक्षुओ, आर्य-श्रावक कजूसपनका त्याग कर गृहस्थ जीवन व्यतीत करता है, त्यागी होता है, खुले हाथ वाला होता है, परित्याग-शील होता है, दाता होता है, उदारतापूर्वक दान देनेवाला होता है। भिक्षुओ, इसे त्याग-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, प्रज्ञा-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक प्रज्ञावान् होता है सम्यक् दु:खका क्षय करनेवाली प्रज्ञासे। भिक्षुओ, ये सात धन है —

सद्धावन सीलधन, हिरी ओत्तप्पिय धन।
सुतधन च चागो च, पञ्ञा वे सत्तम धन॥
यस्स एता धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदलिद्दो ति त आहु, अमोघ तस्स जीवित॥
तस्या सद्ध च सील च, पसाद धम्मदस्सन।
अनुयुञ्जेय मेधावी, सर बुद्धान सासन॥

(अर्थ ऊपर आ ही गया है।)

तव उग्ग (= उग्र) नामक राज-महामात्य[1] जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर वैठा। एक ओर वैठे उग्र राज-महामात्यने भगवान्से यह कहा—

"भन्ते आश्चर्य्य है। भन्ते! अद्भुत है। भन्ते! इस रोहणेय्य मिगारके पास कितना धन है! कितना ऐश्वर्य है!"

"उग्र! रोहणेय्य मिगारके पास कितना धन है? कितना ऐश्वर्य है?"

भन्ते रुपयोका तो कहना ही क्या, शत-सहस्र (= लाखो) हिरण्य (= सोनेके सिक्के) है।"

"उग्र! क्या यह 'धन' है? मै कहता हूँ कि यह 'धन' नही है। उग्र! यह जो 'धन' है, यह अग्निके लिये, पानीके लिये, राजाओके लिये, चोरोके लिये तथा अप्रिय उत्तराधिकारियोके लिये 'सामान्य' है। हे उग्र! ये सात 'धन' ऐसे है जो अग्निके लिये, पानीके लिये, राजाओके लिये, चोरोके लिये तथा अप्रिय उत्तरा-

---

१ कोशल-नरेश प्रसेनजित्का महामात्य।

-धिकारियोंके लिये 'असामान्य' हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप-) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा प्रज्ञा धन। उग्र! ये सात 'धन' ऐसे है जो आगके लिये, पानीके लिये, राजाओके लिये, चोरोके लिये तथा अप्रिय उत्तराधिकारियोंके लिये असामान्य हैं।

सद्धाधन सीलधन, हिरी ओतप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं॥
यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा
स वे महद्धनो लोके, अजेय्यो देवमानुसे॥
तस्मा सद्धं च सील च, पसाद धम्मदस्सनं
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं॥

(श्रद्धा-धन, शील-धन . . . तथा सातवाँ प्रज्ञा-धन। जिस स्त्री या पुरुषके पास ये धन हो, वही ससारमें महाधनवान है, और वह देव-मनुष्य लोकमें अजेय होता है। इसलिये आदमीको . . . धर्म-दर्शनमे अनुयुक्त हो।)

भिक्षुओ, ये सात सयोजन है। कौनसे सात? अनुनय-सयोजन, पटिघ सयोजन, दृष्टि सयोजन, विचिकिच्छा सयोजन, मान सयोजन, भवराग-सयोजन, अविद्या सयोजन—भिक्षुओ, ये सात सयोजन हैं।

भिक्षुओ, इन सातो सयोजनो (=चित्तके बन्धनो) का प्रहाण करनेके लिये, नाश करनेके लिये ब्रह्मचर्य्य (=श्रेष्ठ जीवन) व्यतीत किया जाता है। कौनसे सात सयोजनोका? अनुनय सयोजन (=कामराग)का प्रहाण करनेके लिये, नाश करनेके लिये, ब्रह्मचर्य्य-वास किया जाता है। पटिघ (=द्वेष) सयोजनका . . . (मिथ्या) दृष्टि-सयोजनका . . . विचिकित्सा सयोजनका . . . मान सयोजनका . . . भवराग सयोजनका, अविद्या सयोजनका नाश करनेके लिये, ब्रह्मचर्य-वास किया जाता हैं। भिक्षुओ, इन सात सयोजनोंके प्रहाण के लिये, नाशके लिये ब्रह्मचर्य्य-वास किया जाता है। भिक्षुओ, क्योंकि भिक्षुका अनुनय सयोजन प्रहीण हुआ रहता है, जड-मूलसे नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी सभावना नही रहती है, पटिघ सयोजन . . . दृष्टि सयोजन, . . . विचिकिच्छा सयोजन . . . मानसयोजन . . . भवराग सयोजन . . . अविद्या सयोजन प्रहीण हुआ रहता है, जड-मूलसे नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड-वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी सभावना नही रहती है, इसलिए, भिक्षुओ उस भिक्षुके बारेमें

कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, सयोजनोसे मुक्त हो गया, मानका सम्यक् मर्दन करके दु खके क्षयको प्राप्त हो गया।

भिक्षुओ, ये सात सयोजन है। कौनसे सात ? अनुनय सयोजन, पटिघ सयोजन, दृष्टि सयोजन, विचिकिच्छा सयोजन, मान सयोजन, इर्ष्या-सयोजन, मात्सर्य सयोजन। भिक्षुओ, ये सात सयोजन है।

२ अनुशय वर्ग

भिक्षुओ, सात अनुशय है। कौनसे सात ? कामराग-अनुशय, पटिघ-अनुशय, दृष्टि-अनुशय, विचिकित्सा-अनुशय, मानानुशय, भवराग-अनुशय, अविद्या-अनुशय। भिक्षुओ, ये सात अनुशय है।

भिक्षुओ, इन सातो अनुशयोके प्रहाणके लिये, नाशके लिये, ब्रह्मचर्य-वास किया जाता है। कौनसे सात सयोजनोका ? कामराग-अनुशयके प्रहाणके लिये, नाशके लिये ब्रह्मचर्य-वास किया जाता है, पटिघ-अनुशयके .. .. दृष्टि-अनुशयके . विचिकित्सा-अनुशयके मानानुशयके भवराग-अनुशयके . .. अविद्या-अनुशयके प्रहाणके लिये, नाशके लिये ब्रह्मचर्य वास किया जाता है।

भिक्षुओ, क्योकि भिक्षुका कामराग-अनुशय प्रहीण हुआ रहता है, जड-मूल से नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड-वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव-प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी सभावना नही रहती है, पटिघ-अनुशय . दृष्टि अनुशय . . विचिकित्सा-अनुशय मानानुशय भवरागानुशय . . ... अविद्यानुशय प्रहीण हुआ रहता है, जड-मूलसे नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड-वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव-प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी सभावना नही रहती है, इसलिए भिक्षुओ, उस भिक्षुके बारेमें कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, सयोजनोसे मुक्त हो गया, मानका सम्यक् मर्दन करके दु खके क्षयको प्राप्त हो गया।

भिक्षुओ, जिस (गृहस्थ–) कुलमे ये सात बातें हो, यदि उसके पास जाना न हुआ हो, तो समीप नही जाना चाहिए, यदि पास जाना हुआ हो, तो समीप नही बैठना चाहिए। कौन-सी सात बाते ? प्रसन्न-मनसे उठकर स्वागत न किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे अभिवादन न किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे बैठनेके लिये आसन न दिया जाता हो, (वस्तु) रहनेपर भी छिपाई जाती हो, बहुत रहनेपर भी थोडी दी जाती हो, प्रणीत (=बढिया) रहनेपर भी रुक्ष (=घटिया) पदार्थ दिया जाता हो, तथा आदर-पूर्वक नही अनादर-पूर्वक दिया जाता हो।

भिक्षुओ, जिस (गृहस्थ–) कुलमें ये सात बातें हो, यदि उसके पास जाना न हुआ हो, तो समीप जाना चाहिए, यदि पास जाना हुआ हो, तो समीप बैठना चाहिए। कौन-सी सात बातें ? प्रसन्न-मनसे उठकर स्वागत किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे अभिवादन किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे बैठनेके लिये आसन दिया जाता हो, (वस्तु) रहनेपर छिपाई न जाती हो, बहुत रहनेपर थोडी न दी जाती हो, प्रणीत (=बढिया) पदार्थ रहनेपर रुक्ष (=घटिया) न दिया जाता हो तथा अनादर-पूर्वक नहीं, आदर-पूर्वक दिया जाता हो। भिक्षुओ, जिस (गृहस्थ–) कुलमें ये सात बातें हो, यदि उसके पास जाना न हुआ हो, तो समीप जाना चाहिए, यदि पास जाना हुआ हो, तो समीप बैठना चाहिए।

भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं, दक्षिणार्ह हैं, हाथ जोडने योग्य हैं तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं। कौनसे सात ? उभतो भाग विमुत्तो (=रूप-काय तथा नाम-कायसे विमुक्त), पञ्ञा विमुत्तो-(=प्रज्ञा-विमुक्त), काय सक्खी (=आठों विमोक्षोंको कायसे स्पर्श करके विचरने-वाला), दिट्ठिपत्तो (=सम्यक्-दृष्टि प्राप्त), सद्धाविमुक्तो (=श्रद्धासे विमुक्त) धम्मानुसारी (=धर्मका अनुसरण करनेवाला) तथा सद्धानुसारी (=श्रद्धा का अनुसरण करने वाला)। भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं, दक्षिणार्ह हैं, हाथ जोडने योग्य हैं तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं।

भिक्षुओ, लोकमें ये सात आदमी पानी (की उपमा) के समान विद्यमान हैं। कौनसे सात ? भिक्षुओ, एक आदमी जो निमग्न हुआ (=डूबा) सो निमग्न ही रहता है, भिक्षुओ, एक आदमी ऊपर आकर फिर डूब जाता है, भिक्षुओ, एक आदमी ऊपर आकर पानीके ऊपर स्थित रहता है, भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर आकर देखता-भालता है, भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर आकर तैरता है, भिक्षुओ एक आदमी पानीके ऊपर तैरकर स्थान विशेष पर पहुँच कर रुक जाता है, भिक्षुओ, एक आदमी (=ब्राह्मण) ऊपर आकर, तैरकर, पार जाकर स्थलपर खडा होता है।

भिक्षुओ, एक आदमी एक बार डूबा, डूबा ही कैसे रहता है ? भिक्षुओ, एक आदमी पूर्ण रूपसे अशुभ कर्मोंसे ही युक्त रहता है। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी एक बार डूबा, डूबा हुआ ही रहता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आकर फिर डूब जाता है ? भिक्षुओ एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मों (=शुभ कर्मो) के प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है, लज्जा होना अच्छी बात होती है,

वीर्य होना अच्छी बात होती है कुशल धर्मोके प्रति प्रीत प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। उसकी वह श्रद्धा न स्थिर रहती है, न बढती ही है, वह घटती ही है। उसकी वह लज्जा उसकी वह (पाप–) भीरुता . उसका वह वीर्य उसकी वह प्रज्ञा न स्थिर रहती है, न बढती है, , वह घटती ही है। भिक्षुओ, इस प्रकार एक आदमी पानीसे ऊपर आकर फिर डूब जाता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आकर कैसे स्थिर रहता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोके प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है, लज्जा होना अच्छी बात होती है, (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है वीर्य होना अच्छी बात होती है कुशल धर्मोके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। उसकी वह श्रद्धा न कम होती है, न बढती है, स्थिर रहती है। उसकी वह लज्जा . . उसकी वह (पाप–) भीरुता उसका वह वीर्य उसकी वह प्रज्ञा न कम होती है, न बढती है, स्थिर रहती है। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी पानीसे ऊपर आकर स्थिर रहता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आकर कैसे देखता-भालता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोके प्रति-श्रद्धा होना अच्छी बात होती है, . लज्जा होना अच्छी बात होती है (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है, वीर्य होना अच्छी बात होती है कुशल-धर्मोके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। तीन सयोजनोका क्षय हो जानेसे वह स्रोतापन्न हो जाता है, पतनोन्मुख नहीरहता, उसकी बोधि-प्राप्ति निश्चित हो जाती है। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी पानीके ऊपर आकर देखता-भालता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर आकर तैरता कैसे है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोके प्रति श्रद्धा होनी अच्छी बात होती है. लज्जा होना अच्छी बात होती है . (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है. . वीर्य होना अच्छी बात होती है कुशल-धर्मोके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। तीनो सयोजनोका क्षय हो जानेसे, राग-द्वेष-मोह क्षीण पड जानेसे वह सकृदागामि होता है, एक ही बार इस लोकमें (और) आकर दुःखका अन्त करनेवाला। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी पानीके ऊपर आकर तैरता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर तैर कर स्थान विशेष पर पहुँच कर कैसे रुक जाता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोके

प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है .. लज्जा होना अच्छी बात होती है .. (पाप-) भीरुता होना अच्छी बात होती है .. वीर्य होना अच्छी बात होती है . . कुशल-धर्मोके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। पाँचो पतनकी ओर ले जाने वाले संयोजनोका क्षय कर वह औपपातिक (= अनागामि) होता है, उसका वही परिनिर्वाण हो जाता है, वह उस लोकसे पुन इस लोकमें लौट कर नही आता इस प्रकार भिक्षुओ, आदमी पानीके ऊपर तैरकर, स्थान-विशेष पर पहुँच कर रुक जाता है।

भिक्षुओ, एक आदमी (= ब्राह्मण) ऊपर आकर तैरकर, पार जाकर स्थल पर कैसे खडा हो जाता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है उसकी कुशल-धर्मोके प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है. लज्जा होना अच्छी बात होती है . (पाप-) भीरुता होना अच्छी बात होती है .. वीर्य होना अच्छी बात होती है, .. कुशल धर्मोके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। वह आस्रवोका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्ति, इसी जन्ममें यही साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। इस प्रकार भिक्षुओ, आदमी (= ब्राह्मण) ऊपर आकर, तैरकर, पार जाकर, स्थल पर खडा हो जाता है।

भिक्षुओ, लोकमें ये सात आदमी पानीकी उपमाके समान विद्यमान है।

भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय है, स्वागत करने योग्य है, दक्षिणार्ह है, हाथ जोडने योग्य है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक आदमी सभी सस्कारोके प्रति अनित्य-दर्शी होता है, अनित्य-सज्ञी होता है, अनित्य प्रतिसवेदी होता है, सतत, निरतर, अमिश्ररूपसे, चित्तमे त्याग-शील तथा प्रज्ञासे गहराईमें उतरने वाला। वह आस्रवोका क्षय कर प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह पहला जन है, जो स्वागत करने योग्य है, जो दक्षिणार्ह है, जो हाथ जोडने योग्य है तथा जो लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक (दूसरा) आदमी सभी सस्कारोके प्रति अनित्य-दर्शी होता है, अनित्य-सज्ञी होता है, अनित्य-प्रतिसवेदी होता है, सतत, निरतर, अमिश्र-रूपसे, चित्तमे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमें उतरने वाला। उसका आस्रव-क्षय तथा जीवन-क्षय एक साथ ही होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा जन है, जो स्वागत करने योग्य है, जो दक्षिणार्ह है, जो हाथ जोडने योग्य है, तथा जो लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक (तीसरा) आदमी सभी सस्कारोके प्रति अनित्य-दर्शी होता है, अनित्य-सज्ञी होता है, अनित्य-प्रतिसवेदी होता है, सतत, निरतर, अमिश्र-

रूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमे उतरने वाला। वह अधोगतिके कारण-भूत पाँचो सयोजनोका क्षय कर बीचमें ही परिनिर्वाणको प्राप्त होने वाला होता है , (जीवनके अन्तको) प्राप्त कर (परिनिर्वाण) को प्राप्त होने वाला होता है .. असंस्कार-परिनिर्वाणको प्राप्त करने होने वाला होता है .. ससस्कार-परिनिर्वाण को प्राप्त होने वाला होता है ... जो छोटे नही है ऐसे देवताओके पास जाने वाला (अकनिट्ठगामी) ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय है, स्वागत करने योग्य है, दक्षिणार्ह है, हाथ जोडने योग्य है तथा लोगोके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय है.... अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक आदमी सभी सस्कारोके प्रति दु ख-दर्शी होता है....।

भिक्षुओ, एक आदमी सभी धर्मों (=चित्तके विषयो) के प्रति अनात्म-दृष्टि युक्त हो विहार करता है।

एक आदमी निर्वाणके प्रति सुख-दर्शी होता है, सुख-सज्ञी होता है, सुख-प्रति-संवेदी होता है, सतत निरतर अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्याग शील तथा प्रज्ञासे गहराईमें जाने वाला। वह आस्रवोका क्षय कर . विहार कर प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह पहला जन है जो स्वागत करने योग्य होता है।...अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक जन निर्वाणके प्रति सुख-दर्शी होता है, सुख-सज्ञी होता है, सुख-प्रतिसवेदी होता है, सतत, निरतर, अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमे जाने वाला। उसका आस्रव-क्षय तथा जीवन-क्षय एक साथ ही होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा जन है, जो स्वागत करने योग्य है... अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक (तीसरा) आदमी निर्वाणके प्रति सुख-दर्शी होता है, सुख-संज्ञी होता है, सुख-प्रतिसवेदी होता है, सतत, निरंतर, अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमे जाने वाला। वह अधोगतिके कारणभूत पाँचो सयो-जनोका क्षय कर बीचमें ही परिनिर्वाणको प्राप्त कर होनेवाला होता है ... (जीवनके अन्तको) प्राप्त कर परिनिर्वाणको प्राप्त करने वाला होता है असस्कार-परिनिर्वाणको प्राप्त करने वाला होता है ससस्कार परिनिर्वाणको प्राप्त करने वाला होता है जो छोटे नही है, ऐसे देवताओके पास जानेवाला (अकनिट्ठगामी) ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ जन है अनुपम पुण्य-क्षेत्र। भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय है, स्वागत करने योग्य है अनुपम पुण्य-क्षेत्र।

भिक्षुओ, ये सात निर्देश-वस्तु (=बातें) हैं। कौनसी सात? भिक्षुओ, एक भिक्षु (अर्हत्व लाभसे पूर्व) शिक्षाओंके पालन करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें (अर्हत्व लाभ होनेपर) उत्साह-रहित; धर्म-निश्चान्तिके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित, तृष्णाका क्षय करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित, योगाभ्यासमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित, वीर्य (=पराक्रम) करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित, स्मृति तथा दक्षताके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह रहित, (सम्यक्–) दृष्टिके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह रहित। भिक्षुओ, ये सात निर्देश-वस्तुयें है।

३. वज्जिसप्तक वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीके सारन्दद चैत्यमें विहार करते थे। उस समय बहुतसे लिच्छवी जहाँ भगवान् थे, वहाँ आये। पास आकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए लिच्छवियोंसे भगवान्ने यह कहा—"लिच्छवियो! मैं तुम्हे सात ऐसे उपदेश देता हूँ, जिनके अनुसार चलनेसे तुम्हारा पराभव (=परिहानि) नहीं होगा। उन्हें सुनो। अच्छी तरह मनमें धारण करो। कहता हूँ।" लिच्छवियोंने "भन्ते! अच्छा" कह भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

"लिच्छवियो! वे सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? लिच्छवियो! जब तक वज्जी (जनपदके) लोग (बैठकोंमें) इकट्ठे होते रहेंगे, सन्निपात-बहुल रहेंगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो! जबतक वज्जी लोग एकमत हो (बैठकोंमें) सम्मिलित होते रहेंगे, एकमत हो (बैठकोंसे) उठते रहेंगे, एकमत हो वज्जी जनपदके कृत्योंको करते रहेंगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो! जबतक वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (=जो कानून नहीं है) को प्रज्ञप्त (=कानून) नहीं मानेंगे; प्रज्ञप्तका उल्लंघन नहीं करेंगे, जैसे पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसके अनुसार चलते रहेंगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो! जब तक वज्जी-गण जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते रहेंगे, गौरव करते रहेंगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे और उनकी बातको

ध्यानसे सुनते रहेगे, तब तक लिच्छवियो! वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।

"लिच्छवियो! जब तक वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ है, कुल-कुमारियाँ है, उन्हे छीनकर जबर्दस्ती (घर) नही बसाते रहेगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।

"लिच्छवियो! जबतक वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य है, उनका आदर करते रहेगे, गौरव करते रहेगे, मानते रहेगे, पूजते रहेगे और जो पूर्वसे उनके प्रति धार्मिक-देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नही करेगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।

"लिच्छवियो! जबतक वज्जी-गण-अर्हतोके लिये धार्मिक सुरक्षा सुव्यवस्थित रहेगी, ताकि जो अर्हत-गण वज्जि जनपदमें नही आये हैं, वे पधारे तथा जो अर्हत-गण पधारे हैं, वे सुख-पूर्वक विचरें, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।

"लिच्छवियो! जबतक ये सात अपरिहानि-धर्म वज्जि-जन पदके लोगोमे दिखाई देते रहेगे, जबतक वज्जी-गण इन पर स्थिर रहेगे, तबतक लिच्छवियो वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।

ऐसा मैंने सुना[1] एक समय भगवान् राजगृहके गृध्र-कूट पर्वत पर विहार करते थे। उस समय वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजात शत्रु वज्जियोपर आक्रमण करना चाहता था। उसका कहना था—"मैं इन वैभवशाली वज्जियोको उजाड़ूँगा, उनका नाश करूँगा, उनपर आपत्ति ढाऊँगा।"

तब वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रुने अपने महामात्य वर्षकार ब्राह्मणको बुलाकर कहा—"हे ब्राह्मण! जहाँ भगवान है, तू वहाँ जा। पास जाकर मेरे वचनसे भगवान्के चरणोमे वन्दना कर। फिर उनसे आपका आरोग्य, निश्चिन्तता, शरीरका हलकापन, बल, सुख विहरण (कैसा है?) पूछना। कहना—'भन्ते! वैदेही पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रु आपके चरणोमें वन्दना करता है और आपका आरोग्य निश्चिन्तता, शरीरका हलकापन, बल, सुख, विहरण (कैसा है?) पूछता है।' और ऐसा कहना—'भन्ते! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रु वज्जियो पर आक्र-

---

१—यह सम्पूर्ण सूत्र अक्षरश दीर्घनिकायके 'महापरिनिर्वाण सूत्र'के अन्तर्गत विद्यमान है।

मण करना चाहता है।' उसका कहना है—"मै इन वैभवशाली वज्जियोको उजाडूँगा, इनका नाश करूँगा, उन पर आपत्ति ढाऊँगा। फिर जैसे तुझे भगवान कहे, उसे अच्छी तरह धारणकर, आकर मुझे कहना। तथागतोका कथन अन्यथा नही होता।"

मगधके महामात्य वर्षकार ब्राह्मणने वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रुको 'बहुत अच्छा' कहा और वह जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्से प्रमुदित मनसे बातचीत की। प्रमुदित मनसे शिष्टाचार पूराकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए मगधके महामात्य वर्षकार ब्राह्मणने भगवान्से यह कहा—'हे गौतम! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रु आप गौतमके चरणोमे सिरसे वन्दना करता है, और आपका आरोग्य, निश्चिन्तता, शरीरका हलकापन, बल, सुख-विहरण (कैसा है?) पूछता है? हे गौतम! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश वज्जियोपर आक्रमण करना चाहता है। उसका कहना है—मैं इन वैभववशाली वज्जियोको उजाडूँगा, इनका नाश करूँगा, इन पर आपत्ति ढाऊँगा।"

उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान्के पीछे खडे उन्हे पखा झल रहे थे। तब भगवान् ने आयुष्मान् आनन्दको सम्बोधित किया आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण (बैठको मे) इकट्ठे होते है, सन्निपात,-बहुल होते है?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण (बैठकोमें) इकट्ठे होते हैं, सन्निपात-बहुल होते हैं।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण (बैठकोमे) इकट्ठे होते रहेगे, सन्निपात-बहुल रहेगे, तब तक वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण एकमत हो (बैठकोमें) सम्मिलित होते है, एक मत हो (बैठकोसे) उठते है, एकमत हो वज्जी-जनपदके कृत्योको करते है।"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण एकमत हो (बैठकोमें) सम्मिलित होते है, एकमत हो (बैठकोसे) उठते हैं, एकमत हो वज्जी-जनपदके कृत्योको करते हैं।"

आनन्द! जब तक वज्जी-गण एकमतसे (बैठकोमें) सम्मिलित होते रहेगे, एकमत हो (बैठकोसे) उठते रहेगे, एकमत हो वज्जी-जनपदके कृत्य करते रहेंगे, तब तक वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (जो कानून नही है) को प्रज्ञप्त (कानून) नही मानते, प्रज्ञप्तका उल्लघन नही करते, जैसे पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसके अनुसार चलते है?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (जो कानून नहीं है) को प्रज्ञप्त (=कानून) नही मानते, प्रज्ञप्तका उल्लघन नही करते, जैसा पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसके अनुसार चलते हैं।"

"आनन्द! जब तक वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (जो कानून नही है) को प्रज्ञप्त (=कानून) नही मानेगे, प्रज्ञप्तका उल्लघन नही करेंगे, जैसा पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसीके अनुसार चलते रहेगे, तब तक वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते है, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते है और उनकी बात को ध्यानसे सुनते हैं?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते हैं, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं और उनकी बातको ध्यानसे सुनते हैं।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण, जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते रहेंगे, गौरव करते रहेंगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेगे और उनकी बातको ध्यानसे सुनते रहेंगे, तबतक वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ हैं कुल-कुमारियाँ हैं, उन्हे छीनकर जबर्दस्ती (घर) नही बसाते?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ हैं, कुल-कुमारियाँ है, उन्हे छीनकर जबर्दस्ती (घर) नही बसाते।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ है, कुल-कुमारियाँ है, उन्हे छीन कर जबर्दस्ती (घर) नही बसायेंगे, तबतक वज्जियोकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नही।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य है, उनका आदर करते है, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं और जो पूर्वसे उनके प्रति धार्मिक देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नही करते?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य हैं, उनका आदर करते है, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं, और जो पूर्वसे उनके प्रति धार्मिक देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नही करते।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य हैं उनका आदर करते रहेंगे, गौरव करते रहेगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे और

जो पूर्वमे उनके प्रति धार्मिक देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नहीं करते रहेंगे, तब तक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण अ अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा सुव्यवस्थित रखते हैं, ताकि जो अर्हत्-गण् वज्जी-जनपदमे नहीं आये, वे पधारें तथा जो अर्हत्-गण पधारे हैं, वे सुखपूर्वक विचरे?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा व्यवस्थित रखते हैं, ताकि जो अर्हत्-गण वज्जी-जनपदमें नहीं आये, वे पधारें तथा जो अर्हत्-गण पधारे हैं, वे सुख-पूर्वक विचरे।"

"आनन्द! जवतक वज्जी-गण अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा व्यवस्थित रखेंगे, ताकि जो अर्हत् गण-वज्जी-जनपदमें नही आये, वे पधारें तथा जो अर्हत्-गण पधारे हैं, वे सुखपूर्वक विचरें, तव तक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

तब भगवानने मगधके महामात्य वर्षकार ब्राह्मणको सम्बोधित किया—ब्राह्मण! एक वार मैं वैशालीमें सारन्दद चैत्यमे विहार कर रहा था। ब्राह्मण! उस समय मैंने वज्जी जनपदके लोगोंको ये सात अपरिहानि-धर्मोका उपदेश दिया। ब्राह्मण! जवतक ये सात अपरिहानि-धर्म वज्जियोंमें बने रहेंगे और वज्जी-गण इन सात अपरिहानि-धर्मोका पालन करते दिखाई देते रहेगे, तवतक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"हे गौतम! इन सातों अपरिहानि-धर्मोका तो कहना ही क्या, इनमेंसे एक एक अपरिहानि-धर्मका पालन करते रहनेसे भी वज्जियोंकी उन्नति की ही आशा की जा सकती है, अवनतिकी नहीं। हो गौतम! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रुके लिये वज्जियोंपर आक्रमण अकरणीय है। उन्हे या तो विश्वास उत्पन्न कर (उपलापनसे) जीता जा सकता है या उनमे आपसी मत-भेद कर। हे गौतम! अब हमें जानेकी अनुमति दें। हमें वहुत कार्य है, वहुत कृत्य हैं।"

"हे ब्राह्मण! इस समय जिस कामका योग्य समय समझे, (वह कर)।

तब मगधका महामात्य वर्षकार ब्राह्मण भगवान्के भाषणका अभिनन्दन कर, अनुमोदन कर आसनसे उठकर चला गया।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् राजगृहके गृध्र-कूट पर्वतपर विहार कर रहे थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—'भिक्षुओ! सात अपरिहानि-धर्मोका उपदेश करता हूँ। उसे सुनो, अच्छी तरह मनमें धारण करो, कहता

हूँ।" उन भिक्षुओने "वहुत अच्छा" कह भगवान्को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

"भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे है? भिक्षुओ, जवतक भिक्षु (वैठको) मे इकट्ठे होते रहेगे, सन्निपात-वहुल रहेगे, तव तक भिक्षओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

"भिक्षओ, जवतक भिक्षु एकमतसे (वैठकोमें) सम्मिलित होते रहेगे, एकमतसे (वैठकोसे) उठते रहेगे, एकमत हो सघ-कृत्य करते रहेगे, तवतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

"भिक्षुओ, जवतक भिक्षु जो अप्रज्ञप्त (=अनियम) है, उसे नियम नही मानेगे, जो नियम है उसका उल्लघन नही करेगे, भगवान्ने जिन-जिन शिक्षाओके अनुसार जीवन-यापन करनेके लिए कहा है, उन-उन शिक्षाओके अनुसार जीवन-यापन करते रहेगे, तवतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

"भिक्षुओ, जवतक भिक्षु, ऐसे भिक्षुओका, जो स्थविर हो, प्रसिद्ध हो, चिर-प्रव्रजित हो, सघके ज्येष्ठ हो, सघके नायक हो, सत्कार करते रहेगे, गौरव करते रहेगे, (उन्हे) मानते रहेगे, पूजते रहेगे, उनकी वात ध्यानसे सुनते रहेगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जवतक भिक्षु फिर-फिर उत्पन्न होनेवाली तृष्णाके वशीभूत न होगे, तवतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

"भिक्षुओ, जवतक भिक्षु आरण्य-शयनासनोको चाहते रहेगे, तवतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जवतक भिक्षु व्यक्तिगत रूपसे यही चाहते रहेगे कि जो सब्रह्मचारी भिक्षु (उनके विहारमे) नही आये है, वे आये तथा जो पधारे है, वे सुखपूर्वक रहे; तवतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ जवतक भिक्षुओमे ये सात अपरिहानि धर्म स्थिर रहेगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोका पालन करते दिखाई देते रहेगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्मोका उपदेश करता हूँ, इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे है? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु काम-काजमें ही दिन रात लगे रहनेवाले नही होगे, तवतक भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु बातचीतमें ही ... निद्रामें ही . ... मण्डलीमें ही . ... पापी, पाप-पूर्ण सकल्पोंके वशीभूत ... कुसंगतिमें, कुमित्रोंके साथ, कुसम्पर्कमें ही ... आरम्भिक थोडी-सी उन्नतिसे ही सतुष्ट नहीं होते रहेंगे, तब तक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि धर्मोका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

"भिक्षुओ, सात अपरिहानि धर्मोंकी देशना करता हूँ। इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो ... भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु श्रद्धावान् रहेंगे, तबतक भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु लज्जा-शील रहेंगे . ... (पाप-) भीरु रहेंगे .. . ... बहुश्रुत होंगे .. ... प्रयत्नशील होंगे . ... स्मृतिमान होंगे .. प्रज्ञावान् होंगे; तबतक भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि-धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्मोंकी देशना करता हूँ। इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो . ... भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु स्मृति-सम्बोधि अंगकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु धम्म विचय सम्बोधि-अंगकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे ... वीर्य सम्बोधि-अंगकी भावना. . ... प्रीति सम्बोधि-अंग की भावना.. ... प्रश्रब्धि सम्बोधि-अंगकी भावना ... समाधि सम्बोधि-अंगकी भावना . . ... उपेक्षा समाधि सम्बोधि-अंगकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि-धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्मोंकी देशना करता हूँ। इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो .. भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे है? भिक्षुओ, जब

तक भिक्षु अनित्य-सञाकी भावना करेगे, तबतक भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु अनात्म-सञाकी भावना (=अभ्यास) करते रहेगे अशुभ-सञाकी भावना (दुष्कर्मोके) दुष्परिणाम-सञाकी भावना ... प्रहाण-सञाकी भावना विराग-सञाकी भावना निरोध-सञाकी भावना, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होगी, हानि नही।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओमे ये सात अपरिहानि-धर्म स्थिर रहेगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोका पालन करते दिखाई देते रहेगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नही।

ऐसा मैने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमे अनाथपिण्डिकके जेतवनारामने विहार करते थे। उस समय भगवान्ने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ, ये सात बातें शैक्ष-भिक्षुओकी अवनतिका कारण होती है। कौन-सी सात? दिन-रात किसी काममे ही लगे रहना, दिन-रात बातचीतमें ही लगे रहना, दिन-रात सोते ही रहना, दिन-रात मण्डलीमे ही मस्त रहना, इन्द्रियोका असयम, भोजनके विषयमे अमात्रज्ञ होना, सघमें सघ-कृत्य रहते ही है, शैक्ष-भिक्षु सोचता है, सघमे स्थविर भिक्षु है, प्रसिद्ध है, चिर प्रव्रजित है, कार्यका भार वहन करनेवाले है, वे उस कामको नही जानेगे, और वह उनके कार्यमें सहायक होता है। भिक्षुओ, ये सात धर्म शैक्ष भिक्षुकी अवनतिका कारण होते है।

"भिक्षुओ, ये सात बातें शैक्ष-भिक्षुकी अवनतिका कारण नही होती। कौन-सी सात? दिन-रात किसी काममें न लगे रहना, दिन-रात बातचीतमे न लगे रहना, दिन-रात सोते न रहना, दिन-रात मण्डलीमे ही मस्त न रहना, इन्द्रियोका असयत न रहना, भोजनके विषयमे मात्रज्ञ होना, सघमे सघ-कृत्य रहते ही है, शैक्ष भिक्षु सोचता है, सघमे स्थविर भिक्षु है, प्रसिद्ध है, चिर-प्रव्रजित है, कार्यका भार वहन करनेवाले है, वे उसको जानेगे, और वह उनके कार्यमे सहायक नही होता है। भिक्षुओ, ये सात बाते शैक्ष भिक्षुकी अवनतिका कारण नही होती।

भिक्षुओ, ये सात बातें उपासककी अवनतिका कारण होती है। कौन-सी सात बाते? वह भिक्षुओका दर्शन करना छोड देता है, वह सद्धर्मके श्रवणमें प्रमाद करता है, (पाँच) शीलोका अभ्यास नही करता, अश्रद्धावान् होता है, जो स्थविर भिक्षु होते है, जो मध्यम-दर्जेके होते है तथा जो नये भिक्षु होतें है, उनको दोष ही

देते रहकर धर्म सुनता, छिद्रान्वेपी होता है, बुद्ध-शासनसे बाहर दक्षिणार्होंकी खोज करता है और पहले उन्हीका आदर-सत्कार करता है। भिक्षुओ, ये सात बातें उपासक की अवनतिका कारण होती हैं।

भिक्षुओ, ये सात बातें उपासककी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी सात बातें? वह भिक्षुओका दर्शन करना नही छोडता है, वह सद्धर्मके श्रवणमें प्रमाद नही करता है, वह पाँच शीलोका अभ्यास करता है, श्रद्धावान् होता है, जो स्थविर-भिक्षु होते हैं, जो मध्यम दर्जेके होते हैं तथा जो नये भिक्षु होते हैं, उनको दोप नही देते रहकर धर्म नही सुनता है, छिद्रान्वेपी नही होता है, (बुद्ध-शासन) से बाहर दक्षिणार्होंको नही खोजता है, पहले उन्हीका आदर-सत्कार करता है। भिक्षुओ, ये सात बातें उपासककी उन्नतिका कारण होती है।

भगवान्ने यह कहा। इतना कहकर सुगत शास्ताने आगे यह भी कहा—

दस्सन भावितत्तान, यो हापेति उपासको।
सवन च अरियधम्मान, अधिसीले न सिक्खति॥
अप्पसादो च भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति॥
उपारम्भकचित्तो च, सद्धम्म सोतुमिच्छति॥
इतो च बहिद्धा अञ्ञ, दक्खिणेय्य गवेसति,
तत्थेव च पुब्बकार, यो करोति उपासको॥
एते खो परिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा परिहायति॥

[जो उपासक सयत भिक्षुओका दर्शन करना त्याग देता है, जो आर्य-धर्मको सुनता नही है, जो पाँच शीलोका अभ्यास नही करता है, जिसकी भिक्षुओंके प्रति अश्रद्धा उत्तरोत्तर बढती जाती है, वह उपालम्भ-युक्त चित्तसे सद्धर्मका श्रवण करता है, बुद्ध-शासनसे बाहर दूसरे लोगोंमें दक्षिणार्होंको खोजता रहता है और जो उपासक पहले उन्हीका आदर-सत्कार करता है, वह इन सात अपरिहानि-धर्मोका उपदेश दिये रहनेके अनुसार, इनके अनुकूल आचरण करनेवाला होनेसे सद्धर्ममें अवनतिको प्राप्त होता है।]

दस्सन भावितत्तान, यो न हापेति उपासको।
सवन च अरियधम्मान, अधिसीले च सिक्खति॥
पसादो चस्स भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति।
अनुपारम्भचित्तो च, सद्धम्म सोतुमिच्छति॥

न इतो वहिद्धा अञ्ञ, दक्खिणेय्य गवेसति।
इधेव च पुब्बकार, यो करोति उपासको॥
एते खो अपरिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा न परिहायति॥

[जो उपासक सयत भिक्षुओका दर्शन करता रहता है, जो श्रेष्ठ-धर्मको सुनता रहता है, जो पाँच शीलोका अभ्यस्त रहता है, जिसकी भिक्षुओके प्रति श्रद्धा उत्तरोत्तर वढती जाती है, जो उपालम्भ रहित चित्तसे सद्धर्म सुननेकी इच्छा करता है, जो बुद्ध-शासनसे वाहर दूसरे दक्षिणार्होंकी खोज नही करता तथा जो उपासक पहले इन्हीका आदर-सत्कार करता है, वह इन सात अपरिहानि-धर्मोका उपदेश दिये रहनेके अनुमार, इनके अनुकूल आचरण करनेवाला होनेसे सद्धर्मसे पतित नही होता।]

भिक्षुओ, ये सात उपासक की विपत्तियाँ है। कौनसी सात? भिक्षुओ, ये सात उपासककी सम्पत्तियाँ है। कौन सी सात?

भिक्षुओ, ये सात उपासकके पतनके कारण (= पराभव) है। कौनसे सात?
. भिक्षुओ, ये सात उपासककी उन्नतिके कारण (= सम्भव) है। कौनसे सात? वह भिक्षुओका दर्शन करना नही छोडता है, वह सद्धर्मके श्रवणमें प्रमाद नही करता है, वह पाँच शीलोका अभ्यास करता है, श्रद्धावान् होता है, जो स्थविर भिक्षु होते है, जो मध्यम दर्जेके होते है तथा जो नये भिक्षु होते है, उनको दोप नही देता रहकर सद्धर्म सुनता है, छिद्रान्वेपी नही होता है, (बुद्ध) शासनसे वाहर दक्षिणार्हों को नही खोजता है, पहले इन्हीका आदर-सत्कार करता है। भिक्षुओ, ये सात उपासक की उन्नतिके कारण (= सम्भव) है।

दस्सन भावितत्तान, यो हापेति उपासको
सवन च अरियधम्मान, अधिसीले न सिक्खति।
अप्पसादो च भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति
उपारम्भक चित्तो च, सद्धम्म सोतुमिच्छति॥
इतो च वहिद्धा अञ्ञ, दक्खिणेय्य गवेसति।
तत्थेव च पुब्बकार, यो करोति उपासको॥
एते खो परिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा परिहायति॥
दस्सन भावितत्तान, यो न हापेति उपासको,
सवन च अरियधम्मान, अधिसीले च सिक्खति॥

पमादो चस्स भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति ।
अनुपारम्भ चित्तो च, सद्धम्म सोतुमिच्छति ॥
न इनो वहिद्धा अञ्ञ, दक्खिणेय्य गवेसति ।
इधेव च पुब्बकार यो करोति उपासको ॥
एते खो अपरिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते ।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा न परिहायति ॥

[अर्थ ऊपर ही आ गया है।]

४ देवता वर्ग

तव एक प्रकाशमान देवता प्रकाशमान रात्रिमें सारे जेतवन को प्रकाशयुक्त करके जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर खडा हुआ। एक ओर खडे हुए देवताने भगवान्‌को यह कहा—

"भन्ते! ये सात वाते भिक्षुकी उन्नति (=अपरिहानि) के लिये होती है। कौनसी सात? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, सघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, अप्रमादका गौरव तथा मैत्री-भावका गौरव। भन्ते, ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। उस देवताने यह कहा। शास्ताने समर्थन किया। यह जान कि शास्ताने समर्थन किया, वह देवता-प्रदक्षिणा कर वही अन्तर्धान हो गया।

तव भगवान्‌ने उस रातके बीतने पर भिक्षुओंको सम्बोधित किया—भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवता, प्रकाशमान रात्रिमें, सारे जेतवनको प्रकाश-युक्त करके जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा। पास जाकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खडा हो गया। भिक्षुओ, एक ओर खडे हुए उस देवताने मुझे यह कहा—भन्ते! ये सात वातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती है। कौनसी सात? शास्ताका गौरव धर्मका गौरव, सघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, अप्रमादका गौरव तथा मैत्री-भावका गौरव। भन्ते! ये सात वातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं।

भिक्षुओ, उस देवताने मुझे यह कहा। इतना कह, मुझे अभिवादन कर (मेरी प्रदक्षिणा) कर वह देवता वहीं अन्तर्धान हो गया।

सत्थुगरु धम्मगरु, सघे च तिब्बगारवो,
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिब्बगारवो ॥
अप्पमाद गरु भिक्खु, पटिसन्थार गारवो।
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके ॥

[शास्ताके प्रति गौरव, धर्मका गौरव, सघके प्रति तीव्र गौरवका भाव, समाधिके प्रति गौरवका भाव, प्रयत्नशील, शिक्षाओके प्रति तीव्र गौरवका भाव, अप्रमादके प्रति गौरवका भाव तथा मैत्री-भावके प्रति गौरवका भाव जिस भिक्षुमें होता है, उसका पतन असम्भव होता है, वह निर्वाणके समीप पहुँचा हुआ होता है।]

भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवता, प्रकाशमान रात्रिमेसारे जेतवन को प्रकाशयुक्त करके जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा। पास आकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खडा हो गया। भिक्षुओ, एक ओर खडे हुए उस देवताने मुझे यह कहा—भन्ते! ये सात वातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। कौनसी सात वातें? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, सघका गौरव, शिक्षाओका गौरव, समाधिका गौरव, लज्जाका गौरव, (पाप–) भीरुताका गौरव। भन्ते! ये सात वाते भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती है। भिक्षुओ, उस देवताने मुझे यह कहा इतना कह, मुझे अभिवादन कर, (मेरी) प्रदक्षिणा कर वह देवता वही अन्तर्धान हो गया।

सत्युगरु धम्मगरू, सघे च तिव्वगारवो,
समाधिगरु, आतापी, सिक्खाय, तिव्वगारवो॥
हिरि ओत्तप्पसम्पन्नो, सप्पतिस्सो सगारवो,
अभव्वो परिहानाय, निव्वानस्सेव सन्तिके॥

[शास्ताके प्रति गौरव शिक्षाओके प्रति तीव्र गौरवका भाव। लज्जा तथा (पाप–) भीरुता से युक्त, इन सबके प्रति गौरवका भाव जिस भिक्षुके मनमें होता है, उसकी अवनति असम्भव है। वह निर्वाणके ही समीप है।]

भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवताने मुझे यह कहा—"भन्ते! ये सात वातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती है। कौन सी सात वातें? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, सघका गौरव, शिक्षाओका गौरव, समाधिका गौरव, शिक्षा कामी होना तथा सत्सगति (=कल्याण-मित्रता)। भन्ते! ये सात वाते भिक्षुकी उन्नतिकी के लिये होती है। भिक्षुओ, इस देवताने मुझे यह कहा। इतना कह, मुझे अभिवादन कर (मेरी) प्रदक्षिणा कर वह देवता वही अन्तर्धान हो गया।

सत्थुगरु धम्म गरु, सघे च तिव्वगारवो,
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिव्बगारवो॥
कल्याण मित्तो सुवचो, सप्पतिस्सो सगारवो,
अभव्वो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके॥

[शास्ताके प्रति गौरव ..... शिक्षाओके प्रति तीव्र गौरवका भाव

सत्सगतिमें रहने वाला तथा शिक्षा-कामी—इन सबके प्रति गौरवका भाव, जिस भिक्षुके मनमें होता है, उसकी अवनति असम्भव है, वह निर्वाणके ही समीप है।]

भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवता मुझे यह कहा—"भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। कौनसी सात बातें? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, सघका गौरव, शिक्षाओका गौरव, समाधिका गौरव, शिक्षा-कामी होना, तथा सत्सगति। भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने मुझे यह कहा। इतना कह, मुझे अभिवादन कर (मेरी) प्रदक्षिणा कर वह देवता वही अन्तर्धान हो गया।

ऐसा कहने पर आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवान्‌से कहा—भन्ते! भगवान्‌के द्वारा जो कुछ सक्षेपमे कहा गया है, मैं उसे विस्तारसे इस प्रकार जानता हूँ। भन्ते! भिक्षु स्वय शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है तथा गौरवका भाव रखनेकी प्रशसा करने वाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते हैं, जो शास्ताके प्रति गौरवका भाव नही रखते उन्हे वैसा करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाले होते हैं, उनकी समयानुकूल यथार्थ प्रशसा करने वाला होता है। स्वय धर्मके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है सघके प्रति भाव रखने वाला होता है शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है . . . समाधिके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है शिक्षाकामी होता है सत्सगतिमें रहनेवाला होता है तथा सत्सगतिकी प्रशसा करनेवाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते है, उन्हे वैसा करनेकी प्रेरणा करता है। जो दूसरे भिक्षु सत्सग में रहने वाले होते है, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करनेवाला होता है। भन्ते! भगवान्‌के द्वारा जो कुछ सक्षेपमें कहा गया है, मैं उसे विस्तारसे इस प्रकार जानता हूँ।

"सारिपुत्र बहुत अच्छा। सारिपुत्र, बहुत अच्छा। सारिपुत्र! जो कुछ मैंने सक्षेपमें कहा, तू उसकी विस्तारसे इस प्रकार अर्थ जानता है। सारिपुत्र! भिक्षु स्वय शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है तथा गौरवका भाव रखनेकी प्रशसा करनेवाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते हैं, जो शास्ताके प्रति गौरवका भाव नही रखते, उन्हे वैसा करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाले होते हैं, उनकी समयानुकूल यथार्थ प्रशसा करने वाला होता है। स्वय धर्मके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है सघके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है . समाधिके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है . शिक्षाकामी

होता है . सत्सगतिमे रहने वाला होता है तथा सत्सगतिकी प्रशसा करने वाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते है, जो सत्सगतिमे रहने वाले नही होते है उन्हे वैसा करनेकी प्रेरणा करता है। जो दूसरे भिक्षु सत्सगतिमे रहने वाले होते है, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशसा करने वाला होता है। सारिपुत्र! इस प्रकार जो कुछ मैंने सक्षेपमें कहा, उसका तू ने विस्तारसे अर्थ जान लिया।

भिक्षुओ, जिसमे ये सात गुण हो, ऐसे मित्रकी सगति करनी चाहिये। कौन से सात? जो कठिनतासे दी जा सकती है, वह वस्तु भी देता है, जो कठिनतासे किया जा सकता है, वह काम भी करता है, जो कठिनतासे सहन की जा सकती है, ऐसी बात भी सहन करता है, जो अपने रहस्य की बात है वह भी प्रकट कर देता है, जो उसका रहस्य है, उसे छिपा कर रखता है, आपत्ति पडने पर साथ नही छोडता तथा निर्धन हो जानेकी अवस्था मे भी अवहेलना नही करता। भिक्षुओ, जिसमे ये सात गुण हो, ऐसे मित्रकी सगति करनी चाहिये।

दुद्द ददाति मित्तो, दुक्कर चा पि कुब्बति।
अथोपिस्स दुरुत्तानि, खमति दुक्खमानि च॥
गुय्ह च तस्स अक्खाति, गुय्हस्स परिगूहति।
आपदासु न जहाति, खीणेन नातिमञ्ञति॥
यम्हि एतानि ठानानि, सविज्जन्तीध पुग्गले।
सो मित्तो मित्तकामेन, भजितब्बो तथाविधो॥

[जो (वस्तु) कठिनाईसे दी जा सकती है, वह देता है, जो (कार्य) कठिनाईसे किया जा सकता है, वह करता है, जो असह्य दुरुक्त वचन होते है, उन्हे भी सहन करता है, जो (अपना) रहस्य होता है, वह भी उस पर प्रकट कर देता है, जो उसका रहस्य है, उसे छिपा कर रखता है, आपत्ति पडने पर साथ नही छोडता तथा निर्धन हो जाने पर भी अवहेलना नही करता—जिस व्यक्तिमें ये सात गुण हो, ऐसे मित्रकी सगति करनी चाहिये।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात गुण हो, उसी मित्र भिक्षुकी सगतिमें रहना चाहिये, ऐसे ही मित्र भिक्षुकी सेवामें रहना चाहिये, भले ही उसकी ओरसे उपेक्षित (=पनुज्जमान) ही हो। कौनसे सात गुण? प्रिय होता है, अनुकूल होता है, गौरव का भाजन होता है, पूज्य होता है, वक्ता होता है, वचन-क्षम होता है, गम्भीर बातका करने वाला होता है तथा अनुचित रास्ते पर नही डालता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये

सात गुण हों, उसी मित्र भिक्षुकी संगतिमें रहना चाहिये, भले ही उसकी ओरसे उपेक्षित (=पनुज्जमान) भी हो।

पियो गरु भावनीयो, वत्ता च वचनक्खमो।
गम्भीरं च कथं कत्ता, नो चट्ठाने नियोजको॥
यस्मिं एतानि ठानानि, संविज्जन्तीध पुग्गले,
सो मित्तो मित्तकामेन, अत्थकामानुकम्पतो।
अपि नासियमानेन, भजितब्बो, तथाविधो॥

[जो प्रिय हो, जो गौरवार्ह हो, जो पूज्य हो, जो वक्ता हो, जो वचन-क्षम हो, जो गंभीर बात करनेवाला हो और जो अनुचित मार्ग न दिखाने वाला हो— जिस भिक्षुमें ये गुण हों, ऐसा हितचिन्तक भिक्षु ही, अपना हित चाहने वाले भिक्षु द्वारा अपना मित्र बनाया जाना चाहिये, भले ही वह उसे दण्ड-देने वाला हो।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण होते हैं वह अचिरकालमें ही चारो ज्ञानों (पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करेगा। कौनसे सात गुण? भिक्षुओ, वह भिक्षु अपने चित्तकी लीनताको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त लीन है, वह भिक्षु भीतरी संक्षेपको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त भीतरी कारणसे संक्षिप्त है, वह भिक्षु, बाह्य विक्षेपको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त बाह्य कारणसे विक्षिप्त है; उसकी जानकारीमें वेदनाओं की उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है, उसकी जानकारी में संज्ञाओंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है; उसकी जानकारीमें वितर्कोंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है, उसने अपनी प्रज्ञासे अनुकूल-प्रतिकूल, बढ़िया-घटिया, कृष्ण-शुक्ल सप्रतिभाग धर्मों (=चित्तके विषयों) के निमित्तों (=चित्तके ध्यानके आधार) को भली प्रकार ग्रहण किया होता है, मनमें स्थान दिया होता है, अच्छी तरह धारण किया होता है तथा अच्छी तरह बींधा होता है, भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण होते हैं, वह अचिरकालमें ही चारों ज्ञानों (पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर, विहार करता है।

भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात गुण हैं, जिनके कारण सारिपुत्र चारो ज्ञानों (=पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। कौन से सात गुण? भिक्षुओ, सारिपुत्र अपने चित्तकी लीनताको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त लीन है, सारिपुत्र भीतरी विक्षेपको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त भीतरी कारणसे संक्षिप्त है, सारिपुत्र बाह्य विक्षेपको यथार्थ-रूपसे जानता

है कि उसका चित्त बाह्य कारणसे विक्षिप्त है ; सारिपुत्रकी जानकारी मे वेदनाओकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है , सारिपुत्रकी जानकारीमे सज्ञाओकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है, सारिपुत्रकी जानकारीमे वितर्कोकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है, सारिपुत्रने अपनी प्रज्ञासे अनुकूल-प्रतिकूल, वढिया-घटिया, कृष्ण-शुक्ल सप्रतिभाग धर्मो (=चित्तके विषयो) के निमित्त (=चित्तके ध्यानके आधार) को भली प्रकार ग्रहण किया है, मनमें स्थान दिया है, अच्छी तरह धारण किया है तथा अच्छी तरह वीधा है। भिक्षुओ, सारिपुत्रमे ये सात गुण है, जिनके कारण सारिपुत्र चारो ज्ञानो (पटिसम्भिदाओ) को स्वय जानकर, साक्षात् कर प्राप्तकर विहार करता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात वाते होती हैं, चित्त उस भिक्षुके वशमें रहता हैं, वह भिक्षु चित्तके वशमे नही रहता। कौनसी सात वातें ? भिक्षुओ, भिक्षु समाधि-कुशल होता है, समाधि लगानेमे कुशल होता है, समाधिकी स्थितिमें रहनेमे कुशल होता है, समाधि-अवस्थासे उठनेमें कुशल होता है, समाधिका सुफल (=कल्याण) प्राप्त करनेमे कुशल होता है, समाधि अवस्थाके आसपास रहनेमें कुशल होता हैं, समाधि सम्वन्धी अभिनीहार (=पृथक् होना) में कुशल होता हैं। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात वाते होती हैं, चित्त उस भिक्षुके वशमे रहता है, वह भिक्षु चित्तके वशमें नही रहता।

भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात वाते है जिनके कारण चित्त उसके वशमें रहता हैं, वह चित्तके वशमें नही रहता। कौनसी सात वाते ? भिक्षुओ, सारिपुत्र समाधि-कुशल है, समाधि लगानेमे कुशल है, समाधिकी स्थितिमे रहनेमें कुशल है, समाधि-अवस्थासे उठनेमें कुशल है, समाधिका सुफल प्राप्त करनेमे कुशल है, समाधि अवस्थाके आसपास रहनेमें कुशल है, तथा समाधि सम्वन्धी अभिनीहारमें कुशल है। भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात वाते है, जिनके कारण चित्त उसके वशमें रहता है, वह चित्तके वशमें नही रहता।

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र पूर्वाह्नमें (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए। तव आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह वात आई—श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्ब से है। तव तक मैं जहाँ दूसरे तैर्थिको (=मत वालो)का परिव्राजक— आराम है, वहाँ ही चलूँ। तव आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ अन्य तैर्थिकोका परिव्राजक-आराम था वहाँ पहुँचे। जाकर उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोसे कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ

चुकने पर एक ओर बैठे। उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए अन्य तैर्थिक परि-व्राजकोमें यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो, जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्यवास करता है, उसे विशिष्ट (=निद्दस) कहा जा सकता है।

आयुष्मान् सारिपुत्रने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठकर चले गये भगवान्से इस कथनका स्पष्टीकरण जानूंगा।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र श्रावस्तीमें भिक्षाटन कर, भिक्षा ग्रहण करनेके अनन्तर जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे यह कहा —

"भन्ते! मैं पूर्वाह्नमे (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले, श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुआ। भन्ते! उस समय मेरे मनमें यह हुआ—श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्बसे है। तबतक मैं जहाँ दूसरे तैर्थिको (मत वालो) का परिव्राजक—आराम है वहाँ ही चलूं। तब भन्ते! जहाँ अन्य तैर्थिकोका परिव्राजक-आराम था, वहाँ गया। जाकर उन अन्य तैर्थिक परि-व्राजकोसे कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने पर एक ओर बैठा। भन्ते! उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए, अन्य तैर्थिक-परिव्राजकोमे यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो! जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-वास करता है, उसे विशिष्ट (=निद्दस)कहा जा जाता है। भन्ते! मैंने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठकर चला आया कि भगवानसे इस कथनका स्पष्टीकरण जानूंगा। भन्ते! क्या बुद्ध शासन (=धर्म-विनय)में केवल वर्ष-गणना से किसी भिक्षुको विशिष्ट माना जा सकता है?"

"सारिपुत्र! इस बुद्ध शासन (=धर्म-विनय) मे केवल वर्ष-गणनासे किसी भिक्षुको विशिष्ट नही घोषित किया जा सकता। सारिपुत्र! ये सात विशेषताओं के लक्षण मैंने स्वय जानकर, साक्षात् कर घोषित किये है। कौनसे सात? सारिपुत्र! भिक्षु शील ग्रहण करनेमे अत्यन्त उत्साही होता है और भविष्य में शिक्षा ग्रहण करनेमें भी उत्साह-युक्त, धर्म-सन्तति (=धर्म-परम्परा) के प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, और भविष्यमें भी धर्म-सन्ततिके प्रति उत्साह-युक्त, इच्छा (=तृष्णा) का मर्दन करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, तथा भविष्यमे भी इच्छाका मर्दन करनेमें उत्साह-युक्त; एकान्त-चिन्तन के प्रति अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी एकान्त-

चिन्तनके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त; प्रयत्नके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमे भी प्रयत्न करनेके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त, स्मृति-विवेकके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी स्मृति-विवेकके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त, और दृष्टि द्वारा बींधनेके प्रति भी अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी दृष्टि द्वारा बींधनेके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त। सारिपुत्र! ये सात विशेषताओके लक्षण मैंने स्वंय जानकर, साक्षात् कर घोषित किये है। सारिपुत्र! इन सात विशेषताओके लक्षणोसे युक्त भिक्षु यदि बारह वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है, यदि चौबीस वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जाता सकता है, यदि छत्तीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है; यदि अडतालीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् कौसम्बीके घोषितारामसे विहार करते थे। तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्नमे (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले श्रावस्तीमे भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए। तब आयुष्मान् आनन्दके मनमें यह बात आई—कौसम्बीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्बसे है। तब तक मैं जहाँ दूसरे तैर्थिकोंका परिव्राजक-आराम है, वहाँ ही चलूं। तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ अन्य तैर्थिकोंका परिव्राजक-आराम था, वहाँ पहुँचे। जाकर अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंसे कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेपर एक ओर बैठे। उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए अन्य तैर्थिक परिव्राजकोमें यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो! जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-वास करता है, उसे विशिष्ट (=निद्दस) कहा जा सकता है।

आयुष्मान् आनन्दने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया, न समर्थन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठ कर चले गये—भगवान् से इस कथनका स्पष्टीकरण जानूँगा।

तब आयुष्मान् आनन्द कौसम्बीमें भिक्षाटन कर, भिक्षा ग्रहण करनेके अनन्तर, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्दने भगवान् से यह कहा—

"भन्ते! मैं पूर्वाह्नमें (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले, कौसम्बीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुआ। भन्ते! उस समय मेरे मनमें यह हुआ—कौसम्बीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्बसे है, तबतक मैं जहाँ दूसरे

तैर्थिकोंका परिव्राजक-आराम है, वहाँ ही गया। तब भन्ते! कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने पर एक ओर बैठा। भन्ते! उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंमें यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो! जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-वास करता है, उसे विशिष्ट (=निदस) कहा जा सकता है। भन्ते! मैंने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंके कथनका न समर्थन किया न खण्डन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठकर चला आया कि भगवानसे इस कथन का स्पष्टीकरण जानूंगा। भन्ते! क्या बुद्ध शासन (=धर्म-विनयमें) में केवल वर्ष-गणना से किसी भिक्षुको विशिष्ट माना जा सकता है?

आनन्द! इस बुद्ध-शासन (=धर्म-विनयमें) केवल वर्ष-गणनासे किसी भिक्षुको विशिष्ट नहीं घोषित किया जा सकता। आनन्द! विशेषताओंके ये सात लक्षण मैंने स्वयं जानकर, साक्षात् कर, घोषित किये हैं। कौनसे सात? आनन्द! भिक्षु श्रद्धावान् होता है, लज्जाशील होता है, (पाप-) भीरु होता है, बहुश्रुत होता है, प्रयत्नशील होता है, स्मृतिमान होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। आनन्द! विशेषताके ये सात लक्षण मैंने स्वयं जानकर, साक्षात् कर, घोषित किये हैं। आनन्द! विशेषताके इन सात लक्षणोंसे युक्त भिक्षु यदि बारह वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है, यदि चौबीस वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है; यदि छत्तीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है, यदि अड़तालीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है।

(५) महायज्ञ वर्ग

भिक्षुओ, ये सात विज्ञान[1] (=चित्त) की स्थितियाँ हैं। कौन सी सात? भिक्षुओ, ऐसे प्राणी हैं, जिनके नाना तरहके आकार-प्रकार तथा नाना तरहकी संज्ञायें होती हैं, जैसे मनुष्य, कुछ देवता तथा कुछ प्रेत। यह पहली विज्ञानकी स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जिनके नाना तरहके आकार-प्रकार किन्तु एक ही तरहकी संज्ञा होती है, जैसे प्रथम ध्यानसे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मकायिक देवता। यह दूसरी विज्ञान-स्थिति है।

१—विज्ञान = प्रतिसन्धि-विज्ञान।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जिनके एक ही तरहके आकार-प्रकार होते हैं, किन्तु नाना तरह की सज्ञा होती है जैसे आभस्वर देवता। यह तीसरी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जिनके एक ही तरहके आकार-प्रकार और एक ही तरहकी सज्ञा होती है, जैसे शुभ-कृष्ण देवता। यह चौथी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जो सभी रूप सज्ञाओका अतिक्रमण कर, प्रतिघ-सज्ञाओके अन्तर्धान हो जानेपर, नानात्व-सज्ञाके न होनेपर 'आकाश अनन्त है' इस आकाशानञ्चायतन स्थितिको प्राप्त होते है। यह पाँचवी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते है, जो सभी आकाशानञ्चायतनका अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है' इस विज्ञानञ्चायतन-स्थितिको प्राप्त होते हैं। यह छठी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते है, जो सभी 'विज्ञानञ्चायतन' का अतिक्रमण कर 'कुछ नही है' इस 'अकिञ्चञ्ञायतन' स्थितिको प्राप्त होते है। यह सातवी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ये सात विज्ञान-स्थितियाँ है।

भिक्षुओ, ये सात समाधिके सहायक-कारण (=परिप्कार) है। कौनसे सात? सम्यक् दृष्टि, सम्यक् सकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम तथा सम्यक् स्मृति। भिक्षुओ, जो चित्तकी एकाग्रता इन सात अगोसे युक्त होती है, इन सात अगोसे घिरी होती है, भिक्षुओ, इसे ही सउपनिशय सपरिप्कार सम्यक् समाधि कहते है।

भिक्षुओ, ये सात अग्नियाँ है। कौन सी सात? राग-अग्नि, द्वेष-अग्नि, मोह-अग्नि, सत्कार-भाजन-अग्नि, गृहपति-अग्नि, दक्षिणार्ह-अग्नि तथा काष्ठ अग्नि। भिक्षुओ, ये सात अग्नियाँ है।

उस समय उद्गत-शरीर ब्राह्मणके यहाँ महायज्ञ होने वाला था। यज्ञके निमित्त पाँच सौ वृषभ यूपके समीप लाये गये थे, यज्ञके निमित्त पाँच-सौ बछडे यूपके समीप-लाये गये थे, यज्ञके निमित्त पाँच सौ बछडियाँ यूपके समीप लाई गई थी, यज्ञके निमित्त पाँच सौ बकरे यूपके समीप लाये गये थे तथा यज्ञके निमित्त पाँच सौ मेढे यूपके समीप लाये गये थे। तब उद्गत-शरीर ब्राह्मण जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवानका कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने पर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—

"हे गौतम! मैंने सुना है कि (यज्ञ के लिये) अग्नि का लाना और यूपका गडवाना (उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

"हे ब्राह्मण! मैंने भी सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गडवाना (=उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

दूसरी बार और तीसरी बार भी उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—

"हे गौतम! मैंने सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गडवाना (=उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

"ब्राह्मण! मैंने भी यह सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गडवाना (=उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

"हे गौतम! तो आपका और हमारा कथन पूरी तरह एक दूसरेसे मेल खाता है।"

ऐसा कहने पर आयुष्मान् आनन्दने उद्गत-शरीर ब्राह्मणसे यह कहा—हे ब्राह्मण! तथागतोंसे इस प्रकार प्रश्न नहीं करना चाहिये कि "हे गौतम! मैंने सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गडवाना (=उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है। "हे ब्राह्मण! तथागतोंसे इस प्रकार याचना करनी चाहिये— "भन्ते! मैं (यज्ञके लिये) अग्नि लाना चाहता हूँ, यूप गडवाना (=उठवाना) चाहता हूँ। भन्ते! भगवान्! मुझे उपदेश दें। भन्ते! भगवान्! आप मुझे शिक्षा दें जो दीर्घ काल तक मेरे हित और सुखके लिये हो।"

तब उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवानसे यह कहा "भन्ते! मैं (यज्ञके लिये) अग्नि लाना चाहता हूँ, यूप गडवाना (=उठवाना) चाहता हूँ। भन्ते! भगवान्! मुझे उपदेश दें। भन्ते! भगवान्! आप मुझे शिक्षा दे जो दीर्घ काल तक मेरे हित और सुखके लिये हो।"

"ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) आग लाने वाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व तीन शस्त्र उठाता है, जो अकुशल (=अशुभ) होते है, जो दुःखदायी होते हैं तथा जिनका विपाक दुःख होता है,। कौनसे तीन शस्त्र? शारीरिक शस्त्र, वाणीका शस्त्र तथा मनका शस्त्र। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला यूप गडवाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस प्रकारके संकल्पको मनमें जगह देता है—'यज्ञके लिये इतने बैल (वृषभ) मारे जायें, यज्ञके लिये इतने बछडे मारे जाये, यज्ञके लिये इतनी बछडियाँ मारी जायें, यज्ञके लिये इतने बकरे

मारे जाये, यज्ञके लिये, इतने मेढे मारे जायें। वह 'पुण्य करने जाकर' अपुण्य करता करता है, 'शुभ-कर्म (=कुशल कर्म) करने जाकर' अशुभ-कर्म करता है, सुगति (=स्वर्ग) का मार्ग खोजने जाकर दुर्गति (=नरक)का मार्ग खोजता है। ब्राह्मण (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस पहले मनके शस्त्रको उठाता है, जो अकुशल (=अशुभ)होता है, जो दु खदायी होता है तथा जिसका विपाक दु ख होता है।

ब्राह्मण! फिर (यज्ञके लिये) अग्नि लानेवाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस प्रकारकी वाणी बोलता है— "यज्ञके लिये इतने बैल (=वृषभ)मारे जाये, यज्ञके लिये इतने बछडे मारे जाये, यज्ञके लिये इतनी बछडियाँ मारी जायें, यज्ञके लिये इतने बकरे मारे जायें, यज्ञके लिये इतने मेढे मारे जाये।' वह 'पुण्य करने जाकर' अपुण्य करता है, 'शुभ कर्म (=कुशल कर्म) करने जाकर' अशुभ कर्म करता है, सुगति (=स्वर्ग) का मार्ग खोजने जाकर दुर्गति (=नरक) का मार्ग खोजता है। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये)अग्नि लाने वाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला, यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस दूसरे वाणीके शस्त्रको उठाता है, जो अकुशल (=अशुभ) होता है, जो दु खदायी होता है तथा जिसका विपाक दु ख होता है।

ब्राह्मण! फिर (यज्ञके लिये) अग्नि लानेवाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व, प्रथम स्वय ही यज्ञके लिये बैलो (=वृषभो) को मारता है, प्रथम स्वय ही यज्ञके लिये बछडोको मारता है, प्रथम स्वय ही यज्ञके लिये बछडियोको मारता है, प्रथम स्वय ही यज्ञके लिये बकरोको मारता है, प्रथम स्वय ही यज्ञके लिये मेढोको मारता है। वह 'पुण्य करने जाकर' अपुण्य करता है, 'शुभ कर्म' करने जाकर अशुभ-कर्म करता है, सुगति (=स्वर्ग) का मार्ग खोजने जाकर दुर्गति (=नरक) का मार्ग खोजता है। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला, यज्ञ करनेसे भी पूर्व, इस तीसरे शारीरिक शस्त्रको उठाता है, जो अकुशल होता है, जो दु खदायी होता है तथा जिसका विपाक दु:ख होता है। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) आग लानेवाला, यूप गडवाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व तीन शस्त्र उठाता है, जो अकुशल होते है, जो दु खदायी होते है तथा जिनका विपाक दु ख होता है।

ब्राह्मण! इन तीन अग्नियोका त्याग कर देना चाहिए, दूर कर देना चाहिए, इनका सेवन नही करना चाहिए। कौन-सी तीन अग्नियोका? राग-अग्निका, द्वेष-अग्निका तथा मोह-अग्निका।

ब्राह्मण! राग-अग्निको क्यों त्याग देना चाहिये, क्यों दूर कर देना चाहिये, क्यों इसका सेवन नहीं करना चाहिये? ब्राह्मण! जो रागमें अनुरक्त रहता है, जो रागके वशीभूत रहता है, वह शारीरिक दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अपायको (=दुर्गति) प्राप्त होता है तथा नरकमें जन्म ग्रहण करता है। इसलिए इस राग-अग्निको त्याग देना चाहिये, दूर कर देना चाहिये, इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

ब्राह्मण! द्वेष-अग्निको क्यों त्याग देना चाहिये, क्यों दूर कर देना चाहिये, क्यों इसका सेवन नहीं करना चाहिये? ब्राह्मण! जो द्वेषसे दूषित रहता है, जो द्वेषके वशीभूत रहता है, वह शारीरिक दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अपायको (=दुर्गति) प्राप्त होता है तथा नरकमें जन्म ग्रहण करता है। इसलिये इस द्वेष-अग्निको त्याग देना चाहिए, दूर कर देना चाहिये, इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

ब्राह्मण! मोह-अग्निको क्यों त्याग देना चाहिये, क्यों दूर कर देना चाहिये, क्यों इसका सेवन नहीं करना चाहिये? ब्राह्मण! जो मोहसे मूढ रहता है, जो मोहके वशीभूत रहता है, वह शारीरिक दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अपायको (=दुर्गति) प्राप्त होता है तथा नरकमें जन्म ग्रहण करता है। इसलिये इस द्वेष अग्निको त्याग देना चाहिए, दूर कर देना चाहिए, इसका सेवन नहीं करना चाहिये।

ब्राह्मण! तीन अग्नियाँ है ऐसी है जिनको सतत करना चाहिये, जिनका गौरव करना चाहिये, जिन्हें मानना चाहिये, जिन्हे पूजना चाहिये तथा जिनका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये। कौन-सी तीन? सत्कार-भाजन अग्नि, गृह-पति-अग्नि तथा दक्षिणार्ह-अग्नि।

ब्राह्मण! सत्कार-भाजन अग्नि कौन-सी है? ब्राह्मण! जो किसीके माता-पिता होते है, यही सत्कार-भाजन अग्नि है। ऐसा क्यों! ब्राह्मण! इसी आगसे आता हुआ, उत्पन्न होता हुआ, इसलिये इस सत्कार-भाजन अग्निका सत्कार करना चाहिये, गौरव करना चाहिये, मानना चाहिये, पूजा करनी चाहिये तथा इसका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये।

ब्राह्मण ! गृहपति-अग्नि कौन-सी है ? हे ब्राह्मण ! जो किसीके पुत्र, स्त्री, दास, नौकर-चाकर होते है, हे ब्राह्मण ! यही गृहपति-अग्नि है। इस लिये गृहपति-अग्निका सत्कार करना चाहिये, गौरव करना चाहिये, मानना चाहिये, पूजा करनी चाहिये तथा इसका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये।

ब्राह्मण ! दक्षिणार्ह—अग्नि कौन-सी होती है ? ब्राह्मण ! ऐसे श्रमण-ब्राह्मण होते है, जो पर-प्रवादो (= दूसरे विरोधी मतो) से विरत होते है, क्षमा तथा विनम्रतासे युक्त, अपने-आप अपना दमन करनेवाले, अपने-आप अपना शमन करनेवाले, अपने-आप परिनिर्वाण (अग्नि-त्रयके शमन) को प्राप्त करने वाले होते है, ब्राह्मण ! ये ही दक्षिणार्ह-अग्नि कहलाते है। इसलिये इस दक्षिणार्ह—अग्निका सत्कार करना चाहिये, गौरव करना चाहिये, मानना चाहिये, पूजा करनी चाहिये तथा इसका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये।

और हे ब्राह्मण ! यह जो काष्ठाग्नि है, इसे समय-समयपर प्रज्वलित करना होता है, समय-समयपर इसकी ओरसे उपेक्षावान् होता है, समय-समयपर बुझाना होता है, समय-समयपर सँभाल कर रखना होता है।

ऐसा कहनेपर उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—हे गौतम ! बहुत सुन्दर है। हे गौतम ! बहुत सुन्दर है हे गौतम ! अबसे प्राण रहने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक समझे। हे गौतम ! मै इन पाँच सौ बैलो (= वृषभो) को छोडता हूँ, इन्हे जीवन-दान देता हूँ। मै इन पाँच सौ बछडोको छोडता हूँ, इन्हे जीवन-दान देता हूँ। मै इन पाँच सौ बछडियोको छोडता हूँ, इन्हे जीवन-दान देता हूँ। मै इन पाँच सौ बकरोको छोडता हूँ, इन्हे जीवन-दान देता हूँ। इन पाँच सौ मेढोको छोडता हूँ, इन्हे जीवन-दान देता हूँ। ये हरी-हरी घास खाये। ये शीतल जल पीये ! इन्हे ठण्डी-ठण्डी हवा लगे।

भिक्षुओ, ये सात सज्ञाये है, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृतकी प्राप्ति होती है। कौन-सी सात ? अशुभ-सज्ञा (= असौन्दर्य-भावना), मरण-सज्ञा, आहारके विषयमे प्रतिकूल-सज्ञा, सभी लोकोके प्रति अनासक्तिकी सज्ञा, अनित्य-सज्ञा, अनित्यके प्रति दुःख-सज्ञा, जो दुःखद है उसके अनात्म होनेकी सज्ञा। भिक्षुओ, ये सात सज्ञाये है, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है तथा अमृत की प्राप्ति होती है।

भिक्षुओ, ये सात सज्ञायें है, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ-परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, तथा अमृतकी प्राप्ति होती है। कौन-सी सात? अशुभ-सज्ञा (=असौन्दर्य्य–भावना) मरण-सज्ञा, आहारके विषयमें प्रतिकूल-सज्ञा, सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी सज्ञा अनित्य-सज्ञा, अनित्य के प्रति दुःख-सज्ञा, जो दुःख है उसके अनात्म होनेकी सज्ञा। भिक्षुओ, ये सात सज्ञायें है, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होना है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृतकी प्राप्ति होती है।

"भिक्षुओ, अशुभ-सज्ञाकी भावना (=अभ्यास) करनेसे, वृद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृत की प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अशुभ-सज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमे रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त मैथुनकी इच्छासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नही रहता, या तो मैथुनकी ओर से उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है। भिक्षुओ, जैसे मुर्गीके परको या नहारुददुल (?) को आग पर डाला जाय, तो वह सिकुड जाता है, सिमट जाता है, उलट जाता है, फैलता नही है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अशुभ-सज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त मैथुनकी इच्छासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो मैथुनकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

भिक्षुओ, यदि अशुभ-सज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमे रमण करनेवाले भिक्षुका मन भी मैथुन-धर्मकी ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिए कि मैंने अशुभ-सज्ञाकी भावना (=अभ्यास) नही किया, जैसा मै पहले था, वैसा ही अब हूँ, मुझे भावनासे प्राप्त होनेवाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि अशुभ-सज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुका मन मैथुनकी इच्छासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नही रहता, या तो मैथुनकी इच्छासे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने अशुभ-सज्ञाकी भली प्रकार भावना की, जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है।

भिक्षुओ, अशुभ-सञ्ञाकी भावना (=अभ्यास) करनेसे, वृद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

'भिक्षुओ, मरण-सञ्ञाकी भावना (=अभ्यास) करनेसे, वद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृत की प्राप्ति होती है,'— यह जो कहा गया, यह किस अर्थमे कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त मरण-सञ्ञासे परिचित होता है, प्राय उसीमे रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त जीवनकी तृष्णा (=जीवित-निकन्ति) से प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, वदल जाता है, अनुकूल नही रहता, या तो जीवनकी तृष्णाकी ओरमे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है। भिक्षुओ, जैसे मुर्गीके परको या नहारु दद्दुल (?)को आग पर डाला जाय, तो वह सिकुड जाता है, सिमट जाता है, उलट जाता है, फैलता, नही है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त मरण-सञ्ञासे परिचित होता है, प्राय उसीमे रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त जीवनकी तृष्णामे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, वदल जाता है, अनुकूल नही रहता, या तो जीवन-तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है, या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

भिक्षुओ, यदि मरण-सञ्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमे रमण करने वाले भिक्षुका मन भी जीवनकी तृष्णा की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने मरण-सञ्ञा का अभ्यास नही किया, जैसा मै पहले था, वैसा ही अव हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होनेवाला वल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि मरण-सञ्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमे रमण करने वाले भिक्षुका मन जीवनकी तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, वदल जाता है, अनुकूल नही रहता, या तो जीवनकी तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने मरण-सञ्ञा की भली प्रकार भावना की, जैसा मै पहले था, वैसा अव नही हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला वल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, मरण सञ्ञाकी भावना करनेसे, वृद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृत की प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, आहारके विषयमे प्रतिकूल सञ्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा

गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त आहारके विषयमें प्रतिकूल-सज्ञा से परिचित होता है, प्राय उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त रस-तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है . उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है। भिक्षुओ, जैसे मुर्गेके परको या नहारु दद्दुल को आग पर डाला जाय, तो वह सिकुड जाता है, सिमट जाता है, उलट जाता है, फैलता नहीं है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त आहारके विषयमें प्रतिकूल सज्ञासे परिचित होता है, प्राय उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त रस-तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नही रहता; या तो रस तृष्णाकी ओर से उपेक्षावान् हो जाता है, या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

"भिक्षुओ, यदि आहारके विषयमे प्रतिकूल सज्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमे रमण करने वाले भिक्षुका मन भी रस-तृष्णा की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ! उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने आहारके विषयमें प्रतिकूल सज्ञाका अभ्यास नहीं किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि आहारके विषयमें प्रतिकूल सज्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन रस-तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नही रहता , या तो रस-तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो रस-तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने आहारके विषयमें प्रतिकूल-सज्ञा की भली प्रकार भावना की, जैसा मैं पहले था, वैसा अब नही हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, आहारके विषयमें प्रतिकूल सज्ञाकी भावना करनेसे, महान फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी की सज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी सज्ञा से परिचित होता है, प्राय. उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त चित्र-विचित्र लोकसे प्रतिकूल हो

जाता है उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है. .. भिक्षुओ जैसे. फैलता नही है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त सभी लोकोके प्रति अनासक्तिकी सज्ञासे परिचित होता है, प्राय उसीमे रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त चित्र-विचित्र लोकसे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नही रहता, या तो चित्र-विचित्र लोककी ओर से उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

"भिक्षुओ, यदि सभी लोकोके प्रति अनासक्तिकी सज्ञा के अभ्यासी, प्राय: उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन भी लोकोके प्रति आसक्ति की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने लोकोके प्रति अनासक्ति की सज्ञाका अभ्यास नही किया। जैसा मै पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला वल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि सभी लोकोके प्रति अनासक्ति की सज्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुका मन चित्र-विचित्र लोकसे प्रतिकूल हो जाता है . . .उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ! उस भिक्षुको यही समझना चाहिये, कि मैंने लोकोके प्रति अनासक्तिकी सज्ञाकी भली प्रकार भावना की है। जैसा मै पहले था, वैसा अव नही हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला वल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। भिक्षुओ, सभी लोकोके प्रति अनासक्तिकी सज्ञा फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया।

'भिक्षुओ, अनित्य-सज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमेकहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अनित्य सज्ञासे परिचित होता है, प्राय उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त लाभ-सत्कार-प्रशसासे प्रतिकूल हो जाता है उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है भिक्षुओ जैसे फैलता नही है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अनित्य-सज्ञासे परिचित होता है, प्राय उसीमे रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त लाभ-सत्कार-प्रशसासे प्रतिकूल हो जाता है उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

"भिक्षुओ, यदि अनित्य सज्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुका मन भी लाभ-सत्कार-प्रशसा की ओर झकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो

भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने अनित्य-सज्ञाका अभ्यास नही किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होनेवाला वल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि अनित्य सज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन लाभ-सत्कार-प्रशसासे प्रतिकूल हो जाता है उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने अनित्य-सज्ञा की भली प्रकार भावना की है। जैसा मैं पहले था, वैसा अब नही हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला वल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, अनित्य सज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थ में कहा गया।

भिक्षुओ, जो अनित्य है उसके प्रति दुःख-सज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमे कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त जो अनित्य है उसके प्रति दुःख-सज्ञासे परिचित होता है जो, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुके चित्तमें आलस्यके प्रति, काहिलीके प्रति, आश्वस्त भावके प्रति, प्रमादके प्रति, अननुयोग (= योगाभ्यासमे न लगने) के प्रति तथा अप्रत्यवेक्षणा (= विचार न करने) के प्रति तीव्र भय की भावना जाग्रत हो जाती है, जैसे वधिकके द्वारा सिरपर तलवार उठी होने पर।

भिक्षुओ, यदि जो अनित्य है उसके प्रति दुःख सज्ञा के अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुके मनमें भी आलस्यके प्रति, काहिलीके प्रति, आश्वस्त भावके प्रति, प्रमादके प्रति, अननुयोग (= योगाभ्यास में न लगने) के प्रति, तथा अप्रत्यवेक्षणा (= विचार न करने) के प्रति तीव्र भयकी भावना जाग्रत नही होती, जैसी वधिकके द्वारा सिर पर तलवार उठी होने पर, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो अनित्य है, उसके प्रति दुःख-सज्ञाका अभ्यास नही किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला वल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि जो अनित्य है, उसके प्रति दुःख सज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुके मनमें आलस्यके प्रति, काहिलीके प्रति, आश्वस्त भावके प्रति, प्रमादके प्रति, अननुयोग (= योगाभ्यासमें न लगने) के प्रति तथा अप्रत्यवेक्षणा (= विचार न करने) के प्रति तीव्र भयकी भावना जाग्रत होती

हैं, जैसी वधिकके द्वारा सिरपर तलवार उठी होनेपर, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैं ने जो अनित्य है उसके प्रति दु ख-सज्ञाकी भली प्रकार भावना की है। जैसा मैं पहले था, वैसा अब नही हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, जो अनित्य है, उसके प्रति दु ख-सज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमे कहा गया।

भिक्षुओ, जो दु ख है उसके प्रति अनात्म-सज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमे निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'— यह जो कहा गया, यह किस अर्थमे कहा गया ? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त जो दु ख है उसके प्रति अनात्म-सज्ञासे परिचित होता है, जो प्राय उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुके चित्तसे इस सविज्ञान (=चेतना युक्त) शरीरके प्रति तथा सभी निमित्तो (=मनके विषयो)के प्रति जो अहकार ('मैं-मेरा की') भावना होती है, उससे उसका चित्त रहित होता है, उसका चित्त विधा (नानात्व ?) को लाँघ गया होता है, शान्त होता है, विमुक्त होता है।

भिक्षुओ, यदि जो दु ख है उसके प्रति अनात्म-सज्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमे रमण करनेवाले भिक्षुके चित्तसे उस सविज्ञान (=चेतनायुक्त) शरीरके प्रति तथा सभी निमित्तो (=मनके विषयो) के प्रति जो अहकार ('मैं-मेरा') की भावना होती है, उससे उसका चित्त रहित नही होता, उसका चित्त विधा (=नानात्व) को लाँघ नही गया होता, शान्त नही होता, विमुक्त नही होता, तो भिक्षुओ! उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो दु ख है उसके प्रति अनात्म-सज्ञा कर अभ्यास नही किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि जो दु ख है, उसके प्रति अनात्म-सज्ञाके अभ्यासी, प्राय उसीमें रमण करने वाले भिक्षुके चित्तसे उस सविज्ञान (=चेतना युक्त) शरीरके प्रति तथा सभी निमित्तो (=मनके विषयो)के प्रति जो अहकार('मैं मेरा')की भावना होती है, उससे उसका उचित रहित होता है, उसका चित्त विधा (नानत्व) ?) को लाँघ गया होता है, शान्त होता है, विमुक्त होता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो दु ख है उसके प्रति अनात्म सज्ञाका भली प्रकार अभ्यास किया है।

जैसा मैं पहले था, अब वैसा नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, जो दुःख है, उसके प्रति अनात्म-सज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, ये सात सज्ञाये है, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान फल होता है, महान् शुभ-परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृतकी प्राप्ति होती है।

तब जाणुस्सोणि ब्राह्मण जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान से कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए जाणुस्सोणि ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—"हे गौतम! आप भी अपने ब्रह्मचारी होनेकी घोषणा करते हैं?"

"ब्राह्मण! यदि किसीके बारेमें किसीको ठीक-ठीक यह कहना हो कि वह अखण्डित, छिद्र-रहित, धब्बे रहित, दाग-रहित, परिपूर्ण, परिशुद्ध, ब्रह्मचर्यका आचरण करता है, तो वह मेरे ही बारेमे ठीक ठीक यह कह सकता है। ब्राह्मण! मैं अखण्डित, छिद्र-रहित, धब्बे-रहित, दाग-रहित, परिपूर्ण, परिशुद्ध, ब्रह्मचर्यका आचरण करता हूँ।"

"हे गौतम! क्या ब्रह्मचर्य भी खण्डित होता है, क्या ब्रह्मचर्यमें भी छिद्र होता है, क्या ब्रह्मचर्यमें भी धब्बा लगता है, क्या ब्रह्मचर्यमे भी दाग लगता है?"

ब्राह्मण! कोई-कोई श्रमण या ब्राह्मण अपनेको 'सम्यक् ब्रह्मचारी हूँ' कहनेके बावजूद किसी स्त्रीके साथ सहवास (=दो दोका एक होना) तो नही करते किन्तु स्त्री द्वारा उबटन लगवाना, मालिकशा-करवाना, स्नान करवाया जाना, बदन दबवाया जाना पसन्द करते हैं। वे उसका मजा लेते है, उसे चाहते है, उससे तृप्तिको प्राप्त होते है। ब्राह्मण! यह भी ब्रह्मचर्य में छेद होना है, यह भी ब्रह्मचर्य मे धब्बा लगना है, यह भी ब्रह्मचर्यमें दाग लगना है। ब्राह्मण! इसको भी कहा जाता है कि यह ब्रह्मचर्यका अशुद्ध आचरण है, यह मैथुन-चेतनासे सयुक्त है। मैं कहता हूँ कि ऐसा आचरण करने वाला जन्म, जरा, मरण, शोक, रोना पीटना, दुःख, दौर्मनस्य तथा पश्चात्तापमे मुक्त नही होता और मुक्त नही होता है (सम्पूर्ण) दुःखसे।

फिर ब्राह्मण! कोई-कोई श्रमण या ब्राह्मण अपनेको 'सम्यक् ब्रह्मचारी हूँ' कहनेके बावजूद न स्त्रीके साथ सहवास (=दो दो का एक होना) करता है, न स्त्री

द्वारा उवटन लगवाना, मालिश करवाना, स्नान करवाया जाना, वदन दववाया जाना पसन्द करता है, न उसमे मजा लेता है, न उसे चाहता है तथा न उससे तृप्ति प्राप्त करता है, किन्तु स्त्रियोके साथ मजाक करता है, खेलता है तथा मनोविनोद करता है . . । न स्त्रियोके साथ मजाक करता है, खेलता है, न मनोविनोद करता है; किन्तु स्त्रियोसे आँखसे आँख मिलाकर उनकी ओर देखता है . । न स्त्रियोसे आँख मिलाकर उनकी ओर देखता है, किन्तु दीवार या चारदीवारी की ओरसे स्त्रियोके हँसनेका, वोलनेका, गानेका अथवा रोनेका शव्द सुनता है। न दीवार या चारदीवारीकी ओरसे स्त्रियोके हँसनेका, वोलनेका, गानेका अथवा रोनेका शव्द सुनता है, किन्तु उसने स्त्रियोके साथ पहले जो हँसना, बोलना, खेलना किया होता है, उसे याद करता है । न स्त्रियोके साथ पहले जो हँसना, वोलना, खेलना किया होता है, उसे याद करता है, किन्तु दूसरे गृहपतियो या गृहपति-पुत्रोकी ओर देखता है कि वह पाँचो इन्द्रियोके भोगोको भोग रहे है । न दूसरे गृहपतियो या गृहपति पुत्रोकी ओर देखता है कि वे पाँचो इद्रियोके भोगोको भोग रहे हैं, किन्तु वह किसी-न-किसी देव-लोकपर दृष्टि लगाकर ब्रह्मचर्य-वास करता है, कि इस शील-पालन वा व्रत-पालन वा तपस्याके फलस्वरूप मै देवता होकर उत्पन्न होऊँगा वा देव पुत्र। वह उसमे मजा लेता है, वह उसे चाहता है, वह उससे तृप्ति प्राप्त करता है। ब्राह्मण! यह भी ब्रह्मचर्यमे छेद होना है, यह भी ब्रह्मचर्यमें धव्वा लगना है, यह भी ब्रह्मचर्यमे दाग लगना है। ब्राह्मण! इसको भी कहा जाता है कि यह ब्रह्मचर्यका अशुद्ध आचरण है, यह मैथुन-चेतनासे सयुक्त है। मै कहता हूँ कि ऐसा आचरण करनेवाला, जन्म-जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दु ख, दौर्मनस्य तथा पश्चातापसे मुक्त नही होता और मुक्त नही होता है (सम्पूर्ण) दु खसे।

ब्राह्मण! जवतक मैने इन सातो मैथुन-सयोगोमेसे एक को भी अपनेमें विद्यमान देखा, तवतक मैने यह घोपणा नही की कि सदेव, समार, सब्रह्म तथा श्रमण-ब्राह्मणो और देव-मनुष्योसे युक्त इस जनता (=प्रजा) में रहकर मैने सम्यक् सम्बोधि को प्रत्यक्ष कर लिया।

ब्राह्मण! जव मैने इन सातो मैथुन-सयोगोमें से एक को भी अपनेमे विद्यमान नही देखा, तव ही मैने यह घोषणा की कि सदेव, समार, सब्रह्म तथा श्रमण-ब्राह्मणोंसे और देव-मनुष्योसे युक्त इस जनता (=प्रजा) में रहकर मैने सम्यक् सम्वोधिको प्रत्यक्ष कर लिया। 'मुझे ज्ञान-दर्शन प्राप्त हुआ। मेरी विमुक्ति दृढ है। यह अन्तिम जन्म है। अव पुनर्भव नही है।"

ऐसा कहने पर जाणुस्सोणि ब्राह्मणने भगवानसे कहा—"भो गौतम! बहुत सुन्दर है! भो गौतम! बहुत सुन्दर है। आप गौतम! आजसे जीवन पर्यन्त मुझे अपना उपासक स्वीकार करें।

भिक्षुओ, सयोग-विसयोग नामक प्रवचन (=धर्म परियाय) का उपदेश करता हूँ। उसे सुनो . भिक्षुओ, वह सयोग-विसयोग धर्म-परियाय कौनसा है?

भिक्षुओ, स्त्री अपने स्त्रीत्व (स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान करती है, स्त्रियोंके हाव-भावका, स्त्रियोंकी वेश-भूषाका, स्त्रियोंके रग-ढगका, स्त्रियोंकी इच्छाओंका, स्त्रियों के स्वरका तथा स्त्रियोंके अलकारका वह उन इन सबका ध्यान कर आनन्दित होती है, प्रमुदित होती है। इन सबको लेकर आनन्दित होती हुई, प्रमुदित होती हुई (अपनेसे) बाहर पुरुषत्व (=पुरुषेन्द्रिय) का ध्यान करती है, पुरुषोंके हाव-भावका, पुरुषोंकी वेश-भूषाका, पुरुषोंके रग ढगका, पुरुषोंकी इच्छाओंका, पुरुषोंके स्वरका तथा पुरुषोंके अलकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित होती है, प्रमुदित होती है। इन सबको लेकर आनन्दित होती हुई, प्रमुदित होती हुई वह (अपनेसे) बाहर पुरुषके साथ सयोग (=सहवास) की इच्छा करती है। उस सयोग (=सहवास) से उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा करती है। भिक्षुओ, स्त्रीत्वमें रमण करनेवाले प्राणी पुरुषोंके साथ सयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री स्त्रीत्वका अतिक्रमण नही करती।

भिक्षुओ, पुरुष अपने पुरुषत्व (=पुरुष-इन्द्रिय) का ध्यान करता है, पुरुषों के हाव-भावका, पुरुषोंकी वेश-भूषाका, पुरुषोंके रग-ढगका, पुरुषोंकी इच्छाओं का, पुरुषोंके स्वरका तथा पुरुषोंके अलकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित होता है, प्रमुदित होता है। इन सबको लेकर आनन्दित होता हुआ, प्रमुदित होता हुआ (अपनेसे) बाहर स्त्रीत्व (=स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान करता है, स्त्रियोंके हाव-भावका, स्त्रियोंकी वेश-भूषाका, स्त्रियोंके रग-ढगका, स्त्रियोंकी इच्छाओंका, स्त्रियोंके स्वरका तथा स्त्रियोंके अलकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित होता है। प्रमुदित होता है। इन सबको लेकर आनन्दित होता हुआ, प्रमुदित होता हुआ वह (अपनेसे) बाहर स्त्रीके साथ सयोग (=सहवास) की इच्छा करता है। उस सयोग (=सहवास) से उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा करता है। भिक्षुओ, पुरुषत्व-भावमें रमण करने वाले प्राणी स्त्रियोंके

साथ सयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार पुरुष पुरुषत्वका अतिक्रमण नही करता। भिक्षुओ, इस प्रकार सयोग होता है।

भिक्षुओ, विसयोग कैसे होता है? भिक्षुओ, स्त्री अपने स्त्रीत्व (=स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान नही करती है, स्त्रियो के हाव-भावका, स्त्रियोकी वेश-भूषाका, स्त्रियोके रग-ढगका, स्त्रियोकी इच्छाओका, स्त्रियोके स्वरका तथा स्त्रियोके अलकारका। वह इन सवका ध्यान कर आनन्दित नही होती है, प्रमुदित नही होती है। इन सवको लेकर आनन्दित न होती हुई, प्रमुदित न होती हुई (अपनेसे) वाहर पुरुषत्व (=पुरुषेन्द्रिय)का ध्यान नही करती है, पुरुषोके हाव-भावका, पुरुषोकी वेश-भूषाका, पुरुषोके रग-ढगका, पुरुषोकी इच्छाओका, पुरुषोके स्वरका तथा पुरुषोके अलकारका वह इन सवका ध्यान न कर आनन्दित नही होती है, प्रमुदित नही होती है। इन सवको लेकर आनन्दित न होती हुई, प्रमुदित न होती हुई, वह (अपने) से वाहर पुरुषके साथ सयोग (=सहवास)की इच्छा नही करती है। उस सयोग (=सहवास) से उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा नही करती है। भिक्षुओ, स्त्रीत्वमे रमण न करने वाले प्राणी पुरुषोके साथ विसयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री स्त्रीत्वका अतिक्रमण कर जाती है।

भिक्षुओ, पुरुष अपने पुरुषत्व (=पुरुष-इन्द्रिय) का ध्यान नही करता है, पुरुषोके हाव-भावका, पुरुषोकी वेश-भूषाका, पुरुषोके रग-ढगका, पुरुषोकी इच्छाओका, पुरुषोके स्वरका तथा पुरुषोके अलकारका। वह इन सवका ध्यान कर आनन्दित नही होता है प्रमुदित नही होता है। इन सवको लेकर आनन्दित न होता हुआ, प्रमुदित न होता हुआ (अपनेसे) वाहर स्त्रीत्व (=स्त्री-इन्द्रिय)का ध्यान नही करता है, स्त्रियोके हाव-भावका, स्त्रियोकी वेश-भूषाका, स्त्रियोके रग-ढगका, स्त्रियोकी इच्छाओका, स्त्रियोके स्वरका तथा स्त्रियोके अलकारका। वह इन सवका ध्यान कर आनन्दित नही होता है, प्रमुदित नही होता है। इन सवको लेकर आनन्दित न होता हुआ, प्रमुदित न होता हुआ, वह (अपनेसे) वाहर स्त्रीके साथ सयोगकी इच्छा नही करता है। उस सयोगसे उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा नही करता है। भिक्षुओ, पुरुषत्वमे रमण न करने वाले प्राणी स्त्रियोके साथ विसयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार पुरुष पुरुष-भावका अतिक्रमण कर जाता है। भिक्षुओ, यही सयोग-विसयोग धर्म-परियाय है।

एक समय भगवान चम्पामें गग्गरा पुष्करिणी के किनारे विहार कर रहे थे। उस समय चम्पा नगरीके वहुतसे उपासक जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र थे, वहाँ पहुँचे।

पास जाकर आयुष्मान् सारिपुत्र को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए चम्पाके उपासकोने आयुष्मान् सारिपुत्रसे यह कहा—"भन्ते! भगवान्से धार्मिक कथा सुने चिरकाल हो गया। भन्ते! अच्छा हो, यदि हमें भगवानसे धर्मोपदेश सुननेको मिले।"

"तो आयुष्मानो! उपोसथके दिन चले आना। हो सकता है कि भगवान् का प्रवचन सुननेके लिये मिल जाय।"

"भन्ते! अच्छा" कह चम्पाके उपासक, आयुष्मान् सारिपुत्रको प्रतिवचन दे आसनसे उठ, आयुष्मान् सारिपुत्र को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, चले गये।

तब चम्पाके उपासक उपोसथके दिन जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर आयुष्मान् सारिपुत्रको प्रणामकर एक ओर बैठ गये। तब उन चम्पाके उपासकोको साथ ले, आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते! क्या ऐसा होता है कि एक के द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान फल-दायक होता है न उसका महान् शुभ परिणाम होता है? भन्ते! क्या ऐसा होता है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान फल-दायक होता है तथा महान् शुभ परिणाम वाला?"

"सारिपुत्र! ऐसा होता है कि एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान् फल-दायक होता है, न उसका महान् शुभ परिणाम होता है।

सारिपुत्र! ऐसा होता है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान फल-दायक होता है तथा महान् शुभ-परिणाम वाला।

"भन्ते! इसका क्या हेतु है, क्या कारण है, कि एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान फल-दायक होता है, न उसका महान् शुभ परिणाम होता है। भन्ते! इसका क्या हेतु है, क्या कारण है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान् फल-दायक होता है, उसका महान् शुभ परिणाम होता है?"

"सारिपुत्र! यहाँ कोई-कोई व्यक्ति तृष्णा-युक्त चित्तसे, आसक्ति-युक्त चित्तसे, इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि उसका परलोकमें भोग करूँगा, दान देता है। वह श्रमण या ब्राह्मणको वह दान—अन्न (=भोजन), पान (पेय्य), वस्त्र, वाहन,

माला गन्ध विलेपन, शयनासन, निवासस्थान तथा प्रदीपकी सामग्री—देता है। सारिपुत्र ! तो क्या मानते हो, इस तरहका दान दिया जाता है न ? "

"भन्ते ! हाँ।"

'हे सारिपुत्र ! जो व्यक्ति इस प्रकार तृष्णा-युक्त चित्तसे दान देता है, आसक्ति, युक्त चित्तसे दान देता है, इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि इसका परलोकमे भोग करूँगा दान देता है। वह उस दानको देकर, शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, चातुर्महा-राजिक देवताओकी सगतिमे उत्पन्न होता है। उस कर्मके फलको भोग चुकनेके अनन्तर, उस समृद्धि, उस ऐश्वर्य, उस आधिपत्यसे रहित होकर वह फिर इसी लोकमे जन्म ग्रहण करता है।

"किन्तु हे सारिपुत्र ! एक व्यक्ति न तृष्णा-युक्त चित्तसे दान देता है, न आसक्ति-युक्त चित्तसे दान देता है, न इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि इसका परलोकमे भोग करूँगा, दान देता है। किन्तु दान देना अच्छा है, यही समझकर दान देता है । दान देना अच्छा है, यही समझकर दान नही देता है, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वश-मर्यादाका त्यागना उचित नही । यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वश-मर्यादाका त्यागना उचित नही' सोच दान नही देता, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि मै तो पकाता हूँ, और ये नही पकाते है, और यह उचित नही है कि पकानेवाला, न पकानेवालोको न दे ।" मै तो पकाता हूँ, किन्तु ये नही पकाते है, और यह उचित नही है कि पकानेवाला, न पकानेवालोको न दे, सोच दान नही देता है, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियोके वे महान यज्ञ हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अंगीरसके, भारद्वाजके वसिष्ठके, काश्यपके, भृगुके—उन्हीके समान मेरा यह दान बँटवारा होगा सोचकर दान देता है । यह सोचकर दान नही देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियोके वे महान् यज्ञ हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अगीरसके, भारद्वाजके वसिष्ठके, काश्यपके, भृगके—उन्हीके समान मेरा यह दान-बँटवारा होगा, सोच दान नही देता, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सौमनस्य पैदा होता है । यह सोचकर भी दान नही देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सौमनस्य पैदा होता है, किन्तु यह समझकर दान देता है कि दान देना चित्तका अलकार है, दान देना चित्तका परिष्कार है। वह

श्रमण या ब्राह्मणको वह दान—अन्न (=भोजन) पान (=पेय्य) वस्त्र, वाहन, माला गन्ध विलेपन, शयनासन, निवासस्थान तथा प्रदीपकी सामग्री—देता है। सारिपुत्र! तो क्या मानते हो, इस तरह का दान दिया जाता है न?

"भन्ते! हाँ।"

"सारिपुत्र! जो व्यक्ति न तृष्णा-युक्त चित्तसे दान देता है, न आसक्ति-युक्त चित्तसे दान देता है, न इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि इसका परलोकमें भोग करूँगा, दान देता है, किन्तु दान देना अच्छा है, यही समझकर दान देता है ..। दान देना अच्छा है, यही समझकर दान नही देता, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वंश-मर्यादाका त्यागना उचित नही । यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वंश-मर्यादाका त्यागना उचित नही है, सोच दान नही देता, किन्तु यह सोचकर दान-देता है कि मैं तो पकाता हूँ, और ये नही पकाते है, और यह उचित नही है कि पकाने वाला न पकाने वालेको न दे । मैं तो पकाता हूँ, किन्तु ये नही पकाते है, और यह उचित नही है कि पकाने वाला न पकाने वालेको न दे, सोच दान नही देता है, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियोके वे महान यज्ञ, हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अंगीरसके, भारद्वाजके वसिष्ठके, काश्यपके, भृगुके—इन्हीके समान मेरा यह दान-बँटवारा होगा, सोच दान देता है । यह सोच कर दान नही देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियो के वे महान यज्ञ हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अगीरसके, भारद्वाजके, वसिष्ठके, काश्यपके, भृगुके—इन्हीके समान मेरा यह दान-बँटवारा होगा, सोच दान नही देता। किन्तु यह सोचकर दान देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सौमनस्य पैदा होता है । यह सोचकर भी दान नही देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सोमनस्य पैदा होता है, किन्तु यह समझकर दान देता है कि यह दान चित्तका अलकार है, दान देना चित्तका परिष्कार है। वह इस दानको देकर, शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर ब्रह्मकायिक देवताओकी सगतिमें उत्पन्न होता है। उस कर्मके फलको भोग चुकनेके अनन्तर, उस ऋद्धि, उस ऐश्वर्य, उस अधिपत्यसे रहित होकर वह अनागामि होता है—फिर इस लोकमें जन्म न ग्रहण करने वाला।

सारिपुत्र! उसका यह हेतु है, यह कारण है कि एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान फलदायक होता है, न उसका महान् शुभ परिणाम होता है।

सारिपुत्र ! इसका यह हेतु है, इसका यह कारण है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान् फल-दायक होता है, उसका महान् शुभ परिणाम होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र तथा आयुष्मान् महा-मौद्गल्यायन बडे भारी भिक्षु सघके साथ दक्षिण गिरिमे चारिका कर रहे थे। उसी समय (की बात है कि) वेळुकण्डक नगरमे रहनेवाली नन्दमाता उपासिका रात्रिके ब्राह्म-मुहूर्त (=प्रत्यूपकाल) में उठकर (मधुर) स्वरसे पारायन सूत्र[1] का पाठ करती थी।

उस समय महाराज वैश्रवण किसी कामसे उत्तर दिशासे दक्षिण दिशाकी ओर जा रहे थे। महाराज वैश्रवणने सुना कि उपासिका नन्दमाता (मधुर-) स्वरसे पारायन-सूत्रका पाठ कर रही है। महाराज वैश्रवण पाठ (=कथा) की समाप्तिकी प्रतीक्षा करते रहे।

तब नन्दमाता उपासिका मधुर स्वरसे पारायन सूत्रका पाठ कर चुकनेपर चुप हो गई। तब महाराज वैश्रवणने जब यह जाना कि उपासिका नन्दमाताका सस्वर पाठ समाप्त हो गया है तो उन्होंने उसका अनुमोदन किया—"बहन ! बहुत अच्छा। बहन ! बहुत अच्छा।"

"भद्रमुख ! यह आप कौन है ?"

"बहिन ! मैं तेरा भाई हूँ वैश्रवण महाराज।"

"भद्रमुख, तो मैंने जो यह धर्म-परियाय (=पाठ) कहा, वही तेरा आतिथ्य हो।"

"अच्छा ! बहन ! यही मेरा आतिथ्य हो। कल प्रात काल ही सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसघ विना जलपान किये वेळुकण्डक आ रहे हैं। उस भिक्षु-संघको भोजन कराकर 'दक्षिणा' की घोषणा मेरी ओरसे कर देना। यही मेरा आतिथ्य होगा।

तब उस रातके बीतनेपर उपासिका नन्द माताने अपने घरपर बढिया भोजन तैयार करवाया। तब सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसघ विना ही जलपान किये वेळुकण्डक पहुँचा। तब उपासिका नन्द माताने एक आदमीको सम्बोधित किया —हे पुरुष। यहाँ आओ। विहार जाकर भिक्षुसघको (भोजनके) समयकी सूचना दो—"भन्ते ! आर्या नन्द माताके घरपर भोजन तैयार है।"

---

१ सयुक्त निकाय

'आर्ये! अच्छा' कह उस आदमीने उपासिका नन्द माताको प्रति-वचन दिया और विहार पहुँच कर भिक्षुसघको (भोजनके) समयकी सूचना दी—भन्ते। आर्या नन्दमाताके घर भोजन तैयार है, (चलनेका) समय है।

तव सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसघने पूर्वान्ह समय पात्र-चीवर ले, जहाँ उपासिका नन्दमाताका घर था, वहाँ प्रवेश किया। जाकर भिक्षु-गण विछे आसनपर वैठे। तव उपासिका नन्दमाताने सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसघको अपने हाथसे परोस-परोसकर वढिया भोजन कराया।

आयुष्मान् सारिपुत्रके भोजन कर चुकनेपर, पात्रसे हाथ खीच लेनेपर उपासिका नन्द माता एक ओर वैठी। एक ओर वैठी उपासिका नन्दमातासे आयुष्मान् सारिपुत्रने प्रश्न किया—"नन्दमाते! तुझे भिक्षुसघके आगमनकी पूर्व-सूचना किसने दी?"

"भन्ते! रात्रिके प्रत्यूष कालमें उठकर मैंने पारायन-सूत्रका सस्वर पाठ किया और तदनन्तर चुप हो गई। तव भन्ते! महाराज वैश्रवणने मेरा सूत्र-पाठ समाप्त हुआ जान उसका अनुमोदन किया—

"वहन! वहुत अच्छा। वहन! वहुत अच्छा।"

"भद्रमुख! तू कौन है?" मैंने पूछा।

"वहन! मै तेरा भाई महाराज वैश्रवण हूँ" उत्तर दिया।

"भद्रमुख। तो मैंने जो यह धर्म-पर्याय कहा, यही तेरे लिये आतिथ्य हो," मैंने कहा।

"वहन! अच्छा है, यही मेरा आतिथ्य हो। कल प्रात काल ही सारि-पुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-सघ विना जल-पान किये वेळुकण्डक पधार रहे हैं। उस भिक्षु-सघको भोजन कराकर 'दक्षिणा' की घोषणा मेरी ओरसे कर देना। इस प्रकार मेरा आतिथ्य होगा," उत्तर था।

"भन्ते! इस दानमें जो पुण्य हैं तथा जो पुण्यमय है, वह महाराज वैश्रवणके सुखका हेतु हो।"

"नन्दमाता, आश्चर्य है। नन्दमाता! अद्भुत है। तूने इस प्रकारके ऋद्धिवान महान प्रतापी देवपुत्र महाराज वैश्रवणसे आमने सामने वात की।"

"भन्ते! यही आश्चर्यकी अद्भुत वात नही है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्भुत वात है। भन्ते! नन्द नामका मेरा अत्यन्त प्रिय इकलौता पुत्र था। उसे राजाके आदमियोने किसी सिलसिलेमें घसीट कर, दवाकर जानसे मार डाला।

भन्ते! उस बच्चेके पकड लिये जानेपर या पकड लिये जाते समय, वध किये जानेपर या वधे किये जाते समय, मार डालनेपर या मारे जाते समय मेरे चित्तमें कुछ भी विकृति नही आयी।

"नन्दमाता! आश्चर्य है, अद्‌भुत है। तू चित्तकी उत्पत्ति तककी शुद्धता की रक्षा करती है।"

"भन्ते! यही आश्चर्य की अद्‌भुत बात नही है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्‌भुत है। भन्ते! मेरा पति मरकर यक्ष होकर उत्पन्न हुआ है। वह अपने उसी पूर्व-रूपमे अपने आपको प्रकट करता है। भन्ते! मै नही जानती कि उससे मेरे चित्तमें कुछ भी विकृति आई हो।

"नन्दमाता! आश्चर्य है, अद्‌भुत है। तू चित्तकी उत्पत्ति तककी शुद्धता की रक्षा करती है।"

"भन्ते! यही आश्चर्यकी अद्‌भुत बात नही है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्‌भुत बात है। भन्ते! जब मेरा पति छोटा था और मै भी छोटी थी, तभी मैं अपने स्वामीके लिये लाई गई। मै नही जानती कि मनसे भी मैंने कभी कदाचार किया हो, शरीरकी बात ही नही।"

"नन्दमाता! आश्चर्य है, अद्‌भुत है। तू चित्तकी उत्पत्ति तककी शुद्धताकी रक्षा करती है।"

"भन्ते! यही आश्चर्य की अद्‌भुत बात नही है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्‌भुत बात है। भन्ते! जबसे मै उपासिका बनी हूँ, मै नही जानती कि मैंने जान बूझकर एक भी शिक्षा-पदका उल्लघन किया हो।"

"नन्दमाता! आश्चर्य है। नन्दमाता! अद्‌भुत है।"

"भन्ते! यही आश्चर्यप्रद अद्‌भुत बात नही है। एक दूसरी भी आश्चर्य-प्रद अद्‌भुत बात है। भन्ते! मै जब भी आकाक्षा करती हूँ तभी काम-वितर्कोसे रहित हो, बुरे विचारोसे रहित हो सवितर्क, सविचार, विवेकसे उत्पन्न प्रीति-सुख युक्त प्रथम-ध्यानको प्राप्त कर विहार करती हूँ। वितर्क और विचारोके उपशमनसे, अन्दरकी प्रसन्नता और एकाग्रता रूपी वितक-रहित, विचार-रहित, विवेकसे उत्पन्न, प्रीति-सुख युक्त द्वितीय ध्यानको प्राप्त हो विहार करती हूँ। प्रीतिसे भी विरक्त हो, उपेक्षावान् बन विहार करती हूँ—स्मृतिमान्, ज्ञानवान्, (मन-) शरीरसे सुखका अनुभव करती हुई। जिसे 'आर्य-जन उपेक्षावान्, स्मृतिमान्, सुखविहारी' कहते है, उस तृतीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करती हूँ। सुख और दुःख दोनोके

प्रहाणसे, सौमनस्य और दौर्मनस्यके पहले ही अस्त हुए रहनेसे, दुःख-रहित, सुख-रहित केवल उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि युक्त चतुर्थ-ध्यान को प्राप्त कर विहार करती हूँ।"

"नन्दमाता! यह आश्चर्यप्रद है। नन्दमाता! यह अद्‌भुत है।

"भन्ते! यही आश्चर्यप्रद अद्‌भुत बात नही है। एक दूसरी भी आश्चर्य-प्रद अद्‌भुत बात है। भन्ते! भगवानने जो कामावचर लोकके सयोजन बताये हैं, उनमें एक भी ऐसा नही है, जो मुझमें विद्यमान हो।"

"नन्दमाता! आश्चर्य है। नन्दमाता! अद्‌भुत है।"

तब आयुष्मान् सारिपुत्र उपासिका नन्दमाताको धार्मिक बातचीत प्रकट कर, उसमे परिचित कर, उससे उत्साहित कर, उससे प्रफुल्लित कर, आसनसे उठकर चले गये।

(६) अव्याकृत वर्ग

उस समय एक भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उस भिक्षुने भगवान्से यह कहा—"भन्ते! इसका क्या हेतु है, क्या कारण है कि जो ज्ञानी आर्य श्रावक है, उसके मनमे अव्याकृत-विषयोंके बारेमें सन्देह उत्पन्न नही होता?"

"भिक्षु, जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, (मिथ्या–) दृष्टिका निरोध हो चुका रहनेके कारण, उसके मनमें अव्याकृत-विषयोंके बारेमें शका पैदा नही होती! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते हैं', भिक्षु! यह भी (मिथ्या–) दृष्टि है, 'तथागत मरनेके अनन्तर नही होते हैं', भिक्षु! यह भी (मिथ्या–) दृष्टि है, 'तथागत मरनेके अनन्तर होते भी हैं और नही भी होते हैं, भिक्षु! यह भी (मिथ्या–) दृष्टि है; तथागत नही होते हैं और नही नही होते हैं,' भिक्षु! यह भी (मिथ्या–) दृष्टि है, भिक्षु! जो अज्ञानी है, वह (मिथ्या–) दृष्टिको नही जानता, (मिथ्या–) दृष्टिकी उत्पत्तिको नही जानता, (मिथ्या–) दृष्टिके निरोधको नही जानता, (मिथ्या–) दृष्टिके निरोधकी ओर ले जानेवाले मार्गको नही जानता। उसकी वह (मिथ्या–) दृष्टि वृद्धिको प्राप्त होती है। वह जन्म, जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, पश्चातापसे मुक्त नही होता, मैं कहता हूँ कि वह (सम्पूर्ण) दुःखसे मुक्त नही होता।

भिक्षु! ज्ञानी (वहुश्रुत) आर्य-श्रावक दृष्टिको जानता है, (मिथ्या–) दृष्टिकी उत्पत्तिको जानता है, (मिथ्या–) दृष्टिके निरोधको जानता है, (मिथ्या–) दृष्टिके निरोधकी ओर ले जानेवाले मार्गको जानता है। उसकी वह (मिथ्या–) दृष्टि निरोधको प्राप्त होती है, वह जन्म-जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दु ख, दौर्मनस्य, पश्चातापसे मुक्त होता है, मै कहता हूँ कि वह (सम्पूर्ण) दु ख से मुक्त होता है। भिक्षु! इस प्रकार जानता हुआ, इस प्रकार देखता हुआ जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, वह यह नही कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर होते है', वह यह भी नही कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर नही होते है,' वह यह भी नही कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर होते भी है, और नही भी होते है, वह यह भी नही कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर न होते है और न नही होते है,' भिक्षु। इस प्रकार जानने वाला, इस प्रकार देखनेवाला जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है वह अव्याकृत-वातोको वे कहा (=अव्याकृत) ही रखता है। भिक्षु! इस प्रकार जाननेवाला, इस प्रकार देखनेवाला जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है वह अव्याकृत-विषयोको लेकर न घवराता है, न काँपता है, न रोमाचित होता है और न त्रासको प्राप्त होता है।

४ भिक्षु! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते है', यह मान्यता तृष्णा-मात्र है, मज्ञा-मात्र है, मान्यता-मात्र है, प्रपच मात्र है, . उपादान-मात्र है । भिक्षु! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते है', यह पश्चात्ताप मात्र है, भिक्ष! 'तथागत मरनेके अनन्तर नही होते,' यह भी पश्चात्ताप मात्र है, भिक्षु! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते भी है और नही भी होते है' यह भी पश्चात्ताप-मात्र है, भिक्षु! 'तथागत नही होते है और नही नही होते है', यह भी पश्चात्ताप मात्र है। भिक्षु! जो अज्ञानी पृथकजन (=सामान्यजन) है वह 'पश्चात्ताप' को नही जानता, 'पश्चात्ताप' के समुदयको नही जानता, 'पश्चात्ताप' के निरोधको नही जानता, 'पश्चात्ताप' के निरोधकी ओर ले जानवाली प्रतिपदाको नहीं जानता। उसका 'पश्चात्ताप' वढता है। वह जन्म, जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दु ख, दौर्मनस्य, पश्चात्तापसे मुक्त नही होता और मै कहता हूँ कि (सम्पूर्ण) दु खसे मुक्त नही होता।

भिक्षु! जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, वह 'पश्चात्ताप' को जानता है, 'पश्चात्ताप' के समुदयको जानता है, 'पश्चात्ताप' के निरोधको जानता है, 'पश्चात्ताप' के निरोधकी ओर ले जाने वाले मार्गको जानता है। उसका वह 'पश्चात्ताप' निरोधको प्राप्त होता है, वह जन्म, जरा . . . . मुक्त होता है। भिक्षु, इस प्रकार जानता

हुआ, वह यह नहीं कहता कि तथागत मरनेके अनन्तर होते हैं वह यह भी नहीं कहता कि तथागत मरनेके अनन्तर न होते हैं और न नहीं होते हैं। भिक्षु! इस प्रकार जानने वाला, इस प्रकार देखने वाला जो आर्य-श्रावक है वे अव्याकृत-बातोंको बे कहा (=अव्याकृत) ही रखता है। भिक्षु! इस प्रकार जाननेवाला, इस प्रकार देखनेवाला जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, वह अव्याकृत विषयोंको लेकर न घबराता है, न कांपता है, न रोमाञ्चित होता है और न त्रासको प्राप्त होता है। भिक्षु! इसका यही हेतु है, यही कारण है कि जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, उसके मनमें अव्याकृत विषयोंके बारेमें सन्देह उत्पन्न नहीं होता।

भिक्षुओ, मैं सात पुरुष-गतियों (=ज्ञानकी अवस्थाओं) की देशना करता हूँ तथा अप्रत्यय निर्वाण की। उसे सुनो। अच्छी तरह मनमें धारण करो, कहता हूँ। "भन्ते! बहुत अच्छा" कह उन भिक्षुओंने भगवान्‌को प्रतिवचन दिया। भगवान्‌ने ऐसा कहा—

"भिक्षुओ, सात पुरुष-गतियाँ कौन-सी हैं?

"भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्य्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होने वाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है, (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा, भविष्यमें मेरा (जन्म) न होगा, जो है, जो विद्यमान है,—उसे छोड़ता हूँ—इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह न (पूर्व-) भवमें अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (=स्थान) को देखता है। वह पद उसने सम्पूर्णतः साक्षात् नहीं किया होता। उसका मान-अनुशय (=मैल) भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका भवराग-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। वह काम-लोक सम्बन्धी पाँचों (कामच्छन्द आदि) संयोजनोंका क्षय कर अनागामी अर्थात बीचमें ही परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला (अन्तरापरिनिब्बायी) होता है। भिक्षुओ, जैसे दिनभरके तप्त लोहेके टुकड़ेको मारकर उत्पन्न हुई चिनगारी पैदा होकर बुझ जाती है। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षु की ऐसी चर्य्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है, (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा, भविष्यमें मेरा (जन्म) न होगा; जो है, जो विद्यमान है—उसे छोड़ता हूँ। इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह (पूर्व-) भवमें न अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे

उससे श्रेष्ठतर पद (=स्थान) को देखता है। वह पद उसने पूर्णत साक्षात् नही किया होता। उसका मान-अनुशय भी सर्वांशमे नष्ट हुआ नही रहता। उसका भव-राग-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नही रहता। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नही रहता। वह काम-लोक सम्बन्धी पाँचो (कामच्छन्द आदि) संयोजनोका क्षय कर अनागामी (अन्तरा परिनिश्वायी) होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूतकालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है; (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा, भविष्यमें मेरा (जन्म) न होगा, जो है, जो विद्यमान है—उसे छोडता हूँ—इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह (पूर्व–) भवमें अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (=स्थान) को देखता है। वह पद उसने सम्पूर्णत साक्षात् नही किया होता। उसका मान-अनुशय भी सर्वांशमे नष्ट हुआ नही रहता। उसका भव-राग अनुशय भी सर्वांशमे नष्ट हुआ नही रहता। उसका अविद्यानुशय भी सर्वांश में नष्ट हुआ नही रहता। वह ओरम्भागिय (=निम्म्नताकी ओर ले जानेवाले)पाचों सयोजनोका क्षय कर अनागामी (अन्तरा परिनिव्वायी) होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेके तवेसे रगड खाकर उत्पन्न हुई चिनगारी उत्पन्न होकर ऊपर जाकर बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका) कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है . । वह पाँचो ओरम्भागीय सयोजनोका क्षय कर अनागामी होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होने वाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है . वह पाँचो ओरम्भागीय सयोजनोका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगड खाकर उत्पन्न हुई चिनगारी उत्पन्न होकर, ऊपर जाकर, विना (भूमि) तलपर गिरे ही बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूतकालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है वह पाँचो ओरम्भागीय सयोजनोका क्षय कर अन्तरा-परिनिर्वाण-प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्चा होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म)

है . वह पाँचो ओरम्भीगीय मयोजनोका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगडकर उत्पन्न हुई चिनगारी उत्पन्न होकर, ऊपर जाकर, (भूमि —) तलपर गिरकर बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुको ऐसी चर्या होती है कि वह मोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण कारण होने वाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है वह पाँचो ओरम्भागीय मयोजनोका क्षयकर उपहत्य-परिनिर्वाण-प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह मोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है वह पाँचो ओरम्भागीय मयोजनोका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगडकर उत्पन्न हुई चिनगारी, उछलकर, सीमित तिनकोंके ढेर वा लकडीके ढेर पर गिर पडे। उससे वहाँ आग भी लग जाय, धुआँ भी पैदा हो। आग लगकर भी, धुआँ पैदा होकर भी, वह (चिनगारी) उस सीमित तिनकोंके ढेर वा लकडीके ढेरको जलाकर और ईंधन न रहनेके कारण बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है वह पाँचो ओरम्भीय मयोजनोका क्षय कर असस्कार परि-निर्वाण-प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है वह पाँचो ओरम्भागीय मयोजनोका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रागडकर उपन्न हुई चिनगारी, उछल कर, बहुत बडे तिनकोंके ढेरका लकडीके ढेरपर गिर पडे। उससे वहाँ आग भी लग जाय, धुआँ भी पैदा हो। आग लग कर भी, धुआँ पैदा होकर भी, वह (चिनगारी) उस बहुत बडे तिनकोंके ढेर वा लकडीके ढेरको जलाकर और ईंधन न रहनेके कारण बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह मोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमे य जन्म) है वह पाँच ओरम्भागीय सयोजनोका क्षय कर ससस्कार परि-निर्वाण प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि यह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म)

है, (भविष्यमे मेरे जन्मका कारण बनने वाला कर्म) न होगा, भविष्यमे मेरा जन्म न होगा, जो है, जो विद्यमान है—उसे छोडता हूँ—इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह न पूर्व-भवमे अनुरक्त होता है और न भावी-भवमे अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (स्थान) को देखता है। वह पद उसने सम्पूर्णत साक्षात् नही किया होता, उसका माननुशय भी सर्वाशमे नष्ट हुआ नही रहता। उसका भव-राग अनुशय भी सर्वाशमे नष्ट हुआ नही रहता। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वाशमे नष्ट हुआ नही रहता। वह काम-लोक सम्बन्धी पाँचो सयोजनोका क्षय कर अकनिष्ठ-गामी ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगडकर उत्पन्न हुई चिनगारी, उछलकर, बहुत बडे तिनकोके ढेर वा लकडीके ढेरपर गिर पडे। इससे वहाँ आग भी लग जाय, धुआँ भी पैदा हो। आग लगकर भी, धुआँ पैदा होकर भी वह (चिनगारी) उस बहुत बडे तिनकोके ढेर वा लकडीके ढेरको जला कर अरक्षित जगल तथा सुरक्षित जगल दोनोको जला दे। अरक्षित जगल तथा सुरक्षित जगल दोनोको जलाकर जहाँ हरियाली हो, जहाँ रास्ता हो, जहाँ पर्वत हो, जहाँ पानी हो अथवा जहाँ रमणीय भूमि-भाग हो, वहाँ पहुँचकर कर ईधन न मिलने के कारण बुझ जाय। भिक्षुओ, इसी प्रकार एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमे जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमे यह जन्म) है   वह काम लोक सम्बन्धी पाँचो सयोजनोका क्षय कर अकनिष्ठगामी ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, ये सात पुरुष-गतियाँ है।

भिक्षुओ, अनुत्पाद-परिनिर्वाण किसे कहते है? भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूतकालमे जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ। न (वर्तमानमें यह जन्म) है, (भविष्यमे मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा; भविष्यमें मेरा जन्म न होगा, जो है, जो विद्यमान् है, उसे छोडता हूँ—इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह न पूर्व-भवमें अनुरक्त होता है, और न भावी-भवमे अनुरक्त होता है, वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (स्थान) को देखता है, वह पद उसने सम्पूर्णत साक्षात् किया होता है, उसका मानानुशय भी सर्वाश मे नष्ट हुआ रहता है। उसका भव-राग अनुशय भी सर्वाशमे नष्ट हुआ रहता है। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वाशमे नष्ट हुआ रहता है। वह आस्रवोका क्षय कर   प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, इसे कहते है अनुत्पाद-निर्वाण। भिक्षुओ, ये सात पुरुष-गतियाँ तथा अनुत्पाद परिनिर्वाण है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। उस समय दो प्रकाशमान् देवता, प्रकाशमान् रात्रिमें सारेके सारे गृध्रकूट पर्वतको प्रकाशित कर जहाँपर भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर खड़े हुए। एक ओर खड़े हुए एक देवताने भगवान्से यह कहा—"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ विमुक्त हैं।" दूसरे देवताने भी भगवान्को कहा—"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ निरुपाधि शेष सुविमुक्त हैं।" उन देवताओंने यह कहा। शास्ता प्रसन्न हुए। तब उन देवताओंने यह जाना कि शास्ता प्रसन्न हुए हैं, तो वे भगवान्को अभिवादन कर प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्धान हो गये।

तब भगवान्ने उस रातके बीतनेपर भिक्षुओंको निमन्त्रित किया—भिक्षुओ, आजकी रात दो प्रकाशमान् देवता, प्रकाशमान् रात्रिमें, सारे के सारे गृध्रकूट (पर्वत) को प्रकाशित कर जहाँ मैं था, वहाँ आये। पास आकर मुझे प्रणाम कर, एक ओर बैठे। भिक्षुओ, एक ओर खड़े हुए एक देवताने मुझसे यह कहा—"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ विमुक्त हैं।" दूसरे देवताने मुझसे यह कहा—"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ निरुपाधिशेष विमुक्त हैं।' भिक्षुओ, उन देवताओंने यह कहा। इतना कह, मुझे प्रणाम कर, प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्धान हो गये।

उस समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन भगवान्के पास ही बैठे थे। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनके मनमें यह जिज्ञासा पैदा हुई—"किन देवताओंको यह ज्ञान होता है कि यह उपाधि-शेष (विमुक्ति) है वा निरुपाधि-शेष विमुक्ति है?" उस समय कुछ ही काल पूर्व मृत्युको प्राप्त हुआ तिस्स नामका एक भिक्षु ब्रह्मलोकमें उत्पन्न हुआ था। वहाँ भी उसकी प्रसिद्धि थी—"तिस्स ब्रह्मा महा ऋद्धिवान् है, महा प्रतापवान् है।

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन—जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको फैलाये, या फैली हुई बाँहको सिकोड़े, उसी प्रकार गृध्रकूटसे अन्तर्धान हो ब्रह्मलोकमें प्रकट हुए। तिस्स ब्रह्माने आयुष्मान् महामौद्गल्यायनको दूरसे आते हुए देखा। देखकर आयुष्मान् महामौद्गल्यायनसे यह कहा—"मित्र मौद्गल्यायन आये। मित्र मौद्गल्यायन! स्वागत है। मित्र मौद्गल्यायन चिरकालके बाद इधर आनेकी कृपा की है। मित्र मौद्गल्यायन! यह आसन बिछा है। बैठें।" आयुष्मान् महामौद्गल्यायन! बिछे आसनपर बैठे। तिस्स ब्रह्मा भी आयुष्मान् महामौदगल्यायन-को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए तिस्स ब्रह्मासे आयुष्मान् महा मौद्गल्यायनने पूछा—'तिस्स! किन देवताओंको उपाधिशेष होने पर उपाधिशेष होनेका और निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है?"

"मित्र मौद्गल्यायन ! ब्रह्मकायिक देवताओको उपाधिशेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका निरुपाधि शेष होनेपर निरुपाधि शेष होनेका ज्ञान होता है।"

"मित्र मौद्गल्यायन ! जो ब्रह्मकायिक देवता ब्राह्म आयु, ब्राह्म वर्ण, ब्राह्म सुख ब्राह्म यश तथा ब्राह्म आधिपत्यसे सतुष्ट होते है, और उससे श्रेष्ठतर पदकी यथार्थ जानकारी नही रखते, उन्हे उपाधिशेप होनेपर उपाधि शेप होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि शेप होनेका ज्ञान नही होता। मित्र मौद्गल्यायन ! जो ब्रह्मकायिक देवता ब्राह्म आयु, ब्राह्म वर्ण, ब्राह्म सुख, ब्राह्म यश, तथा ब्राह्म आधिपत्यसे सतुष्ट नही होते हैं और उससे श्रेष्ठतर पदकी यथार्थ जानकारी रखते है, उन्हें उपाधि-शेष होनेपर उपाधि शेप होनेका, निरुपाधि शेप होनेपर निरुपाधि शेप होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु दोनो तरहसे विमुक्त होता है। उसके बारेमे देवताओकी जानकारी होती है।—'यह आयुष्मान् दोनो तरहसे विमुक्त है। इसका शरीर रहते भी इसे देव-मनुष्य नही देख सकते। इसका शरीर न रहनेपर भी इसे देव-मनुष्य नही देख सकते।' मित्र मौद्गल्यायन ! इस प्रकार भी उन देवताओं-को उपाधि शेप होनेपर उपाधि शेप होनेका, निरुपाधि शेष होनेपर निरुपाधि शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु प्रज्ञा-विमुक्त होता है। उसके बारेमें देवताओकी जानकारी होती है—'यह आयुष्मान प्रज्ञा-विमुक्त है। इस का शरीर रहते भी इसे देव-मनुष्य नही देख सकते। इसका शरीर न रहनेपर भी इसे देव-मनुष्य नही देख सकते।' मित्र मौद्गल्यायन ! इस प्रकार भी उन देवताओको उपाधि-शेष होनेपर उपाधि-शेप होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु शरीर-साक्षी होता है। उसके बारेमें देवता सोचते हैं—यह आयुष्यमान् शरीर-साक्षी है। अच्छा हो यदि 'यह आयुष्मान उचित (=अनुकूल) शयनासनोका सेवन करता हुआ, सत्पुरुषोकी सगति करता हुआ, इन्द्रियोको सयत रखता हुआ, जिस परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुल-पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य-शीर्ष परमार्थको इसी जन्ममें स्वय जानकर साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करे।' मित्र मौद्गल्यायन् ! इस प्रकार भी उन देवताओको उपाधि-शेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त होता है.... श्रद्धाविमुक्त होता है धर्मानुसार आचरण करनेवाला होता है। उसके

वारेमें देवता सोचते हैं—'यह आयुष्मान् धर्मानुसार आचरण करनेवाला है। अच्छा हो, यदि यह आयुष्मान् उचित (=अनुकूल) शयनासनोका सेवन करता हुआ सत्पुरुषोकी सगति करता हुआ, इन्द्रियोको सयत रखता हुआ, जिस परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुल-पुत्र घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होते हैं—उस श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य-शीर्ष परमार्थको इसी जन्ममें स्वय जानकर साक्षात् कर, प्राप्त कर, विहार करे।' मित्र मौद्गल्यायन! इस प्रकार भी उन देवताओको उपाधि शेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञ न होता है।

तव आयुष्मान् महा मौद्गल्यायन तिस्स ब्रह्माके भाषणका अभिनन्दन कर, अनुमोदन कर —जैसे कोई वलवान् आदमी सिकुडी हुई वाँहको फैलाये, या फैली हुई वाँहको सिकोडे, उसी प्रकार ब्रह्मलोकसे अन्तर्धान हो गृध्रकूट पर प्रकट हुआ। तव आयुष्मान् महामौद्गल्यायन जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने तिस्स ब्रह्माके साथ जितनी वातचीत हुई थी, वह सव भगवान्‌को कह सुनाई।

"मौद्गल्यायन! तिस्स ब्रह्माने तुझे अनिनित्त–विहारी सातवें पुरुष के वारेमें नही कहा।"

"भगवान्! इसीका समय है। भगवान्! इसीका काल है। भगवान् सातवे अनिमित्त-विहारी पुरुष के वारेमें देशना करें। भिक्षु उसे सुनकर ग्रहण करेंगे।"

"मौद्गल्यायन! तो सुन। अच्छी तरह मनमें धारण कर। कहता हूँ। भन्ते! अच्छा" कह महा मौद्गल्यायनने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवान्‌ने यह कहा—

"मौद्गल्यायन! एक भिक्षु सभी निमित्तो (=ध्यानके विषयो)की ओरसे चित्तको हटा निमित्त रहित चित्त-समाधिकी प्राप्त कर विहार करता है। उसके वारेमें देवता सोचते हैं—यह आयुष्मान् सभी निमित्तोकी ओरसे चित्तको हटा निमित्त-रहित चित्त-समाधिको प्राप्त कर विहार करता है। अच्छा हो यदि यह आयुष्मान् उचित शयनासनोका सेवन करता हुआ, सत्पुरुषोकी सगति करता हुआ, इन्द्रियोको सयत रखता हुआ, जिस परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुल-पुत्र घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य–शीर्ष परमार्थको इसी जन्ममें स्वय जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करे।' मौद्गल्यायन! इस प्रकार उन देवताओको उपाधि-शेष होने पर उपाधि-शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीके महावनमें कूटागार शालामें विहार करते थे। तव सिंह सेनापति भगवान्‌के पास आया। पास आकर भगवान्‌को

नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए सिंह सेनापतिने भगवानसे प्रश्न किया—

"भन्ते! क्या दानका सादृष्टिक फल कहा जा सकता है?"

"सिंह! तो तुझसे ही प्रश्न पूछता हूँ, जैसा तुझे लगे वैसा उत्तर देना। सिंह! तो तुम क्या मानते हो—यहाँ दो आदमी है। एक आदमी अश्रद्धावान् है, कंजूस है, मक्खीचूस है, निन्दक है, दूसरा आदमी श्रद्धावान् है, दानशील है, त्यागी है। सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन दोनोमे से पहले किस आदमी पर कृपा करेंगे—जो अश्रद्धावान् है, जो कजूस है, जो मक्खीचूस है, जो निन्दक है, उस पर? अथवा, जो श्रद्धावान् है, दानशील है, त्यागी है, उस पर?

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन कृपा करते समय पहले उस पर क्या करेंगे? वे पहले उसी पर कृपा करेंगे जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन पहले किस आदमीके पास जायेंगे —जो अश्रद्धावान् है, जो कजूस है, जो मक्खीचूस है, जो निन्दक है, उसके पास? अथवा, जो श्रद्धावान् है, दान शील है, त्यागी है, उसके पास?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन पास जाते समय पहले उसके पास क्या जायेंगे?! वे पहले उसीके पास जायेंगे जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन पहले किस आदमीका स्वागत करेंगे—जो अश्रद्धावान् होगा, जो कजूस होगा, जो मक्खीचूस होगा, जो निन्दक होगा, उसका? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, उसका?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन पहले उसका क्या स्वागत करेंगे। वे पहले उसीका स्वागत करेंगे जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन पहले किस आदमीको धर्मोपदेश देंगे— जो अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, उसे? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, उसे?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन धर्मोपदेश देते हुए उसे पहले-पहले क्या धर्मोपदेश देंगे? वे पहले उसे ही धर्मोपदेश देंगे जो श्रद्धावान् होगा, दान-शील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, यश-प्रशंसा किसकी होगी—जो अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, उसकी? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, उसकी?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, यश-प्रशंसा उसकी क्या होगी? यश-प्रशंसा उसकी होगी जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, क्षत्रिय-परिषद्, ब्राह्मण-परिषद्, गृहपति-परिषद्, श्रमण-परिषद् अथवा अन्य किसी परिषद्में जानेवाला विश्वासके साथ और सिर ऊँचा करके कौन जायगा—जो अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खी-चूस होगा, निन्दक होगा, वह? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी-होगा, वह?

"भन्ते! जो अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, वह क्षत्रिय-परिषद्, ब्राह्मण-परिषद्, गृहपति-परिषद्, श्रमण-परिषद् अथवा अन्य किसी परिषद्में जाने पर विश्वासके साथ, सिर ऊँचा करके क्या जायेगा? भन्ते! जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, वही क्षत्रिय-परिषद्, ब्राह्मण-परिषद्, गृहपति-परिषद्, श्रमण-परिषद् अथवा अन्य किसी परिषद्में जाने पर विश्वासके साथ, सिर ऊँचा करके जायगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर कौन सुगति को प्राप्त होगा, कौन स्वर्ग लोकमें उत्पन्न होगा—जो अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, वह? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा वह?"

"भन्ते! जो अश्रद्धावान् होगा, कजूस होगा, मक्खीचूस होगा, वह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर सुगतिको क्या प्राप्त होगा, स्वर्ग लोकमें क्या उत्पन्न होगा? भन्ते! जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, वही मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होगा, वही स्वर्ग लोकमें उत्पन्न होगा।"

भन्ते! भगवान्के द्वारा जो सांदृष्टिक-फल बताये गये, उन्हें मैं भगवान्के प्रति श्रद्धा होनेके कारण ही स्वीकार नहीं करता हूँ। मैं भी इन्हे जानता हूँ। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, अर्हत् जन पहले मुझपर ही कृपा करते है। भन्ते! मैं दाता हूँ, दान-पति हूँ, अर्हत् जन पहले मेरे पास ही आते हैं। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, अर्हत् जन पहले मेरा ही स्वागत करते है। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, अर्हत्-जन

पहले मुझे ही उपदेश देते है। भन्ते! मै दाता हूँ, दानपति हूँ, मेरी ही यश-प्रशसा होती ह कि सिंह सेनापति दाता है (दान) करने वाला है, सघकी सेवा करनेवाला है। भन्ते! मै दाता हूँ, दानपति हूँ, जिस किसी परिषदमे भी जाता हूँ चाहे क्षत्रिय-परिषद् हो. . चाहे श्रमण-परिषद् हो, विश्वासके साथ ही जाता हूँ, सिर ऊँचा किये ही जाता हूँ। भन्ते! भगवान्‌के द्वारा जो सादृष्टिक-फल वताये गये, इन्हे मै भगवानके प्रति श्रद्धा होनेके ही कारण स्वीकार नही करता। मै भी इन्हे जानता हूँ। भन्ते! लेकिन आपने मुझे यह जो वताया कि हे सिह! दाता, दानपति शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है, स्वर्ग लोकमे उत्पन्न होता है—यह मै नही जानता हूँ, इसे मै भगवान्‌के प्रति श्रद्धा होनेके ही कारण स्वीकार करता हूँ।"

"सिह! यह ऐसा ही है। मिह! यह ऐसा ही है—दाता, दानपति शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है, स्वर्ग लोक मे जन्म ग्रहण करता है।

भिक्षुओ, चार विपयोमे तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नही और तीन विपयोमे तथागत पर दोषारोपण नही किया जा सकता। वे कौनसे चार विषय है, जिनमे तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नही। भिक्षुओ, तथागतके शारीरिक -कर्म परिशुद्ध है। तथागतका कोई शारीरिक दुष्कर्म ऐसा नही, जिसके विषयमे तथागतको यह सावधानी वरतनी पडे कि इसे दूसरे न जान ले। भिक्षुओ, तथागतके वाणीके कर्म परिशुद्ध है। तथागतका कोई वाणीका दुष्कर्म ऐसा नही, जिसके विषयमे तथागतको यह सावधानी वरतनी पडे कि इसे दूसरे न जान लें। भिक्षुओ, तथागतके मनके कर्म परिशुद्ध है। तथागतका कोई मानसिक दुष्कर्म ऐसा नही, जिसके विषयमे तथागतको यह सावधानी वरतनी पडे कि इसे दूसरे न जान लें। भिक्षुओ, तथागतकी जीविका परिशुद्ध है। तथागतकी कोई ऐसी मिथ्या-जीविका नही, जिसके विपयमे तथागतको यह सावधानी वरतनी पडे कि इसे दूसरे न जान ले। इन चार विपयोमें तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नही।

कोनसे तीन विषयोमें तथागत पर दोषारोपण नही किया जा सकता? भिक्षुओ, तथागतने धर्मको अच्छी तरह समझा दिया है। भिक्षुओ, मै ऐसा कोई लक्षण नही देखता कि कोई श्रमण, कोई ब्राह्मण, कोई देव, कोई मार, कोई ब्रह्मा मुझ पर यह दोषारोपण करे कि तुमने धर्मको अच्छी तरहसे समझाया नही है। भिक्षुओ, इस प्रकारका कोई लक्षण न दिखाई देनेके कारण मै सुखी, निर्भय, समर्थ हो विचरता हूँ।

"भिक्षुओ, मैंने अपने शिष्योके लिये निर्वाणगामी मार्ग स्पष्ट कर दिया है, जिस मार्गपर चलकर मेरे शिष्य, आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-

विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वय जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करते हैं। भिक्षुओ, मैं ऐसा कोई लक्षण नही देखता कि कोई श्रमण, कोई ब्राह्मण, कोई देव, कोई मार वा कोई ब्रह्मा मुझ पर यह दोपारोपण करे कि तुमने अपने शिष्योके लिये निर्वाणगामी मार्ग स्पष्ट नही किया है, जिस पर चलकर तुम्हारे शिष्य प्राप्त कर विहार करते हैं। भिक्षुओ, इस प्रकारका कोई लक्षण न दिखाई देनेके कारण मैं सुखी, निर्भय, समर्थ हो विचरता हूँ।

"भिक्षुओ, मेरी सैंकडोकी शिष्य-मडली आस्रवोका क्षय कर .. साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करती है। भिक्षुओ, मैं ऐसा कोई लक्षण नही देखता कि कोई श्रमण, कोई ब्राह्मण, कोई देव, कोई मार वा कोई ब्रह्मा मुझपर यह दोपारोपण करे कि तुम्हारी सैंकडो की शिष्य-मण्डली, आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वय जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार नही करती है। भिक्षुओ, इस प्रकारका कोई लक्षण न दिखाई देनेके कारण मैं सुखी, निर्भय, समर्थ हो विचरता हूँ। इन तीन विषयोमें तथागत पर दोपारोपण नही किया जा सकता।

भिक्षुओ, इन चार विषयोमें तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नही और इन तीन विषयोमें तथागतपर दोपारोपण नही किया जा सकता।

ऐसा मैंने सुना। एक समय किम्विला के निचुल वनमें विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् किमिल जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् किमिलने भगवानसे कहा—भन्ते! ऐसे कौनसे हेतु है, कौनसे कारण है, जिनके होनेपर तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी नही होता?"

किमिल! तथागतके परिनिर्वृत्त हो जाने पर भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकायें शास्ताके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती है, धर्मके प्रति अगौरव अनादर सहित विहार करती है, सघके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती है, शिक्षाओके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती है, समाधिके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती है, अप्रमादके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती है तथा मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं। किमिल! ये हेतु है, ये कारण है, जिनके होनेपर, तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी नही होता।"

"भन्ते! कौनसे हेतु है, कौनसे कारण है, जिनके होनेपर तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी होता है?"

"किमिल! तथागतके परिनिर्वृत्त हो जानेपर, भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकाये शास्ताके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती है, धर्मके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती है, सघके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती है, शिक्षाओके प्रति गौरव-सहित आदर सहित विहार करती है, समाधिके प्रतिआदर-गौरव सहित आदर सहित विहार करती है, अप्रमादके प्रति गौरव सहित आदर सहित व्यवहार करती है तथा मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती है। किमिल! ये हेतु है, ये कारण है, जिनके होनेपर, तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी होता है।

भिक्षुओ, सात वातोसे युक्त भिक्षु अचिरकालमें ही आस्रवोका क्षय कर----साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। कौनसी सात वातोंसे? भिक्षुओ, भिक्षु श्रद्धावान होता है, शीलवान होता है, वहुश्रुत होता है, ध्यानी होता है, प्रयत्नवान होता है, स्मृतिमान् होता है तथा प्रज्ञायुक्त होता है। भिक्षुओ, इन सात वातोसे युक्त भिक्षु अचिरकालमें ही आस्रवोका क्षय कर------साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् भग्ग (जनपद) में ससुमार गिरिके भेसकला वनके मृगदायमे विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन मगध (जनपद) के कल्लवाळपुत्त ग्राममें वैठे ऊँघ रहे थे। भगवान्ने अपने दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे देखा कि आयुष्मान महामौद्गल्यायन मगध (जनपद) के कल्लवाळपुत्त ग्राममे वैठे ऊँघ रहे है। देखकर, जैसे कोई वलवान आदमी सिकुडी हुई वाँहको पसारे, अथवा पसारी हुई वाँहको सिकोडे, इसी प्रकार भगवान् भग्ग (जनपद) में ससुमार गिरिके भेसकला वनके मृगदायसे अन्तर्धान हो मगधमें कल्लवाळपुत्त ग्राममे आयुष्मान् महामौद्गल्यायनके सम्मुख प्रकट हुए। भगवान्ने आयुष्मान् महामौद्गल्यायनको यह कहा—

"मौद्गल्यायन! तू ऊँघ रहा है न? मौद्गल्यायन! तू ऊँघ रहा है न?"

"भन्ते! हाँ"

"इसलिए, मौद्गल्यायन! जिस सज्ञासे युक्त होनेपर तन्द्रा आती हो, उस सज्ञाको मनमे स्थान न दे, उस सज्ञाको मनमें वार-वार मत ला मौद्गल्यायन! इसकी गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।"

"यदि, इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो तो हे मौद्गल्यायन! तू ने जैसे सुना है, जैसे कण्ठस्थ किया है, उसी के अनुसार उस धर्म पर तर्क-वितर्क

कर, विचार कर, मनमे मनन कर, इसकी गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

"यदि, इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू ने जैसा सुना है, जैसे कण्ठस्थ किया है, उसीके अनुसार उस धर्मका विस्तारपूर्वक पाठ कर। इस की गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

"यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू दोनो कानोको रगड दे, हाथसे शरीरको मल। इसकी गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

"यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू आसनसे उठ, आँखोपर पानीके छीटे गिरा, (चारो) दिशाओकी ओर देख, तारागण नक्षत्रोको देख। इस की गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू आलोक (=प्रकाश) सज्ञाको मनमें स्थान दे। ऐसा समझ कि दिन है—जैसा दिन वैसा ही रातको भी समझ, जैसी रात वैसा ही दिन। इस प्रकार विवृत्त आवरण-रहित चित्तसे प्रभास्वर चित्त की भावना कर। इस की गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू इन्द्रियोको भीतर सयत कर, चित्तको बाहर न जाने देकर, आगे-पीछेका ख्याल कर चन्क्रमण (=चहल कदमी) कर, इसकी गुजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू पाँव पर पाँव रख, स्मृति तथा सम्प्रजन्य युक्त हो, उठनेके सकल्पको मनमें जगह देकर दाहिनी करवट लेट जा। हे मौद्गल्यायन! तुझे प्रबुद्ध रहकर शीघ्र ही उठ जाना होगा—शय्या सुख, करवट लेटनेका सुख, तन्द्रा-युक्त रहनेका सुख अनुभव नही करना होगा। हे मौद्गल्यायन! तुझे इसी प्रकार सीखना चाहिए।

"इसलिए मौद्गल्यायन! इस प्रकार सीखना चाहिए—मैं अभिमानकी भावना लेकर (गृहस्थ) कुलोमे आना-जाना नही करूँगा। मौद्गल्यायन! यदि भिक्षु अभिमानकी भावना ले कर (गृहस्थ-)कुलोमें आना-जाना करता है, तो हे मौद्गल्यायन! (गृहस्थ-) कुलोमे बहुतसे काम-काज होते हैं, जिनमें लगे रहनेके कारण लोग आनेवाले

भिक्षुकी ओर ध्यान नही दे पाते। तब भिक्षुके मनमे होता है—किसने इन (गृहस्थ-) कूलोके मनमे मेरे प्रति दुराव पैदा कर दिया। लोग मेरे प्रति विरक्त हो गए।" इस प्रकार (स्वागत-) लाभ न होनेपर निस्तेज होना, निस्तेज होनेपर उद्धत होना, उद्धत होनेपर असयत होना, असयतका चित्त समाधिसे दूर हो जाता है।

"इसलिए मौद्गल्यायन! ऐसा सीखना चाहिए—मैं विग्रहकी बातचीत नही करूँगा। मौद्गल्यायन! तुझे ऐसा ही सीखना चाहिए। मौद्गल्यायन! विग्रहकी बातचीत आरम्भ होनेपर बहुत बोलनेकी सभावना रहती है, अधिक बोलना होनेसे उद्धतपन, उद्धतका असयम तथा असयतका चित्त समाधिसे दूर होता है। मौद्गल्यायन! न मैं सभी सगतियोकी प्रशसा करता हूँ, न मैं सभी सगतियोकी निन्दा करता हूँ। हे मौद्गल्यायन! मै गृहस्थ-प्रव्रजितोकी मण्डलीमें ही रहनेकी प्रशसा नही करता हूँ। लेकिन जो ऐसे शयनासन है, जहाँ अल्प-शब्द रहता है, जहाँ अल्पघोष रहता है, जहाँ एकान्त रहता है, जो जनाकीर्ण नही रहते है तथा जो योगाभ्यासके अनुकूल है, ऐसे स्थानो पर रहनेकी प्रशसा करता हूँ।

ऐसा कहने पर आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने भगवान्से कहा—"भन्ते! किन बातोके होनेसे भिक्षु तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है, अत्यन्त निष्ठावान्, अत्यन्त योगक्षेम युक्त, श्रेष्ठतम ब्रह्मचारी, आदर्श-मनुष्य, देवताओ तथा मनुष्योमे परमश्रेष्ठ?"

मौद्गल्यायन! एक भिक्षुने सुना होता है कि जितने भी धर्म (= इन्द्रियो तथा मनके विषय) है उनमें एक भी ऐसा नही, जिससे आसक्त रहा जाय। मौद्गल्यायन! यदि किसी भिक्षुने ऐसा सुना होता है कि जितने भी धर्म है, उनमे एक भी ऐसा नही, जिससे आसक्त रहा जाय और वह सभी धर्मोसे परिचित होता है, सभी धर्मोको पहचानता है, सभी धर्मोको पहचान कर जिस किसी भी वेदनाका—चाहे दुःख-वेदना हो, चाहे सुख वेदना हो, चाहे अदुःख-असुख वेदना हो—अनुभव करता है, उसे अनित्य समझता है, उससे विरक्त रहता है, उसके निरोधको देखता है, उसे परित्यक्त रखता है। वह उन वेदनाओको अनित्य समझता हुआ, उनसे विरक्त रहता हुआ, उनके निरोधको देखता हुआ, उन्हे परित्यक्त रखता हुआ, इस ससारमे किसी वस्तुको (मैं, मेरा करके) ग्रहण नही करता। आसक्ति रहित होनेसे त्रासको प्राप्त नही होता, अत्रसित रहकर व्यक्तिगत रूपसे निर्वाणको प्राप्त होता है। उसे बोध होता है—जन्म (—मरण) क्षीण हो गया, ब्रह्मचर्य-वासका उद्देश्य पूरा हो गया, जो कृत्य था वह कर लिया, अब यहाँके लिये और कुछ करणीय नही है। मौद्गल्यायन! भिक्षु इतना होनेसे तृष्णा-क्षय-

विमुक्त, होता है, अत्यन्त निष्ठावान्, अत्यन्त योग-क्षेम-युक्त, श्रेष्ठतम-ब्रह्मचारी, आदर्श मनुष्य, देवताओ तथा मनुष्योमे परमश्रेष्ठ।

भिक्षुओ, पुण्य (-कर्मो) से मत डरो। भिक्षुओ, पुण्य (-कर्म) सुखका ही पर्याय है। भिक्षुओ, मैं जानता हूँ कि मैंने दीर्घकाल तक जो पुण्य (-कर्म) किये उनका दीर्घ-काल तक इप्ट, सुन्दर, काम्य फल अनुभव किया। मैंने सात वर्ष तक मैत्री-चित्त की भावना की। सात वर्ष तक मैत्री-चित्त की भावना करनेके पुण्य-कर्मके फल-स्वरूप सात सवर्त- विवर्त कल्पो तक फिर इस लोकमें जन्म ग्रहण नही किया। भिक्षुओ, सवर्त (= लोक-विकास) के समय मैं आभश्वर-रूपमें हुआ, विवर्त (= लोक-ह्रास)के समय शून्य ब्रह्म-विमानमे उत्पन्न हुआ।

भिक्षुओ, वहाँ मैं ब्रह्मा हुआ, महाब्रह्मा, अभिभू, अनभिभूत, सर्व-दर्शी, वश-वर्ती। भिक्षुओ, छत्तीस वार मैं शक्र, देवेन्द्र हुआ, अनेक सौ वार राजा हुआ, चक्रवर्ती, धार्मिक, धर्मराजा, चतुर्दिशा-विजयी, शान्त-जनपद तथा सात रत्नोंसे युक्त। भिक्षुओ, मेरे पास ये सात रत्न थे—चक्ररत्न, हस्ति-रत्न, अश्व-रत्न, मणि-रत्न, स्त्री-रत्न, गृहपति-रत्न तथा सातवाँ नायक-रत्न। भिक्षुओ, मेरे सहस्राधिक पुत्र थे वीरङ्गसमान, शत्रु-सेना का मर्दन करने वाले। उस मैं ने सागर तक इस सारी पृथ्वीको विना दण्डके, विना शस्त्रके, धर्मसे जीत कर शासन किया।

पस्स पुञ्ञान विपाक, कुसलान सुखेसिनो,
मेत्त चित्त विभावेत्वा, सत्तवस्सानि भिक्खवे।
सत्तसवट्ट विवट्टकप्पे, नयिम लोक पुनागमि॥
सवट्टमाने लोकम्हि, होमि आभस्सरूपगो।
विवट्टमाने लोकस्मि, सुञ्जब्रह्मूपगो अहु॥
सत्तक्खत्तु महाब्रह्मा, वसवत्ती तदा अहु।
छत्तिसक्खत्तु देविन्दो, देवरज्जमकारयि॥
चक्कवत्ती अहु राजा, जम्बुमण्डस्स इस्सरो
मुद्धाभिसित्तो खत्तियो, मनुस्साधिपती अहु॥
अदण्डेन असत्थेन, विजेय्य पथवि इम।
असाहसेन कम्मेन, समेन सनुसासि त॥
धम्मेन रज्ज कारेत्वा, अस्मि पथविमण्डले।
महद्धने महाभोगे, अड्ढे अजायिह कुले॥

सब्बकामेहि सम्पन्ने, रतनेहि च सत्तहि।
बुद्धा सगाहका लोके, तेहि एत सुदेसित ॥
एसो हेतु महन्तस्स, पथव्यो ये न विपज्जति।
पहूतवित्तूपकरणो, राजा होति पतापवा ॥
इद्धिमा यसवा होति, जम्बुमण्डस्स इस्सरो।
को सुत्वा नप्पसीदेय्य, अपि कण्हाभिजातियो ॥
तस्मा हि अत्तकामेन, महत्तमभिकङखता।
सद्धम्मो गरुकातब्बो, सर बुद्धानसासन ॥

[सुख-कारक कुशल-कर्मों, पुण्योके विपाकको देखो। भिक्षुओ, सात वर्ष तक मैत्री-भावना करनेसे सात सवर्त-विवर्त कल्पो तक फिर इस लोकमे आगमन नही हुआ। लोकका सवर्त (=विकास) होनेके समय मै आभस्वर-स्वरूप प्राप्त रहा, लोकका विवर्त (=ह्रास) होनेके समय शून्य ब्रह्म विमानमे उत्पन्न हुआ। भिक्षुओ, मै सात बार वशवर्ती महाब्रह्मा हुआ। छत्तीस बार देवेन्द्र शक्र होकर देवताओपर राज्य किया। मै जम्बुद्वीपका राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा हुआ। मैने विना दण्डके, विना शस्त्रके, इस पृथ्वीको जीत लिया और फिर उसपर विना जबर्दस्ती (=साहसिक कर्म) किये राज्य किया। इस पृथ्वी-मण्डल पर धर्मानुकूल राज्य कर, महा धनवान्, महा ऐश्वर्यशाली कुलमे जन्म ग्रहण किया, जहाँ सभी कामनाओकी पूर्तिके साधन थे और सातो रत्न विद्यमान थे। लोकमें बुद्ध लोक सग्रह करनेवाले है। उनकी ही यह देशना है। महान् होनेका यह हेतु है। राजा होना मुझसे विरुद्ध नही पडता। (मैत्री-भावना करनेवाला) महान साधन-सम्पन्न होता है तथा प्रतापी राजा होता है। वह ऋद्धि सम्पन्न होता है, ऐश्वर्य-युक्त होता है तथा जम्बुद्वीपका मालिक होता है। "नीच जाति" का होनेपर भी होता है। इस बात को सुनकर कौन प्रसन्न नही होगा। इसलिये जो अपना हित चाहता हो, जिसके मनमें महत्त्वाकाक्षा हो, उसे बुद्धोके अनुशासनका स्मरण कर सद्धर्मके प्रति गौरव प्रदर्शित करना चाहिये।]

तब भगवान् पूर्वाह्न समय (पहनकर) पात्र चीवर ले, जहाँ अनाथपिण्डिक गृहपतिका घर था, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर आसनपर बैठे। उस समय अनाथपिण्डिक गृहपतिके घर पर लोग बहुत ऊंचे-ऊंचे बोल रहे थे, हल्ला मचा रहे थे। तब अनाथपिण्डिक गृहपति भगवान्के पास आया। पास आकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए अनाथपिण्डिक गृहपतिको भगवान्ने यह कहा—

"हे गृहपति! तुम्हारे घरमे लोग बहुत ऊँचे-ऊँचे क्यो बोल रहे है, बहुत हल्ला क्यो कर रहे है, मानो मछुवे मछलियोंके लिये झगड रहे हो?"

"भन्ते! यह सुजाता पुत्र-वधू धनी घरसे लाई गई है। न यह सासका आदर करती है, न श्वसुरका आदर करती है, न स्वामीका आदर करती है और न भगवान्का ही सत्कार करती है, गौरव करती है, मानती है, पूजती है,।"

तब भगवान्ने पुत्र-वधू सुजाताको सम्बोधित किया—"सुजाते! यहाँ आ।"

सुजाताने 'भन्ते! अच्छा' कह भगवान्को प्रतिवचन दिया और जहाँ भगवान थे वहाँ समीप पहुँची। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर, एक ओर बैठी। एक ओर बैठी हुई पुत्र-वधू सुजातासे भगवान्ने पूछा —

"सुजाता! आदमीकी सात प्रकारकी भार्यायें होती है। कौन सी सात प्रकारकी? वधक जैसी, चोरिणी जैसी, मालिकिन जैसी, माता जैसी, बहिन जैसी, सखी जैसी तथा दासी जैसी। सुजाता! आदमीकी ये सात प्रकारकी भार्यायें होती है। इनमेंसे तू कौनसी है?"

"भन्ते! भगवानके इस सक्षिप्त कथनका मैं विस्तारपूर्वक अर्थ नही जानती। भगवान् अच्छा हो कि आप मुझे ऐसा धर्मोपदेश दें, जिससे मैं भगवान्के इस सक्षिप्त कथनका विस्तारपूर्वक अर्थ जान सकूं।"

"सुजाता! तो सुन। अच्छी तरह मनमें धारण कर। कहता हूँ।"

"भन्ते अच्छा" कह पुत्र-वधु सुजाता ने भगवान् को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा

पदुट्ठचित्ता अहितानुकम्पिनी,
अञ्ञेसु रत्ता अतिमञ्ञते पतिं।
धनेन कीतस्स वधाय उस्सुका,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया।
'वधा च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[जो दूषित चित्तवाली होती है, जो अहित चाहनेवाली होती है, जो पतिकी उपेक्षा कर अन्योंके प्रति अनुरक्त रहती है, जो धन द्वारा क्रीतके वधके लिये उत्सुक रहती है—पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'वधक जैसी भार्य्या' कहलाती है।']

य इत्थिया विन्दति सामिको धन,
सिप्पं वणिज्ज च कसिं अधिट्ठह।
अप्प पि तस्स अपहातुमिच्छति

या एवरूपा पुरिसस्स भरिया
'चोरी च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[शिल्प, वाणिज्य वा कृषि से प्राप्त जो धन स्वामी स्त्रीको देता है, वह उस मेंसे कुछ भी नही छोडती है—पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'चोरिणी जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

अकम्मकामा अलसा महग्घसा,
फरुसा च चण्डी दुरुत्तवादिनी।
फरुसा च चण्डी दुरुत्तवादिनी।
उट्ठायकान अभिभुय्य वत्तति,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया
'अय्या च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[निकम्मी रहनेवाली, आलस्य-प्रधान, खूब खाने-पीने वाली, कठोर-स्वभाव-वाली, प्रचण्ड, अपशब्द बोलने वाली तथा पतिके उत्साहको दबा देनेवाली—पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'मालकिन जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

या सब्बदा होति हितानुकम्पिनी,
माता व पुत्त अनुरक्खते पतिं।
ततो धन सम्भतमस्स रक्खति,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया,
'माता च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[जो सदैव हित चाहने वाली होती है, जो पतिकी इस प्रकार देख-भाल रखती है, जैसे माता पुत्रकी, जो पतिके कमाये हुए धनकी रक्षा करती है। पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'माता जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

यथा पि जेट्ठा भगिनी कनिट्ठका,
सगारवा होति सकम्हि सामिके।
हिरीमना भत्तुवसानुवत्तिनी,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया ॥
'भगिनी च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[जो छोटी या बडी बहनके समान अपने स्वामी के प्रति गौरवका भाव रखती है, लज्जाशील होती है, पतिकी आज्ञामें रहनेवाली होती है—पुरुषकी इस प्रकारकी भार्या 'बहन जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

या चीध दिस्वान पतिं पमोदति,
सखी सखार व चिरस्समागत।
कोलेय्यका सीलवती पतिब्बता,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया।
'सखी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[जैसे चिरकालके अनन्तर आगत सखा को देखकर कोई सखी प्रसन्न होती है, उसी प्रकार जो कुलीन, शीलवान् पतिव्रता नारी अपने पतिको देखकर प्रमुदित होती है—पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'सखी जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

अक्कुद्ध सन्ता वधदण्डतज्जिता
अदुट्ठचित्ता पतिनो तितिक्खति।
अक्कोधना भत्तुवसानुवत्तिनी,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया॥
'दासी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[जो मारने-पीटनेका डर दिखाये जानेपर भी क्रोधित न होनेवाली, शान्त रहने वाली, द्वेष रहित चित्तसे पति (की हर बात) को सहन करती है, जिसे क्रोध नही आता, जो स्वामीके वशमें रहने वाली होती है— पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'दासी जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

"या चीध भरिया वधका ति वुच्चति,
'चोरी च अय्या' ति च या पवुच्चति।
दुस्सीलरूपा फरुसा अनादरा,
कायस्स भेदा निरयं वजन्ति ता॥

[जो 'वधक जैसी भार्य्या' कहलाती है, जो 'चोरिणी जैसी भार्य्या' कहलाती है तथा जो 'मालकिन जैसी भार्य्या' कहलाती है— ये दुश्शील होती है, कठोर स्वभावकी होती है, (पतिका) आदर न करने वाली होती है—ऐसी भार्यायें शरीरके न रहनेपर नरक गामिनी होती है।]

'या चीध माता भगिनी सखी' ति च,
'दासी च भरिया' ति च सा पवुच्चति।
सीले ठितत्ता चिररत्तसंवुता,
कायस्स भेदा सुगतिं वजन्ति ता ति॥

[जो 'माता जैसी भार्य्या' कहलाती है, 'बहन जैसी भार्य्या' कहलाती है, 'सखी जैसी भार्य्या' कहलाती है, तथा 'दासी जैसी भार्य्या' कहलाती है–ये शीलवान् भार्यायें दीर्घकाल तक सयत जीवन व्यतीत करनेके कारण शरीर छुटनेपर स्वर्ग लोकमे जन्म ग्रहण करती हैं।]

सुजाता! आदमीकी ये सात प्रकारकी भार्यायें होती हैं। उनमे तू कौन सी है?

"भन्ते! आजसे भगवान् मुझे स्वामीकी 'दासी समान भार्य्या' जाने।"

भिक्षुओ, ये सात वाते ऐसी हैं जो वैरियोको प्रिय है, वैरियोको अच्छी लगती है, और जो स्त्री अथवा पुरुषके मनमे क्रोध उत्पन्न करती है। कौन सी सात? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा है कि वह दुर्वर्ण हो जाय। ऐसा किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीको सुवर्ण देखकर प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधसे अभिभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसने चाहे कितना भी स्नान किया हो, लेप किया हो, हजामत बनाई हो, श्वेत-वस्त्र पहने हो, वह क्रोधके वशीभूत होनेके कारण दुर्वर्ण ही होता है। भिक्षुओ, यह पहली वात है जो वैरियोको प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है और जो स्त्री अथवा पुरुषके मनमे क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो यदि वह दुखी लेटे। यह किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीको कभी सुखी देखकर प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधसे अभिभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, वह चाहे जैसे भी पलग पर सोये—चाहे झालरदार ऊनी आस्तरण वाले पलगपर, चाहे फूलदार ऊनी आस्तरण वाले पलगपर, चाहे कदलि-मृगकी छालके आस्तरण वाले पलंगपर, चाहे वितानवाले पलगपर तथा चाहे दोनो ओरसे लाल रगके तकियो वाले पलग पर —वह क्रोधके वशीभूत होनेके कारण दुखी ही सोता है। भिक्षुओ, यह दूसरी वात है जो वैरियोको प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है, और जो स्त्री अथवा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि उसके पास प्रचुर धन न हो। यह किस लिये? भिक्षुओ एक वैरी अपने वैरीके पास प्रचुर धन देखकर प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके अभीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, वह अर्थको अनर्थ और अनर्थको अर्थ मानता है।

क्रोधके वशीभूत होनेके कारण, वह इन बातोको उलटा ही ग्रहण करता है और इसी कारण दीर्घ काल तक उसे दुःख होता है, उसका अहित होता है। भिक्षुओ, यह तीसरी बात है जो वैरियोको प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि उसके पास धन न हो। यह किस लिये ? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके पास ऐश्वर्य देखकर प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसने उत्साह तथा प्रयत्नसे, बाहुओंके बलसे, पसीना बहाकर, धर्मानुसार, धार्मिक रीतिसे भी जो धन कमाया होता है, वह भी उसके क्रोधी होनेके कारण राजपुरुष राजकीय-कोषमें जमा कर लेते हैं। भिक्षुओ, यह चौथी बात है, जो वैरियोको प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि इसके पास ऐश्वर्य न हो। यह किस लिये ? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके पास ऐश्वर्य देखकर प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसने आलस्य रहित होकर जो ऐश्वर्य कमाया होता है, वह भी उसके क्रोधी होनेके कारण नष्ट हो जाता है। भिक्षुओ, यह पाचवी बात है, जो वैरियोको प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमे क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी दूसरे वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि इसके कोई मित्र न रहे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके मित्र देखकर प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसके जो यार-दोस्त रक्त-सम्बन्धी होते है, वे भी उसके क्रोधी होनेके कारण, उससे दूर दूर हो जाते हैं। भिक्षुओ, यह छठी बात है, जो वैरियो को प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी दूसरे वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि यह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त हो, नरकमे जन्म ग्रहण करे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, एक वैरी दूसरे वैरीके सुगति-गमनसे प्रसन्न नही होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है,

वह शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है, मनसे दुष्कर्म करता है। वह क्रोधी होनेके कारण शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म कर, शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह सातवी बात है, जो वैरियोको प्रिय है, जो वैरियोको अच्छी लगती है और जो स्त्री वा पुरुषके मनमे क्रोध उत्पन्न करती है।

कोधनो दुब्बणो होति, अथो दुक्खपि सेति सो।
अयो अत्थ गहेत्वान, अनत्थ अधिपज्जति ॥

[जो क्रोधी होता है, वह दुर्वर्ण होता है, वह दुक्खको प्राप्त होता है, वह अर्थ को अनर्थ करके ग्रहण करता है।]

ततो कायेन वाचाय, वध कत्वान कोधनो।
कोधाभिभूतो पुरिसो, धनजानिं निगच्छति ॥

[तब क्रोधी आदमी शरीर तथा वाणीसे वध (=दुष्कर्म) कर धनकी हानि को प्राप्त होता है।]

कोधसग्गमदसम्मत्तो, आयसक्य निगच्छति।
जातिमित्तासुहज्जा च, परिवज्जन्ति कोधन ॥

[क्रोध रूपी मद से उन्मत्त हुए आदमीका यश (ऐश्वर्य) नष्ट हो जाता है। क्रोधी आदमी के रिश्तेदार तथा मित्र गण उसे त्याग देते है।]

अनत्थजननो कोधो, कोधो चित्तप्पकोपनो,
भयमन्तरतो जात, त जनो नावबुज्झति ॥

[क्रोध अनर्थकारी होता है, क्रोधसे चित्त प्रकुपित होता है, अपने अन्दरसे ही भय उत्पन्न हो जाता है—आदमी उसे नही जान पाता।]

कुद्धो अत्थ न जानाति, कुद्धो धम्म न पस्सति।
अन्धतम सदा होति, य कोधो सहते नर ॥

[क्रोधी आदमीके लिये अर्थ-अनर्थका बोध नही रहता। क्रोधी आदमी धर्मको नही देख सकता। उस पर सदा अन्धकार छाया होता है, जिस पर क्रोध सवार रहता है।]

य कुद्धो उपरोधेति, सुकर विय दुक्कर।
पच्छा सो विगते कोधे, अग्गिदड्ढोव तप्पति ॥

[जिस दुष्कर कार्यको, क्रोधी आदमी, सुकरकी तरह (नष्ट) कर डालता है बादमें क्रोधके उतर जाने पर, वह आगसे जलाये गये की तरह अनुतप्त होता है।]

दुग्गमङ्कुय पदस्सेति, धूम धूमीव पावको
यतोपतायति कोधो, येन कुज्झन्ति मानवा॥

[जिस क्रोधसे आदमी क्रोधित होते है, वह क्रोध उतर जानेपर आदमी इसी प्रकार निस्तेज हो जाते है जैसे धुएँ वाली अग्नि।]

नास्स हिरी न ओत्तप्य, न वाचो होति गारवा।
कोधेन अभिभूतस्स, न दीप होति किञ्चन॥

[जो क्रोधके वशीभूत होता है, न उसे लज्जा होती है, न (पाप–) भीरुता होती है, न उसकी वाणीमें गौरवका भाव रहता है। उसके लिये कुछ भी आश्रय-स्थान नही रहता।]

तपनीयानि कम्मानि, यानि धम्मेहि आरका।
तानि आरोचयिस्सामि, त सुणाथ यथातथ॥

[जो कर्म तपाने वाले है, जो धर्म से (बहुत) दूर है, उन्हे कहता हूँ, उन्हें यथार्थ रूपने सुनो।]

कुद्धो हि पितर हन्ति, हन्ति कुद्धो समातर
कुद्धोहि ब्राह्मण हन्ति, हन्ति कुद्धो पुथुज्जन॥

[क्रोधी आदमी पिताकी हत्या कर डालता है। क्रोधी आदमी माताकी हत्या कर डालता है। क्रोधी आदमी श्रेष्ठ पुरुष की हत्या कर डालता है। क्रोधी आदमी अज्ञ जनकी हत्या कर डालता है।]

याय मातु भतो पोसो, इम लोक अवेक्खति।
तपि पाणदर्दि मन्ति, हन्ति कुद्धो पुथुज्जनो॥

[जिम माताके द्वारा पोपित होकर प्राणी इस लोकको देखता है, क्रुद्ध अज्ञानी आदमी उम प्राण देने वाली जननीकी भी हत्या कर डालता है।]

अत्तूपमा हि ते सत्ता, अत्ता हि परमो पियो।
हन्ति कुद्धो पुथुत्तान, नानारूपेसु मुच्छितो॥

[सभी प्राणी अपने समान है, किन्तु अपना-आप ही सर्वाधिक प्रिय होता है। क्रोधसे मूर्छित हुए प्राणी नाना रूपमे आत्म-हत्या तक कर डालते है।]

असिना हन्ति अत्तान, विस खादन्ति मुच्छिता,
रज्जुया बज्झ मीयन्ति, पब्बतामपि कन्दरे॥

[(क्रोधसे) मूर्छित जन तलवारसे आत्म-हत्या कर लेते है, वे विप खा लेते है, वे (गलेमें) फाँसी लगाकर भी मर जाते है तथा पर्वतोकी कन्दराओमें गिरकर भी प्राण गवाँ देते है।]

भूनहच्चानि कम्मानि, अत्तमारणियानि च।
करोन्ता नाववुज्झन्ति, कोधजातो पराभवो॥

[ऐसे लोग भ्रूण-हत्या तथा आत्म-हत्या आदि कर्म करते हुए भी कुछ नही समझते। क्रोध ही पतनका जनक है।]

इताय कोधरूपेन, मच्चुपासो गुहासयो।
तदमेन समुच्छिन्दे, पञ्ञाविरियेन दिट्ठिया॥

[इस प्रकार क्रोधके रूपमे यह छिपा हुआ मृत्यु-पाश है। बुद्धिमान आदमीको चाहिये कि इन्द्रिय-सयम, प्रज्ञा, वीर्य्य तथा (सम्यक्) दृष्टि से इसकी जड काट दे।]

यथा मेत अकुसल, समुच्छिन्देथ पण्डितो।
तथेव धम्मे सिक्खेथ, मा नो दुम्मकुय अहु॥

[पण्डित आदमीको चाहिये कि जिस प्रकार वह इस अकुशल (अशुभ) कर्मकी जड खोदे, उसी प्रकार वह धर्मका शिक्षण ग्रहण करे, जिससे वह निस्तेज न हो।]

वीतकोधा आनायासा, वीतलोभा अनुस्सुका।
दन्ता कोध पहन्त्वान, परिनिब्बन्ति अनासवा॥

[जो क्रोध-रहित होते है, जो आयास (=दु ख)—रहित होते है, जो लोभ रहित होते है, जो उत्सुकता(=चचलता) रहित होते है, जो सयत होते है—ऐसे जन क्रोधका त्यागकर परिनिर्वाण को प्राप्त होते है।]

(७) महावग्ग

भिक्षुओ, लज्जा तथा (पाप) भीरुताके न रहने पर, लज्जा तथा (पाप) भीरुताका अभाव हो जाने पर (आदमीके) इन्द्रिय-सयमका ह्रास हो जाता है; इन्द्रिय-सयमके न रहने पर, इन्द्रिय-सयमका अभाव हो जाने पर (आदमीके) शीलका ह्रास हो जाता है, शीलके न रहनेपर, शीलका अभाव हो जाने पर सम्यक् समाधि का ह्रास हो जाता है, सम्यक् समाधिके न रहने पर, सम्यक् समाधिका ह्रास हो जाने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका ह्रास हो जाता है, यथाभूत ज्ञान-दर्शन के न रहने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका अभाव हो जाने पर, निर्वेद-वैराग्यका ह्रास हो जाता है, निर्वेद-वैराग्यके न रहने पर, निर्वेद-वैराग्यका ह्रास हो जानेपर विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनका ह्रास हो जाता है।

भिक्षुओ, जैसे किसी वृक्षकी शाखाये और पत्ते न रहे। उसकी पपडी, त्वचा फेग्गु तथा सार भी पूर्णता को प्राप्त नही होता। इसी प्रकार भिक्षुओ, लज्जा

तया (पाप)–भीरुताके न रहने पर, लज्जा तथा (पाप) का अभाव हो जाने पर (आदमीके) इन्द्रिय-सयमका ह्रास हो जाता है। इन्द्रिय-सयमके न रहनेपर, इन्द्रिय-सयमका अभाव हो जाने पर, शीलका ह्रास हो जाता है, शीलके न रहने पर, शीलका अभाव हो जाने पर, सम्यक् समाधिका ह्रास हो जाता है, सम्यक् समाधिके न होनेपर, सम्यक् समाधिका ह्रास हो जाने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका ह्रास हो जाता है, यथाभूत ज्ञान-दर्शनके न रहने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका अभाव हो जाने पर, निर्वेद-वैराग्यका ह्रास हो जाता है, निर्वेद-वैराग्यके न रहने पर, निर्वेद वैराग्यका ह्राम हो जाने पर विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनका ह्रास हो जाता है।

भिक्षुओ, लज्जा तया (पाप–) भीरुताके रहने पर, लज्जा तथा (पाप–) भीरुतासे युक्त होने पर इन्द्रिय-सयम में वृद्धि होती है, इन्द्रिय सयमके रहने पर, इन्द्रिय-सयममे युक्त होने पर शीलमें वृद्धि होती है, शीलके रहने पर, शीलसे युक्त होने पर, सम्यक् ममाधिमें वृद्धि होती है, सम्यक् समाधिके रहने पर, सम्यक् समाधि से युक्त होने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनमें वृद्धि होती है, यथाभृत-ज्ञान-दर्शनके रहने पर यथाभूत ज्ञान-दर्शनसे युक्त होने पर, निर्वेद-वैराग्यमे वृद्धि होती है, निर्वेद-वैराग्यके रहने पर, निर्वेद-वैराग्यसे युक्त होने पर, विमुक्ति ज्ञान-दर्शनमें वृद्धि होती है।

भिक्षुओ, जैसे वृक्ष शाखाओ और पत्तोसे युक्त हो। उसकी पपडी, त्वचा, फेग्गु तथा सार-मभी पूर्णताको प्राप्त होते है। इसी प्रकार भिक्षुओ, लज्जा तथा (पाप-) भीरुता के रहने पर, लज्जा तथा (पाप–) भीरुतासे युक्त होने पर . . . विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन में वृद्धि होती है।

ऐमा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीके अम्बपाली-वनमें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओको आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ।" उन भिक्षुओने भगवानको "भदन्त" कह कर प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

भिक्षुओ, मम्कार अनित्य है, भिक्षुओ, सम्कार अध्रुव है, भिक्षुओ, मम्कार अविग्वसनीय है। भिक्षुओ, जितने भी सस्कार है, उन सभी सस्कारोंसे निर्वेद प्राप्त करना, वैराग्य प्राप्त करना, मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, जो मिनेर (मुमेरु) पर्वत-राजा है, उसकी चौरासी हजार योजन की लम्बाई है, चौरामी हजार योजन की चौडाई है, चौरासी हजार योजन तक महा ममुद्रके अन्दर धँमा है, चौरामी हजार योजन तक महासमुद्रके ऊपर उठा है। भिक्षुओ, ऐसा नमय आता है, जब कभी कभी दीर्घ काल तक, वहुत वर्षो तक, वहुतसे सैकडों वर्षो तक, वहुतसे हजारो वर्षो तक, वहुतमे लाखो वर्षो तक वर्षा नही होती। भिक्षुओ

देवता (= वर्षा) के न वरसनेपर जितने भी बीज है, जितने भी पौधे है—औषधियाँ, घास, वनस्पतियाँ—वे सूख जाते है, एक दम सूख जाते है, नही रहते है। भिक्षुओ, सस्कार ऐसे अनित्य है, भिक्षुओ, सस्कार ऐसे अध्रुव है मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जव कभी कभी दीर्घ कालके वाद दूसरा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, दूसरे सूर्यके उदय होने से, जो छोटी-मोटी नदियाँ होती है, जो छोटे-मोटे तालाव होते है, वे सूख जाते है, भिक्षुओ, सस्कार ऐसे अनित्य है मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जव कभी कभी दीर्घकालके वाद तीसरा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, तीसरे सूर्यके उदय होनेसे, जो महानदियाँ होती है, जैसे गगा, यमुना, अचिरवती, सरभु (= सरयू) तथा मही, वे सूख जाती है, एक दम सूख जाती है, नही रहती है। भिक्षुओ, सस्कार ऐसे अनित्य है मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जव कभी कभी दीर्घ कालके वाद चौथा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, चौथे सूर्यके उदय होने पर जो वे महान् सरोवर होते है—जिनसे ये नदियाँ निकलती है—जैसे अनोतप्त, सिंहप्रपात, रथकार, कर्णमुण्ड, कुणाल, षडदन्त तथा मन्दाकिनी —वे सूख जाती है, एकदम सूख जाती है, नही रहती है। भिक्षुओ, सस्कार ऐसे ही अनित्य है मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है जव कभी कभी दीर्घकालके वाद पाँचवा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, पाँचवे सूर्यके उदय होने पर महासमुद्रका पानी सौ योजन भी नीचे उतर जाता है, दो सौ योजन भी नीचे उतर जाता है, तीन सौ योजन भी, चार सौ योजन भी, पाँच सौ योजन भी, छह सौ योजन भी तथा महासमुद्रका पानी सात सौ योजन भी नीचे उतर जाता है। तव महासमुद्रमें सात ताडकी गहराई तक पानी रहता है, छह ताड तक भी, पाँच ताड तक भी, चार ताड तक भी, तीन ताड तक भी, दो ताड तक भी तथा महासमुद्रमे एक ताड की गहराई तक का भी पानी रहता है। तव महासमुद्रमे सात पोरसा पानी भी रहता है, छह पोरसा भी, पाँच पोरसा भी, चार पोरसा भी, तीन पोरसा भी, दो पोरसा भी, एक पोरसा भी, आधा पोरसा भी, कमर तक भी, घुटने तक भी तथा महासमुद्रमे केवल एडी तककी गहराई भर भी पानी रहता है। भिक्षुओ जैसे शीत कालमे थोडी वर्षा होनेपर जहाँ तहाँ गौओके खुरोके निशानोमें पानी रुका रहता है, इसी प्रकार भिक्षुओ महासमुद्रका

पानी जहाँ तहाँ एडी भर की गहराई तक रहता है। भिक्षुओ, पाँचवे सूर्यके उदय होनेपर महासमुद्रमें उँगलीके पोर भर भी पानी नहीं रहता, भिक्षुओ, संस्कार ऐसे ही अनित्य हैं मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घकालके बाद छठा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, छठे सूर्यके उदय होने पर, यह महापृथ्वी तथा सिनेरु (= सुमेरु) पर्वतराज धुँधवाने लगता है, बहुत धुँधवाने लगता है, बहुत बहुत धुँधवाने लगता है। भिक्षुओ, जैसे कुम्हारका आवा चढने पर पहले धुँधवाता है, बहुत धुँधवाता है, बहुत बहुत धुँधवाता है। भिक्षुओ, इसी प्रकार छठे सूर्यके उदय होने पर, यह महापृथ्वी तथा सिनेरु (= सुमेरु) पर्वतराज धुंधवाने लगता है, बहुत धुँधवाने लगता है, बहुत बहुत धुँधवाने लगता है। भिक्षुओ, संस्कार ऐसे ही अनित्य हैं मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घकालके बाद सातवाँ सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, सातवें सूर्यके उदय होने पर यह महापृथ्वी और यह सिनेरु पर्वतराज जलता है, प्रज्वलित होता है, एक ज्वाला हो जाता है।

भिक्षुओ, इस महापृथ्वी तथा सिनेरु पर्वत-राजके जलनेपर, दहनेपर, अग्नि-ज्वाला वायुके वेगसे ब्रह्मलोक तक भी पहुँचती है। भिक्षुओ, सिनेरु पर्वतराजके जलने पर, दहने पर, विनष्ट होने पर, महान् अग्नि-स्कन्धसे पराभूत होनेके कारण सौ योजनके शिखर भी जल उठते हैं, दो सौ योजनके शिखर भी, तीन सौ योजनके, चार सौ योजनके तथा पाँच सौ योजनके शिखर भी जल उठते हैं। भिक्षुओ, इस महापृथ्वी तथा सिनेरु पर्वतराजके जलने पर उसकी राख या कालिख नहीं दिखाई देती। भिक्षुओ, जैसे घी या तेलके जलने पर, दहने पर, न उसकी राख दिखाई देती है, न कालिख। भिक्षुओ, इसी प्रकार, इस महापृथ्वी तथा सिनेरु पर्वतराजके जलने पर, दहने पर, न राख दिखाई देती है, न कालिख। भिक्षुओ, इस प्रकार संस्कार अनित्य हैं, भिक्षुओ, संस्कार अध्रुव हैं, भिक्षुओ, संस्कार अविश्वसनीय हैं। भिक्षुओ, जितने भी संस्कार हैं, उन सभी संस्कारोंसे निर्वेद प्राप्त करना, वैराग्य प्राप्त करना, मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, दृष्ट-पद (= स्रोतापन्न आर्य-श्रावक) के अतिरिक्त कौन है जो यह माने, जो यह विश्वास करे कि यह पृथ्वी और सिनेरु पर्वतराजा जलेगा, दहेगा?

भिक्षुओ, पहले सुनेत्र नामका, काम-भोगोंके प्रति वीत राग तीर्थंकर शास्ता हुआ। भिक्षुओ सुनेत्र शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। भिक्षुओ, सुनेत्र शास्ता

अपने शिष्योको ब्रह्म-सायुज्य का उपदेश देता था। भिक्षुओ, जिन (श्रावकोने) सुनेत्र शास्ताके ब्रह्मसायुज्य के धर्मोपदेश को सुनकर उसके अनुसार सम्पूर्ण रूपसे आचरण किया, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त हुए, ब्रह्मलोकमे उत्पन्न हुए। जिन्होने सम्पूर्ण रूपसे उस मार्गका अनुसरण नही किया, उनमें से कुछ शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, परनिर्मित—वशवर्ती दिव्य-लोकमे पैदा हुए। कुछ निर्माण-रति देवताओके लोकमे उत्पन्न हुए, कुछ त्रयोत्रिश देवताओके लोकमे उत्पन्न हुए, कुछ चातुर्महाराजिक देवताओके लोकमे उत्पन्न हुए, कुछ ऐश्वर्यशाली क्षत्रियोके साथी होकर उत्पन्न हुए, कुछ ऐश्वर्यशाली ब्राह्मणोके साथी होकर उत्पन्न हुए तथा कुछ ऐश्वर्य शाली गृहपतियोके साथी होकर उत्पन्न हुए।

भिक्षुओ, तब सुनेत्र शास्ताके मनमे यह विचार पैदा हुआ कि यह मेरे लिये योग्य नही कि परलोकमे मेरी भी वह गति हो, अपने श्रावको जैसी ही हो, मै विशेष मैत्रीकी भावना करूँ।

भिक्षुओ, सुनेत्र शास्ताने सात वर्ष तक मैत्री-चित्तकी भावना की। सात वर्ष तक मैत्री-चित्तकी भावना करनेके पुण्य-कर्मके फलस्वरूप सात सवर्त—विवर्त कल्पो तक फिर इस लोकमे जन्म ग्रहण नही किया। भिक्षुओ, सवर्तके समय आभा-श्वर रूप होता है। विवर्तके समय शून्य ब्रह्म-विमानमे उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, वहाँ ब्रह्मा होता है, महाब्रह्मा, अभिभूत, अनभिभूत, सर्वदर्शी, वशवर्ती। भिक्षुओ, छत्तिस वार वह शक्र देवेन्द्र हुआ, अनेक सौ वार राजा हुआ, चक्रवर्ती, धार्मिक, धर्म-राजा, चतुर्दिश-विजयी, शान्त-जनपद तथा सात रत्नोसे युक्त। भिक्षुओ, उसके सहस्राधिक पुत्र थे, वीरग-समान, शत्रु सेनाका मर्दन करने वाले। उसने सागर तक, इस सारी पृथ्वीको विना दण्डके, विना शस्त्रके, धर्मसे जीतकर शासन किया। भिक्षुओ, वह सुनेत्र शास्ता इतनी लम्बी आयु वाला होनेपर भी, इस प्रकार चिरस्थायी होने पर भी, मै कहता हूँ कि जन्म,जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुक्ख-दौर्मनस्य, पश्चातापसे दुखसे—मुक्त नही था।

यह किसलिये? भिक्षुओ, चार वातोके विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण। कौन सी चार वातोके? भिक्षुओ, आर्य-शीलके विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण , आर्य समाधिके विषयमे अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण, आर्य-प्रज्ञाके विषयमे अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण, आर्य-विमुक्ति के विषयमे अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण। भिक्षुओ, आर्य-शीलका ज्ञान होनेसे, अभ्यास होनेसे, आर्य-समाधिका ज्ञान

होनेसे, अभ्यास होनेसे, आर्य-प्रज्ञाका ज्ञान होनेसे, अभ्यास होनेसे भव-तृष्णाकी जड खुद गई, जन्म-परम्परा क्षीण हो गई, अब पुनर्भव नहीं है।

भगवान् ने यह कहा। तदनन्तर शास्ताने यह कहा—

सील समाधि पञ्ञा च, विमुत्तिच अनुत्तरा।
अनुबुद्धा इमे धम्मा, गोतमेन यसस्सिना॥
इति बुद्धो अभिञ्ञाय, धम्ममक्खासि भिक्खुन।
दुक्खस्सन्तकरो सत्था, चक्खुमा परिनिब्बुतो॥

[यशस्वी गौतमने शील, समाधि, प्रज्ञा तथा श्रेष्ठतम विमुक्तिको जाना। बुद्धने धर्मको जानकर भिक्षुओंको उपदेश किया। दुःखका अन्त करनेवाले चक्षु-मान शास्ता परिनिर्वाणको प्राप्त हो गये]

भिक्षुओ, जब राजाका सीमा-प्रदेशका नगर सात आवश्यकताओंसे युक्त होता है तथा उस नगरको चार प्रकारके आहार सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं, प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं तो वह नगर बाह्य शत्रुओंके लिये, दुश्मनोंके लिये आक्रमण करनेके अयोग्य हो जाता है।

वह नगर किन सात बातोंसे युक्त होकर सुरक्षित होता है? भिक्षुओ, राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें गहराई तक, अच्छी तरह गड़ा हुआ, अचल, स्थिर स्तम्भ होता है। यह नगरकी पहली आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर रहने वालों को सुरक्षित रख सकता है और बाहर वालोंसे सघर्ष कर सकता है।

फिर भिक्षुओ, राजाके सीमा-प्रदेशके नगरके गिर्द गहरी तथा चौड़ी खाई होती है। यह नगरकी दूसरी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर रहने वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहरवालोंसे सघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमे चौगिर्द, ऊँचा, चौड़ा उप-पथ होता है। यह नगरकी तीसरी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहर वालोंसे सघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें बहुतसे आयुध-अस्त्र-शस्त्र-इकट्ठे किये होते हैं। यह नगरकी चौथी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहर वालोंसे सघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें बहुत-सी सेना रहती है, जैसे हाथी-सवार, अश्वारोही, रथिक, धनुर्धारी, ध्वजा लेकर चलने वाले (=चेलका) सेना व्यूहकारक (=चलक), साहसी महायोद्धा (=पिण्ड दायक), उग्र राजपुत्र

उछल कर शत्रुका हथियार छीन ले आने वाले (= पक्खन्दिनो), हाथियोंसेभी जूझ सकने वाले (= महानाग), शूर, चर्म-योद्धा तथा दास-पुत्र। यह नगरकी पाँचवीं आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोको सुरक्षित रख सकता है तथा वाहर वालोसे सघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमे पण्डित, व्यक्त, मेधावी द्वारपाल होता है, जो परिचितोको नगरमे प्रविष्ट होने देता है, अपरिचितोको नगरमे प्रविष्ट होने नही देता है। यह नगरकी छठी आवश्यकता है, जिससे युक्त होनेपर नगर भीतर वालोको सुरक्षित रख सकता है, तथा वाहर वालोसे सघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमे चार-दीवारी होती है, जो ऊँची होती है, चौडी होती है तथा सभी छिद्रोको वन्द कर देने वाले चूनेसे पुती होती है। यह नगरकी सातवी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोको सुरक्षित रख सकता है तथा वाहर वालोसे सघर्ष कर सकता है। इन सात आवश्यकता-ओंसे नगर सुरक्षित होता है।

कौनसे चार प्रकार के आहार सुलभ होते है, विना कष्टके प्राप्य होते है, प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते है ? फिर भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमे वहुत सा घास, लकडी तथा पानी एकत्र किया हुआ होता है, जिससे नगरवासी प्रसन्न रहते है, निश्चिन्त रहते है, सुखपूर्वक रहते है तथा वारहवालोसे सघर्ष हो सकता है।

भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमें वहुत सा धान-जौ एकत्र किया हुआ होता है, जिससे नगर-वासी प्रसन्न रहते है, निश्चिन्त रहते है, सुखपूर्वक रहते है तथा वाहर वालोसे सघर्ष हो सकता है।

फिर भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमे वहुत से तिल, मूंग, मास तथा दूसरे धान्य इकट्ठे किये होते हैं, जिससे नगर वासी प्रसन्न रहते है, निश्चिन्त रहते है, सुखपूर्वक रहते है तथा वाहर वालोसे सघर्प हो सकता है।

फिर भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमें वहुत भैषज्य जैसे घी, मक्खन, मधु, शक्कर तथा लवण, इकट्ठे किये होते है जिससे नगर वासी प्रसन्न रहते है, निश्चिन्त रहते है, सुख-पूर्वक रहते हैं तथा वाहर वालोसे सघर्ष हो सकता है। भिक्षुओ, ये चार प्रकारके आहार सुलभ होते है, विना कष्टके प्राप्य होते है, प्रचुर मात्रमे प्राप्त होते है।

भिक्षुओ, जव राजाका सीमा-प्रदेशका नगर सात आवश्यकताओसे युक्त होता है तथा उस नगरको चार प्रकारके आहार सुलभ होते है, विना कष्टके प्राप्य

होते हैं, प्रचुर मात्रामे प्राप्य होते है, तो वह नगर बाह्य शत्रुओके लिये, दुश्मनोके लिये आक्रमण करनेके अयोग्य हो जाता है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक सात गुणोसे युक्त होता है और उसे इसी जन्ममें सुख देने वाले चारो चैतसिक ध्यान सुलभ रहते है, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं तथा प्रचुर मात्रामे प्राप्य होते है, तो भिक्षुओ, आर्य-श्रावक पापी मारके आक्रमणके अयोग्य हुआ कहलाता है। वह किन सात गुणोसे युक्त होता है?

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें गहराई तक, अच्छी तरह गडा हुआ, अचल, स्थिर स्तम्भ होता है, जो भीतर वालोको सुरक्षित रखता है और जिसके होनेसे बाहर वालोसे सघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक श्रद्धावान् होता है, तथागतकी बोधिके प्रति श्रद्धायुक्त होता है, 'यह भगवान् अर्हत, है भगवान् है।' भिक्षुओ, श्रद्धारूपी स्तम्भ वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोडकर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस प्रथम गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरके गिर्द गहरी तथा चौडी खाई होती है, जो भीतर वालोको सुरक्षित रखती है और जिसके होनेसे बाहर वालोसे सघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य श्रावक लज्जावान् होता है। उसे शरीर, वाणी, मनसे दुष्कर्म करते लज्जा आती है। वह पाप-कर्मोसे दूर रहता है। भिक्षुओ, लज्जारूपी खाई वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोडकर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस दूसरे गुण (सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें चौगिर्द, ऊँचा, चौडा उपपथ होता है, जो भीतरवालोको सुरक्षित रखता है और जिसके होनेसे बाहर वालोंसे सघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक (पाप–) भीरु होता है। उसे शरीर, वाणी, मन से दुष्कर्म करते डर लगता है। वह पाप-कर्मोसे दूर दूर रहता है। भिक्षुओ, (पाप–) भीरुता रूपी उप-पथ वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोडकर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस तीसरे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमे वहुतसे आयुध—अस्त्र-शस्त्र—इकट्ठे किये होते है, जो भीतर वालोको सुरक्षित रखते है, और जिनके होनेसे बाहर वालोसे सघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक वहुश्रुत होता है— सम्यक् दृष्टिसे भली प्रकार ज्ञात किये रहते है। भिक्षुओ, श्रुत (ज्ञान) रूपी आयुध वाला आर्य–श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोडकर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस चौथे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें वहुत-सी सेना रहती है—हाथी-सवार, अश्वारोही, रथिक, धनुर्धारी, ध्वजा लेकर चलने वाले (=चेलका), सेना व्यूह कारक (=चलक) साहसी महायोध (=पिण्डदायक) उग्र राजपुत्र, उछलकर शत्रुसे हथियार छीन ले आने वाले (पक्खन्दिनो), हाथियोसे भी जूझ सकने वाले (महा नाग), शूर, चर्म-योद्धा तथा दास-पुत्र। ये भीतर वालो को सुरक्षित रखते है, और इनके होनेसे वाहर वालोसे सघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अकुशल धर्म (=अशुभ आचरण) का त्याग करनेके लिये, सदाचरणका अभ्यास करनेके लिये प्रयत्नशील होता है। वह कुशल धर्मों (=शुभ-कर्मों) के करने मे शक्ति–सम्पन्न होता है, दृढ होता है, उसने कधेका जुआ नही रख दिया होता है। भिक्षुओ, वीर्यरूपी सेना वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोडकर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोप कर्मोका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस पॉचवे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें पण्डित-व्यक्त, मेधावी द्वारपाल होता है, जो परिचितोको नगरमे प्रविष्ट होने देता है। यह भीतरवालो को सुरक्षित रखता है और इसके होनेसे बाहर वालोसे सघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक स्मृतिमान होता है, श्रेष्ठ स्मृतिसे युक्त—चिर-काल-पूर्व किये गये कार्य, चिर-काल-पूर्वकी गई वातको भी स्मरण रख सकने वाला। भिक्षुओ स्मृति रूपी द्वारपाल वाला आर्य-श्रावक अकुशलको छोडकर कुशल कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्या शुद्ध रखता है। वह इस छठे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमे चार-दीवारी होती है, जो ऊँची होती है, चौडी होती है तथा सभी छिद्रोको बन्दकर देने वाले चूनेसे पुती होती है।

इससे युक्त होने पर भीतर वाले सुरक्षित रहते हैं तथा बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक प्रज्ञावान् होता है, (वस्तुओंके) विकास-ह्रासका ज्ञान कराने वाली प्रज्ञासे युक्त, श्रेष्ठ बोधने वाली प्रज्ञासे युक्त, दुःखके क्षय की ओर ले जाने वाली प्रज्ञासे युक्त। भिक्षुओ, जो आर्यश्रावक प्रज्ञा रूपी सभी छिद्रोंको बन्द कर देनेवाले चूनेसे पुती चार-दीवारीसे युक्त होता है, वह अकुशलको छोडकर कुशलका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोका त्यगकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्या शुद्ध रखता है। वह इस सातवे गुण (=सद्धर्म)से युक्त होता है।

कौनसे चार इसी जन्ममें सुख देनेवाले चैतसिक ध्यान सुलभ होते है, बिना कष्टके प्राप्य होते है, तथा प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते है? भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमान्त-नगरमें बहुतसी लकडी तथा पानी एकत्र किया हुआ होता है, जिससे नगर-वासी प्रसन्न होते है, निश्चिन्त रहते है, सुखपूर्वक रहते है तथा बाहर वालोसे संघर्ष करते हैं। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक काम -भोगोंसे पृथक हो प्रथम ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है तथा सुखी रहता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमान्त-प्रदेशमे बहुत सा धान-जौ एकत्र किया हुआ रहता है, जिससे नगरवासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुखपूर्वक रहते है तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक वितर्क-विचारो के उपशमनके अनन्तर द्वितीय ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है, सुखी रहता है तथा निर्वाण की ओर अग्रसर हुआ रहता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमान्त-प्रदेशमे बहुत से तिल,मूंग, मास तथा दूसरे धान्य इकट्ठे किये होते है, जिससे नगर वासी प्रसन्न रहते है, निश्चिन्त रहते है, सुख पूर्वक रहते है, तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक प्रीतिके भी वैराग्यको प्राप्त हो तृतीय ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है, सुखी रहता है तथा निर्वाणकी ओर अग्रसर हुआ रहता है।

भिक्षुओ जैसे राजाके सीमान्त-प्रदेशमे बहुत भैषज्य जैसे घी, मक्खन, तैल, मधु, शक्कर तथा लवण इकट्ठे किये होते है, जिससे नगरवासी प्रसन्न होते है, तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य श्रावक सुख तथा

दुक्ख दोनोका प्रहाण करनेके अनन्तर, इससे पूर्व ही सौमनस्य-दौर्मनस्य अस्त हुए रहनेके कारण, अदुख-असुख स्वरूप, उपेक्षा-स्मृति रूपी परिशुद्ध भावसे युक्त चतुर्थ ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है, सुखी रहता है तथा निर्वाणकी ओर अग्रसर हुआ रहता है। ये चार, इसी जन्ममें सुख देने वाले, चैतसिक ध्यान सुलभ होते है, बिना कष्टके प्राप्य होते है तथा प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते है।

भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक सात गुणोसे युक्त होता है और उसे इसी जन्ममे सुख देने वाले चारो चैतसिक ध्यान सुलभ रहते है, बिना कष्टके प्राप्य होते है, तथा प्रचुर मात्रामे प्राप्य होते है तो भिक्षुओ, आर्य-श्रावक पापी मारके आक्रमणके अयोग्य कहलाता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात गुण (= धर्म) होते है, वह आदरणीय होता है लोगोके लिये पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे सात गुण ? भिक्षुओ, भिक्षु धर्मज्ञ होता है, अर्थज्ञ होता है, अपने आपको जानने वाला होता है, मात्रज्ञ होता है, कालज्ञ होता है, परिषदज्ञ होता है तथा व्यक्तियोके विषयमे श्रेष्ठ-श्रेष्ठतर की जानकारी रखता है।

भिक्षुओ, भिक्षु धर्मज्ञ कैसे होता है ? भिक्षुओ, भिक्षु धर्मका जानकार होता है—सूत्रका, गेय्यका, वेय्याकरणका, गाथाका, उदानका, इतिवुत्तक का, जातक का, अद्भुत-धर्मका, तथा वेदल्लका। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको धर्मका—सुत्त, गेय्य . वेदल्लका—ज्ञान नही होगा, तो "धर्मज्ञ" नही कहलायेगा। क्योकि भिक्षुओ, भिक्षुको धर्मका—सुत्त-गेय्य वेदल्लका ज्ञान होता है, इसलिये वह 'धर्मज्ञ' कहलाता है। यह 'धर्मज्ञ' हुआ।

'अर्थज्ञ' कैसे होता है ? भिक्षुओ, भिक्षु उस उस कथनका अर्थ जानता है—इस कथनका यह अर्थ है, इस कथनका यह अर्थ है। भिक्षुओ, यदि भिक्षु उस उस कथनके अर्थको नही जानेगा कि इस कथनका यह अर्थ है, इस कथनका यह अर्थ है, तो वह 'अर्थज्ञ' नही कहलायेगा। क्योकि भिक्षुओ, भिक्षु उस उस कथनके अर्थको जानता है कि इस कथनका यह अर्थ है, इस कथनका यह अर्थ है, इसलिये 'अर्थज्ञ' कहलाता है। यह हुआ धर्मज्ञ तथा अर्थज्ञ।

अपने आपको जाननेवाला कैसे होता है ? भिक्षुओ, भिक्षु अपने आपको जानता है कि मुझमें इतनी श्रद्धा है, इतना शील है, इतना ज्ञान (= श्रुत) है, इतना त्याग है, इतनी प्रज्ञा है, इतनी प्रतिभा है। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको यह ज्ञान न हो कि उसमें इतनी श्रद्धा है, इतना शील है, इतना ज्ञान (= श्रुत) है, इतना त्याग है, इतनी प्रज्ञा है,

इतनी प्रतिभा है, तो वह अपने आपको जानने वाला नही कहलायेगा। क्योकि भिक्षुओ, भिक्षु अपने आपको जानता है कि मुझमें इतनी श्रद्धा है, इतना शील है, इतना ज्ञान (= श्रुत) है, इतना त्याग है, इतनी प्रज्ञा है, इतनी प्रतिभा है, इसलिये वह 'अपने आपको जानने वाला' कहलाता है। यह हुआ, धर्मज्ञ, अर्थज्ञ तथा आत्मज्ञ।

'मात्रज्ञ' कैसे होता है? भिक्षु, भिक्षु चीवर, पिण्डपात, शयनासन, ग्लान-प्रत्यय भैषज्य आदि आवश्यकताओंके ग्रहण करनेकी मात्रा जानता है। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको चीवर, पिण्डपात (= भिक्षा), शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य आदि आवश्यकताओंके ग्रहण करनेकेकी मात्राका ज्ञान नही होगा, तो वह 'मात्रज्ञ' नही कहलायेगा। क्योकि भिक्षुओ, भिक्षु चीवर, पिण्डपात, शयनासन, ग्लान-प्रत्यय भैषज्य आदि आवश्यकताओंके ग्रहण करनेकी मात्राको जानता है, इसलिये वह 'मात्रज्ञ' कहलाता है। यह हुआ, धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ तथा मात्रज्ञ।

'कालज्ञ' कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु समय जानता है कि यह समय उपदेश (= उद्देश) देनेका है, यह समय प्रश्न पूछनेका है, यह समय (योग-) अभ्यास का है, यह समय एकान्त-सेवनका है। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको समयका ज्ञान न हो कि यह समय उपदेश (= उद्देश) देने का है, यह समय प्रश्न पूछनेका है, यह समय योग (—अभ्यास) का है, यह समय एकान्त-सेवनका है, तो वह 'कालज्ञ' नही कहलायेगा। क्योकि भिक्षुओ, भिक्षु समय जानता है कि यह समय उपदेश देनेका है, यह समय प्रश्न पूछनेका है, यह समय योग (—अभ्यास) का है, यह समय एकान्त-सेवनका है, इसलिए वह 'कालज्ञ' कहलाता है। यह हुआ धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ, मात्रज्ञ तथा कालज्ञ।

'परिषदज्ञ' किसे कहते है? भिक्षुओ, भिक्षु 'परिषद' से परिचित होता है—'यह क्षत्रिय-परिषद है, यह ब्राह्मण-परिषद है, यह गृहपति-परिषद है, यह श्रमण-परिषद है। इस परिषदमें इस प्रकार पहुँचना चाहिये, इस प्रकार ठहरना चाहिये, इस प्रकार करना चाहिये, इस प्रकार बैठना चाहिये, इस प्रकार बोलना चाहिये तथा इस प्रकार चुप रहना चाहिये। 'भिक्षुओ, यदि भिक्षु 'परिषद' से परिचित न हो कि यह क्षत्रिय-परिषद है ... इस प्रकार चुप रहना चाहिये' तो वह भिक्षु 'परिषदज्ञ' नही कहलायेगा। क्योकि भिक्षुओ, भिक्षु परिषदसे परिचित होता है—'यह क्षत्रिय परिषद है, यह ब्राह्मण-परिषद है, यह गृहपति-परिषद है, यह श्रमण-परिषद है। इस परिषदमें इस प्रकार पहुँचना चाहिये, इस प्रकार ठहरना चाहिये, इस प्रकार करना चाहिये, इस प्रकार बोलना चाहिये तथा इस प्रकार चुप रहना

चाहिये', इसलिये वह 'परिषदज्ञ' कहलाता है। यह हुआ धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ, मात्रज्ञ, कालज्ञ तथा परिषदज्ञ।

व्यक्तियोके विषयमे श्रेष्ठ श्रेष्ठतर की जानकारी रखनेवाला कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु दो (प्रकारके) आदमियोसे परिचित होता है। एक आर्योका दर्शन करनेकी इच्छा रखता है, दूसरा आर्योका दर्शन करनेकी इच्छा नही रखता है। जो आदमी आर्योका दर्शन करनेकी इच्छा नही रखता, उतने अशमे वह निन्दनीय है। जो आदमी आर्योका दर्शन करनेकी इच्छा रखता है, उतने अशमें वह प्रशसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी आर्योका दर्शन करनेकी इच्छा रखते है। एक सद्धर्म सुनना चाहता है, दूसरा सद्धर्म नही सुनना चाहता है। जो आदमी सद्धर्म नही सुनना चाहता, उतने अशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी सद्धर्म सुनना चाहता है, उतने अशमे वह प्रशसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी सद्धर्म सुननेकी इच्छा रखते है। एक ध्यानसे सद्धर्म सुनता है, दूसरा ध्यानसे सद्धर्म नही सुनता। जो आदमी ध्यानसे सद्धर्म नही सुनता, उतने अशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी ध्यानसे सद्धर्म सुनता है, उतने अशमे वह प्रशसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी ध्यानसे सद्धर्म सुनते है। एक सुनकर धर्मको याद रखता है। दूसरा सुनकर धर्मको याद नही रखता। जो आदमी सुनकर धर्मको याद नही रखता, उतने अशमे वह निन्दनीय है। जो आदमी सुनकर धर्मको याद रखता है, उतने अशमें वह प्रशसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी सुनकर धर्मको याद रखते है। एक याद (= धारण) रखे धर्मोके अर्थपर विचार करता है। दूसरा याद (= धारण) रखे धर्मोके अर्थपर विचार नही करता। जो आदमी याद (= धारण) रखे धर्मोके अर्थपर विचार नही करता, उतने अशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी याद (= धारण) रखे धर्मोके अर्थपर विचार करता है, उतने अशमें वह प्रशसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करते है। एक आदमी धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण करता है। दूसरा धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण नही करता। जो आदमी धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण नही करता, उतने अशमें वह

निन्दनीय है। जो आदमी धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण करता है, उतने अशमें वह प्रशसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी अर्थ तथा धर्मको जानकर धर्मानुसार आचरण करते है। एक आत्महितमें रत रहता है, पर-हितमें नही। दूसरा आत्म-हित तथा पर-हित दोनोमें रत रहता है। जो आदमी आत्म-हितमें रत रहता है, पर-हितमें नही, उतने अशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी आत्म-हित तथा पर-हित दोनोमें रत रहता है, उतने अशमें वह प्रशसनीय है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु दो (प्रकारके) आदमियोंसे परिचित होता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु, व्यक्तियोके विषयमें श्रेष्ठ-श्रेष्ठतरकी जानकारी रखनेवाला होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण (= धर्म) होते है, वह आदरणीय होता है . लोगोंके लिये पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारके पत्ते पीले पड जाते है, उस समय भिक्षुओ, त्रयोत्रिंशके देवतागण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळारके पत्ते पीले पड गये हैं, अचिरकालमें ही अब ये पत्ते गिरेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारके पत्ते गिर जाते हैं, उस समय भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवलोकके देवता गण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळारके पत्ते गिर गये है, अचिर-कालमें ही अब इसमे पत्ते तथा फूल (एक साथ) उगेगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारमें पत्ते तथा फूल एक साथ उगते है, उस समय भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते है—अब पारिछत्तक कोविळार जालक-युक्त हो गया है अर्थात् अब इसमें पत्ते तथा फूल (एक साथ) उग आये है। अचिर कालमें ही ये फूल-पत्ते पृथक-पृथक हो जायेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारके फूल-पत्ते पृथक-पृथक हो जाते है, उस समय, भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते है—अब पारिछत्तक कोविळार खारक-युक्त हो गया, अचिरकालमें ही अब इसमें कलियाँ लगेंगी।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारमें कलियाँ लगती है, उस समय, भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते है—अब पारिछत्तक कोविळारमें कलियाँ (कुड्मल) लगी है, अचिरकालमें ही अब इसमें अनिर्भिन्न पुष्प (कोरक) लगेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारमें अविकसित पुष्प लगते हैं, उस समय भिक्षुओ त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळारमे अविकसित पुष्प लगे हैं, अचिरकालमे ही अब यह सर्वत्र पुष्पित हो जायेगा।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकका पारिछत्तक कोविळार सर्वत्र पुष्पित हो जाता है, भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण सन्तुष्ट हो पारिछत्तक कोविळारके नीचे चार दिव्य महीने पाँचो काम-भोगो सहित, उनमे ही समर्पित रहकर व्यतीत करते हैं।

भिक्षुओ, सर्वत्र पुष्पित पारिछत्तक कोविळारके चारो ओर पचास योजन तक उसकी आभा फैली होती है, सौ योजन तक वायुकी दिशाके अनुसार उसकी सुगन्ध जाती है—यह पारिछत्तक कोविळारका प्रताप है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेका संकल्प करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळारके 'पत्ते पीले पडने' के समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक केश-दाढी मुँडवाकर, काषाय वस्त्र पहन-घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळारके 'पत्ते गिरने' के समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक काम-भोगोसे पृथक हो. . .प्रथम ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळारमें पत्ते तथा फूल (एक साथ) लगनेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक वितर्क विचारोंके उपशमनके अनन्तर . . . द्वितीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळारके फूल-पत्ते पृथक-पृथक हो जानेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक प्रीतिसे भी वैराग्य प्राप्त कर . तृतीय ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळार मे कलियाँ लगनेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक सुख तथा दुःख दोनोका प्रहाण कर . चतुर्थ ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळारमे अविकसित पुष्प लगनेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक आस्रवोका क्षय कर . प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओके पारिछत्तक कोविळार-के सर्व-पुष्पित होनेके समान होता है।

भिक्षुओ, उस समय भुम्म देवता-गण घोषणा करते है—अमुक नामके आयुष्मान्‌का यह अमुक नामका शिष्य, अमुक गाँव या निगमसे, घरसे बेघरहो प्रव्रजित हुआ। यह आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी जन्ममे स्वय जानकर, साक्षात्‌कर, प्राप्त कर विहार करता है। भुम्म देवताओकी घोषणा सुन चातुर्महाराजिक देवता त्रयोत्रिंश देवता याम देवता . तुसित देवता . निम्मानरती देवता परनिर्मित वशवर्ती देवता ब्रह्मकायिक देवता घोषणा करते हैं—अमुक नामके आयुष्मान्‌का यह अमुक नामका शिष्य, अमुक गाँव या निगमसे, घरसे बेघर हो प्रव्रजित हुआ। वह आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। उस क्षण, उस मुहूर्त वह घोषणा ब्रह्मलोक तक पहुँचती है। यह क्षीणास्रव भिक्षुका प्रताप है।

उस समय एकान्त-चिन्तन करते हुए आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह संकल्प पैदा हुआ—भिक्षु किसका सत्कार करनेसे, किसका गौरव करनेसे, किसके आश्रित रहनेसे अकुशल (= अशुभ) कर्मका त्याग करता है, तथा कुशल (= शुभ) कर्मका अभ्यास करता है ? तब आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमे यह हुआ—"भिक्षु, शास्ता का सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे अकुशलका त्याग करता है, कुशल का अभ्यास करता है। भिक्षु, धर्मका भिक्षु सघका . भिक्षु शिक्षा-ओंका भिक्षु समाधिका भिक्षु अप्रमादका . भिक्षु मैत्री-पूर्ण व्यवहारका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है।

तब आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह हुआ—मेरे ये धर्म परिशुद्ध है, पूर्ण स्वच्छ है। तो भी मै भगवानको जाकर इन धर्मोकी सूचना दूं। इससे मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी। जैसे किसी आदमीको शुद्ध, स्वच्छ सोना मिल जाय। उसे यह विचार आये—मेरे पासका यह सोना शुद्ध है, स्वच्छ है, तो भी मै इस सोनेको ले जाकर सुनारोको दिखाऊँ। इससे मेरा यह सोना 'सुनारके पास हो आया' हो जायेगा और इसका खरापन निश्चित हो जायेगा। इसी प्रकार मेरे ये धर्म परिशुद्ध तथा स्वच्छ है, तो भी मै जाकर इन्हें

भगवानसे निवेदन करूँ। इस प्रकार मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी।"

तब आयुष्मान् सारिपुत्र शामके समय एकान्त-चिन्तनसे उठ जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते! एकान्तमे चिन्तन करते समय मेरे मनमे यह सकल्प पैदा हुआ—भिक्षु किसका सत्कार करनेसे, किसका गौरव करनेसे, किसके आश्रित रहनेसे, अकुशल-कर्मका त्याग करता है, कुशल-कर्मका अभ्यास करता है? तब भन्ते! मेरे मनमें यह हुआ—भिक्षु शास्ताका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। भिक्षु धर्मका भिक्षु मैत्री-पूर्ण व्यवहारका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। भन्ते! तब मेरे मनमे यह आया—मेरे ये धर्म परिशुद्ध है, पूर्ण स्वच्छ है, तब भी मै भगवान्को जाकर इन धर्मोकी सूचना दूँ। इससे मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी। जैसे किसी आदमीको शुद्ध, स्वच्छ सोना मिल जाय। उसे यह विचार आये—मेरे पासका यह सोना शुद्ध है, स्वच्छ है, तो भी मै इस सोनेको ले जाकर सुनारको दिखाऊँ। इससे मेरा यह सोना 'सुनारके पास हो आया' हो जायेगा और इसका खरापन निश्चित हो जायेगा। इसी प्रकार, मेरे ये धर्म परिशुद्ध तथा स्वच्छ है, तो भी मै जाकर इन्हे भगवानसे निवेदन करूँ। इस प्रकार मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी।

सारिपुत्र! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। सारिपुत्र! भिक्षु शास्ताका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। सारिपुत्र! भिक्षु धर्मका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। भिक्षु सघका . शिक्षाओका समाधिका अप्रमादका मैत्री-पूर्ण व्यवहारका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे अकुशलका त्याग करता है, कुशलकी भावना करता है।

ऐसा कहनेपर आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे निवेदन किया—भन्ते! भगवानके इस सक्षिप्त कथनको मै विस्तारसे इस प्रकार समझता हूँ। भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रखकर, धर्मके प्रति गौरवका भाव रखेगा—

इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, वह धर्मके प्रति भी अगौरवका भाव रखेगा।

भन्ते ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरव, धर्मके प्रति अगौरव, किन्तु संघके प्रति गौरवका भाव रखेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका धर्म तथा संघके प्रति भी अगौरवका ही भाव होगा।

भन्ते ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरव, धर्मके प्रति अगौरव, संघके प्रति अगौरव, किन्तु शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखेगा—इस की गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका शिक्षाओंके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

भन्ते ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, किन्तु समाधिके प्रति गौरव का भाव रखेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका समाधिके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

भन्ते ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, किन्तु अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका अप्रमादके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

भन्ते ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति, अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, किन्तु मैत्री-पूर्ण व्यवहार के प्रति गौरवका भाव रखेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति . अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी अगौरवका भाव रहेगा।

भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, वह धर्मके प्रति अगौरवका भाव रखेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा .।

भन्ते ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा .अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, किन्तु मैत्री-पूर्व व्यवहारके प्रति अगौरवका भाव रखेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा।

भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा—इसकी गुजाइश है। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, वह धर्मके प्रति भी गौरवका भाव रखेगा ।

भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा अप्रमादके प्रति भी गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा—इसकी गुंजाइश है। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ता, धर्म, सघ, शिक्षाओ, समाधि तथा अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, वह मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव रखेगा।

भन्ते ! भगवानके सक्षिप्त कथनका मै इस प्रकार विस्तारसे अर्थ जानता हूँ।

सारिपुत्र ! वहुत अच्छा। सारिपुत्र ! यह वहुत अच्छा है कि मेरे सक्षिप्त कथनका तू इस प्रकार विस्तृत अर्थ जानता है। सारिपुत्र ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रख कर, धर्मके प्रति गौरवका भाव रखेगा—इसकी गुजाइश नही। सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति धर्मके प्रति, सघके प्रति, शिक्षाओके प्रति, समाधिके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका अप्रमादके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, सघके प्रति, शिक्षाओके प्रति, समाधिके प्रति, अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहार-के प्रति गौरवका भाव होगा—इसकी गुजाइश नही। सारिपुत्र ! जो भिक्षु, शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, सघके प्रति, शिक्षाओके प्रति, समाधिके प्रति, अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी अगौरवका ही भाव होगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति अगौरवका भाव होगा, इसकी गुजाइश नही सारिपुत्र ! जिस भिक्षुका शास्ताके प्रति गौरवका भाव होगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति अगौरवका भाव होगा—इसकी गुजाइश नही। सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा . . . अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्रीपूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव रहेगा।

सारिपुत्र! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा—इसकी गुंजाइश है। सारिपुत्र! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा ....।

सारिपुत्र! जो भिक्षु शास्ताके प्रति . .. अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्रीपूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा—इसकी गुंजाइश है। सारिपुत्र! जो भिक्षु शास्ताके प्रति . . अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्रीपूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा।

सारिपुत्र! इस प्रकार जो कुछ मैंने संक्षिप्त रूपमें कहा है, उसका विस्तार पूर्वक अर्थ जानना चाहिये।

भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना (योगाभ्यास) मे नही लगा हुआ है, उसके मनमें चाहे कितनी भी यह इच्छा उत्पन्न हो कि काश मेरा चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित विमुक्तिको प्राप्त हो। किन्तु उसका चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित विमुक्तिको प्राप्त नही होता। यह किसलिये? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (= भावना) न करनेके कारण? किसका अभ्यास न करनेके कारण? चारो स्मृति-उपस्थानोका, चारो सम्यक् प्रधानोका, चारो ऋद्धिपादोका, पाँचो इन्द्रियोका, पाँचो बलोका, सातो बोध्यंगोका तथा आर्य अष्टांगिक मार्गका।

भिक्षुओ, जैसे किसी मुर्गीके आठ-दस या बारह अण्डे हों। लेकिन वह अण्डे उस मुर्गीके द्वारा भली प्रकार सेये न गये हो, उन्हें भली प्रकार गर्मी न पहुँचाई गई हो, उन्हे भली प्रकार प्रभावित न किया गया हो। उस मुर्गीकी चाहे कितनी भी यह इच्छा हो कि काश! मेरे चोजे अपने पजो या चोचसे अण्डोको फोडकर सकुशल बाहर आ जायें, किन्तु इसकी गुंजाइश नही है कि वह चोजे अपने पजो या चोचसे अण्डोको फोडकर सकुशल बाहर आ जायें। यह किसलिये? भिक्षुओ, उस मुर्गीने अण्डोको भली प्रकार सेया नहीं है, भली प्रकार गर्मी नही पहुँचाई गई है, भली प्रकार प्रभावित नही किया है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना (= योगाभ्यास) में नही लगा हुआ है, उसके मनमें चाहे जितनी भी यह इच्छा उत्पन्न हो कि काश मेरा चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित मुक्तिको प्राप्त हो। किन्तु उसका चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित विमुक्तिको प्राप्त नहीं होता। यह किस लिये? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (= भावना) न करनेके कारण। किसका अभ्यास न करनेके कारण? चारो स्मृति उपस्थानोका, चारो सम्यक् प्रधानोका, चारो ऋद्धिपादोका, पाँचो इन्द्रियोका, पाँचो बलोका, सातो बोध्यंगोका तथा आर्य अष्टांगिक मार्गका।

भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना (=योगाभ्यास) मे लगा हुआ है, उसके मनमें चाहे यह इच्छा उत्पन्न न हो कि काश! मेरा चित्त आस्रवोसे आसक्ति-रहित विमुक्तिको प्राप्त हो, तो भी उसका चित्त आस्रवोसे आसक्ति रहित विमुक्तिको प्राप्त होगा। यह किसलिये? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (=भावना) करनेके कारण। किसका अभ्यास करनेके कारण? चारो स्मृति-उपस्थानोका, चारो सम्यक्-प्रधानोका चारो ऋद्धिपादोका, पाँचो इन्द्रियोका, पाँचो बलोका, सातो बोज्झगोका तथा आर्य अष्टागिक-मार्गका।

भिक्षुओ, जैसे किसी मुर्गीके आठ, दस या बारह अण्डे हो। वे अण्डे उस मुर्गीके द्वारा भली प्रकार सेये गये हो, उन्हे भली प्रकार गर्मी पहुँचाई गई हो, उन्हे भली प्रकार प्रभावित किया गया हो। उस मुर्गीकी चाहे यह इच्छा न भी हो कि काश! मेरे चोजे अपने पजो या चोचसे अण्डोको फोड कर सकुशल बाहर निकल आये। इसकी गुजाइश है कि वे चोजे अपने पजो या चोचसे अण्डोको फोडकर सकुशल वाहर आ जाये। यह किस लिये? भिक्षुओ, उस मुर्गीने अण्डोको भली प्रकार सेया है, भली प्रकार गर्मी पहुँचाई है, भली प्रकार प्रभावित किया है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना(=योगाभ्यास)मे लगा हुआ है, चाहे उसके मनमें यह इच्छा उत्पन्न न हो कि काश! मेरा चित्त आस्रवोसे आसक्तिरहित मुक्तिको प्राप्त हो, तो भी उसका चित्त आस्रवोसे आसक्ति रहित मुक्तिको प्राप्त होगा। यह किसलिये? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (=भावना) करनेके कारण। किसका अभ्यास करनेके कारण? चारो स्मृति-उपस्थानोका . आर्य अष्टागिक मार्गका।

भिक्षुओ, जैसे बढई वा बढईके शिष्यकी अगुलियोका निशान वा अगूठेका निशान कुल्हाडी (=वासी) पर दिखाई देता है। उसे इस बातका ज्ञान नही होता कि कुल्हाडीका इतना हिस्सा आज घिसा था, इतना कल घिसा था, इतना परसो घिसा था, उसे घिसनेपर 'घिस गया'—यही ज्ञान होता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जो भिक्षु योगाभ्यास (=भावना) मे लगा होता है, उसे यह ज्ञान नही होता कि आस्रवोका इतना हिस्सा आज क्षीण हुआ, इतना हिस्सा कल क्षीण हुआ, इतना परसो क्षीण हुआ। उसे क्षीण होनेपर आस्रव-क्षय हो गया, यही ज्ञान होता है।

भिक्षुओ, जैसे वेतसे बँधी नौका छह महीने तक पानीमें रहनेके बाद हेमन्त ऋतुमें स्थलपर लानेसे, हवा-धूप लगनेसे, वर्षा-ऋतुके मेघोसे स्पष्ट होनेपर उसके बधन विना कठिनाईके ही क्षीण पड जाते है, सड जाते है। इसी प्रकार भिक्षुओ,

जो नित् योगाभ्यास (= भावना) में लगा होता है, उसके सयोजन विना कठिनाईके ही क्षीण पड जाते हैं, सड जाते है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वडे भारी भिक्षु सघके साथ कोशल (जनपद) मे चारिका कर रहे थे। मार्गारूढ भगवानने एक प्रदेशमें वडा भारी आगका ढेर देखा, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ। उसे देख, भगवान् मार्गसे हट एक वृक्षके नीचे , एक आसनपर बैठ गये। बैठकर भगवानने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ! तुम इस जलते हुए, प्रज्ज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके वडे ढेरको देखते हो न?"

"भन्ते। हाँ"

"तो भिक्षुओ, किसे अधिक अच्छा समझते हो—इस जलते हुए, प्रज्ज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके वडे ढेरका आलिगन कर उसके साथ बैठने वा लेटनेको, अथवा किसी मृदु-तलवे तथा मृदु-हथेलीवाली क्षत्रिय कन्या वा ब्राह्मण-कन्या वा गृहपति-कन्याका आलिगन कर उसके साथ बैठने वा लेटनेको?"

"भन्ते! यही अच्छा है कि किसी मृदु-तलवे तथा मृदु-हथेलीवाली क्षत्रिय-कन्या वा ब्राह्मण-कन्या वा गृहपति-कन्याका आलिगन कर उसके साथ बैठा वा लेटा जाय, क्योकि इस जलते हुए, प्रज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके वडे ढेरका आलिगन कर उसके साथ बैठना वा लेटना तो दुखद है।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है, पापी है, अपवित्र आचरण वाला है, छिपकर पाप-कर्म करनेवाला है, श्रमण होनेकी घोषणा करनेके बावजूद अश्रमण है, ब्रह्मचारी होनेकी घोषणा करनेके बावजूद अब्रह्मचारी है, अन्दरसे सडा हुआ है, छिद्र-युक्त है तथा क्षुद्र है, उसके लिये यही अधिक अच्छा है कि वह इस जलते हुए, प्रज्ज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके वडे ढेरका आलिगन कर, उसके साथ बैठे वा लेटे। यह किसलिये? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु मात्र दुख है। किन्तु उसके कारण शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गतिको प्राप्त नही होगा, वह नरकमें उत्पन्न नही होगा।

"भिक्षुओ, जो दुश्शील है, पापी है, अपवित्र आचरण वाला है, क्षुद्र है, वह यदि मृदु तलवे तथा मृदु-हथेलीवाली क्षत्रिय कन्या वा ब्राह्मण-कन्या वा गृहपति-कन्याका आलिगन कर, उसके साथ बैठता वा लेटता है, तो भिक्षुओ, यह उसके लिये, दीर्घ काल तकके लिये अहितकर होता है, दुखद होता है, वह शरीरके छूटनेपर, मरने के अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान पुरुष मजबूत , बालोकी बनी रस्सीसे दोनो जघोको कसकर बाँध दे और उन्हे रगडे, जिससे वह रस्सी छवि छेद डाले, छवि छेदकर चमडी छेद डाले, चमडी छेद कर हड्डी छेद डाले, हड्डी छेद कर, हड्डीकी चर्बीसे जाकर सट जाये, अथवा वह महा-ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो ब्राह्मणो, गृहपतियोका अभिवादन स्वीकार करे ?" "भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो, गृहपतियोका अभिवादन स्वीकार करे, क्योकि भन्ते यह तो दुखद है कि कोई बलवान् पुरुष मजबूत बालोकी बनी रस्सीसे . हड्डीकी चर्बी से जाकर सट जाय।"

"भिक्षुओ, मै कहता हूँ, मै सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष मजबूत, बालोंकी बनी रस्सीसे जाँघोको कसकर बाँध दे . हड्डीकी चर्बीसे जाकर सट जाय। यह किसलिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दु ख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, वह दुर्गतिको प्राप्त नही होगा, वह नरकमें उत्पन्न नही होगा। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील क्षुद्र, महा ऐश्वर्य-शाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो तथा गृहपतियोका अभिवादन स्वीकार करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर होता है, दु खद होता है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमे उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान् आदमी तेलसे धुली हुई तेज बर्छी छातीमे घोप दे, अथवा वह महाऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो, गृहपतियोका "हाथ जोडना" स्वीकार करे ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो, गृहपतियोका "हाथ जोडना" स्वीकार करे, क्योकि भन्ते ! यह तो दुखद है कि कोई बलवान मनुष्य तेलसे धुली हुई तेज बर्छी छातीमे घोप दे।"

"भिक्षुओ, मै कहता हूँ, मै सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् आदमी तेलसे धुली हुई तेज बर्छी छातीमें घोप दे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु मात्र दु ख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गति को प्राप्त नही होता, वह नरकमे उत्पन्न नही होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दु शील . . महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो तथा गृहपतियोका "हाथ जोडना" स्वीकार करता है, यह उसके लिये, दीर्घकाल तक के लिये, अहितकर होता है, दु खद

होता है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान आदमी तप्त, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित लाट निकलता हुआ लोहेका पट्टा शरीर पर लपेट दे, अथवा वह महाऐश्वर्य शाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो वा गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये चीवरोका उपभोग करे ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महाऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो वा गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये चीवरोका उपभोग करे। क्योंकि भन्ते ! यह तो दु खद है कि कोई बलवान् आदमी तप्त, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ, लोहे (=अयस्) का पट्टा शरीर पर लपेट दे।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हू, मैं सूचित करता हू कि जो दुश्शील है क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् आदमी तप्त, जलता हुआ, प्रज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहे (=अयस्) का पट्टा शरीरपर लपेट दे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप, उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दुख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर, वह दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता, वह नरकमें उत्पन्न नही होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील क्षुद्र महा ऐश्वर्य-शाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो तथा गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये चीवरोका उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर होता है, दु खद होता है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान् पुरुष गर्म सडसी से मुंह खोलकर उसमें तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहेका गोला डाल दे और वह उसके होठोको जला दे, जिह्वाको जलादे, कण्ठको भी जला दे, हृदयको भी जला दे, आँतोको भी जला दे, छोटी आंतोको भी जला दे और नीचे के हिस्सेसे बाहर निकल आये, अथवा वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो वा गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये पिण्डपात (=भिक्षा) का उपभोग करे ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो वा गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये पिण्डपात (=भिक्षा) का उपभोग करे। क्योकि भन्ते ! यह तो दु खद है कि कोई बलवान् पुरुष गर्म सडसीसे मुंह खोलकर, उसमें

तप्त, ज्वलित, प्रज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहेका गोला डाल दे और वह उसके ओठोको जला दे, मुँहको जला दे, जिह्वाको जला दे, कण्ठको भी जला दे, हृदयको भी जला दे, आँतोको भी जला दे, छोटी आँतोको भी जला दे और नीचेके हिस्सेसे वाहर निकल आये।"

"भिक्षुओ, मै कहता हूँ, मै सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई वलवान् पुरुष गर्म सण्डसीसे मुँह खोलकर, उसमे तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहेका गोला डाल दे और वह उसके होठोको जला दे, मुँहको जला दे, जिह्वाको जला दे, कण्ठको भी जला दे, हृदयको भी जला दे, आतोको भी जला दे, छोटी आँतोको भी जला दे और नीचेके हिस्सेसे वाहर निकल आये। यह किस लिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दु ख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गतिको प्राप्त नही होता, वह नरकमे उत्पन्न नही होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील क्षुद्र, महाऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो तथा गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये पिण्डपात(=भिक्षा) का उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर होता है, दु खद होता है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमे उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है कि कोई बलवान् आदमी सिर या कन्धेसे पकडकर गर्म लोहेके पीढे पर बिठा दे या गर्म लोहेके मच पर लिटा दे , अथवा वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो, वा गृहपतियो द्वारा श्रद्धा-पूर्वक दिये गये मचपीठका उपभोग करे ? "

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो वा गृह पतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये मच-पीठका उपभोग करे। क्योकि भन्ते ! यह तो दु खद है कि कोई वलवान् आदमी सिर या कन्धेसे पकडकर गर्म लोहेके पीढेपर विठा दे या गर्म लोहेके मच पर लिटा दे।

भिक्षुओ, मै कहता हूँ, मै सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है, पापी है . क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई वलवान् पुरुष सिर या कन्धेसे पकडकर गर्म लोहेके पीढेपर विठा दे या गर्म लोहेके मचपर लिटा दे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दु ख है। किन्तु, उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गति को प्राप्त नही होता, वह नरकमें उत्पन्न नही होता किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील क्षुद्र महा ऐश्वर्यशाली

क्षत्रियो, ब्राह्मणो तथा गृहस्थों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर, होता है, दुःखद होता है। वह शरीर के छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष सिर नीचे, पैर ऊपर करके तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलते हुए लोहे के कडाहेमें डाल दे। ऊपर बुलबुले उठाते हुए वह उसमें पके और एक बार ऊपर आये, एक बार नीचे जाये, एक बार तिर्यक् (= तरल पदार्थके ऊपर ऊपर) तैरे, अथवा महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणोंका वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करना ? "

" भन्ते ! यही अच्छा है कि वह ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो, गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करें। क्योंकि भन्ते ! यह तो दुःखद है कि कोई बलवान् पुरुष सिर नीचे, पैर ऊपर करके तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलते हुए लोहेके कडाहेमे डाल दे। ऊपर बुलबुले उठाते हुए—वह आदमी उसमें पके और एक बार ऊपर आये, एक बार नीचे जाये, एक बार तिर्यक् (= तरल पदार्थके ऊपर ऊपर) तैरे। "

भिक्षुओ, मै कहता हूँ, मै सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है, पापी है, . क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष सिर नीचे, पैर ऊपर करके तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलते हुए लोहेके कडाहेमें डाल दे। ऊपर बुलबुले उठाते हुए, वह आदमी उसमें पके और एक बार ऊपर आये, एक बार नीचे जाये, एक बार तिर्यक (= तरल पदार्थके ऊपर ऊपर) तैरे। यह किसलिये भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप, उसका मरण हो सकता है, मृत्यु मात्र दुःख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गतिको प्राप्त नही होता, वह नरकमे उत्पन्न नही होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील, पापी . क्षुद्र महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो, गृहपतियो द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ कालतकके लिये, अहितकर होता है, दुःखद होता है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

इसलिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये—कि हम जिन (गृहस्थोके दिये हुए) चीवर, पिण्डपात (= भिक्षा) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य परिस्कारोंका

उपभोग करते हैं, उनके लिये उनके वे दान महोपकारी, महाफलदायक, महान् प्रति-फल दायक होंगे और हमारी यह प्रव्रज्या भी अबध्या होगी, सफल होगी, उद्देश्य-पूर्ण होगी,

"भिक्षुओ, इसी प्रकार सीखना चाहिये—भिक्षुओ, जिसे आत्मार्थ (=स्व-हित) का ध्यान हो उसे भी अप्रमाद पूर्वक रहना चाहिये। जिसे परार्थ (=परहित) का ध्यान हो उसे भी अप्रमाद पूर्वक रहना चाहिये। जिसे आत्म-हित तथा पर-हित दोनोका ध्यान हो, उसे भी अप्रमाद पूर्वक रहना चाहिये।"

भगवान्ने यह कहा। इस वेय्याकरण (=व्याख्यान) के कहे जाते समय साठ भिक्षुओके मुँहसे खून निकलने लगा। 'भगवान्! (भिक्षुजीवन) दुष्कर है, भगवान् (भिक्षुजीवन) दुष्कर है, कहते हुए साठ भिक्षु उप-प्रव्रजित (=गृहस्थ) हो गये। साठ भिक्षुओको आसक्ति-रहित चित्त-विमुक्ति प्राप्त हुई।

भिक्षुओ, पूर्व समयमे सुनेत्त नामका काम-भोगोके प्रति वीत-राग तैर्थिक शास्ता हुआ। भिक्षुओ, सुनेत्त शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। सुनेत्त शास्ता अपने शिष्योको ब्रह्म-सायुज्यताका धर्मोपदेश देता था। भिक्षुओ, सुनेत्त शास्ताके ब्रह्म सायुज्यका धर्मोपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न नही हुआ, वे शरीर छूटने पर मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त हुए, नरकमें उत्पन्न हुए। भिक्षुओ, सुनेत्त शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्मोपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न हुआ, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको प्राप्त हुए, स्वर्ग-लोकमें उत्पन्न हुए।

भिक्षुओ, पूर्व समयमें मृगपक्ष नामका शास्ता हुआ अरनेमि नामका शास्ता हुआ कुद्दालक नामका शास्ता हुआ हत्थिपाल नामका शास्ता हुआ जोतिपाल नामका शास्ता हुआ अरक नामका काम भोगोके प्रति वीत-राग तैर्थिक शास्ता हुआ। भिक्षुओ, अरक शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। अरक शास्ता अपने शिष्योको ब्रह्म-सायुज्यताका धर्मोपदेश देता था। भिक्षुओ, अरक शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्मोपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न नही हुआ, वे शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त हुए, नरकमे उत्पन्न हुए। भिक्षुओ, अरक शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका उपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न हुआ, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको प्राप्त हुए, स्वर्ग लोकमे उत्पन्न हुए।

भिक्षुओ, तो तुम मानते हो कि जो इन काम-भोगोके प्रति वीत-राग, अनेक सौ शिष्योके श्रावक-सघ वाले सातो तैर्थिक शास्ताओको दूषित चित्तसे बुरा-भला कहेगा, वह बहुत अपुण्यका भागी होगा?"

"भन्ते! हाँ।"

भिक्षुओ, जो इन काम भोगोंके प्रति वीत-राग, अनेक सौ शिष्यों के श्रावक संघ वाले सातो तैर्थिक शास्ताओंको दूषित चित्तसे बुरा भला कहेगा, वह बहुत अपुण्य का भागी होगा। जो एक सम्यक्-दृष्टि प्राप्त (=स्रोतापन्न) व्यक्ति को दूषित चित्तसे बुरा-भला कहता है, वह उससे भी अधिक अपुण्यका भागी होता है। यह किस लिये? भिक्षुओ, जैसी क्षमा मेरे शिष्योंमें है, वैसी क्षमा अपने शिष्योंसे बाहर मैं अन्यत्र कही नही देखता।

इसलिये भिक्षुओ यह सीखना चाहिये—हम अपने साथियों (=सब्रह्मचारियों) के प्रति अपना चित्त मैला (=दुष्ट) नही करेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये।"

भिक्षुओ, पूर्व कालमें अरक नामका काम-भोगोंके प्रति वीत-राग तैर्थिक शास्ता हुआ। भिक्षुओ, अरक शास्ताके अनेक सौ शिष्य थे। अरक शास्ता अपने शिष्योंको इस प्रकार धर्मका उपदेश देता था—ब्राह्मण, मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दु:ख-पूर्ण है, बहुत चिन्ता पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल-कर्म करना चाहिये, ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।"

ब्राह्मण! जैसे तिनकेके सिरे पर ओस की बूंद हो, सूर्यके उदय होने पर वह शीघ्र ही सूख जाती है, चिरस्थायी नही होती, इसी प्रकार ब्राह्मण! ओसकी बूंदके समान ही मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दु:ख-पूर्ण है, बहुत चिन्ता-पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल कर्म करना चाहिये, ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे बडी-बडी बूंदे पडने पर पानी के बुलबुले शीघ्र ही मिट जाते है, चिरस्थायी नही रहते, इसी प्रकार ब्राह्मण! पानीके बुलबुलेके समान ही मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दु:ख पूर्ण है, बहुत चिन्ता-पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञानप्राप्त करना) चाहिये, ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे पानी पर खींची गई लकीर शीघ्र ही मिट जाती है, चिर स्थायी नही होती, इसी प्रकार ब्राह्मण! पानी पर खींची गई लकीरके समान ही मनुष्योंका जीवन है ... उसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे कोई पर्वतकी नदी हो, दूर तक जाने वाली, शीघ्रगामी, सब कुछ बहाकर ले जाने वाली, ऐसा कोई क्षण या लमहा या मुहूर्त नही होता जब

वह उल्टे, वह चली ही जाती है, वह बहती ही रहती है, इसी प्रकार ब्राह्मण! पर्वत की नदीके समान ही मनुष्योका जीवन है इसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे कोई बलवान आदमी जिह्वाके सिरे पर थूक लाये और उसे तुरन्त ही थूक दे, इसी प्रकार ब्राह्मण! थूक-पिण्डके समान ही मनुष्योका जीवन है . इसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जिस प्रकार दिन भर तपे हुए लोहेके तवेपर डाली गई मास-पेशी शीघ्र ही जल जाती है, चिर-स्थायी नही रहती, इसी प्रकार ब्राह्मण! मासकी पेशीके समान मनुष्योका जीवन है इसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे वधके लिये ले जाई जाती हुई गौ जो जो पाँव उठाती है वह वधके समीप ही होती जाती है, मरणके समीप ही होती जाती है, इसी प्रकार ब्राह्मण गौके वधके समान ही मनुष्योका जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दु खपूर्ण है, बहुत चिन्तापूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिए, कुशल (-कर्म) करना चाहिये, ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

भिक्षुओ, उस समय मनुष्योकी साठ हजार वर्षकी आयु होती थी, पॉच सौ वर्ष की कुमारी विवाहके योग्य (अलपतेय्या?) होती थी। भिक्षुओ, उस समय मनुष्योको केवल छह ही रोग होते थे—सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, पाखाना तथा पेशाव। भिक्षुओ, अरक नामक वह शास्ता, इतनी दीर्घ आयु वाले, इतने चिर-स्थायी, इतने अल्प-रोगी शिष्योको इस प्रकार धर्मोपदेश देता है—ब्राह्मण! मनुष्यो का जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दु ख पूर्ण है, बहुत चिन्ता पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल (-कर्म) करना चाहिये, ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

भिक्षुओ, इस समय ही यह ठीक ठीक कहा जाना चाहिये—"मनुष्योका जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दु ख पूर्ण है, बहुत चिन्ता-पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल (-कर्म) करना चाहिये, ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है, "भिक्षुओ, इस समय जो अधिक समय तक जीता है, वह न्यूनाधिक सौ वर्ष तक ही जीता है। भिक्षुओ, जो सौ वर्ष तक ही जीता है। वह केवल तीन सौ ऋतुमे ही जीता है सौ हेमन्त ऋतुमे, सौ ग्रीष्म ऋतुमें तथा सौ वर्षा ऋतुमें। भिक्षुओ, जो तीन सौ ऋतुमें जीता है, वह (केवल) बारह सौ महीने ही जीता है—हेमन्त ऋतुके चार सौ महीने, ग्रीष्म-ऋतुके चार सौ महीने तथा वर्षा-ऋतुके

चार सौ महीने। भिक्षुओ, जो बारह सौ महीने जीता है, वह (केवल) चौबीस सौ आधे-महीने ही जीता है—हेमन्त ऋतुके आठ सौ आधे-महीने ग्रीष्म-ऋतुके आठ सौ आधे महीने, वर्षाऋतुके आठ सौ आधे महीने। भिक्षुओ, जो चौबीस सौ आधे महीने जीता है, वह (केवल) छत्तीस हजार रातें जीता है—हेमन्त ऋतुकी बारह हजार रातें, ग्रीष्म ऋतुकी बारह हजार रातें, वर्षाऋतुकी बारह हजार रातें। भिक्षुओ, जो छत्तीस हजार रातें जीता है, वह (केवल) बहत्तर हजार समय भोजन करता है—हेमन्त ऋतुके चौबीस हजार समय, ग्रीष्म ऋतुके चौबीस हजार समय तथा वर्षा-ऋतुके चौबीस हजार समय। इन्ही समयोमें वे 'समय' शामिल रहते है, जब बच्चा माँ का स्तन चूसता रहता है और जब-जब भोजन मे बाधक-कारण (= अन्तराय) उपस्थित हो जाता है।

ये भोजनके बाधक-कारण (= अन्तराय) है, क्रोधकी अवस्थामें आदमी भोजन नही ग्रहण करता, चित्त दुखी रहनेकी अवस्थामें आदमी भोजन नही करता, रोगी होनेकी अवस्थामें आदमी भोजन नही करता, उपोसथ (= व्रती) होने पर भी भोजन ग्रहण नही करता तथा कोई हानि हो जाने पर भी भोजन ग्रहण नही करता।

भिक्षुओ, इस प्रकार मैंने सौ वर्ष जीने वाले आदमीकी आयु भी कही, आयुका माप भी कहा, ऋतुयें भी कही, वर्ष-गणना भी कही, महीने भी कहे, अर्द्ध-मास भी कहे, रातें भी कही, दिन भी कहे (?), भोजन करनेके समय भी कहे तथा भोजनके बाधक-कारण (= अन्तराय) भी कहे। भिक्षुओ, अपने शिष्योका हित चाहने वाले दयालु शास्ताको दया करके जो कुछ करना चाहिये, वह मैंने कर दिया। भिक्षुओ, ये वृक्षोकी छाया (= मूल) है, ये शून्यागार (= एकान्त स्थान) है। भिक्षुओ, ध्यान लगाओ। प्रमाद मत करो। पीछे पश्चात्ताप न करना। यही हमारी अनुशासना है।

८. विनय वर्ग

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बाते होती है, वह विनय-धर होता है। कौन सी सात? वह यह जानता है कि यह दोष (= आपत्ति) है, वह जानता है कि यह अदोष (= अनापत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी दोष है, वह सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोका पालन करने वाला, आचार-सम्पन्न, अल्प मात्र दोष में भी भय मानने वाला, शिक्षाओंको सम्यक् प्रकार ग्रहण करने वाला; इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको अनायास, बिना कठिनाईके प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला होता है, आस्रवोका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-

विमुक्ति को इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्तकर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात बाते होती है, वह 'विनय-धर' होता होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात बाते होती है, वह विनय-धर होता है। कौनसी सात? वह यह जानता है कि यह दोप (=आपत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी दोष है, उसे भिक्षु-प्रातिमोक्ष तथा भिक्षुणी-प्रातिमोक्ष दोनो विस्तार पूर्वक सुविभक्त, सुप्रवर्तित, सुनिश्चित—सूत्र तथा स्कन्ध परिवार (=व्यजन) की दृष्टिसे हृदयगम होते है, इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानो को अनायास, विना कठिनाईके, प्रचुर मात्रामे प्राप्त करने वाला होता है, आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात्कर, प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती है, वह 'विनय-धर' होता हे।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये सात बातें होती है, वह विनय-धर होता है। कौन सी सात! वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अदोप (=अनापत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी-दोप है, वह स्थिर रूपसे विनयका पालन करने वाला होता है, इसी शरीरमे सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको अनायास, विना कठिनाईके, प्रचुर मात्रामे प्राप्त करने वाला होता है, आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्तकर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बाते होती है, वह 'विनय-धर' होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती है, वह विनय-धर होता है। कौन सी सात? वह यह जानता है कि यह दोप (=आपत्ति) है, वह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी दोप है, वह अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोका अनुस्मरण करता है, जैसे एक जन्म-दो जन्म इस प्रकार आकार और उद्देश्य सहित नाना प्रकारके पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करता है, दिव्य-विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे कर्मानुसार योनि-प्राप्त प्राणियोको जानता है, आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बाते होती है, वह 'विनय-धर' होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौनसी सात बातें ? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी दोष है, वह सदाचारी होता है शिक्षाओंको सम्यक् प्रकार ग्रहण करने वाला, इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको अनायास, विना कठिनाईके प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला होता है, आस्रवोका क्षय कर प्राप्तकर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती है, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौनसी सात ? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी दोष है, उसे, भिक्षु-प्रातिमोक्ष तथा भिक्षुणी-प्रतिमोक्ष दोनो, विस्तार-पूर्वक, सुविभक्त, सुप्रवर्तित सुनिश्चित सूत्र तथा स्कन्ध-परिवार (=व्यजन) की दृष्टिसे, हृदयगम होते है, इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको प्राप्त करने वाला होता है, आस्रवों का क्षय कर प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती है, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बाते होती है, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौन सी सात ? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अदोष (=आनपत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी दोष है, वह स्थिर रूपसे विनयका पालन करने वाला होता है, इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको . . प्राप्त करने वाला होता है, आस्रवोका क्षय कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती है, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती है, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौन सी सात बाते ? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है, वह यह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है, वह यह जानता है कि यह भारी-दोष है, वह अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करता है, जैसे एक जन्म, दो जन्म इस प्रकार आकार और उद्देश्य-सहित नाना प्रकारके पूर्व-जन्मोका अनुस्मरण करता है, दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे आस्रवो

का क्षय कर .. साक्षात् कर-प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय धरमें ये सात बातें होती है, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

आयुष्मान् उपालि जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् उपालिने भगवान् से निवेदन किया—

"भन्ते! अच्छा हो, यदि भगवान् सक्षिप्त रूपमे मुझे धर्मका ऐसा उपदेश दें कि जिसे सुनकर मै एकाकी, निर्मल, अप्रमादी, उत्साही, प्रयत्नशील[1] हो विहार करू।"

"उपालि! जिन धर्मोंके वारेमें तू जाने कि ये धर्म न सम्पूर्ण निर्वेदके लिये है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है, न अभिज्ञा के लिये है, न सम्बोधिके लिये है तथा न निर्वाणके लिये है, उन धर्मोंके वारेमें उपालि यह निश्चितरूपसे समझना कि ये न धर्म है, न विनय है और न शास्ताके अनुशासन है। लेकिन उपालि! जिन धर्मोंके वारेमें तू जाने कि ये धर्म सम्पूर्ण निर्वेदके लिये है, वैराग्यके लिये है, निरोधके लिये है, उपशमनके लिये है, अभिज्ञाके लिये है, सम्बोधिके लिये है, निर्वाणके लिये है, उन धर्मोंके वारेमे उपालि! यह निश्चित रूपसे समझना कि 'ये धर्म है, ये विनय है, ये शास्ताके अनुशासन है।

भिक्षुओ, ये सात उपाय (= धर्म) है, जिन से जो जो झगडे-मुकदमे होते है, वे शान्त हो जाते है। कौनसे सात? (उभय-पक्ष की) उपस्थितिमे निर्णय देना, स्मृति (के अनुसार) निर्णय देना, अमूढता (के अनुसार) निर्णय देना, प्रतिज्ञा (= स्वीकारोक्ति) के अनुसार निर्णय देना, वहुमतके अनुसार निर्णय देना, उसके पाप-कर्मके अनुसार निर्णय देना तथा उभय-पक्षकी सहमतिसे मुकदमा समेट देना।

भिक्षुओ, ये सात उपाय (= धर्म) है, जिनसे जो जो झगडे-मुकदमे होते है, वे शान्त हो जाते है।

९. श्रमण वर्ग

भिक्षुओ सात धर्मो (= विषयो) मे (छिन्न-) भिन्नता होनेसे 'भिक्षु' होता है। कौन से सात? सत्काय-दृष्टि छिन्न-भिन्न होती है, विचिकित्सा छिन्न-भिन्न होती है, शील-व्रत परामाश छिन्न-भिन्न होता है, राग छिन्न-भिन्न होता है, द्वेष

---

१. पहित्तत्तो की वुद्धघोपाचार्य ने 'प्रेपित-आत्म' करके व्याख्या की है, जो चिन्त्य है।

छिन्न-भिन्न होता है, मोह छिन्न-भिन्न होता है तथा मान छिन्न-भिन्न होता है, भिक्षुओ, इन सात धर्मों (=वषयो) में (छिन्न-) भिन्नता होनेसे 'भिक्षु' होता है।

भिक्षुओ, सात धर्मोंके शमित होनेसे श्रमण (=समण) होता है....।

वाहर होनेसे 'ब्राह्मण' होता है ।

निश्रुत (=स्रोतयुक्त) होनेसे श्रोत्रिय (सोत्तिय) होता है ...।

स्नात होने से स्नातक (न्हातक) होता है ।

विदित (=जानकार) होनेसे वेदगू होता है ।

आरक (=पाप कर्मोंसे दूर) होने से आर्य होता है ।

आरकत्व (=दूरत्व) होनेसे अर्हत होता है। किन सात वातोंसे (दूर होनेसे)? सत्काय-दृष्टिसे दूर होनेसे, विचिकित्सासे दूर होनेसे, शील-व्रत-परामाश से दूर होनेसे, रागसे दूर होनेसे, दोपसे दूर होनेसे, मोहसे दूर होनेसे तथा मानसे दूर होने से। भिक्षुओ, इन सात धर्मों (=विपयो) से दूर रहनेसे अर्हत् होता है।

भिक्षुओ, ये सात असद्धर्म हैं। कौन से सात? अश्रद्धावान् होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप-) भीरु नही होता है, अल्पश्रुत होता है, आलसी होता है, मूढ-स्मृति होता है तथा दुष्प्रज्ञ होता है। भिक्षुओ, ये सात असद्धर्म है।

भिक्षुओ, ये सात सद्धर्म हैं। कौनसे सात? श्रद्धावान् होता है, लज्जावान् होता है, (पाप-) भीरु होता है। वहु-श्रुत होता है, प्रयत्न-शील होता है, स्मृतिमान होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, ये सात सद्धर्म है।

(१०) आहुनेय्य वर्ग

भिक्षुओ, ये सात व्यक्ति आदरणीय दक्षिणाके योग्य, हाथ जोडकर नमस्कार करनेके योग्य तथा लोगोके लिये श्रेष्ठतम पुण्य-क्षेत्र होते है। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक व्यक्ति चक्षुको 'अनित्य' समझता हुआ, विहार करता है, अनित्य सज्ञा रखकर, अनित्य-प्रतिसवेदना रखकर, निरन्तर सम्पूर्ण-भावसे, चित्तसे स्थिर, प्रज्ञासे गहराईमें गया हुआ। वह आस्रवोका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह पहला व्यक्ति है जो आदरणीय दक्षिणाके योग्य, हाथ जोडकर नमस्कार करनेके योग्य लोगोका सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।

फिर भिक्षुओ, एक व्यक्ति चक्षु को 'अनित्य' समझता हुआ विहार करता है, अनित्य सज्ञा रखकर, अनित्य प्रतिसवेदना रखकर, निरन्तर सम्पूर्ण भावसे, चित्तसे

स्थिर, प्रज्ञासे गहराई मे गया हुआ। उसका पूर्वसे, अन्ततक आस्रव-क्षय तथा जन्म-मरण (=जीवित) का क्षय होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा व्यक्ति है जो आदरणीय लोगोके लिये सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।

फिर भिक्षुओ, एक व्यक्ति चक्षु को अनित्य समझता हुआ विहार करता है, अनित्य-सज्ञा रखकर, अनित्य-प्रतिसवेदना रखकर, निरतर सम्पूर्ण-भावसे, चित्तसे स्थिर, प्रज्ञासे गहराई मे गया हुआ। वह पाँचो ह्रासोन्मुख सयोजनोका क्षय कर वीचमे ही परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है (जन्म-मरणके अन्तको) पहुँचकर परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है असस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है सस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है पतनोन्मुख न रहकर ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ व्यक्ति है, जो आदरणीय लोगोके लिये सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, ये सात व्यक्ति आदरणीय है, सत्कार करने योग्य है लोगोके लिये श्रेष्ठतम पुण्य-क्षेत्र है। कौनसे सात ? भिक्षुओ, एक आदमी चक्षुको 'दुक्ख' करके समझता है चक्षुको 'अनात्म' करके समझता है 'चक्षु' को 'क्षय-धर्म' करके समझता है 'चक्षु' को वय-धर्म करके समझता है चक्षुको 'विराग-धर्म' करके समझता है चक्षुको 'निरोध-धर्म' करके समझता है . . चक्षुको 'प्रति-निसर्ग (परित्याग)-धर्म' करके समझता है।

श्रोत्रको घ्राणको जिह्वाको काम (=स्पर्शेन्द्रिय) को . . मनको।

रूपोको शब्दोको स्पर्शोको गन्धोको स्पृष्टव्यो-को धर्मो (=मनके विषयो) को।

चक्षुर्विज्ञानोको श्रोत्र-विज्ञानोको घ्राण विज्ञानोको जिह्वा-विज्ञानोको काम-विज्ञानोको मनोविज्ञानोको।

चक्षु-सस्पर्शोको श्रोत्र-सस्पर्शोको घ्राण-सस्पर्शोको . . जिह्वा-सस्पर्शोको काम-सस्पर्शोको मनोसस्पर्शोको।

चक्षु सस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको श्रोत्र-सस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . घ्राण सस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको जिह्वा सस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . काम सस्पर्शसे उत्पन्नको मन सस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको।

रूप-सज्ञाको शब्द-सज्ञाको गन्ध-सज्ञाको रस-सज्ञा-को स्पृष्टव्य-सज्ञाको धर्म-सज्ञाको।

रूप सचेतनाको . शब्द सचेतनाको . गन्ध सचेतनाको ...... रस-सचेतनाको स्पृष्टव्य-सचेतनाको . धर्म-सचेतनाको ..।

रूप-तृष्णाको शब्द तृष्णाको गन्ध तृष्णाको .. रस-तृष्णाको स्पृष्टव्य-तृष्णाको धर्म-तृष्णाको ।

रूप-वितर्कोको शब्द-वितर्कोको गन्धवितर्कोको . .... रस-वितर्कोको स्पृष्टव्य-वितर्कोको धर्म-वितर्कोको . ।

रूप-विचारोको शब्द-विचारोको गन्ध-विचारोको ...... रस विचारोको स्पृष्टव्य-विचारोको धर्म-विचारोको ।

पच स्कन्धोको रूप स्कन्धको वेदना स्कन्धको सज्ञा-स्कन्धको सस्कार-स्कन्धको विज्ञान-स्कन्धको 'अनित्य' करके समझता है 'दुक्ख' करके समझता है 'अनातम' करके समझता है .. 'क्षय-धर्म' करके समझता है 'वय-धर्म' करके समझता है 'विराग-धर्म' करके समझता है, निरोध-धर्म करके समझता है .प्रतिनिसर्ग-धर्म करके समझता है लोगोके लिये श्रेष्ठतम पुण्य क्षेत्र होता है।

११ राग-पेय्याल

भिक्षुओ रागका क्षय (=अभिञ्ञा) करनेके लिये सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये। कौनसे सात? स्मृति सम्बोधि-अग उपेक्षा सम्बोधि-अग। भिक्षुओ, रागका क्षय (=अभिञ्ञा) करनेके लिये इन सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करनी चाहिए।

भिक्षुओ, रागका क्षय करनेके लिये सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिए। कौनसे सात? अनित्य-सज्ञा, अनात्म-सज्ञा, अशुभ-सज्ञा, आदीनव (=दुष्परिणाम)-सज्ञा, प्रहाण-सज्ञा, विराग-सज्ञा, निरोध-सज्ञा। भिक्षुओ, रागका क्षय करनेके लिये, इन सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागका क्षय करनेके लिये सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये। कौनसे सात? अशुभ-सज्ञा, मरण-सज्ञा, आहारके प्रतिकूल होनेकी सज्ञा, समस्त लोकके प्रति अनासक्ति-सज्ञा, अनित्य-सज्ञा, अनित्यके दुक्ख होनेकी सज्ञा, दुक्ख के अनात्म होनेकी सज्ञा। भिक्षुओ, राग के क्षयके लिये इन सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करनी चाहिए।

भिक्षुओ, रागके परिज्ञानके लिये परिक्षयके लिये प्रहाणके लिये क्षयके लिये व्ययके लिये विरागके लिये निरोधके लिये

.. त्यागके लिये परित्यागके लिये. .इन सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, द्वेषके . मोहके. .क्रोधके शत्रुताके .ढोगके ... . .निर्दयताके. ईर्षाके मात्सर्यके. मायाके .शठताके.. ... . .. कठोरताके.. झगडालूपनके मानके. अतिमानके मदके . प्रमादके परिज्ञानके लिये परिक्षयके लिये प्रहाणके लिये ... . क्षयके लिये व्ययके लिये विरागके लिये.. निरोधके लिये त्यागके लिये परित्यागके लिये इन सात धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भगवान्‌ने यह कहा। उन भिक्षुओने सतुष्ट हो भगवान्‌के भाषणका अभिनन्दन किया।

आठवाँ निपात

१ मेत्ता वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमे अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओको आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ।" उन भिक्षुओने "भदन्त" कह भगवान्को प्रतिवचन दिया।

भिक्षुओ, यदि चित्तकी विमुक्ति मैत्री-भावनाका सेवन किया जाय, भावना की जाय, बढाया जाय, अभ्यास किया जाय, साक्षात् किया जाय, अनुष्ठान किया जाय, परिचय किया जाय तथा सम्यक् प्रकारसे समृद्ध किया जाय तो उसके आठ शुभ परिणाम होते हैं। कौनसे आठ? सुख-पूर्वक सोता है, सुखसे जागता है, बुरा स्वप्न नही देखता है, मनुष्योका प्रिय होता है, मनुष्येतरोका प्रिय होता है, देवता रक्षा करते है, अग्नि, विष वा शस्त्रसे उसे हानि नही पहुँचती, कम-से-कम ब्रह्मलोकको अवश्य प्राप्त होता है। भिक्षुओ, यदि चित्तकी विमुक्ति-भावनाका सेवन किया जाय, भावना की जाय, बढाया जाय, अभ्यास किया जाय, साक्षात् किया जाय, अनुष्ठान किया जाय, परिचय किया जाय तथा सम्यक् प्रकारसे समृद्ध किया जाय तो उसके आठ शुभ परिणाम होते हैं—

यो च मेत्त भावयति, अप्पमाण पटिस्सतो।
तनू सयोजना होन्ति, पस्सतो उपधिक्खय॥

एक पि चे पाणमदुट्ठचित्तो,
मेत्तायति कुसली तेन होति।
सब्बे च पाणे मनसानुकम्पी,
पहूतमरियो पकरोति पुञ्ञ॥
ये सत्तसण्ड पथवि विजेत्वा,
राजिसयो यजमाना अनुपरियगा।
सस्समेध पुरिसमेध,
सम्मापास वाजपेय्य निरग्गळ॥
मेत्तस्स चित्तस्स सुभावितस्स,
कल पि ते नानुभवन्ति सोळसि।
चन्दप्पभा तारगणा व सब्बे,
यथा न अग्घन्ति कल पि सोळसि॥

यो न हन्ति न घातेति, न जिनाति न जापये।
मेत्तसो सब्ब भूतान, वेर तस्स न केनची ॥

[जो स्मृति-युक्त हो असीम मैत्री-भावना करता है, उसके सयोजनोका तथा उपाधियो (= चित्त मलो) का क्षय होता है। यदि द्वेष-रहित चित्तसे कोई एक प्राणीके प्रति भी मैत्री-भावना करता है तो यह भी उसका कुशल-कर्म होता है। यदि कोई सभी प्राणियोके प्रति मैत्री-भावना करता है, तो ऐसा आर्य (= श्रेष्ठ) पुरुप बहुत पुण्यका लाभ करता है।

जिन राजर्पियोने सातो खण्डोवाली पृथ्वीको जीतकर अश्व-मेध, पुरुष-मेध, सम्यक्पाश, वाजपेय्य तथा निरर्गल यज्ञ किये उन्होने उस फलको सोलहवे हिस्से को भी नही प्राप्त किया जो मैत्री-भावना करनेवालेको प्राप्त होता है। वैसे ही जैसे सारे तारे मिलकर भी चन्द्रमाके सोळहवे हिस्सेके भी बराबर नही होते।

जो न किसीका घात करता है, न करवाता है, जो न किसीको हानि पहुँचाता है, न दूसरेके द्वारा पहुँचवाता है, उसकी सभीके प्रति मैत्री है, वह किसीका वैरी नही होता।]

भिक्षुओ, ये आठ हेतु है, आठ कारण है, जिनसे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामे वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है। कौनसे आठ? भिक्षुओ, एक भिक्षु शास्ता अथवा अपने किसी ऐसे गौरव-भाजन साथीके साथ रहता है, जिसके प्रति उसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है। भिक्षुओ, यह पहला हेतु है, यह पहला कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामे वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह शास्ताके अथवा अपने किसी ऐसे गौरव-भाजन साथीके रहते हुए, जिसके प्रति उसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है, उससे समय-समय पर प्रश्न करता है, शका समाधान करता है—भन्ते! यह कैसे? भन्ते! इसका क्या अर्थ? वे उस आयुष्मान्को जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते है, जो ढँका रहता है, उसे उघाड देते है तथा धर्मके विषयमे अनेक शकाओका समाधान कर देते है। भिक्षुओ, यह दूसरा हेतु है, यह दूसरा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह भिक्षु उस धर्मको सुनकर शरीर तथा मन दोनोंसे ग्रहण करता है,। भिक्षुओ, यह तीसरा हेतु है, यह तीसरा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णता को प्राप्त होती है।

वह सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोका पालन करनेवाला, योग्य नियमोंके अनुसार रहने वाला तथा योग्य स्थानपर विचरने वाला, छोटेसे छोटे दोपके करनेसे भी भयभीत होने वाला तथा शिक्षाओंके अनुसार सम्यक् प्रकारसे जीवन व्यतीत करने वाला। भिक्षुओ, यह चौथा हेतु है, यह चौथा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह बहुश्रुत होता है, श्रुतका धारण करने वाला, श्रुतका सग्रह करने वाला। ऐसे सब धर्म, जो आदि, मध्य तथा अन्तमें कल्याणकारक है, जो अर्थ-सहित, व्यजन-सहित, सम्पूर्ण रूपसे परिशुद्ध ब्रह्मचर्यका प्रकाश करने वाले है, उसके द्वारा बहुश्रुत होते हैं, धारण किये गये होते है, वाणी द्वारा सुपरिचित होते है, मन द्वारा सुपरीक्षित होते हैं तथा प्रज्ञा द्वारा सम्यक् रूपसे ज्ञात होते है। भिक्षुओ, यह पाँचवा हेतु है, यह पाँचवाँ कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह अकुशल-धर्मो (=बुराइयो) का त्याग करनेके लिये, कुशल-धर्मो (=अच्छाइयो)को ग्रहण करनेके लिये कटिबद्ध रहता है, शक्ति-सम्पन्न, दृढ-पराक्रमी, कुशल धर्मोको वहन करनेके लिये प्रस्तुत। भिक्षुओ, यह छठा हेतु है, यह छठा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह सघमें सम्मिलित होनेपर नाना तरहकी बातें बनाने वाला नही होता, फिजूल बातें करने वाला नहीं होता या तो वह स्वय धर्मको पढता है, या दूसरेको पढाता है, अथवा आर्य-मौन धारण किये रहता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ हेतु है, यह सातवाँ कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह पाँचो उपादान-स्कन्धोंकी उत्पत्ति और निरोधका चिन्तन करने वाला होता है—'यह रूप है, यह रूप का समुदय है, यह रूपका अस्त होना है, यह वेदना है, यह वेदनाका समुदय है, यह वेदनाका अस्त होता है, यह सज्ञा है , ये सस्कार

है . यह विज्ञान है, यह विज्ञानका समुदय है, यह विज्ञानका अस्त होना है।' भिक्षुओ, यह आठवाँ हेतु है, यह आठवाँ कारण है, जिससे अनुपलव्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लव्ध प्रज्ञामे वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णता को प्राप्त होती है।

उसके साथी-ब्रह्मचारी उसको इस प्रकार मानते है कि यह भिक्षु शास्ता अथवा अपने किसी ऐसे गौरव भाजन साथीके साथ रहता है, जिसके प्रति इसके मनमे तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है। यह आयुष्मान्, 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।'

यह एक धर्म (=बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय वनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य वनाता है, तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् शास्ताके अथवा अपने किसी ऐसे गौरव-भाजन साथीके रहते हुए--जिसके प्रति इसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है, तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है, उससे समय समय पर प्रश्न करता है, शका समाधान करता है—भन्ते, यह कैसे? भन्ते! इसका क्या अर्थ? वे इस आयुष्मान् को जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते हैं, जो ढँका रहता है, उसे उघाड देते है तथा धर्मके विपयमे अनेक शकाओका समाधान कर देते है। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (=बात) भी उसे प्रिय वनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त वनाता है।

यह आयुष्मान उस धर्मको सुनकर शरीर तथा मन दोनोसे ग्रहण करता है। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (=वात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय वनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य वनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोका पालन करने वाला, योग्य-नियमोके अनुसार रहने वाला तथा योग्य स्थानपर विचरने वाला, छोटेसे छोटे दोषके करनेसे भी भयभीत होने वाला तथा शिक्षाओके अनुसार सम्यक् प्रकारसे जीवन व्यतीत करने वाला। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म धर्म (=वात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय वनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् बहुश्रुत होता है, श्रुतका धारण करने वाला, श्रुतका सग्रह करने वाला। ऐसे सब धर्म, जो आदि, मध्य तथा अन्तमें कल्याणकारक है, जो अर्थ-सहित, व्यजन-सहित, सम्पूर्ण रूपसे परिशुद्ध ब्रह्मचर्यका प्रकाश करने वाले है, उसके द्वारा बहुश्रुत होते है, धारण किये गये होते है, वाणी द्वारा सुपरिचित होते है, मन द्वारा सुपरीक्षित होते है तथा प्रज्ञा द्वारा सम्यक् रूपसे ज्ञात होते है। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् अकुशल धर्मो (= बुराइयो) का त्याग करनेके लिये, कुशल धर्मो (= अच्छाइयो) को ग्रहण करनेके लिये कटिबद्ध रहता है, शक्ति-सम्पन्न, दृढ पराक्रमी, कुशल-धर्मोको वहन करनेके लिये प्रस्तुत। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् सघमें सम्मिलित होने पर नाना तरहकी बातें बनाना वाला नही होता, फिजूल बातें करने वाला नही होता। या तो वह स्वय धर्मको पढता है, या दूसरेको पढाता है, अथवा आर्य-मौन धारण किये रहता है। यह आयुष्मान् 'निश्चित-रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् पाँचो उपादान-स्कन्धोकी उत्पत्ति और निरोधका चिंतन करने वाला होता है—'यह रूप है, यह रूपका समुदय है, यह रूपका अस्त होना है; यह वेदना है, यह वेदनाका समुदय है, यह वेदनाका अस्त होना है, यह सज्ञा है . . . ये सस्कार है यह विज्ञान है, यह विज्ञानका समुदय है, यह विज्ञानका अस्त होना है।' यह आयुष्मान् निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

भिक्षुओ, ये आठ हेतु है, आठ कारण है जिनसे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह सपूर्णताको प्राप्त होती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बाते होती है, वह अपने साथियोके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उसका न गौरव होता न है न आदर। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु अप्रियजनोकी प्रशसा करने वाला होता है, प्रियजनोकी निन्दा करने वाला होता है, लाभकी इच्छा रखने वाला होता है, सत्कारकी इच्छा रखने वाला होता है, लज्जा-रहित होता है, भय-रहित होता है, बुरी इच्छाओ वाला होता है तथा मिथ्या-दृष्टि वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती है वह अपने साथियोके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उसका न गौरव होता है, न आदर।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती है, वह अपने साथियोके लिये प्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा लगता है, उसका गौरव होता है, आदर होता है। कौन सी आठ बातें ? वह अप्रियजनोकी प्रशसा करने वाला नही होता, वह प्रियजनोकी निन्दा करने वाला नही होता, वह लाभ की इच्छा रखने वाला नही होता, वह सत्कार की इच्छा रखने वाला नही होता, वह लज्जा-रहित नही होता, वह भय-रहित नही होता, वह बुरी इच्छाओ वाला नही होता तथा मिथ्या-दृष्टि वाला नही होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बाते होती है, वह अपने साथियोके लिये प्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा लगता है, उसका गौरव होता है, आदर होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बाते होती है, वह अपने साथियोके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उसका न गौरव होता है न आदर। कौनसी आठ बाते ? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा रखने वाला होता है, सत्कारकी इच्छा रखने वाला होता है, अपने अवगुणोको दूसरोसे छिपाये रखनेकी इच्छा वाला होता है, न कालज्ञ होता है, न मात्रज्ञ होता है, अपवित्र होता है, बकवादी होता है तथा अपने साथियोको बुरा-भला कहने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बाते होती है, वह अपने साथियोके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा नही लगता, उसका न गौरव होता है, न आदर।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बातें होती है, वह अपने साथियोके लिये प्रिय हो जाता है, उन्हे अच्छा लगता है, उसका गौरव होताहै, आदर होता है। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा रखने वाला नही होता, सत्कार की इच्छा रखने वाला नही होता, अपने अवगुणोको दूसरोसे छिपाये रखनेकी इच्छावाला नही होता, सत्कारकी इच्छा रखने वाला नही होता, अपने अवगुणोको दूसरोसे छिपाये रखनेकी इच्छा रखने वाला नही होता, कालज्ञ होता है, मात्रज्ञ होता है, पवित्र होता

है, वकवादी नही होता तथा अपने साथियोको बुरा-भला कहने वाला नही, होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती है, वह अपने साथियोंके लिये प्रिय हो जाता है उन्हे अच्छा लगता है, उसका गौरव होता है, आदर होता है।

भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमें व्याप्त है और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोके अनुसार परिवर्तित होता है। कौनसे आठ? लाभ, अलाभ (=हानि), यश, अपयश, निन्दा, प्रशसा, सुख तथा दुक्ख। भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमें व्याप्त हैं और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोके अनुसार परिवर्तित होता है।

"लाभो अलाभो च यसायसो च,
निन्दा पसंसा च सुख दुख च।
एते अनिच्चा मनुजेसु धम्मा,
असस्सता विपरिणामधम्मा।
एते च ञत्वा सतिमा सुमेधो,
अवेक्खति विपरिणामधम्मे।
इट्ठस्स धम्मा न मथेन्ति चित्त
अनिट्ठतो नो पटिघातमेति॥
"तस्सानुरोधा अथवा विरोधा
विधूपिता अत्थङ्गता न सन्ति।
पद च ञत्वा विरज असोक
सम्मप्पजानाति भवस्स पारगू" ति॥

[लाभ, अलाभ (=हानि), यश, अयश, निन्दा-प्रशंसा, सुख तथा दुख—ये आठ बातें ऐसी है जो मनुष्योमें अनित्य है, अशाश्वत हैं तथा परिवर्तित होने वाली है।

जो स्मृतिमान है, जो बुद्धिमान है वह इन धर्मोको परिवर्तनशील समझता है। जो इष्ट (=अनुकूल) धर्म है वे भी उसके चित्तका मथन नही करते तथा जो अनिष्ट (=प्रतिकूल) धर्म है, वे भी उसके चित्तको हानि नही पहुँचाते।

इन धर्मोके अनुरोध (=अनुकूलता) अथवा विरोध (=प्रतिकूलता) से विध्वंसित होनेपर, वह चचल नहीं होता। ये धर्म (अनित्य होनेके कारण) अस्त हो जाते है, नही रहते है।

जो स्मृतिमान होता है, वह विरज, अशोक, (निर्वाण-) पदको जानकर भव (=ससार) के पार का ज्ञाता हो जाता है।]

भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमे व्याप्त है और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोके गिर्द घूमता रहता है। कौनसे आठ ? लाभ, अलाभ (=हानि), यश, अपयश, निन्दा, प्रशसा, सुख तथा दु ख। भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमे व्याप्त है और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोके गिर्द घूमता रहता है।

"भिक्षुओ, जो अश्रुतवान् (=अज्ञानी) पृथक जन है, उसे भी लाभ–अलाभ दोनो होते है, यश-अपयश दोनो होते है, निन्दा-प्रशसा दोनो होती है, तथा सुख-दु ख दोनो होते है। भिक्षुओ, इसी प्रकार जो श्रुतवान् (=ज्ञानी) आर्य-श्रावक होता है, उसे भी लाभ-अलाभ दोनो होते है, यश-अपयश दोनो होते है, निन्दा-प्रशसा दोनो होती है तथा सुख-दु ख दोनो होते है, तो भिक्षुओ, श्रुतवान् (=ज्ञानी) आर्य-श्रावक तथा अश्रुतवान् (=अज्ञानी) पृथक जनमे क्या भेद है, क्या अन्तर है, क्या फर्क है ?

"भन्ते ! हमारा जो धर्म है, उसके आप ही मूल है, आप ही नेता है, आप ही प्रतिशरण है। भन्ते ! अच्छा हो इस कथनका अर्थ आप ही स्पष्ट कर दें। आपसे सुनकर भिक्षु ग्रहण करेगे।"

"तो भिक्षुओ, सुनो। अच्छी तरह मनमे धारण करो। कहता हूँ।" "भन्ते ! ऐसा ही " कह उन भिक्षुओने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—"भिक्षुओ, जब अश्रुतवान् (=अज्ञानी) पृथक्जनको किसी वस्तुका लाभ होता है, तो वह इस प्रकार विचार नही करता कि 'यह जो मुझे लाभ हुआ है, वह अनित्य है, दु ख-स्वरूप है, परिवर्तनशील है।' वह इस यथार्थ बातको नही जानता। उसे अलाभ होता है .. उसे यश मिलता है . उसका अपयश होता है उसकी निन्दा होती है . उसकी प्रशसा होती है . उसे सुख होता है . उसे दु.ख होता है। वह इस प्रकार विचार नही करता कि 'यह जो मुझे दु ख हुआ है, यह अनित्य है, दु ख है, परिवर्तनशील है।' उसे यथार्थ ज्ञान नही होता।

उसके चित्तको लाभ भी ग्रस लेता है, अलाभ भी ग्रस लेता है, यश भी चित्त को ग्रस लेता है, अपयश भी चित्त को ग्रस लेता है, निन्दा भी चित्तको ग्रस लेती है, प्रशसा भी चित्तको ग्रस लेती है, सुख भी चित्तको ग्रस लेता है, दु ख भी चित्तको ग्रस लेता है। उसे जो लाभ होता है, उसके प्रति उसके मनमें राग उत्पन्न हो जाता है, उसे जो अलाभ (=हानि) होता है उसके प्रति उसके मनमें विरोध उत्पन्न हो जाता है , यशके प्रति राग उत्पन्न होता है, अपयशके प्रति विरोध,

प्रशसाके प्रति राग उत्पन्न हो जाता है, निन्दाके प्रति विरोध, सुखके प्रति राग उत्पन्न हो जाता है, दुख के प्रति विरोध। इस प्रकार राग-द्वेषमें फँसा हुआ वह जन्म, जरा, मरण, शोक, पश्चात्ताप, दु ख-दौर्मनस्य तथा अशान्तिसे मुक्त नही होता—मै कहता हूँ कि वह दु खसे मुक्त नही होता।

भिक्षुओ, जब श्रुतवान् (= ज्ञानी) आर्य श्रावकको किसी वस्तुका लाभ होता है, तो वह इस प्रकार विचार करता है कि 'यह जो मुझे लाभ हुआ है, वह अनित्य है, दुख स्वरूप है, परिवर्तन-शील है'। वह इस यथार्थ बातको जानता है। उसे अलाभ होता है उसे यश मिलता है उसका अपयश होता है उसकी निन्दा होती है उसकी प्रशसा होती है उसे सुख होता है उसे दु ख होता है। वह इस प्रकार विचार करता है कि यह जो मुझे दु ख हुआ है, यह अनित्य है, दु ख है, परिवर्तनशील है', उसे यथार्थ-ज्ञान होता है।

उसके चित्तको लाभ भी नही ग्रस सकता है, अलाभ भी नही ग्रस सकता है, यश भी चित्तको नही ग्रस सकता है, अपयश भी चित्तको नही ग्रस सकता है, निन्दा भी चित्तको नही ग्रस सकती है, प्रशसा भी चित्तको नही ग्रस सकती है, सुख भी चित्तको नही ग्रस सकता है, दु ख भी चित्तको नही ग्रस सकता है, उसे जो लाभ होता है उसके प्रति उसके मनमे राग उत्पन्न नही होता, उसे जो अलाभ होता है उसके प्रति उसके मनमे विरोध उत्पन्न नही होता, यश के प्रति राग उत्पन्न नही होता, अपयशके प्रति विरोध उत्पन्न नही होता, प्रशसाके प्रति राग उत्पन्न नही होता, निन्दाके प्रति विरोध उत्पन्न नही होता, सुखके प्रति राग उत्पन्न नही होता, दु खके प्रति विरोध उत्पन्न नही होता। इस प्रकार राग-द्वेषसे मुक्त वह व्यक्ति जन्म, जरा, मरण, शोक, पश्चात्ताप, दु ख-दौर्मनस्य तथा अशान्तिसे मुक्त होता है। मै कहता हूँ कि वह दु खसे मुक्त होता है। भिक्षुओ, श्रुतवान् (= ज्ञानी) आर्य-श्रावक तथा अश्रुतवान् (= अज्ञानी) पृथक जनमे यह भेद है, यह अन्तर है, यह फर्क है।

लाभो अलाभो च यसायसो च,
निन्दा पससा च सुख दुख च।
एते अनिच्चा मनुजेसु धम्मा
असस्सता विपरिणाम धम्मा॥
एते च ञत्वा सतिमा सुमेधो
अवेक्खति विपरिणाम धम्मे।
इट्ठस्स धम्मा न मथेन्ति चित्त,
अनिट्ठतो नो पटिघातमेति॥

तस्सानुरोधा अथवा विरोधा
विधूपिता अत्थङ्गता न सन्ति।
पद च ञत्वा विरज असोक,
सम्मप्पजानाति भवस्स पारगू॥

[अर्थ ऊपर आ गया है।]

एक समय—जब देवदत्तको सघका त्याग कर गए थोडा ही समय हुआ था—भगवान् राजगृहके गृध्रकूट पर्वतपर विहार कर रहे थे। उस समय भगवान्‌ने देवदत्तके बारेमे भिक्षुओको सम्बोधित किया —

भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमे विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोकी सदोषताके बारेमे विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर अपनी निर्दोषता (=आत्म सम्पत्ति) के बारेमे विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोकी निर्दोषताके बारेमे विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, देवदत्त आठ बातो से अभिभूत रहने पर, उनके वशीभूत हुआ रहने पर अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमे) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ।

किन आठ बातोसे? भिक्षुओ देवदत्त लाभसे अभिभूत होनेपर, उसके वशीभूत होनेपर अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, अलाभ (=हानि) से यशसे . अपयशसे ... सत्कारसे . असत्कार (=निन्दा) से पापेच्छासे पापमित्रता (=कुसगति) से अभिभूत होनेपर उसके वशीभूत होनेपर अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्पभर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, इन आठ बातोंसे अभिभूत होनेपर, उनके वशीभूत होनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ।

भिक्षुओ, भिक्षुके लिये यह अच्छा है कि वह उत्पन्न लाभ से अपनेको अभिभूत न होने दे, उत्पन्न अलाभसे उत्पन्न यशसे उत्पन्न अपयशसे . उत्पन्न सत्कारसे उत्पन्न असत्कारसे उत्पन्न पापेच्छासे. उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपनेको अभिभूत न होने दे।

भिक्षुओ, किस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होने दे. . उत्पन्न अलाभसे . . उत्पन्न यशसे उत्पन्न अपयशसे... उत्पन्न सत्कारसे . उत्पन्न असत्कारसे ... उत्पन्न पापेच्छासे . उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे?

भिक्षुओ, उत्पन्न लाभसे अभिभूत हो जाने पर जो घातक जलानेवाले आस्रव पैदा हो जाते है, उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होनेपर वह घातक जलानेवाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ, उत्पन्न अलाभसे ... उत्पन्न यशसे ... उत्पन्न अपयशसे ... उत्पन्न सत्कारसे ... उत्पन्न असत्कारसे ... उत्पन्न पापेच्छासे ... उत्पन्न पापमित्रतासे अभिभूत हो जानेपर जो घातक जलाने वाले आस्रव पैदा हो जाते है, उत्पन्न पापमित्रतासे अभिभूत न होनेपर वह घातक जलाने वाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ, इस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभ से अभिभूत न होने दे ... उत्पन्न अलाभसे ... उत्पन्न यशसे.. उत्पन्न अयशसे ... उत्पन्न पापेच्छासे ...उत्पन्न पापमित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे।

इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम उत्पन्न लाभसे अनभिभूत होकर विचरेंगे. .. उत्पन्न अलाभसे ... उत्पन्न यशसे ... उत्पन्न अपयशसे ... उत्पन्न सत्कारसे.. उत्पन्न असत्कारसे ... उत्पन्न पापेच्छासे .. उत्पन्न पापमित्रतासे अनभिभूत होकर विचरेंगे।

एक समय आयुष्मान् उत्तर महिसवत्थु (महिष्मति) के सङ्खेय्यक पर्वत पर वटजालिका (विहार) मे विहार करते थे। वहाँ आयुष्मान् उत्तरने भिक्षुओको सम्बोधित किया—

"आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोकी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर अपनी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है।"

उस समय वैश्रवण (= कुबेर) महाराज किसी कामसे उत्तर दिशासे दक्षिण दिशा जा रहे थे। वैश्रवण महाराजने सुना कि महिसवत्थुके सखेय्यक पर्वतपर स्थित वटजालिका (विहार) वासी आयुष्मान् उत्तर भिक्षुओको इस प्रकार धर्मोपदेश दे रहे है—

आयुष्मानो! भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोकी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर अपनी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय समय पर दूसरोकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है।

तव, जैसे कोई वलवान आदमी मुडी हुई बाँहको पसार ले अथवा पसारी हुई बाँहको मोड ले, उसी प्रकार शीघ्रतासे वैश्रवण महाराज महिसवत्थु स्थित संखेय्यक पर्वत पर के वटजालिका विहारसे अन्तर्धान हो त्रयोत्रिंश देव-लोकमें प्रकट हुआ। तव वैश्रवण महाराज जहाँ देवेन्द्र शक्र था, वहाँ गया। पास जाकर देवेन्द्र (शक्र) से कहा—मित्र! मालूम है यह महिसवत्थु स्थित सखेय्यक पर्वतके वट-जालिका विहारमें रहनेवाला आयुष्मान् उत्तर भिक्षुओको इस प्रकार धर्मोपदेश देता है—'आयुष्मानो। भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमे विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोकी सदोपता   अपनी निर्दोपता   दूसरोकी निर्दोपताके वारेमे विचार करना हितकर है।"

तव, जैसे कोई वलवान आदमी मुडी हुई बाँहको पसार ले अथवा पसारी हुई बाँहको मोड ले, उसी प्रकार शीघ्रतासे देवेन्द्र शक्र त्रयोत्रिंश देव-लोकसे अन्तर्धान हो महिसवत्थु स्थित सखेय्यक पर्वतपरके वटजालिक विहारमे आयुष्मान् उत्तरके सम्मुख उपस्थित हुआ। तव देवेन्द्र शक्र आयुष्यमान् उत्तरके पास गया। आयुष्मान् उत्तरके पास पहुँच, आयुष्मान् उत्तरको अभिवादन कर एक ओर खडा रहा। एक ओर खडे हुए देवेन्द्र शक्रने आयुष्मान् उत्तरसे कहा—

"भन्ते! क्या आप आयुष्मान् उत्तर सचमुच भिक्षुओको यह धर्मोपदेश देते है कि आयुष्मानो! भिक्षुका समय-समयपर अपनी सदोपताके बारेमे विचार करना हितकर है। भिक्षुका समय-समयपर दूसरोकी सदोपता   अपनी निर्दोपता   दूसरोकी निर्दोपताके वारेमें विचार करना हितकर है?"

"देवेन्द्र! हाँ।"

"भन्ते! क्या यह धर्मोपदेश आयुष्मान् उत्तरकी अपनी सूझ-बूझ है, या उन भगवान अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका वचन है?"

"देवेन्द्र! तुझे एक उपमा द्वारा समझाता हूँ। कुछ विज्ञ लोग उपमाके द्वारा भी समझ जाते हैं।

देवेन्द्र! जैसे किसी गाँव या निगमसे थोडी दूर पर महान् धन-राशि हो। वहाँ से लोग धन ढो-ढोकर ले जाये—कोई वहँगीसे, कोई पिटारीसे, कोई पल्लेमें, कोई अजलिमें। हे शक्र! अव यदि कोई उन लोगोसे पूछे कि यह धन कहाँसे ला रहे हो, तो वे लोग उन प्रश्न पूछनेवालोको ठीक-ठीक क्या उत्तर देंगे?"

"भन्ते! वे लोग यही उत्तर देंगे कि अमुक धनके ढेरमेसे लिये आ रहे है।"

"इसी प्रकार देवेन्द्र! जितना भी सुभाषित है वह सभी उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका है। हम तथा अन्य सभी उसीमे से लेकर धर्मोपदेश देते हैं।"

"भन्ते! यह आश्चर्यकर है। भन्ते! यह अद्भुत है कि यह जो आपका कहना है कि जितना भी सुभाषित है वह सभी उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका है। हम तथा अन्य सभी उसीमेंसे लेकर धर्मोपदेश देते हैं।"

भन्ते उत्तर! एक वार भगवान्, राजगृहके गृध्रकूट पर्वतपर देवदत्तके चले जानेके कुछ ही समय वाद विहार कर रहे थे। तव भगवान्ने उस समय भिक्षुओको देवदत्तके वारेमे कहा—

भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समयपर अपनी सदोषताके वारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समयपर दूसरोकी सदोषता अपनी निर्दोषता . दूसरोकी निर्दोषताके वारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, देवदत्त आठ वातोंसे अभिभूत रहनेपर, उनके वशीभूत हुआ रहनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। किन आठ वातोंसे? भिक्षुओ, देवदत्त लाभसे अभिभूत होनेपर, उसके वशीभूत होनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमे) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, अलाभ (हानि-) से यशसे अपयशसे. .. .. .. सत्कारसे. . असत्कारसे ... ..पापेच्छासे. पापमित्रतासे (=कुसगति) से अभिभूत होनेपर, उसके वशीभूत होनेपर अपाय गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, इन वातोंसे अभिभूत होनेपर, उनके वशीभूत होनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक नरकमें रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ।

भिक्षुओ, भिक्षुके लिये यह अच्छा है कि वह उत्पन्न लाभसे अपनेको अभिभूत न होने दे, उत्पन्न अलाभमे उत्पन्न यशसे . उत्पन्न अपयशसे . उत्पन्न सत्कारसे उत्पन्न असत्कारसे उत्पन्न पापेच्छासे उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे।

"भिक्षुओ, किस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होने दे उत्पन्न अलाभसे. .. उत्पन्न यशसे. उत्पन्न अपयशसे .. उत्पन्न सत्कारसे . उत्पन्न असत्कारसे . उत्पन्न पापेच्छासे उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे?

भिक्षुओ, उत्पन्न लाभसे अभिभूत हो जानेपर जो घातक जलानेवाले

आस्रव पैदा हो जाते है, उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होनेपर वे घातक जलानेवाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ उत्पन्न अलाभसे . उत्पन्न यशसे .. उत्पन्न अपयशसे ... उत्पन्न सत्कारसे उत्पन्न असत्कारसे उत्पन्न पपेच्छा-से . उत्पन्न पापमित्रतासे अभिभूत हो जानेपर जो घातक जलानेवाले आस्रव पैदा हो जाते हैं, उत्पन्न पाप-मित्रतासे अभिभूत न होनेपर वे घातक जलानेवाले आस्रव पैदा नही होते। भिक्षुओ, इस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होने दे उत्पन्न अलाभसे उपन्त्न यशसे उत्पन्न अपयशसे उत्पन्न सत्कारसे उत्पन्न असत्कारसे उत्पन्न पापेच्छासे . उत्पन्न पापमित्रता (=कुसगति) से अभिभूत न होने दे।

इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम उत्पन्न लाभसे अनभिभूत होकर विचरेंगे उत्पन्न अलाभसे उत्पन्न यशसे उत्पन्न अपयशसे .... उत्पन्न सत्कारसे उत्पन्न असत्कारसे उत्पन्न पापेच्छासे उत्पन्न पापमित्रतासे अनभिभूत होकर विचरेंगे।"

भन्ते उत्तर! मनुष्योमे यही चार प्रकारकी परिषद है—भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक तथा उपासिकायें। यह धर्म-पर्य्याय किसीको उपस्थित नही है। भन्ते आयुष्मान् उत्तर! आप इस धर्म-पर्य्यायको ग्रहण करें। भन्ते आयुष्यमान् उत्तर! आप इस धर्म-पर्य्यायका पाठ करें। भन्ते आयुष्मान् उत्तर! यह धर्म पर्य्याय-हितकर है, आरम्भिक जीवनके लिये उपयोगी है।

भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ रूपसे कुल-पुत्र कहा जा सकता है। भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ रूपसे 'वलवान्' कहा जा सकता है। भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ-रूपसे 'सुन्दर' कहा जा सकता है। भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ रूपसे तीव्र-रागी (=भावुक) कहा जा सकता है। भिक्षुओ, यह सब होनेपर भी नन्दकी इन्द्रियाँ सयत हैं, वह भोजनके विषयमे मात्रज्ञ है, वह जाग्रत रहता है, वह स्मृति-सम्प्रजन्यसे युक्त है, जिससे नन्द परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य्यका आचरण कर सकता है।

भिक्षुओ, नन्दके इन्द्रिय-सयमकी यह स्थिति है कि यदि उसको पूर्व-दिशाकी ओर देखना होता है, तो वह चित्तकी सारी एकाग्रताको लेकर पूर्वकी दिशाकी ओर देखता है। उसे इसका विश्वास (=ज्ञान) रहता है कि इस प्रकार पूर्वकी दिशाकी ओर देखते समय मेरे मनमें अभिध्या (=लोभ) तथा दौर्मनस्य (=द्वेष) रूपी पापी अकुशल-कर्मोका उदय नही होगा।

भिक्षुओ, यदि नन्दको पश्चिम-दिशाकी ओर देखना होता है उत्तर

दिशाकी ओर देखना होता है दक्षिण-दिशाकी ओर देखना होता है ऊपरकी ओर देखना होता है नीचेकी ओर देखना होता है अनुदिशाओकी ओर देखना होता है, तो वह चित्तकी सारी एकाग्रताको लेकर अनुदिशाओकी ओर देखता है। उसे उसका विश्वास (= ज्ञान) रहता है कि इस प्रकार अनुदिशाओकी ओर देखते समय मेरे मनमें अभिध्या (= लोभ) तथा दौर्मनस्य (= द्वेष) रुपी पापी अकुशल-धर्मोका उदय नही होगा भिक्षुओ, नन्दके इन्द्रिय-सयमकी यह स्थिति है।

भिक्षुओ, नन्दकी भोजनके विषयमे मात्रज्ञ होनेकी यह स्थिति है। भिक्षुओ, नन्द विचारपूर्वक आहार ग्रहण करता है, जो न हँसी-मजाकके लिये होता है, न मदके लिये होता है, न शरीरको मण्डित करनेके लिये होता है, न शरीरको विभूषित करनेके लिये होता है, किन्तु जब तक इस शरीरकी स्थिति है तब तक शरीर-यापनके लिये, विहिंसासे उपरतिके लिये तथा ब्रह्मचर्य्य (= श्रेष्ठ जीवन) पर अनुग्रह करनेके लिये। (उसका सकल्प होता है कि) मै पुरानी वेदनाको (भोजन -ग्रहण द्वारा) नष्ट कर रहा हूँ तथा नई वेदनाको उत्पन्न होने नही दे रहा हूँ। (उस का विश्वास होता है कि) मेरी जीवन-यात्रा निर्दोष होगी और मै सुख-पूर्वक विचार सकूँगा। भिक्षुओ, नन्दकी भोजनके विषयमें मात्रज्ञ होनेकी यह स्थिति है।

भिक्षुओ, नन्दकी जाग्रत रहनेके विषयमे यह स्थिति है। भिक्षुओ, नन्द दिनमे या तो बैठा रहकर या चन्क्रमण करता रहकर अपने चित्तके आवरणको दूर करनेका प्रयास करता है, रात्रिके पहले याम (= पहर) में या तो बैठा रहकर या चन्क्रमण करता रहकर अपने चित्तके आवरणको दूर करनेका प्रयास करता है, रात्रिके मध्य याममे दाहिनी करवट लेट सिंह-शय्यासे एक पाँवपर दूसरा पाँव रखकर, उठनेका सकल्प मनमे करके सोता है, रात्रिके पिछले याममें या तो बैठा रहकर या चन्क्रमण करता रहकर अपने चित्तके आवरण (= मैल) को दूर करनेका अभ्यास करता है। भिक्षुओ, नन्दकी जाग्रत रहनेके विषयमे यह स्थिति है।

भिक्षुओ, नन्दकी स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त होनेकी यह स्थिति है कि उसकी जानकारीमे वेदनाओकी उत्पत्ति होती है, उसकी जानकारीमे वेदनाओकी स्थिति होती है, उसकी जानकारीमे वेदनाओका विनाश होता है, उसकी जानकारी मे सज्ञाओकी वितर्कोका विनाश होता है। भिक्षुओ, नन्दकी स्मृति-सम्प्रजन्य-युक्त होनेकी यह स्थिति है।

भिक्षुओ, और क्या, नन्दकी इन्द्रियाँ सयत है, वह भोजनके विषयमें मात्रज्ञ

है, वह जाग्रत रहता है, वह स्मृति सम्प्रजन्यसे युक्त है, जिससे नन्द परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य्यका आचरण कर सकता है।

एक समय भगवान् चम्पा (नगरी) मे गग्गर पुष्करिणीके किनारे विचर रहे थे। उस समय कुछ भिक्षु एक दूसरे भिक्षुपर दोषारोपण कर रहे थे। भिक्षुओ द्वारा दोपारोपण किये जानेपर कुछका कुछ कहता, दूसरी दूसरी बातें वीचमें ले आता, अपना क्रोध, द्वेप तथा अप्रसन्न-भाव प्रकट करता।

तव भगवान्ने भिक्षुओको सम्वोधित किया—"भिक्षुओ, इसे भगाओ, भिक्षुओ, इसे भगाओ, भिक्षुओ, इसे निकाल वाहर करो, भिक्षुओ, इसे निकाल वाहर करो। भिक्षुओ, इस पर-पुत्रको शुद्ध करनेका प्रयास करनेसे क्या लाभ! भिक्षुओ, किसी-किसीका आना-जाना, देखना-भालना, सिकुडना-फैलना तथा पात्र चीवर धारण करना वैसा ही होता है जैसा दूसरे अच्छे भिक्षुओका—जव तक भिक्षु उसके दोपको नही देखते है। लेकिन जव भिक्षु उसके दोषको देख लेते है तो वह जान जाते है कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-प्रलाप है, यह श्रमण-कूडा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल वाहर करते है। ऐसा किस लिए? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओको खराव न करे।

भिक्षुओ, जैसे किसी जौके खेतमे दुष्ट–जौ, प्रलाप-जौ, कूडा-जौ उग आये। लेकिन उसकी दूसरे अच्छे जवो-जैसी ही जड हो, उसकी दूसरे अच्छे जवो-जैसी ही डण्ठल हो, उसके वैसे ही पत्ते हो जैसे दूसरे अच्छे जवोके—जव तक उसकी वालि न निकले। लेकिन जव उसकी वालि निकले तो लोग जान जाये कि यह दुष्ट—जो है, वेकार -जौ है, कूडा-जौ है। जान लेनेपर वे उसे जडसे उखाडकर जौके खेतके वाहर फेंक देगे। किस लिये? ताकि यह दूसरे अच्छे जौको खराव न करे।

इसी प्रकार भिक्षुओ, किसी किसीका आना-जाना, देखना-भालना, सिकुडना-फैलना तथा पात्र-चीवर धारण करना वैसा ही होता है जैसा दूसरे अच्छे भिक्षुओका—जवतक भिक्षु उसके दोप को नही देखते है। लेकिन जव भिक्षु उसके दोषको देख लेते है तो वह जान जाते है कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-वेकार है, यह श्रमण-कूडा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल वाहर करते है। ऐसा किसलिये? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओको खराव न करे।

भिक्षुओ, जैसे धानकी वडी ढेरीको उडाते समय जो दृढ, सारवान् धान होते है, उनकी एक ओर ढेरी लग जाती है, लेकिन जो दुर्बल, वेकार, धान होते है, उन्हे हवा उडाकर एक ओर कर देती है। मालिक लोग झाड कर, वुहार कर, प्रसन्नता-

पूर्वक उसे और भी दूर हटा देते हैं। यह किसलिये ? ताकि दूसरे अच्छे धानोको खराव न करे।

इसी प्रकार भिक्षुओ, किसी किसीका आना-जाना, देखना, भालना, सिकुडना-फैलना तथा पात्र-चीवर धारण करना वैसा ही होता है जैसा दूसरे अच्छे भिक्षुओका—जवतक भिक्षु उसके दोषको नहीं देखते हैं। लेकिन जव भिक्षु उसके दोषको देख लेते हैं तो वे जान लेते हैं कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-वेकार है, यह श्रमण-कूडा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल वाहर करते हैं। ऐसा किसलिये ? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओको खराव न करे।

भिक्षुओ, जैसे कोई आदमी जिसे पानीके प्याउके लिये नलिकी आवश्यकता हो, वह तेज कटारी लेकर वनमे प्रवेश करे। वह जिस जिस वृक्षको कटारीके पार्श्वसे ठोके-वजाये, उनमेंसे जो वृक्ष मजवूत हो, सारवान् हो वे कुटारी-पार्श्वसे ठोके वजाये जानेपर कठोर आवाज दे, लेकिन जो वृक्ष अन्दरसे सडे हो, निस्सार हो, गले हो, वह कुठारी-पार्श्वसे ठोके-वजाये जानेपर 'ठप' आवाज दें। वह आदमी उसे जडसे काटे, जडको काटकर अगले हिस्सेको काटे, अगले हिस्सेको काटकर अन्दरसे शुद्ध करे, अन्दरसे अच्छी तरह विशुद्ध कर पानी पिलानेकी नलकी वनाये।

इसी प्रकार भिक्षुओ, किसी-किसीका आना-जाना, देखना-भालना, सिकुडना-फैलना तथा पात्र चीवर धारण करना वैसा ही होता जैसे दूसरे अच्छे भिक्षुओका—जवतक भिक्षु उसके दोषको नही देखते हैं। लेकिन जव भिक्षु उसके दोषको देख लेते हैं तो वे यह जान लेते हैं कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-वेकार है, यह श्रमण-कूडा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल वाहर करते हैं। ऐसा किसलिये ? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओको खराव न करे।

> संवासाय विजानाथ, पापिच्छो कोधनो इति
> मक्खी, थम्भी, पलासी च, इस्सुकी मच्छरी सठो।।
> सन्तवाचो जनवति, समणो विय भासति।
> रहो करोति करणं, पापदिट्ठि अनादरो।।
> संसप्पी च मुसावादी, तं विदित्वा यथातथं।
> सब्बे समग्गा हुत्वान, अभिनिब्बज्जयाथन।।
> कारण्डवं निद्धमथ, कसम्बु अपकस्सथ।
> ततो पलापे वाहेथ, अस्समणे समणमानिने।।
> निद्धमित्वान पापिच्छे, पापआचार गोचरे।

सुद्धासुद्धेहि सवास, कप्पयव्हो पतिस्सता ॥
ततो समग्गा निपका, दुक्खस्सन्त करिस्सथ ॥

[साथ रहनेसे यह जान लो कि यह पापी है, क्रोधी है, निर्दयी है, जिद्दी है, दुष्ट है, ईर्ष्यालु है, मात्सर्य-युक्त है, झूठ है। वह लोगोके बीचमे बडी शान्तवाणी बोलता है, श्रमणके समान बातचीत करता है। वह छिपकर (पाप –) कर्म करता है, पाप-दृष्टि आदरकी भावना से शून्य। वह झूठ बोलता हुआ सरकता है—यह ऐसा है, इसे जानकर ,सब मिलकर उसे निकाल बाहर करो। उस कूडेको दूर हटाओ, उस गदगीको परे करो। उस 'श्रमण' बने हुए 'अश्रमण' को बाहर करो। दुराचारी, पापाचारीको दूर कर, स्वय शुद्ध बने रहकर अन्य शुद्धोके साथ स्मृतिमान हो सहवास करो। इस प्रकार सभी प्रज्ञावान् इकट्ठे मिलकर दु खका अन्त करो।]

२ महावग्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वेरञ्जामे नळेरुपुचिमन्द (वृक्ष) की छायामें विहार कर रहे थे। तब वेरञ्ज ब्राह्मण जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचा, पास जाकर भगवान के साथ कुशल-क्षेमकी बातचीत की। कुशल-क्षेमकी बातचीत समाप्त हो चुकनेपर वह एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए वेरञ्ज ब्राह्मणने भगवान्से निवेदन किया—

"हे गौतम! मैंने यह सुना है कि श्रमण गौतम ऐसे ब्राह्मणोको जो जरा-प्राप्त है, जो वृद्ध है, जो बूढे है, जो आप-प्राप्त है न अभिवादन करता है, न उनका सत्कार करता है, न उन्हे बैठनेके लिये आसन देता है।' हे गौतम! क्या यह ऐसा ही है कि श्रमण गौतम ऐसे ब्राह्मणोको जो जरा-प्राप्त है, जो वृद्ध है, जो बूढे है, जो आयु-प्राप्त है न अभिवादन करता है, न उनका सत्कार करता है, न उन्हे बैठनेके लिये आसन देता है। हे गौतम! ऐसा करना तो अच्छा नही है।'

"ब्राह्मण सदेव, समार, सब्रह्मलोकमें, श्रमण-ब्राह्मण सहित जनतामे, देवताओ तथा मनुष्योमें मैं कोई ऐसा व्यक्ति नही देखता, जिसका मैं अभिवादन करूँ, जिसका मै सत्कार करूँ, जिसे मै बैठनेके लिये आसन दूं। ब्राह्मण! यदि किसीका तथागत अभिवादन करे, सत्कार करे या उमे बैठनेके लिये आसन दे तो उसका सिर भी नीचे गिर जा सकता है।"

"आप गौतम बडे नी-रस है।"

"ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नही, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम नी-रस (= अरस रूप) है। हे ब्राह्मण जो रूप-रस है, जो शब्द-रस है, जो गन्ध-

रस है, जो स्पृष्टव्य -रस है वह तथागताका प्रहीण हो गया है, जडसे जाता रहा है, कटे ताड वृक्षके समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, पुनरुत्पत्तिकी कोई सम्भावना नहीं रही है। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम नी-रस (अरस-रूप) है।

"आप गौतम भोग-रहित हैं।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम भोग-रहित है। ब्राह्मण जो रूप-भोग है, जो शब्द-भोग है, जो गन्ध-भोग है, जो रस-भोग है, जो स्पृष्टव्य-भोग है, वे तथागतके प्रहीण हो गये है, जडसे जाते रहे हैं, कटे ताड-वृक्षके समान हो गये है, अभाव-प्राप्त हो गये हैं, पुनरुत्पत्तिकी कोई सभावना नहीं रही है। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम भोग-रहित है।

"आप गौतम अ-क्रिया-वादी है।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम अक्रिया-वादी है। ब्राह्मण ! मैं शारीरिक दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मानसिक दुश्चरित्रता न करनेकी बात करता हूँ तथा नाना प्रकारके पाप-कर्मोके न करनेकी बात करता हूँ। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सके कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम उच्छेदवादी है। हे ब्राह्मण ! मैं राग, द्वेष, मोहका, मूलोच्छेद करनेकी बात करता हूँ तथा अनेक प्रकारके पापी अकुशल-धर्मोका उच्छेद करनेकी बात करता हूँ। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सके कि श्रमण गौतम उच्छेदवादी है।"

"आप गौतम घृणा करनेवाले हैं।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम घृणा करनेवाला है। हे ब्राह्मण ! मैं शरीरकी दुश्चरित्रतासे, वाणीकी दुश्चरित्रतासे, तथा मनकी दुश्चरित्रतासे घृणा करता हूँ और तथा घृणा करता हूँ अनेक प्रकारके

पापो अकुशल-धर्मोके आचरणसे। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे वारेमे ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम घृणा करनेवाला है।"

"आप गौतम विनयी (=दमन करनेवाले) है।"

ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नही, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम विनयी (=दमन करनेवाला) है। हे ब्राह्मण! मै राग, द्वेष तथा मोहका दमन करनेकी धर्म-देशना करता हूँ और धर्म-देशना करता हूँ अनेक प्रकारके पापो अकुशल-धर्मोका दमन करने की। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करनेवाला) है।"

"आप गौतम तपस्वी है।"

"ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नही किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमे ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम 'तपस्वी' है। ब्राह्मण! मै शारीरिक दुष्कर्मो, वाणीके दुष्कर्मो तथा मनके दुष्कर्मो (तथा दूसरे) पाप-कर्मो अकुशल-धर्मोको तपानेवाले धर्म कहता हूँ। हे ब्राह्मण! जिस किसीके ये तपानेवाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये हो, उनका मूलोच्छेद हो गया हो, वे कटे ताडके समान हो गये हो, अभाव-प्राप्त हो गये हो, पुनरुत्पत्तिकी सभावना न रही हो, उसे मै "तपस्वी" कहता हूँ। हे ब्राह्मण! तथागतके तपानेवाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये है, उनका मूलोच्छेद हो गया है, वे कटे ताडके समान हो गये है, अभाव-प्राप्त हो गये है, पुनरुत्पत्तिकी सम्भावना नही रही है। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे वारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम "तपस्वी" है।

"आप गौतम अप्रगल्भ (=अपगब्भ) है।"

"ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नही, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमे ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (=अपगब्भ) है। ब्राह्मण! जिस किसी की भावी गर्भ-शय्या पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्तिकी सभावना नही रही है, उसे मै अप्रगल्भ (=अपगब्भ) कहता हूँ। ब्राह्मण! तथागतकी भावी गर्भ-शय्या, पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्ति की सभावना नही रही है। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि

है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (= अपगल्भ) है।

"ब्राह्मण! जैसे किसी मुर्गीके आठ, दस या बारह अण्डे हो। उन्हे उस मुर्गीने अच्छी तरह से सेया हो, अच्छी तरहसे प्रभावित किया हो, अच्छी तरहसे गर्मी पहुँचाई हो। मुर्गीका जो चोजा उन अण्डोमे से किसी एक अण्डेको अपने पैरोके नाखूनोंसे अथवा चोचसे फोडकर सकुशल बाहर निकल आये, उसे क्या कहा जायेगा—ज्येष्ठ वा कनिष्ठ ?

"हे गौतम! उसे ज्येष्ठ कहा जायेगा। वह ही उन सबमें ज्येष्ठ होता है।"

"हे ब्राह्मण! इसी प्रकार अविद्यासे घिरी हुई अण्डेके समान जनतामेंसे, अविद्या रूपी अण्डेको फोडकर अकेले मैंने ही अनुपम सम्यक् सम्बोधिको प्राप्त किया है। हे ब्राह्मण! इस विश्वमें मै ही ज्येष्ठ हूँ, मै ही श्रेष्ठ हूँ। हे ब्राह्मण! मेरा प्रयत्न प्रमाद-रहित रहा है, मेरी मूढता-रहित स्मृति उपस्थित रही है, मेरी उत्तेजन-रहित देह शान्त रही है, मेरा चचलता-रहित चित्त शान्त रहा है। हे ब्राह्मण! मै काम-वितर्कसे रहित हो, बुरे विचारोसे रहित हो, प्रथम-ध्यानको प्राप्त कर विचारता हूँ, जिसमें वितर्क और विचार रहता है, जो एकान्त-वाससे उत्पन्न है, जिसमे प्रीति और सुख रहते है। मै वितर्क और विचारोंके उपशमनसे उत्पन्न, अन्दरकी प्रसन्नता और एकाग्रता रूपी द्वितीय-ध्यानको प्राप्त हो विचरता हूँ, जिसमे न वितर्क होते है, न विचार, जो समाधिसे उत्पन्न होता है और जिसमें प्रीति तथा सुख रहते है। मै प्रीतिसे भी विरक्त हो, उपेक्षावान् बन विचरता हूँ। मै स्मृतिवान्, ज्ञानवान् रहता हूँ काम (= चित्त) से सुखका अनुभव करता हुआ तृतीय ध्यानको प्राप्त हो विहार करता हूँ, जिसे पण्डित जन उपेक्षावान्, स्मृतिवान सुखपूर्वक विहार करनेवाला कहते है। मै सुख और दुःख—दोनोंके प्रहाणसे, सौमनस्य और दौर्मनस्यके पहले ही अस्त हुए रहनेसे (उत्पन्न) चतुर्थ-ध्यानको प्राप्त हो विहार करता हूँ, जिसमें न दुःख होता है, न सुख और होती है (केवल) उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि।

"तब इस प्रकार एकाग्र परिशुद्ध, स्वच्छ, अगण (= चित्त मल) रहित, चित्त-क्लेश रहित, मृदु, कमनीय, स्थिर चित्तको मैंने पूर्व जन्मोके अनुस्मरण की ओर लगाया। मैं अपने अनेक पूर्व जन्मोका स्मरण करता हूँ—एक जन्म भी, दो जन्म भी, तीन जन्म भी, चार जन्म भी, पाँच जन्म भी, दस जन्म भी, बीस, जन्म भी, तीस जन्म भी, चालीस जन्म भी, पचास जन्म भी, सौ जन्म भी, हजार जन्म भी, लाख जन्म भी, अनेक सवर्त कल्प भी, अनेक विवर्त-कल्प भी, अनेक सवर्त-विवर्त कल्प भी कि

मै अमुक जगह था, अमुक नाम था, अमुक गोत्र था, अमुक वर्ग था, अमुक प्रकारका भोजन करता था, अमुक सुख-दु ख भोगे, अमुक आयु पर्यन्त। वहाँसे च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ। इस प्रकार मै आकार-सहित, उद्देश्य-सहित नाना पूर्व जन्मोका अनुस्मरण करता हूँ। हे ब्राह्मण ! रात्रिके प्रथम याममे यह मुझे प्रथम विद्या प्राप्त हुई, अविद्याका नाश हुआ, विद्या हस्तगत हुई, अन्धकार का नाश हुआ, प्रकाशकी उत्पत्ति हुई—अप्रमाद-युक्त, आलस्य-रहित प्रयत्नपूर्वक विहार करते हुए। हे ब्राह्मण ! यह अण्डेसे 'चूजे' के वाहर निकलनेकी तरह मेरी प्रथम 'अभिनिब्भिदा' (= ज्ञान-प्राप्ति) थी।

तव इस प्रकार एकाग्र परिशुद्ध, स्वच्छ, अगण (= चित्तमल)–रहित चित्त-क्लेश रहित, मृदु, कमनीय, स्थिर चित्तको मैंने दूसरे प्राणियोकी च्युति और उत्पत्तिके ज्ञानकी ओर लगाया। मै दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे देखता हूँ कि प्राणी उत्पन्न होते है, मरते है—हीन, प्रणीत, सुवर्ण, दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त, कर्मानुसार जिस-तिस गतिको प्राप्त प्राणी। मै जानता हूँ कि ये प्राणी शारीरिक दुष्कर्मसे युक्त है, वाणीके दुष्कर्मसे युक्त है, मनके दुष्कर्मसे युक्त है, श्रेष्ठ जनोके निन्दक है, मिथ्या-दृष्टि है, मिथ्या-दृष्टि-गृहीत है। ये शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, अपायमे उत्पन्न हुए है, दुर्गति को प्राप्त हुए है, नरकमे जन्म ग्रहण किया है। अथवा ये प्राणी शारीरिक सुकर्मसे, वाणीके सुकर्मसे, मनके सुकर्मसे युक्त है, श्रेष्ठ जनोके निन्दक नही है, सम्यक्-दृष्टि है, सम्यक्-दृष्टि गृहीत है। ये शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त हुए है, स्वर्ग लोकमे उत्पन्न हुए है। इस प्रकार मै दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे देखता हूँ कि प्राणी उत्पन्न होते है, मरते है—हीन, प्रणीत, सुवर्ण, दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त, कर्मानुसार जिस-तिस गतिको प्राप्त प्राणी। हे ब्राह्मण ! रात्रिके मध्यम याममे यह मुझे दूसरी विद्या प्राप्त हुई, अविद्याका नाश हुआ, विद्या हस्तगत हुई, अन्धकारका नाश हुआ, प्रकाशकी उत्पत्ति हुई—अप्रमाद-युक्त, आलस्य-रहित, प्रयत्नपूर्वक विहार करते हुए। हे ब्राह्मण ! यह अण्डे से 'चूजे' के वाहर निकलनेकी तरह मेरी द्वितीय अभिनिब्भिदा (= ज्ञान-प्राप्ति) हुई।

तव इस प्रकार एकाग्र, परिशुद्ध, स्वच्छ, अगण (= चित्त-मल)-रहित, चित्त-क्लेश रहित, मृदु, कमनीय, स्थिर चित्त को आस्रवोके क्षय-ज्ञानकी ओर लगाया। मैंने 'यह दु ख है' इसे यथार्थ-रूपसे जान लिया, 'यह दु ख-समुदय है इसे यथार्थ-रूपसे जान लिया, 'यह दु ख-निरोध है' इसे यथार्थ रूप से जान लिया, 'यह दु ख निरोधकी ओर ले जाने वाला मार्ग है इसे यथार्थ रूपसे जान लिया। मैंने 'यह आस्रव है' इसे

यथार्थ रूपसे जान लिया, 'यह आस्रव-समुदय है' इसे यथार्थ रूपसे जान लिया, 'यह आस्रव-निरोध है' इसे यथार्थ रूपसे जान लिया, 'यह आस्रव निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है' इसे यथार्थ रूपसे जान लिया। इस प्रकार इनकी जानकारी प्राप्त कर लेने पर मेरा चित्त कामास्रव से भी विमुक्त हो गया, भवास्रवसे भी विमुक्त हो गया, अविद्यास्रव से भी विमुक्त हो गया। विमुक्त होनेपर, 'विमुक्त हूँ' यह ज्ञान प्राप्त हुआ। यह स्पष्ट हुआ कि जन्म-मरणका बन्धन क्षीण हो गया, श्रेष्ठ जीवनका उद्देश्य पूरा हो गया, जो करणीय था वह कर लिया गया, इससे आगे कुछ करनेको नहीं है। हे ब्राह्मण! रात्रिके तीसरे याममें यह मुझे तीसरी विद्या प्राप्त हुई, अविद्याका नाश हुआ, विद्या हस्तगत हुई, अन्धकारका नाश हुआ, प्रकाशकी उत्पत्ति हुई—अप्रमाद युक्त, आलस्य-रहित प्रयत्नपूर्वक विहार करते हुए। हे ब्राह्मण! यह 'चूजे' के अण्डेसे बाहर निकलनेकी तरह मेरी तीसरी अभिनिर्भिदा (=ज्ञान-प्राप्ति) हुई।

ऐसा कहने पर वेरञ्ज ब्राह्मणने भगवान्से कहा—आप गौतम ज्येष्ठ हैं। आप गौतम श्रेष्ठ हैं। हे गौतम! यह सुन्दर है। हे गौतम! यह सुन्दर है। हे गौतम! जैसे कोई उल्टेको सीधा कर दे, ढके हुएको उघाड दे, मार्ग-भ्रष्ट को रास्ता दिखा दे अथवा अन्धेरेमें प्रदीप लेकर खडा रहे कि आँख वाले रास्ता देख लेंगे, इसी प्रकार आप गौतमने अनेक प्रकारसे धर्मका प्रकाशन कर दिया। मैं भगवान् गौतम, धर्म तथा भिक्षु-संघकी शरण ग्रहण करता हूँ। आजसे प्राण रहने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक समझें।

एक समय भगवान् वैशालीके महावनमें कूटागार शालामें विहार कर रहे थे। उस समय बहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर शाला (=सन्थागार) में बैठे हुए नाना रूपसे बुद्ध-धर्म, तथा सघका गुणानुवाद कर रहे थे।

उस समय उस परिषद्में निर्ग्रन्थ-नायपुत्र का श्रावक सिंह सेनापति भी उपस्थित था। तब सिंह सेनापति के मनमें यह हुआ—'वह भगवान् असंदिग्ध रूपसे सम्यक् सम्बुद्ध होंगे, तभी तो ये बहुत से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामें बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा संघका गुणानुवाद कर रहे हैं। मैं उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका दर्शन करनेके लिये चलूँ।'

तब सिंह सेनापति निर्ग्रन्थ-नाय पुत्रके पास गया और जाकर निर्ग्रन्थ-नाय पुत्रसे बोला—"भन्ते! मैं श्रमण गौतमका दर्शन करने जानेकी इच्छा करता हूँ।'

"हे सिंह! तू क्रिया-वादी है, तू क्या उस अक्रिया-वादी श्रमण गौतमके दर्शनार्थ जायगा! हे सिंह! श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है। वह अक्रियाका धर्मोपदेश देता है और उसीका अपने शिष्योको अभ्यास कराता है।"

भगवानका दर्शन करने जानेकी जो सिंह सेनापतिकी इच्छा थी, वह वही शान्त हो गई।

दूसरी वार भी वहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामे बैठे हुए नाना प्रकारसे वुद्ध-धर्म तथा सघका गुणानुवाद कर रहे थे। दूसरी वार भी सिंह सेनापतिके मनमें यह हुआ—'वह भगवान असदिग्ध रूपसे सम्यक् सम्बुद्ध होगे, तभी तो ये व्हुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामे वैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा सघका गुणानुवाद कर रहे हैं। मैं उन भगवान अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका दर्शन करनेके लिये चलूँ।"

तव सिंह सेनापति निर्ग्रन्थनाथ-पुत्रके पास गया और जाकर निर्ग्रन्थनाथ पुत्रसे वोला—"भन्ते! मैं श्रमण गौतमका दर्शन करनेकी इच्छा करता हूँ।"

"हे सिंह! तू क्रिया-वादी है, तू क्या उस अक्रिया-वादी श्रमण गौतमके दर्शनार्थ जायगा। हे सिंह! श्रमण-गौतम अक्रिया-वादी है। वह अक्रियाका धर्मोपदेश देता है और उसीका अपने शिष्योको अभ्यास कराता है।"

भगवान्‌का दर्शन करने जानेकी जो सिंह सेनापति की इच्छा थी, वह दूसरी वार भी शान्त हो गई।

तीसरी बार भी बहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामे बैठे हुए नाना प्रकारसे वुद्ध, धर्म तथा सघका गुणानुवाद कर रहे थे। तीसरी बार भी सिंह सेनापतिके मनमे यह हुआ,—'वह भगवान् असदिग्ध रूपसे सम्यक् सम्बुद्ध होगे, तभी तो ये वहुत से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामे बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा सघका गुणानुवाद कर रहे हैं। यह निगण्ठ (=निर्ग्रन्थ) मेरा क्या करेंगे, चाहे मैं पूछकर (=देखकर) जाऊँ या विना पूछे। मैं क्यो न विना पूछे ही उन भगवान् अर्हत् सम्यक सम्बुद्ध के दर्शनार्थ जाऊँ?"

तव सिंह सेनापति अपराह्नमे ही पाँच सौ रथोको जुतवा भगवानके दर्शनार्थ निकला। जहाँ तक रथ पर जाया जा सकता था, वहाँ तक रथसे जाकर वादमें नीचे उतर, पैदल ही आगे बढा। सिंह सेनापति जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा, पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए सिंह सेनापति-ने भगवानसे कहा—

"भन्ते! मैंने सुना है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वाद की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको भी अक्रिया-वादका ही अभ्यास कराता है। भन्ते! जो लोग ऐसा कहते है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वादकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोको भी अक्रिया वादका ही अभ्यास कराता है, क्या वे लोग भगवानके मतका यथार्थ प्रतिपादन करते है, भगवान् पर मिथ्या आरोप तो नही लगाते? क्या वे भगवानके धर्मकी योग्य व्याख्या करते है? क्या उनका प्रतिपादन विज्ञो द्वारा गर्हित तो नही है? भन्ते! हम भगवान्का यथार्थ मत जानना चाहते है।"

"सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमे ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वादकी ही देशना करता है और अपने श्रावकोको अक्रिया-वादका ही अभ्यास कराता है।

"सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम क्रिया-वादी है, क्रिया-वादकी ही देशना करता है, तथा अपने श्रावकोको भी क्रिया-वाद का ही अभ्यास कराता है।

"सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम उच्छेद-वादी है, उच्छेद-वादकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको भी उच्छेद-वादका ही अभ्यास कराता है।

"सिंह! एक दृष्टि जिस से मेरे वारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम घृणा करने वाला है, वह घृणा करनेकी ही देशना करता है तथा उसीका अपने श्रावकोको भी अभ्यास कराता है।

"सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करने वाला) है, विनय (=दमन) की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको विनय (=दमन) का ही अभ्यास कराता है।

"सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमे ठीक ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम 'तपस्वी है, वह तपस्या की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको तपस्याका ही अभ्यास कराता है।

सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे वारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (=अपगल्भ) है, वह अप्रगल्भता की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको अप्रगल्भताका ही अभ्यास कराता है।

सिंह! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम आश्वस्त रहने वाला है, आश्वस्त रहनेकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको आश्वस्त रहनेका ही अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वादकी देशना करता है तथा अक्रिया-वादका ही अपने श्रावकोको अभ्यास कराता है! सिंह! मै शारीरिक दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मनकी दुश्चरित्रता न करनेकी बात करता हूँ तथा नाना प्रकारके पाप-कर्मोके न करनेकी बात करता हूँ। सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रियावादकी देशना करता है, तथा अक्रियावादका ही अपने श्रावकोको अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौनसी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम क्रिया-वादी है, क्रिया-वादकी देशना करता है तथा क्रिया-वादका ही अपने श्रावकोको अभ्यास कराता है। सिंह! मै शारीरिक सुचरित्रता वाणीकी सुचरित्रता, तथा मनकी सुचरित्रताकी बात करता हूँ तथा अनेक प्रकारके कुशल-कर्म करनेको कहता हूँ। सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम क्रिया-वादी है, क्रिया-वादकी देशना करता है तथा क्रिया-वाद का ही अपने श्रावकोको अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम उच्छेद-वादी है, उच्छेद-वादकी देशना करता है, तथा उच्छेदवादका ही अपने श्रावकोको अभ्यास कराता है। हे सिंह! मै राग, द्वेष, मोहका मूलोच्छेद करनेकी बात करता हूँ, तथा बात करता हूँ अनेक प्रकारके पापो अकुशल-धर्मोके उच्छेद करनेकी। सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम उच्छेद-वादी है, उच्छेदवाद की देशना करता है तथा उच्छेदवाद का ही अपने श्रावकोको अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम घृणा करने वाला है, तथा घृणा करनेकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोको भी घृणा करनेका अभ्यास कराता है। हे सिंह! मै शरीरकी दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मनकी दुश्चरित्रतासे घृणा करता हूँ और घृणा करता हूँ अनेक प्रकारके पापो अकुशल-धर्मोके आचरणसे। सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम घृणा

करने वाला है, घृणा करनेकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोको भी घृणा करने का अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करने वाला) है, विनय (=दमन) की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको विनय (=दमन) का ही अभ्यास कराता है। सिंह! मैं, राग, द्वेप, मोहके दमन करनेकी बात करता हूँ तथा बात करता हूँ अनेको पापो अकुशल-धर्मो को दमन करनेकी। सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करने वाला) है, विनय (=दमन) की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको विनय (=दमन) का ही अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमे ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम 'तपस्वी' है, वह तपस्याकी ही देशना करता है, तथा अपने श्रावकोको तपस्याका ही अभ्यास करता है। सिंह! मैं शारीरिक दुष्कर्मों, वाणीके दुष्कर्मो तथा मनके दुष्कर्मो (तथा दूसरे) पाप-कर्मो, दुष्कर्मोको तपाने वाले धर्म कहता हूँ। हे सिंह! जिस किसीके ये तपाने वाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये हो, उनका मूलोच्छेद हो गया हो, वे कटे ताडके समान हो गये हो, अभाव-प्राप्त हो गये हो, पुनरुत्पत्ति की सभावना न रही हो, उसे मैं 'तपस्वी' कहता हूँ। हे सिंह! तथागतके तपाने वाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये है, उनका मूलोच्छेद हो गया है, वे ताडके समान हो गये हैं, अभाव-प्राप्त हो गये है, पुनरुत्पत्ति की सभावना नही रही हैं। हे सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम तपस्वी है, वह तपस्याकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको तपस्याका ही अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (=अपगर्भ) है, वह अप्रगल्भता की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको अप्रगल्भताका ही अभ्यास कराता है। सिंह! जिस किसीकी भावी गर्भशय्या पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नही रही है, उसे मैं अप्रगल्भ (=अपगर्भ) कहता हूँ। सिंह! तथागतकी भावी गर्भ-शय्या-पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे

ताड-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्तिकी सभावना नही रही है। हे सिह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (=अपगब्भ) है, वह अप्रगल्भता की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको अप्रगल्भताका ही अभ्यास ही कराता है।

सिह ! वह कौन-सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम आश्वस्त करने वाला है, आश्वस्त रहनेकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोको आश्वस्त रहनेका ही अभ्यास कराता है। हे सिंह ! मैं सर्वाधिक आश्वस्त हूँ, आश्वस्त रहनेकी देशना करता हूँ, उसीका श्रावकोको अभ्यास कराता हूँ। सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम आश्वस्त करने वाला है, आश्वस्त रहनेकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोको आश्वस्त रहनेका ही अभ्यास कराता है।

ऐसा कहने पर सिंह सेनापति ने भगवानसे यह कहा—भन्ते ! बहुत सुन्दर है ! भन्ते ! बहुत सुन्दर है। भन्ते ! आजसे प्राण रहने तक मुझे अपना शरणागत उपासक समझे।"

"सिंह ! विचारसे काम लो। तुम्हारे जैसे विख्यात मनुष्योका विचार-पूर्वक कार्य करना ही ठीक होता है।

"भन्ते ! इस एक अतिरिक्त कारणसे भी मैं भगवान्के प्रति और भी श्रद्धावान् हो गया हूँ, क्योकि आप मुझे कहते हैं 'सिंह ! विचारसे काम लो। तुम्हारे जैसे विख्यात मनुष्योका विचार पूर्वक कार्य करना ही ठीक होता है।' भन्ते ! यदि मैं अन्य तैर्थिको (=मतावलम्बियो) का श्रावक हो जाता तो वह समस्त वैशालीमें झण्डा उडाते फिरते कि सिंह सेनापति हमारा श्रावक हो गया है। लेकिन भगवान मुझे कहते है, सिंह ! विचारसे काम लो। तुम्हारे जैसे विख्यात मनुष्योका विचारपूर्वक कार्य करना ही ठीक होता है।' इसलिये भन्ते ! मैं दूसरी बार भी भगवान की, धर्म तथा सघकी शरण ग्रहण करता हूँ। भगवान् आजसे प्राण रहने तक मुझे अपना उपासक ग्रहण करें।"

"हे सिंह ! तेरा कुल (=घर) चिर काल से निर्ग्रन्थके श्रावकोंके लिये उनकी (भूख–) प्यास बुझाने वाला स्थान रहा है। उन्हे भिक्षार्थ आने पर भिक्षा मिलती रहनी चाहिये।"

"भन्ते ! इस एक अतिरिक्त कारणसे भी मै भगवान् के प्रति और भी श्रद्धावान् हो गया हूँ, क्योकि आप मुझे कहते है, 'सिंह ! तेरा कुल (=घर)

चिरकाल तक मे निर्ग्रन्थ-श्रावकोंके प्रति उनकी (भूख-) प्यास बुझाने वाला स्थान रहा है। उन्हे भिक्षार्थ आनेपर भिक्षा मिलती रहनी चाहिये।' भन्ते! मैंने तो सुना है कि श्रमण गौतमका कहना है कि मुझे ही दान देना चाहिये, मेरे ही श्रावकोको दान देना चाहिये, मुझे ही देनेका महान् फल होता है, दूसरोको देनेका महान् फल नही होता, मेरे ही श्रावकोको देनेका महान् फल होता है, दूसरे श्रावकोको देनेका महान् फल नही होता, लेकिन भगवान् तो मुझे निर्ग्रन्थोको भी दान देनेके लिये कहते हैं। भन्ते! इस विषयमें जो कुछ समायानुसार करना होगा, वह उद्यम करेंगे। भन्ते! यह मैं तीसरी वार भी भगवानकी, धर्म की तथा भिक्षु सघकी शरण ग्रहण करता हूँ। भन्ते! भगवान मुझे प्राण रहने तक अपना शरणागत उपासक ग्रहण करें।

तब भगवानने सिह सेनापतिको क्रमश धर्मोपदेश दिया जैसे दान-कथा, शील-कथा, स्वर्ग-कथा, काम भोगोके दुष्परिणाम, बुराई, सक्लिष्ट होना, तथा निष्काम भावके शुभ परिणाम। जब भगवान्ने समझ लिया कि अब सिह सेनापतिका चित्त ठीक हालतमें है, कोमल-अवस्थाको प्राप्त है, नीवरण-रहित है, उत्साह-युक्त है, प्रसन्न है, तब बुद्धोकी जो उद्धार करनेवाली धर्म-देशना है उसका प्रकाशन किया—दु ख सत्य, समुदय-सत्य, निरोध-सत्य, तथा मार्ग-सत्य। जैसे शुद्ध निर्मल वस्त्र शीघ्र ही रगको ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार उसी आसन पर बैठे-बैठे सिह सेनापतिको वि-रज निर्मल ज्ञान-चक्षुकी प्राप्ति हो गई—जो कुछ समुदय होने वाला है, वह सभी निरोधको प्राप्त होने वाला है।

जब सिह सेनापतिको धर्मका दर्शन हो गया, धर्मकी प्राप्ति हो गई, धर्मका ज्ञान हो गया, धर्मकी गहराईमे उतर गया, सन्देह रहित हो गया, शक और शुबहकी गुंजाइश नही रही, विशारद हो गया तथा शास्ताके शासनके प्रति दृढ श्रद्धावान् हो गया तो उसने भगवान्को कहा—"भन्ते! भिक्षु सघ सहित आप कलका निमत्रण स्वीकार करें।" भगवान्ने चुप रह कर स्वीकार कर लिया।

भगवान् की स्वीकृति जान सिह सेनापति आसनसे उठा और भगवानको नमस्कार कर विदा हुआ। तब सिह सेनापतिने एक आदमीसे कहा—"अरे! जा प्रवर्त माम[1] देख।" तब सिह सेनापतिने उस रातके बीतने पर अपने घर प्रणीत बढिया भोजन तैयार कराया और भगवान् को समय की सूचना भिजवाई—"भन्ते! भोजन ग्रहण करनेका समय हो गया है। भोजन तैयार है।"

---

१ ऐसा माम जो त्रिकोटि-परिशुद्ध हो अर्थात् जिसे किसी भिक्षुने न देखा हो कि उसके लिये मारा गया है, न सुना हो और जिसके बारेमें सन्देह तक की गुजाइश न हो।

तब भगवान् पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन कर, पात्र-चीवर ले, जहाँ सिंह सेनापति का घर था, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर भिक्षु सघ सहित बिछे आसनपर बैठे। उस समय बहुतसे निर्ग्रन्थ गलियोमें चौरस्तो पर हाथ उठा-उठा कर चिल्ला रहे थे—"आज सिंह सेनापतिने स्थूल (=बडे) पशुको मारकर, श्रमण गौतमको भोजन कराया है। श्रमण गौतमने जान बूझकर उसके उद्देश्य से मारे गये पशुका मास ग्रहण किया है। यह (मासके लिये) किया गया प्रतीत्य (अकुशल) कर्म है।

तब एक आदमी जहाँ सिंह सेनापति था, वहाँ आया। आकर उसने सेनापतिके कानमे कहा—'भन्ते! मालूम है। ये बहुतसे निर्ग्रन्थ वैशाली भरमे गली-गली चौरस्ते-चौरस्ते हाथ उठा उठाकर चिल्लाते फिरते है कि आज सिंह सेनापतिने बडा पशु मरवाकर श्रमण गौतमको भोजन कराया है। श्रमण गौतमने जान बूझकर उसके उद्देश्य से मारे गये पशुका मास ग्रहण किया है। यह (मासके लिये) किया गया प्रतीत्य (अकुशल धर्म) कर्म है।'

"आर्य! रहने दे। ये लोग चिरकालसे बुद्ध, धर्म तथा सघकी निन्दा करने वाले है। इन आयुष्मानोको भगवान् पर असत्य-मिथ्या आरोप लगाते हुए लज्जा नही आती। हम अपनी जान बचानेके लिये भी किसी प्राणीकी जान-बूझकर हत्या नही करेगे।"

तब सिंह सेनापति बुद्ध प्रमुख भिक्षु सघको अपने हाथसे भोजन परोस कर खिलाया। तब भगवान्के भोजन कर चुकने पर, हाथ खीच लेने पर सिह सेनापति एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए सिह सेनापतिको भगवानने धार्मिक-कथा द्वारा ज्ञान दे, प्रेरित कर, उत्साहित कर, प्रमुदित किया। तब भगवान आसनसे उठकर चले गये।

भिक्षुओ, जिस अच्छे घोडेमे ये आठ बाते होती है, वह श्रेष्ठ होता है, राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अग ही गिना जाता है, कौनसी आठ बाते? भिक्षुओ, जो राजाका अच्छा श्रेष्ठ घोडा होता है वह 'सुजात' होता है—घोडे तथा घोडी दोनोसे। जिधर दूसरे अच्छे घोडे पैदा होते है, उधर ही उत्पन्न होता है। उसे जो गीला या सूखा भोजन देते है, उसे सम्हाल-सम्हालकर खाता है, इधर-उधर बिखेरता नही। पेशाब, पाखाना करनेमे, बैठने या उठनेमे विचारसे काम लेने वाला होता है। सयत होता है, शिष्ट-विधिसे रहने वाला, दूसरे घोडोको उद्विग्न (=उत्तेजित) नही करता। उसमें जो शठता होती है, कूट नीतिपन होता है, टेढापन होता है, वक्रता होती है वह सब यथार्थ रूपसे सारथीको

प्रकट कर देता है। सारथी उसे सुधारनेकी कोशिश करता है। वह 'वहन' करने वाला होता है। उसकी नीयत रहती है कि दूसरे घोडे वहन करे या न करें, वह 'वहन' करेगा। जाता है तो सीधे रास्तेसे ही जाता है। वह शक्तिशाली होता है और जीवन भर, मरण पर्यन्त शक्तिका प्रदर्शन करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस अच्छे घोडेमें ये आठ बातें होती है, वह श्रेष्ठ होता है, राजा के योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अग ही गिना जाता है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बाते होती है वह आदर करने योग्य होता है लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी आठ बाते? भिक्षुओ, भिक्षु सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोंके अनुसार चलने-वाला, योग्य-स्थानोपर ही आने-जानेवाला, छोटे-से-छोटे दोपोंके करनेमे भी भय माननेवाला तथा शिक्षाओंको अच्छी तरह ग्रहण करनेवाला, उसे जो भी रूखा या बढिया भोजन मिलता है, उसे बिना चचलताके अच्छी तरह ग्रहण करता है। शरीर, वाणी तथा मनके दुष्कर्मो तथा दूसरे पाप कर्मो से घृणा करने वाला होता है। विनम्र होता है, अच्छी तरह रहनेवाला, दूसरे भिक्षुओंको उद्विग्न नही करता। उसमे जो शठता होती है, कुटिलता होती है, टेढापन होता है तथा वक्रता होती है उसे शास्ताके प्रति अथवा अपने विज्ञ सब्रह्मचारियोंके प्रति यथार्थ रूपसे प्रकटकर देनेवाला होता है। शास्ता अथवा विज्ञ सब्रह्मचारी उसे सुधारनेका प्रयत्न करते है। वह शिक्षाकामी होता है, उसकी दृष्टि होती है कि चाहे दूसरे भिक्षु सीखें या न सीखें, वह सीखेगा। जाते हुए वह सीधा मार्ग ही ग्रहण करता है। सीधा मार्ग है—सम्यक् दृष्टि सम्यक् समाधि। वह प्रयत्नशील होता है। उसका दृढ सकल्प होता है—चाहे शरीरका सारा मास और लहू सूख जाये और चाहे बाकी रह जायें केवल त्वचा, नसे तथा हड्डियाँ, जो कुछ भी पुरुपकी शक्तिसे, पुरुपके पराक्रमसे, पुरुपके वीर्यसे प्राप्त हो सकता है, उसे बिना प्राप्त किये प्रयत्न ढीला नही होगा। भिक्षुओ, ये आठ बातें जिस भिक्षुमे होती है, वह आदर करने योग्य होता है लोगोंका पुण्य-क्षेत्र।

"भिक्षुओ, मै आठ प्रकारके घटिया घोडोकी देशना करता हूँ, आठ अश्व-दोपोंकी। इसी प्रकार आठ प्रकारके घटिया-आदमियोकी बात करता हूँ, आठ प्रकारके मनुष्य-दोपोकी। इन्हे सुनो, अच्छी तरह मनमें जगह दो। कहता हूँ।"

'भन्ते! अच्छा' कह उन भिक्षुओंने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवानने यह कहा—

"भिक्षुओ, आठ प्रकारके घटिया घोडे कौनसे होते हैं, आठ अश्व-दोष ? भिक्षुओ, एक घटिया घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जाने पर, सारथि द्वारा प्रेरित किये जानेपर पीछे की ओर चलता है, रथको पीछे धकेलता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई-कोई घटिया घोडा होता है। भिक्षुओ, यह पहला अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, पिछले दोनो पाँवोको उछालता है, रथके कब्बर (=बाँस) को तोड डालता है और चिदण्डके टुकडे टुकडे कर देता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा अश्व-दोष है।

भिक्षुओ, एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, रथके बाँस (= ईसा) को जाँघका प्रहार दे, उसे नीचे गिराकर मर्दित कर देता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह तीसरा अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, कुरस्तेपर चल देता है, अथवा रथको काँटोमें घसीट ले जाता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह चौथा अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, शरीरके अगले हिस्सेको लेकर कूदता है, आगेकी टाँगोको उछालता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह पाँचवाँ अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, सारथीकी परवाह न कर, उसके चाबुककी परवाह न कर, दाँतोसे मुँहकी लगामको चबा, जिधर मन करता है, उधर चल देता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह छठा अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, न आगे बढता है, न पीछे हटता है, वही खूंटेकी तरह गड जाता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, आगे और पीछेके पाँव सिकोडकर चारो पाँवोसे बैठ जाता

है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोडा होता है। भिक्षुओ, यह आठवाँ अश्व-दोष है।

भिक्षुओ, आठ प्रकारके घटिया-मनुष्य कौनसे होते हैं? आठ प्रकारके मनुष्य-दोष कौनसे है? भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओ द्वारा आरोप लगाये जानेपर 'मुझे स्मरण नही है' कहकर बातको टाल देता है। भिक्षुओ, जैसे वह घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर पीछेकी ओर चल देता है, रथको पीछे धकेलता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह पहला मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते है। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर उलटा उन्हींको डाँटता है—"तेरे मूर्ख नादानके कहनेका महत्त्व ही क्या है? तू भी अपने आपको कुछ कहने योग्य समझता है।" भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, पिछले दोनो पाँव उछालता है, रथके कूबर (=बाँस) को तोड डालता है और त्रिदण्डके टुकडे-टुकडे कर देता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी इसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह दूसरा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर उल्टा उन्हींपर आरोप लगाता है—"तूने अमुक दोष किया है। पहले तू ही अपने दोषका प्रायश्चित कर।" भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, रथके बाँसको जाँघका प्रहार दे, उसे नीचे गिराकर मर्दित कर देता है। भिक्षुओ, मै इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह तीसरा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर दूसरा-दूसरा व्यवहार करता है, बाहरी बातें घसीट लाता है, कोप, द्वेष तथा नाराजगी प्रकट करता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, शरीरके अगले हिस्सेको लेकर कूदता है, आगेकी टाँगोको उछालता है। भिक्षुओ, मै इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह चौथा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर सघके बीचमें ही बाँहे उछालने लगता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, शरीरके अगले हिस्सेको लेकर कूदता है, आगेकी टाँगोको उछालता है। भिक्षुओ, मै इस आदमीको भी उसी प्रकारके घाटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह पाँचवाँ मनुष्य-दोप है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते है। वह भिक्षु भिक्षुओ द्वारा आरोप लगाये जानेपर सघकी परवाह न कर, दोपारोपण करनेवालेकी परवाह न कर, 'सदोष' ही जिधर इच्छा होती है, उधर चल देता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, वीघे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, सारथीकी परवाह न कर, उसके चावुककी परवाह न कर, दाँतोसे मुँहकी लगाम को चवा, जिधर मन करता है, उधर चल देता है। भिक्षुओ, मै इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह छठा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते है। वह भिक्षु भिक्षुओ द्वारा दोष लगाये जानेपर 'मै सदोष नही हूँ, मै सदोष नही हूँ' कह चुप रहकर, सघको हैरान करता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर न आगे वढता है, न पीछे हटता है, वही खूंटेकी तरह गड जाता है। भिक्षुओ, मै इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह सातवाँ मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते है। वह भिक्षु भिक्षुओ द्वारा दोष लगाये जानेपर कहता है 'आयुष्मानोको मुझमे बहुत ज्यादा दिलचस्पी है। लो, मै भिक्षु जीवनका त्याग कर गृहस्थ (=हीनमार्गी) हो जाता हूँ।' वह भिक्षु जीवनका त्याग कर हीन-मार्गका अनुगामी हो कहता है—"आयुष्मानो! अव तुम प्रसन्न होओ।' भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोडा 'चल' कहनेपर, बीधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर आगे और पीछेके पाँव सिकोडकर चारो पाँवसे बैठ जाता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोडेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह आठवाँ मनुष्य-दोष है। भिक्षुओ, ये आठ प्रकारके घटिया-मनुष्य होते है और ये आठ प्रकारके मनुष्य-दोष होते है।

भिक्षुओ, ये आठ मैल है। कौनसे आठ? भिक्षुओ, पाठ न करना (वेद–) मन्त्रोका मैल है, भिक्षुओ आलस्य (=अनुट्ठान) गृहस्थ-जीवनका मैल है। भिक्षुओ,

तन्द्रा शरीरके वर्णका मैल है, भिक्षुओ, प्रमाद (किसी भी वस्तुके) रक्षकका मैल है, भिक्षुओ, दुश्चरित्रता स्त्रीका मैल है, भिक्षुओ, लोभ दाताका मैल है, भिक्षुओ, इस लोक तथा परलोकमे जितने पाप-धर्म है, वे सब मैल है, भिक्षुओ, इन सब मैलोसे बढकर, सबसे बडी मैल अविद्या है। भिक्षुओ, ये आठ मैल है—

असज्झाय मला मन्ता, अनुट्ठानमला घरा।
मल वण्णस्स कोसज्ज, पमादो रक्खतो मल।
मलित्थिया दुच्चरित, मच्छेर ददतो मल।
मला वे पापका धम्मा, अस्मि लोक परम्हिच
ततो मला मलतर, अविज्जा परम मलति॥

[भावार्थ ऊपर आ गया है]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें हो, वह 'दूत' बनाकर भेजे जानेके योग्य होता है। कौन-सी आठ बाते? भिक्षुओ, वह भिक्षु सुननेवाला होता है, सुनानेवाला होता है, सम्यक्-प्रकार सीखनेवाला होता है, धारण करनेवाला होता है, जाननेवाला होता है, जनानेवाला होता है, सहिता तथा असहिता (=त्रिपिटक तथा अत्रिपिटक) में कुशल होता है और कलह करनेवाला नही होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बातें हो, वह दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये आठ गुण है, इसलिये सारिपुत्र दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य है। कौन-सी आठ बातें? भिक्षुओ, सारिपुत्र सुननेवाला है, सुनाने वाला है, सम्यक् प्रकार सीखनेवाला है, धारण करने वाला है, जाननेवाला है, जनाने वाला है, सहिता-असहितामें कुशल है और कलह करने वाला नही है। भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये आठ गुण है, इसलिए वह दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य है।

यो न व्यथति पत्वा, परिस उग्गवादिनि।
न च हापेति वचन, न च छादेति सासन॥
असन्दिद्ध च भणति, पुच्छितो न च कुप्पति।
स वे तादिसको भिक्खु, दूतेय्य गन्तुमरहति॥

[जो उग्रवादियोकी परिषदमें पहुँचकर भी घबराता नही है, जो 'वचन' को छोडता नही है और जो सदेश (=शासन) को ढकता नही है, जो असदिग्ध रूपसे बोलता है तथा जो कोई बात पूछे जाने पर क्रोधित नहीं होता—वैसा भिक्षु ही दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य होता है।]

भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको आठ उपायोसे बधनमे बाँध लेती है। किन आठ उपायोंसे? भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको रोकर बधनमे बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको हँसकर बधनमें बाँध लेती है। भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको बोलकर बधनमें बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको अपने (वस्त्र-अलकारादि) पहननेके ढगसे बधनमे बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको वनसे तोडकर लाई हुई चीजे देकर वन्धनमें बाँध लेती है,[१] भिक्षुओ, स्त्री पुरुपको गन्धसे बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको रससे बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको स्पर्शसे बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको इन आठ उपायोसे बधनमें बाँध लेती है। भिक्षुओ, जो प्राणी स्पर्शसे बँधे होते है, वे भली प्रकार जकडे होते है।

भिक्षुओ, पु रुष स्त्री को आठ उपायोसे बधनसे मे बाँध लेता है। किन आठ उपायोसे? भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको रोकर बधनमे बाँध लेता है, भिक्षुओ, पुरुप स्त्रीको हँसकर बधनमें बाँध लेता है, भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको बोलकर बधनमे बाँध लेता है, भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको अपने (वस्त्रादि) पहननेके ढगसे बधनमे बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको वनसे तोडकर लाई हुई चीजें देकर बन्धनमे बाँध लेता है, भिक्षुओ, पुरुप स्त्रीको गन्धसे बाँध लेता है, भिक्षुओ, पुरुप स्त्रीको रससे बाँध लेता है, भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको स्पर्शसे बाँध लेता है। भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको इन आठ उपायोसे वन्धनमे बाँध लेता है। भिक्षुओ, जो प्राणी स्पर्शसे बँधे होते है, वे भली प्रकार जकडे होते है।

एक समय भगवान् वेरञ्जामे नळेरुपचिन्दकी छायामे विहार करते थे। तब पहाराद नामका असुरेन्द्र जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए पहाराद नामके असुरेन्द्रसे भगवानने पूछा—

"पहाराद! क्या असुर लोग महासमुद्रमे रमण करते है?"

"भन्ते! असुर लोग महासमुद्रमें अभिरमण करते है।"

"पहाराद! महासमुद्रमे ऐसी कितनी आश्चर्यकर अद्भुत बाते है, जिन्हे देख-देखकर असुर महासमुद्रमे रमण करते है?"

"भन्ते! महासमुद्रमें ऐसी आठ आश्चर्यकर अद्भुत बाते है, जिनको देख-देखकर असुर लोग महासमुद्रमे रमण करते है। कौन-सी आठ? भन्ते! महा-

---

१ वन-भन्ग शब्द कही 'भ्रू-भगिमा' का तो परिवर्तित रूप नही?—अनुवादक

समुद्र क्रमश निम्न होता जाता है, क्रमश गहरा होता जाता है, क्रमश नीचेकी ओर ढलता जाता है; उसमें सीधा प्रपात नहीं होता। भन्ते! यह जो महासमुद्र क्रमश निम्न होता जाता है, क्रमश गहरा होता जाता है, क्रमश नीचेकी ओर ढलता जाता है, उसमें सीधा प्रपात नहीं होता—भन्ते! महासमुद्रमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! महासमुद्र अपने धर्म (=मर्यादा) पर स्थिर रहता है, अपने किनारेकी मर्यादाके भीतर रहता है। भन्ते! महासमुद्रमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! महासमुद्र मुर्दा लाशको सहन नहीं करता। महासमुद्रमें जो मुर्दा लाश होती है, उसे शीघ्र ही किनारेकी ओर बहाकर ले आता है, स्थलपर ला पटकता है। भन्ते! यह जो महासमुद्र मुर्दा लाशको सहन नहीं करता, महासमुद्रमें जो मुर्दा लाश होती है, उसे शीघ्र ही किनारेकी ओर बहाकर ले आता है, स्थलपर ला पटकता है—भन्ते! महासमुद्रमें यह तीसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! जितनी भी महानदियाँ है, जैसे गगा, यमुना, अचिरवती, सरभू, (सरयू) तथा मही—ये सब महासमुद्रमें पडकर अपने पूर्वके नाम-गोत्रको छोड देती हैं, ये सब 'महासमुद्र' ही कहलाती हैं। भन्ते! यह जो जितनी भी महानदियाँ हैं, जैसे गगा, यमुना, अचिरवती, सरयू तथा मही—ये सब 'महासमुद्र' में पडकर अपने नाम-गोत्रको छोड देती है, 'महासमुद्र' ही कहलाती हैं, भन्ते! महासमुद्रमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! इस लोकमें जो नदियाँ महासमुद्रमें जाकर गिरती है और जो आकाशसे (जल-) धारा गिरती है, उनसे महासमुद्रमें कुछ कमी-बेशी नहीं दिखाई देती। भन्ते! यह जो इस लोकमें जो नदियाँ महासमुद्रमे जाकर गिरती हैं और जो आकाशसे (जल-) धारा गिरती है, उनसे महासमुद्रमें कुछ कमी-बेशी नहीं दिखाई देती है—भन्ते! महासमुद्रमें यह पाँचवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! महासमुद्रका एक ही रस है, लवण-रस। भन्ते! यह जो महासमुद्रका एक ही रस है, लवण-रस—भन्ते! महासमुद्रमें यह छठी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते ! महासमुद्रमें बहुत रत्न होते है, अनेक प्रकारके रत्न होते है। वहाँ ऐसे रत्न होते हैं, जैसे मोती, मणि, बिलौर, शख, शिला, मूगा, चाँदी, सोना, लोहिताक तथा मसाल-गल्ल (पन्ना ?)। भन्ते ! यह जो महासमुद्रमें बहुत रतन होते हैं, अनेक प्रकारके रतन होते हैं, वहाँ ऐसे रतन होते है, जैसे मोती, मणि, बिलौर, शख, शिला, मूगा, चाँदी, सोना, लोहिताक तथा मसाल गल्ल (पन्ना ?) —भन्ते ! महासमुद्रमें यह सातवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख देखकर असुर महासमुद्रमे रमण करते हैं।

"फिर भन्ते ! महासमुद्र बडे बडे प्राणियोका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महा-समुद्रमें सौ योजन लम्बे भी प्राणी है, दो सौ योजन लम्बे भी प्राणी है, तीन सौ योजन लम्बे भी प्राणी है, चार सौ योजन लम्बे भी प्राणी है तथा पाँच सौ योजन लम्बे भी प्राणी है। भन्ते ! यह जो महासमुद्र बडे बडे प्राणियोका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महा-समुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी है दो सौ योजन लम्बे तीन सौ योजन लम्बे प्राणी भी है—भन्ते ! महासमुद्रमे यह आठवी आश्चर्यकर बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमे रमण करते है।

"भन्ते ! क्या भिक्षु इस धर्म-विनय (=बुद्ध शासन) में आनन्दपूर्वक रहते है ?"

"पहाराद ! भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते है।"

"भन्ते ! इस धर्म-विनयमें ऐसी कितनी आश्चर्यकर अद्भुत बातें है, जिनकी ओर देख देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते है।"

"पहाराद ! इस धर्म-विनयमें ऐसी आठ आश्चर्यकर अद्भुत बाते है, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्द-पूर्वक रहते है। कौन-सी आठ ? पहाराद ! जैसे महासमुद्र क्रमश निम्न होता जाता है, क्रमश गहरा होता जाता है, क्रमश नीचे की ओर ढलता जाता है, उसमे सीधा प्रपात नही होता। इसी प्रकार पहाराद ! इस धर्म-विनयमें भी क्रमिक-शिक्षा है, क्रमिक क्रिया है, क्रमिक चर्या है, एक बार ही अञ्ञा (=ज्ञान)की प्राप्ति नही है। पहाराद ! यह जो इस धर्म-विनयमें क्रमिकशिक्षा है, क्रमिक क्रिया है, क्रमिक चर्य्या है, एक बार ही अञ्ञा (=ज्ञान) की प्राप्ति नहीं होती है—पहाराद ! इस धर्म-विनयमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

पहाराद! जैसे महासमुद्र अपने धर्म (=मर्यादा) पर स्थित रहता है, अपने किनारेकी मर्यादाके भीतर रहता है, इसी प्रकार पहाराद! मैंने अपने श्रावकोंके लिये जो नियम (=शिक्षा पद) वनाये हैं, वे मेरे श्रावक अपने प्राणोंके लोभसे भी नही तोडते हैं। पहाराद! यह जो मैंने अपने श्रावकोंके लिये नियम (=शिक्षा पद) वनाये हैं, इन्हे जो मेरे श्रावक अपने प्राणोंके लोभसे भी नही तोडते हैं, पहाराद! इस धर्म-विनयमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्‌भुत वात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-नियममें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्र मुर्दा लाशको सहन नही करता। महासमुद्रमें जो मुर्दा लाश होती है, उसे शीघ्र ही किनारेकी ओर वहाकर ले आता है, स्थलपर ला पटकता है। पहाराद! उसी प्रकार जो आदमी दुश्शील होता है, पापी होता है, अपवित्र-सन्दिग्ध आचरण वाला होता है, छिपाकर पाप कर्म करनेवाला होता है, श्रमण रूपमें अश्रमण होता है, व्रह्मचारी रूपमे अव्रह्मचारी होता है, अन्दरसे सडा होता है, अशुद्ध होता है, सघ उसके साथ नही रहता, एकत्र हो शीघ्र ही उसे अपनेमेंसे निकाल वाहर करता है। चाहे वह कितना भी सघके वीचमें वैठा हो—वह सघसे दूर हो जाता है और सघ उससे दूर हो जाता है। पहाराद! यह जो आदमी दुश्शील होता है, पापी होता है, अपवित्र सन्दिग्ध आचरण वाला होता है, छिपाकर पाप कर्म करनेवाला होता है, श्रमण रूपमें अश्रमण होता है, व्रह्मचारी रूपमें अव्रह्मचारी होता है, अन्दरसे सडा होता है, अशुद्ध होता है, सघ उसके साथ नही रहता, एकत्र हो शीघ्र ही उसे अपनेमेंसे निकाल वाहर करता है। चाहे वह कितना ही सघके वीचमें वैठा हो—वह सघसे दूर हो जाता है और सघ उससे दूर हो जाता है,—पहाराद! इस धर्म-विनयमे यह तीसरी आश्चर्यकर अद्‌भुत वात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

'पहाराद! जैसे जितनी भी महानदियाँ है, जैसे गगा, यमुना, अचिरवती, सरभू (सरयू) तथा मही—ये सव महासमुद्रमें पडकर अपने पूर्वके नाम-गोत्रको छोड देती हैं, ये सव 'महासमुद्र' ही कहलाती हैं। इसी प्रकार पहाराद। ये चारो वर्ण हैं—क्षत्रिय, व्राह्मण, वैश्य तथा शूद्र। ये तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनयमें घरसे वेघर हो प्रव्रजित होनेपर अपने पूर्वके नाम, गोत्र का त्याग कर देते हैं। वे 'श्रमण शाक्य-पुत्र' ही कहलाते हैं। पहाराद! ये जो चारो वर्ण हैं—क्षत्रिय, व्राह्मण, वैश्य, तथा शूद्र। ये तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनयमें घरसे वेघर हो, प्रव्रजित होनेपर अपने पूर्वके नाम-गोत्रका त्याग कर देते हैं। वे 'श्रमण शाक्य-पुत्र' ही कहलाते हैं। पहाराद!

इस धर्म-विनयमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे इस लोकमे जो नदियाँ महासमुद्रमे जाकर गिरती हैं और जो आकाशसे (जल–) धारा गिरती है, उससे महासमुद्रमें कुछ कमी-बेशी नही दिखाई देती। इसी प्रकार पहाराद,! चाहे बहुतसे भिक्षु उपाधि-रहित निर्वाण धातु के अनुसार परिनिर्वाण को प्राप्त होते है, इससे निर्वाण धातुमें कमी-बेशी नही दिखाई देती। पहाराद! यह जो बहुत से भिक्षु उपाधि-रहित निर्वाण धातु के अनुसार परि-निर्वाणको प्रप्त होते है, इससे निर्वाण-धातुमे कमी-बेशी नही दिखाई देती। पहाराद! इस धर्म-विनयमे यह पाँचवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्रका एक ही रस है लवण-रस, इसी प्रकार पहा-राद! इस धर्म-विनयका भी एक ही रस है और वह विमुक्ति-रस, यह इस धर्म-विनयमें छठी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्रमे बहुत रत्न होते है, अनेक प्रकारके रत्न होते हैं। वहाँ ऐसे रत्न होते है, जैसे मोती, मणि, बिल्लौर, शख, शिला, मूगा, चाँदी, सोना, लोहिताक (=लाल) तथा मसाल-गल्ल (पन्ना?), इसी प्रकार पहाराद! इस धर्म-विनयमे भी बहुत रत्न हैं, अनेक प्रकारके रत्न! ये रत्न है, जैसे चारो स्मृति उपस्थान, चारो सम्यक् प्रधान, चारो ऋद्धिपाद, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच बल, सात बोधि-अंग तथा आर्य अष्टागिक मार्ग। पहाराद! जैसे इस धर्म विनयमे बहुत रत्न है, अनेक प्रकारके रत्न। ये रत्न है, जैसे चारो स्मृति-उपस्थान, चारो सम्यक् प्रधान, चारो ऋद्धि-पाद, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच बल, सात बोधि-अग तथा आर्य अष्टागिक मार्ग। पहाराद! इस धर्म-विनयमे यह सातवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्र बडे-बडे प्राणियोका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते है—तिमि, तिमिंल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे भी प्राणी है, दो सौ योजन लम्बे भी प्राणी है, तीन सौ योजन भी लम्बे प्राणी हैं, चार सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, पाँच सौ योजन भी लम्बे प्राणी हैं। इसी प्रकार पहाराद! यह धर्म-विनय भी बडे-बडे प्राणियोका निवास-स्थान है। इस

धर्म-विनयमें ये प्राणी निवास करते हैं—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, सकृदागामी, सकृदागामी फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अनागामी, अनागामी फलको साक्षात करनेके प्रयासमे रत, अर्हत, अर्हत-फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। पहाराद! यह जो यह धर्म-विनय इन बडे-बडे प्राणियोका निवास-स्थान है, इस धर्म-विनयमें ये प्राणी निवास-स्थान करते हैं—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, सकृदागामी, सकृदागामी-फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अनागामी, अनागामी फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अर्हत, अर्हत-फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। पहाराद! इस धर्म-विनयमें यह आठवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर—देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं। पहाराद! इस धर्म-विनयमें ऐसी आठ आश्चर्यकर बातें हैं, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें मिगार माताके पूर्वाराम प्रासादमें विहार करते थे। उस समय भिक्षु सघसे घिरे हुए भगवान वहाँ उपोसथ करनेके लिये विराजमान थे। तव उस प्रकाशमान रात्रिमें पहला याम गुजर जानेपर आयुष्मान आनन्द आसनसे उठे और उन्होंने अपने उत्तरासग (चीवर) को एक कधेपर किया तथा जहाँ भगवान थे, वहाँ हाथ जोडकर, प्रणाम कर, भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! रात्रि प्रकाशमान है। पहला याम गुजर गया है। भिक्षु सघ दीर्घ कालसे वैठा है। भन्ते! भिक्षुओके सामने प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियमो) का उपदेश (=पाठ) करें।"

ऐसा कहनेपर भगवान् चुप रहे। दूसरी वार भी प्रकाशमान रात्रिमें पहला याम गुजर जानेपर, आयुष्मान् आनन्द आसनसे उठे और उन्होने अपने उत्तरासग (चीवर) को एक कन्धेपर किया तथा जहाँ भगवान थे, वहाँ हाथ जोडकर, प्रणाम कर, भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! रात्रि प्रकाशमान है। पहला याम गुजर गया है। भिक्षु सघ दीर्घ कालसे वैठा है! भन्ते! भिक्षुओंके सामने प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियमो) का उपदेश (=पाठ) करे।"

दूसरी वार भी भगवान चुप रहे। तीसरी वार भी प्रकाशमान रात्रिमें, पहला याम गुजर जानेपर, आयुष्मान आनन्द आसनसे उठे और उन्होने अपने उत्तरासग (चीवर) को एक कन्धेपर किया तथा जहाँ भगवान थे, वहाँ हाथ जोडकर, प्रणाम कर, भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! रात्रि प्रकाशमान है। पहला याम गुजर गया है। भिक्षु-सघ दीर्घकालसे वैठा है। भन्ते! भिक्षुओंके सामने प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियमो) का उपदेश (=पाठ) करें।"

"आनन्द! यह परिषद् शुद्ध नही है।"

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने विचार किया–भगवान् ने किस आदमी को दृष्टिमें रखकर यह बात कही कि 'आनन्द! यह परिषद् शुद्ध नही है'।

तव आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने सारेके सारे भिक्षुसघके चित्तको अपने चित्तसे जाननेकी कोशिश की। आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने उस आदमीको (भिक्षु सघमें) बैठा देख लिया, जो दुराचारी था, पापी था, जिसका आचरण अपवित्र तथा सदिग्ध था, जो छिपकर पाप-कर्म करनेवाला था, जो श्रमणरूपमे अश्रमण था, जो ब्रह्मचारी रूपमे अब्रह्मचारी था, जो अन्दरसे सड़ा हुआ था, अशुद्ध था। उसे देख, आसनसे उठ, जहाँ वह आयुष्मान् था, वहाँ पहुँचे। पास जाकर उस आयुष्मान् से कहा–"आयुष्मान्! उठ। भगवान्ने तुझे देख लिया है। भिक्षुओके साथ तेरा रहना नही हो सकता।

ऐसा कहने पर वह आदमी चुप रहा। दूसरी वार भी आयुष्मान् महामौ-द्गल्यायनने उस आदमीको कहा–"आयुष्मान् उठ। भगवान् ने तुझे देख लिया है। भिक्षुओके साथ तेरा रहना नही हो सकता।"

दूसरी वार भी वह आदमी चुप रहा। तीसरी वार भी आयुष्मान् महा मौद्गल्यायनने उस आदमीको कहा—"आयुष्मान् उठ! भगवान्ने तुझे देख लिया है। भिक्षुओंके साथ तेरा रहना नही हो सकता।

तीसरी वार भी वह आदमी चुप रहा। तव आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने उस आदमीको वाँहसे पकडा और दरवाजेके वाहर करके कुण्डी लगा दी। तव आयुष्मान् महामौद्गल्यायन जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे और बोले—"भन्ते! मैंने उस आदमीको निकाल वाहर किया। अव परिषद् परिशुद्ध है। भन्ते! भगवान् अब भिक्षुओको प्रातिमोक्षका उपदेश (=पाठ) करें।"

"मौद्गल्यायन! आश्चर्य है। मौद्गल्यायन! अद्भुत है। बाँह पकड कर निकालनेकी स्थिति आने तक भी वह मूर्ख आता है!"

तब भगवानने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ अव तुम ही 'उपोसथ' कर लिया करो, प्रातिमोक्षका उपदेश (=पाठ) कर लिया करो। भिक्षुओ, आजके वाद मै 'उपोसथ' नही करूँगा, प्रातिमोक्षका उपदेश (=पाठ) नही करूँगा। भिक्षुओ, इस बातके लिये कोई स्थान नही है, इस वातकी कोई गुजायश नही है कि जो परिषद् अपरिशुद्ध हो, उसमे तथागत प्रातिमोक्ष (=भिक्षु नियमो) का उपदेश (=पाठ) करें।"

"भिक्षुओ, महासमुद्रमें ये आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें हैं, जिन्हे देख देख कर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं। कौनसी आठ? भिक्षुओ, महासमुद्र क्रमश निम्न होता जाता है, क्रमश गहरा होता जाता है, क्रमश नीचेकी ओर ढलता जाता है; उसमें सीधा प्रपात नही होता। भिक्षुओ, यह जो महासमुद्र क्रमश. निम्न होता जाता है, क्रमश गहरा होता जाता है, क्रमश. नीचेकी ओर ढलता जाता है, उसमें सीधा प्रपात नही होता—भिक्षुओ! महासमुद्रमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं। (पूर्ववत् विस्तार)।

"फिर भिक्षुओ, महासमुद्र बडे-बडे प्राणियोका निवास स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिंगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं . पाँच सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं। भिक्षुओ, यह जो महासमुद्र बडे बडे प्राणियोका निवास स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिंगिल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी है पाँच सौ योजन लम्बे प्राणी भी है—भिक्षुओ, महासमुद्रमें यह आठवी आश्चर्यकर बात है जिसकी ओर देख देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें भी आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें है, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं। कौनसी आठ? भिक्षुओ, जैसे महासमुद्र क्रमश निम्न होता जाता है, क्रमश गहरा होता जाता है, क्रमश नीचे की ओर ढलता जाता है , उसमें सीधा प्रपात नही होता। इसी प्रकार भिक्षुओ! इस धर्म-विनयमे भी क्रमिक-शिक्षा है, क्रमिक-क्रिया है, क्रमिक चर्या है, एक बार ही अञ्ञा (= ज्ञान) की प्राप्ति नही है। भिक्षुओ, यह जो इस धर्म-विनयमें क्रमिक-शिक्षा है, क्रमिक-क्रिया है, क्रमिक चर्य्या है, एक बार ही अञ्ञा (= ज्ञान) की प्राप्ति नही होती है—भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्द पूर्वक रहते हैं। . . . भिक्षुओ जैसे महासमुद्रमें बडे बडे प्राणियोका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते है—तिमि, तिमिंगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी होते है . . . पाँच सौ योजन लम्बे प्राणी भी होते है। इसी प्रकार भिक्षुओ, यह धर्म-विनय भी बडे बडे प्राणियोका निवास स्थान है। इस धर्म विनयमें ये प्राणी निवास करते है—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात् करनेके प्रयासमें रत . . . अर्हत, अर्हत फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। भिक्षुओ,

यह जो यह धर्म-विनय इन वडे-वडे प्राणियोका निवास-स्थान है। इस धर्म-विनयमें ये प्राणी निवास करते है—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत . अर्हत, अर्हत फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें यह आठवी आश्चर्यकर अद्‌भुत वात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्दपूर्वक रहते है। भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमे ये ऐसी आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें है, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमे आनन्द-पूर्वक रहते है।

३ गृहपति वर्ग

एक समय भगवान् वैशालीके महावनकी कूटागार-शालामे विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओको सम्वोधित किया भगवानने यह कहा—

"भिक्षुओ, यह जान लो कि वैशालीके उग्र गृहपतिमें आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत वाते है।" भगवानने यह कहा। यह कहकर सुगत आसनसे उठ विहारमे चले गये।

तव एक भिक्षु पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले जहाँ वैशालीके उग्र गृहपतिका घर था, वहाॅ पहुँचा। पहुँचकर विछे आसनपर वैठा। तव वैशालीका उग्र गृहपति, जहाँ वह भिक्षु (वैठा) था, वहाँ आया। पास आकर उस भिक्षुको प्रणाम कर एक ओर वैठा। उस एक ओर वैठे हुए वैशालीके उग्र गृहपतिसे उस भिक्षुने पूछा—

"हे गृहपति! तुम्हारे वारेमें भगवान्‌ने कहा है कि तुम आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत वातोसे युक्त हो। हे गृहपति! वे आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत वाते कौनसी है, जिनके वारेमें भगवानने कहा है कि तुम उनसे युक्त हो?"

"भन्ते! मै नही जानता हूँ कि भगवानने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत वातोसे युक्त वताया है; लेकिन जिन आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत वातोसे मै युक्त हूँ, उन्हे कहता हूँ। उन्हे सुने। अच्छी तरहसे मनमें धारण करे। मै कहता हूँ।"

"गृहपति! अच्छा" कह उस भिक्षुने वैशालीके उग्र गृहपतिको प्रतिवचन दिया। वैशालीके उग्र गृहपतिने तव यह कहा—

"भन्ते! मैने जव भगवानको दूरसे ही देखा, देखते ही भगवानके लिये मेरे मनमें श्रद्धा उत्पन्न हो गई। भन्ते! यह मुझमें पहली आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है।

"भन्ते! मैं श्रद्धावान हो भगवानकी सेवा में रहा। तब भगवानने मुझे क्रमश धर्मोपदेश दिया जैसे दान-कथा, शील-कथा, स्वर्ग-कथा; काम-भोगोंके दुष्परिणाम, बुराई, सक्लिष्ट होना तथा निष्काम भावके सुपरिणाम। जब भगवानने समझ लिया कि अब मेरा चित्त ठीक हालतमें है, कोमल-अवस्थाको प्राप्त है, नीवरण-रहित है, उत्साह-युक्त है, प्रसन्न है, तब बुद्धोकी जो उद्धार करने वाली जो धर्म-देशना है उसका प्रकाशन किया—दुःख सत्य, समुदय-सत्य, निरोध-सत्य तथा मार्ग-सत्य। जैसे शुद्ध निर्मल वस्त्र शीघ्र ही रगको ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार आसनपर बैठे-बैठे मुझे विरज, निर्मल ज्ञान-चक्षु की प्राप्ति हो गई—जो कुछ समुदय होने वाला है, वह सभी निरोधको प्राप्त होने वाला है। भन्ते! तब मुझे धर्मका दर्शन हो जाने पर, धर्म की प्राप्ति हो जाने पर, धर्मका ज्ञान हो जाने पर, धर्मकी गहराईमें उतर जाने पर, सन्देहरहित हो जाने पर शक और शुबहकी गुजाइश नही रहने पर, विशारद हो जाने पर तथा शास्ताके शासनके प्रति दृढ श्रद्धावान् हो जाने पर मै बुद्ध, धर्म तथा सघकी शरण गया और ब्रह्मचर्य—पचम शिक्षाओ (=पचशीलो[1]) को ग्रहण किया। भन्ते! मुझमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! उस समय चार कुमारियाँ मेरी पत्नियाँ थी। तब भन्ते! जहाँ वे पत्नियाँ थी, मैं वहाँ पहुँचा। पास जाकर उन पत्नियोंसे कहा—"बहनो! मैंने ब्रह्मचर्य पचम शील ग्रहण किये है। जिसकी इच्छा हो वह यही रहे खाये-पीये और पुण्य करती रहे, जिसकी इच्छा हो अपने माता-पिताके घर चली जाय। जिसे किसी पुरुष की कामना हो, वह मुझे बता दे कि मैं उसे किसे सौंप दूं।' भन्ते! मेरे ऐसा कहने पर मेरी जो ज्येष्ठ पत्नी थी, उसने मुझे कहा—'हे आर्यपुत्र! आप मुझे अमुक आदमीको सौंप दे।' भन्ते! तब मैंने उस आदमीको बुलवाया और बायें हाथसे अपनी पत्नीको पकड और दाये हाथमें गगा-सागर (=भिगार) ले उसे उस पुरुषको सौंप दिया। भन्ते! उस कुमारी भार्याका परित्याग करते हुए मेरा चित्त तनिक भी विचलित नही हुआ। भन्ते! मुझमें यह तीसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मेरे घरमें धन-सम्पत्ति (=भोग) है। जो शीलवान है, सत्पुरुष है उनके लिये वह सब धन अविभक्त है अर्थात् उस पर उनका भी वैसा ही अधिकार है, जैसा मेरा। भन्ते! मुझमे यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

---

१. काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहनेके स्थानपर सम्पूर्ण ब्रह्मचर्यके पालनके नियमसे युक्त पञ्चशील।

"भन्ते ! मैं जिस किसी भी भिक्षुकी सगति करता हूँ वा उसकी सेवामे रहता हूँ, तो आदर-भावनासे ही रहता हूँ, अनादर-भावनासे नही। भन्ते ! यह मुझमे पाँचवी आश्चर्यकर अद्भुत वात है।

"भन्ते ! जो आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश देते है, मै उसे ध्यानसे ही सुनता हूँ, लापरवाहीसे नही। यदि वह आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश नही देते, तो मै उन्हे धर्मका उपदेश देता हूँ। भन्ते ! यह मुझमें छठी आश्चर्यकर अद्भुत वात है।

"भन्ते ! यह भी आश्चर्य की वात है कि देवता-गण मुझे आकर कहते है कि भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है। भन्ते ! उन देवताओके ऐसा कहने पर मै उन्हे कहता हूँ—'देवताओ। तुम चाहे ऐसा कहो और चाहे न कहो, भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है।' भन्ते ! यह सोचकर कि देवता मेरे पास आते है, या मै देवताओके साथ वातचीत करता हूँ, मेरे मनमे कही भी कुछ अहकारका भाव (= उन्नति) पैदा नही होता। भन्ते ! यह मुझमें सातवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

भन्ते ! भगवान् ने जो नीचेकी ओर ले जाने वाले पाँच सयोजन (= पाँच चित्तके बधन) कहे है, वे पाँचो मुझे अपनेमें प्रहीण दिखाई देते है। भन्ते ! यह मुझमे आठवी आश्चर्यकर अद्भुत बात है। भन्ते ! मुझमे ये आठ आश्चर्यकर अद्भुत वातें है। किन्तु मै यह नही जानता कि भगवान्ने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्भुत वातोसे युक्त वताया है।

तब उस भिक्षुने वैशालीके उग्र गृहपतिके घरमें भिक्षा ग्रहण की और वह आसनसे उठकर चला गया। तब वह भिक्षु भिक्षाटनके अनन्तर, भोजन ग्रहण कर चुकनेपर, जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने वैशालीके उग्र गृहपतिसे जितनी बातचीत हुई थी, वह सब भगवानको कह सुनाई।

"भिक्षु ! वहुत अच्छा ! भिक्षु, वहुत अच्छा !! जैसे उस वैशालीके गृहपतिने सम्यक् रूपसे व्याख्या की है, ठीक इन्ही आठ आश्चर्यकर अद्भुत वातोसे युक्त मैंने वैशालीके उग्र गृहपतिको वताया है। भिक्षु ! यह मान ले कि वैशाली का उग्र गृहपति इन्ही आठ आश्चर्यकर अद्भुत वातोसे युक्त है।

एक समय भगवान् वज्जी (जनपद) के हस्ती-ग्राममें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओको सम्बोधित किया—

"भिक्षुओ, यह जान लो कि हस्ती-ग्रामका उग्र गृहपति आठ आश्चर्यकर

अद्भुत बातोंमे युक्त है। भगवानने यह कहा यह कहकर सुगत आसनसे उठ विहार में चले गये।

तब एक भिक्षु पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र चीवर ले, जहाँ हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिका घर था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर बिछे आसनपर बैठा। तब हस्ती-ग्रामका उग्र गृहपति, जहाँ वह भिक्षु (बैठा) था, वहाँ गया। पास आकर उस भिक्षुको प्रणाम कर, एक ओर बैठा। उस एक ओर बैठे हुए हस्ती-ग्रामके उस उग्र गृहपतिसे उस भिक्षुने पूछा—

"हे गृहपति! तुम्हारे बारेमें भगवानने कहा है कि तुम आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त हो। हे गृहपति! वे आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें कौनसी हैं, जिनके बारेमें भगवानने कहा है कि तुम उनसे युक्त हो?"

"भन्ते! मैं नही जानता हूँ कि भगवान्‌ने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त कहा है। लेकिन जिन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे मैं युक्त हूँ, उन्हे कहता हूँ। उन्हे सुनें। अच्छी तरहसे मनमे धारण करें। मै कहता हूँ।"

"गृहपति! अच्छा" कह उस भिक्षुने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिको प्रति वचन दिया। हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिने तब कहा—

"भन्ते! मैंने जब भगवानमें विचरते समय, पहली बार भगवानको दूरसे ही देखा। भन्ते! मेरे मनमें भगवानका दर्शन करनेके समय ही उनके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। भन्ते! मेरा सुराका नशा उतर गया। भन्ते! मुझमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मैं श्रद्धावान हो भगवानकी सेवामे रहा। तब भगवानने मुझे क्रमश धर्मोपदेश दिया जैसे दान-कथा, शीलकथा, स्वर्ग-कथा, कामभोगोंके दुष्परिणाम, बुराई, सक्लिष्ट होना तथा निष्काम भावके सुपरिणाम। जब भगवान्‌ने समझ लिया कि अब मेरा चित्त ठीक हालतमे है, कोमल अवस्थाको प्राप्त है, नीवरण रहित है, उत्साह-युक्त है, प्रसन्न है, तब बुद्धोकी जो उद्धार करने वाली देशना है उसका प्रकाशन किया—दु ख-सत्य,-समुदय सत्य, निरोध-सत्य, तथा मार्ग-सत्य। जैसे शुद्ध निर्मल वस्त्र शीघ्र ही रग को ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार उसी आसनपर बैठे बैठे मुझे विरज, निर्मल ज्ञान-चक्षुकी प्राप्ति हो गई—जो कुछ समुदय होने वाला है, वह निरोध को प्राप्त होने वाला है। भन्ते! तब मुझे धर्मका दर्शन हो जाने पर, धर्मकी प्राप्ति हो जाने प, धर्मका ज्ञान हो जाने पर, धर्मकी गहराईमें उतर जाने पर, सन्देह-रहित हो जाने पर, शक और सुबहकी गुजाइश नही रहने पर, विशारद हो

जाने पर तथा शास्ताके शासनके प्रति दृढ श्रद्धावान हो जाने पर मैं बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण गया और ब्रह्मचर्य-पचम शिक्षाओ (पचशीलो[1]) को ग्रहण कर किया। भन्ते! मुझमे यह दूसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! उस समय चार कुमारियाँ मेरी पत्नियाँ की। तब भन्ते! जहाँ वे पत्नियाँ थी, मैं वहाँ पहुँचा। पास जाकर उन पत्नियोंसे कहा—बहनो! मैंने ब्रह्मचर्य-पचम शील ग्रहण किये है। जिसकी इच्छा हो, वह यही रहे खाये पिये और पुण्य करती रहे, जिसकी इच्छा हो अपने माता-पिता के घर चली जाय। जिसे किसी पुरुष की कामना हो, वह मुझे बता दे कि मैं उसे किसे सौप दूँ। भन्ते! मेरे ऐसा कहने पर मेरी जो ज्येष्ठ पत्नी थी, उसने मुझसे कहा—'हे आयुष्मान् आर्यपुत्र! आप मुझे अमुक आदमीको सौंप दे।' भन्ते! तब मैंने उस आदमीको बुलवाया और बायें हाथसे अपनी पत्नीको पकड और दाये हाथमे गगा-सागर (भिंगार) ले, उसे उस पुरुषको सौप दिया। भन्ते! उस कुमारी भार्याका परित्याग करते हुए मेरा चित्त तनिक भी विचलित नही हुआ। भन्ते! मुझमे यह तीसरी आश्चर्य कर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मेरे घरमें धन-सम्पत्ति (भोग) है। जो शीलवान है, जो सत्पुरुष है, उनके लिये वह सब धन अविभक्त है, अर्थात् उस पर उनके भी वैसा ही अधिकार है, जैसा मेरा। भन्ते! मुझमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मैं जिस किसी भी भिक्षुकी सगति करता हूँ वा उसकी सेवामें रहता हूँ, तो आदर-भावनासे ही रहता हूँ, अनादर-भावनासे नही। भन्ते! जो आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश देते है, मै उसे ध्यानसे ही सुनता हूँ, लापरवाही से नही। यदि वह आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश नही देते, तो मै उन्हे धर्मका उपदेश देता हूँ। भन्ते! यह मुझमे पाँचवी आश्चर्यकर अदभुत बात है।

"भन्ते! इसमें आश्चर्य करनेकी कोई बात नही है कि जब मै भिक्षु-सघको भोजन करने का निमत्रण देता हूँ तो देवता मुझे आकर कहते है—अमुक भिक्षु दोनो प्रकारसे विमुक्त है, अमुक प्रज्ञा-विमुक्त है, अमुक काय-साक्षी (= कायानु-पश्यी) है, अमुक (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त है, अमुक श्रद्धा-विमुक्त है, अमुक धर्मानुसार आचरण करने वाला है, अमुक श्रद्धावान है, अमुक शीलवान् है,

---

१ काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार से विरत रहनेके स्थान पर सम्पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करनेके नियमसे युक्त पचशील।

शुभ-कर्म करने वाला है, अमुक दुश्शील है, दुराचारी है। भन्ते! सघको परोसते समय, मैं नही जानता कि मेरे मनमें कभी यह विचार आया हो कि उस भिक्षुको थोडा दूँ, इसे अधिक दूँ। भन्ते! मैं समान-भावसे ही देता हूँ। भन्ते! यह मुझमे छठी आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है।

"भन्ते! यह भी आश्चर्यकी बात है कि देवता-गण मुझे आकर कहते है कि भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है। भन्ते! उन देवताओंके ऐसा कहने पर मै उन्हें कहता हूँ—'देवताओ' तुम चाहे ऐसा कहो और चाहे न कहो, भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है।' भन्ते! यह सोचकर कि देवता मेरे पास आते हैं, या मैं देवताओंके साथ बातचीत करता हूँ, मेरे मनमें कही भी कुछ अहकार का भाव पैदा नही होता। भन्ते! यह मुझमें सातवी आश्चर्यकर बात है।

"भन्ते! यदि मैं आपसे पहले मरूँगा तो आप असदिग्ध रूपसे मेरे बारेमें यह कहेगे कि 'हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिमें कोई ऐसा सयोजन(= बधन)नही था, जिसके कारण वह फिर इस लोकमें जन्म ग्रहण करे।' भन्ते! यह मुझमें आठवी आश्चर्यकर बात है। भन्ते! मुझमे ये आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें है। किन्तु मैं नही जानता कि भगवानने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त बतलाया है।

तब उस भिक्षुने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिके घरमें भिक्षा ग्रहण की। तब वह आसनसे उठकर चला गया। तब वह भिक्षु भिक्षाटनके अनन्तर, भोजन ग्रहण कर चुकने पर, जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिसे जितनी बातचीत हुई थी, वह सब भगवानको कह सुनाई।

"भिक्षु! बहुत अच्छा। भिक्षु! बहुत अच्छा। जैसे उस हस्तीग्रामके गृहपतिने सम्यक् रूपसे व्याख्या की है, ठीक इन्ही आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातो से युक्त मैंने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिको बताया है। भिक्षु! यह मान लो कि हस्ती-ग्रामका उग्र गृहपति इन्ही आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातो से युक्त है।

एक समय भगवान आळवीमें अग्गाळव चैत्यमें विहार करते थे। वहाँ भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक सात आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त है। कौनसी सात बातोंसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान् है, भिक्षुओ! आळवीका हत्थक शीलवान् है, भिक्षुओ, आळवीका हत्थक लज्जा-शील है, भिक्षुओ! आळवीका हत्थक (पाप–) भीरु है; भिक्षुओ, आळवीका हत्थक बहुश्रुत है, भिक्षुओ, आळवीका हत्थक त्यागी है;

भिक्षुओ, आळवीका हत्थक प्रज्ञावान है—भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक इन सात आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे युक्त है।

भगवानने यह कहा। यह कहकर सुगत आसनसे उठ विहारमे प्रविष्ट हुए।

तब एक भिक्षु पूर्वाह्ण समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, जहाँ आळवीके हत्थकका घर था वहाँ पहुँचा। पहुँच कर बिछे आसन पर बैठा। तब हत्थक आळवक जहाँ वह भिक्षु था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर उस भिक्षुको अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए हत्थक आळवक को उस भिक्षुने यह कहा—

"हे आयुष्मान्! तुम्हारे बारेमें भगवानने कहा है कि तुम सात आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे युक्त हो। कौन सी सात बातोसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान् है, शीलवान् है—लज्जा-शील है (पाप–) भीरु है . बहुश्रुत है त्यागी है .प्रज्ञावान् है। हे आयुष्मान्! तुम्हारे बारेमे भगवानने कहा है कि तुम इन सात आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे युक्त हो।"

"भन्ते! यहाँ पर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा तो (सुनता) नही रहा?"

"आयुष्मान्! नही, यहाँ पर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नही रहा।

"भन्ते! अच्छा है कि यहाँ पर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नही रहा।

तब उस भिक्षुने आळवीके हत्थकके घरमे भिक्षा ग्रहण की और वहाँसे उठ कर चला गया। तब वह भिक्षु भिक्षाटनके अनन्तर, भोजन ग्रहण कर चुकने पर, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको प्रणामकर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते! मै पूर्वाह्ण समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, जहाँ आळवी के हत्थक का घर था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर बिछे आसनपर बैठा। भन्ते! तब आळवीका हत्थक जहाँ मै था, वहाँ आया। पास आकर मुझे प्रणाम कर एक ओर बैठा। भन्ते! एक ओर बैठे हुए आळवीके हत्थकको मैने यह कहा—'हे आयुष्मान! तुम्हारे बारेमे भगवानने कहा है कि तुम सात आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे युक्त हो। कौनसी सात बातोसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान है, शीलवान् है .. लज्जाशील है, (पाप–) भीरु है . बहुश्रुत है, त्यागी है . प्रज्ञावान है। हे आयुष्मान्! तुम्हारे बारेमे भगवान्ने कहा है कि तुम इन सात आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त हो।"

भन्ते! ऐसा कहनेपर हत्थकने मुझसे यह पूछा 'भन्ते! यहाँपर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा (सुनता) तो नही रहा?" मैंने उत्तर दिया— 'आयुष्मान! नही, यहाँपर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नही रहा।' वह बोला—'भन्ते! अच्छा है, यहाँपर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नही रहा।"

भिक्षु! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। भिक्षु! वह कुलपुत्र अल्पेच्छ है। अपने गुणो (=कुशलधर्मो) को दूसरोपर प्रकट नही होने देना चाहता। तो भिक्षु! तू यह जान कि आळवीका हत्थक इस आठवी आश्चर्यकर अद्भुत बातसे भी युक्त है— इस अल्पेच्छतासे।

एक समय भगवान आळवीके अग्गाळव चैत्यमें विहार करते थे। तब पाँच सौ उपासकोसे घिरा हुआ आळवीका हत्थक जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे आळवीके हत्थकको भगवानने यह कहा—

"हत्थक। यह तेरी परिषद् बडी है। तू इतनी बडी परिषद्को सग्रहीत कैसे रखता है?"

"भन्ते! भगवानने जो चार सग्रह-वस्तु बताई है, उन्ही चारो सग्रह-वस्तुओसे मैं इसी बडी परिषद्को सग्रहीत करता हूँ। भन्ते! जिसके बारेमें मैं जानता हूँ कि इसको कुछ देकर (=दानसे) इस का सग्रह करना चाहिये, उसे कुछ देकर उसका सग्रह करता हूँ। जिसके बारेमें मैं जानता हूँ कि इसका प्रिय वचनो (=मधुर-वाणी) से सग्रह करना चाहिये, उसका मधुर-वाणीसे सग्रह करता हूँ। जिसके बारेमें मैं जानता हूँ कि इसका उपकार (=अर्थ-चर्या) करके उसका सग्रह करना चाहिये, उसका उपकार करके सग्रह करता हूँ। जिसके बारेमें जानता हूँ कि इसका बराबरीके व्यवहार (=समानत्व) से सग्रह करना चाहिये, उसका बराबरीका व्यवहार करके सग्रह करता हूँ। भन्ते! मेरे पास ऐश्वर्य है। ये लोग दरिद्रकी बातको उतना ध्यान देने योग्य नही मानते।"

"हत्थक! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। हत्थक! बडी परिषद्को इकट्ठे रखनेका यही उपाय है। हत्थक! जिन्होने भूतकालमें बडी परिषदका सग्रह किया, उन्होने इन्ही चार उपाय (सग्रह-वस्तुओ) से बडी परिषद्का सग्रह किया। हत्थक! जो भविष्यमें बडी परिषदका सग्रह करेंगे, वे भी इन्ही चार उपायो (सग्रह-वस्तुओ) से बडी परिषदका सग्रह करेंगे। हत्थक! जो अब वर्तमान में बडी परिषद्का सग्रह करते हैं, वे सब भी इन्हीं चार उपायो (=सग्रह-वस्तुओ) से बडी परिषद्का संग्रह करते है।

तब भगवानके धार्मिक उपदेशसे लाभान्वित हो, शिक्षित हो, उत्साहयुक्त हो, हर्षित हो आळवीका हत्थक आसनसे उठ, भगवानको प्रणाम कर, प्रदक्षिणाकर चला गया। भगवानने आळवीके हत्थकके चले जानेके थोडी देर बाद भिक्षुओको सम्बोधित किया—भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे युक्त है। कौन-सी आठ बातोसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान है शीलवान है लज्जा-शील है (पाप-) भीरु है . बहुश्रुत है त्यागी है प्रज्ञावान् है तथा आळवीका हत्थक अल्पेच्छ है। भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक इन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोसे युक्त है।"

एक समय भगवान् शाक्य (जनपद) मे कपिलवस्तुके न्यग्रोधाराममें विहार करते थे। तव महानाम शाक्य जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर वैठ गया। एक ओर बैठे हुए महानाम शाक्यने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते! क्या होनेसे 'उपासक' होता है?"

"महानाम, जव आदमी बुद्ध, धर्म तथा सघकी शरण ग्रहण करता है, तो हे महानाम वह आदमी 'उपासक' कहलाता है।"

"भन्ते! क्या होनेसे उपासक 'शीलवान्' होता है?"

"महानाम! जव उपासक प्राणि-हत्यासे विरत होता है, चोरी करनेसे विरत होता है, कामभोगो सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत होता है, झूठ बोलनेसे विरत होता है तथा सुरा, मेरय आदि नशीली वस्तुओ का सेवन करनेसे विरत होता है, तो हे महानाम! ये बातें होनेसे उपासक 'शीलवान' होता है।

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी आत्म-हितमे रत होता है, पर हितमें नही?"

"महानाम! जब आदमी स्वय श्रद्धा सम्पन्न होता है, किन्तु दूसरेको श्रद्धासम्पन्न होनेकी प्रेरणा नही देता, स्वय शीलवान् होता है किन्तु दूसरेको शील-वान् होनेकी प्रेरणा नही देता, स्वय त्यागी होता है, किन्तु दूसरेको त्यागी बननेकी प्रेरणा नही देता, स्वय भिक्षुओके दर्शन करनेकी इच्छावाला होता है, किन्तु दूसरोको भिक्षुओके दर्शन करनेके लिये प्रेरणा नही देता, स्वय सद्धर्म सुननेकी इच्छावाला होता है किन्तु दूसरोको सद्धर्म सुननेकी प्रेरणा नही देता, स्वय सुने हुए धर्मोंको (मनमें) धारण करनेवाला होता है किन्तु दूसरोको सुने हुए धर्मोको (मनमे) धारण करनेकी प्रेरणा नही देता, स्वय सुने हुए धर्मोके अर्थोपर विचार करनेवाला होता है किन्तु

दूमरोको सुने हुए धर्मोंके अर्थोपर विचार करनेकी प्रेरणा नही देता, स्वय अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्त कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है, किन्तु दूसरोको धर्मानुमार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा नही देता। महानाम! इस प्रकार आदमी आत्म-हितमें रत होता है, पर-हितमें नही।

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी आत्म-हित तथा परहितमें रत होता है?"

"महानाम! जब आदमी स्वय श्रद्धासम्पन्न होता है और दूसरोको भी श्रद्धासम्पन्न होनेकी प्रेरणा देता है, स्वय शीलवान् होता है और दूसरोको भी शीलवान् होनेकी प्रेरणा देता है, स्वय त्यागी होता है, दूसरोको त्यागी बननेकी प्रेरणा देता है, स्वय भिक्षुओंके दर्शन करनेकी इच्छावाला होता है और दूसरोको भिक्षुओंके दर्शन करनेकी प्रेरणा देता है, स्वयं सद्धर्म सुननेकी इच्छा वाला होता है और दूसरोको सद्धर्म सुननेकी प्रेरणा देता है, स्वय सुने हुए धर्मोको (मनमें) धारण करनेवाला होता है और दूमरोको धारण करनेकी प्रेरणा देता है, स्वय सुने हुए धर्मोंके अर्थोपर विचार करनेवाला होता है और दूसरोको सुने हुए धर्मोके अर्थोपर विचार करनेकी प्रेरणा देता है, स्वय अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्त कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है और दूमरोको भी धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा देता है। महानाम! इतना होनेसे उपासक आत्म-हित तथा पर-हित दोनोमें रत रहता है।

एक समय भगवान राजगृहमें जीवकके आम्रवनमें विहार करते थे। तब कौमारभृत्य जीवक जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए कौमार भृत्य जीवकने भगवानसे कहा—

"भन्ते! क्या होनेसे उपासक होता है?"

"जीवक! जब आदमीने बुद्ध, धर्म तथा सघकी शरण ग्रहण किए होता है, तो हे जीवक! वह आदमी 'उपासक' कहलाता है।"

"भन्ते! क्या होनेसे उपासक 'शीलवान' होता है?"

"जीवक! जब उपासक प्राणि-हत्यासे विरत होता है. सुरा-मेरय आदि नशीली चीजोसे विरत होता है, तो हे जीवक! वह उपासक 'शीलवान' कहलाता है।

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी 'आत्म-हित' में रत होता है, 'पर-हित' में नही?"

"जीवक! जब आदमी स्वय श्रद्धासम्पन्न होता है किन्तु दूसरोको श्रद्धा-सम्पन्न होनेकी प्रेरणा नही देता स्वय अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्तकर

धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है, किन्तु दूसरोको धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा नही देता ?।"

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी आत्म-हित तथा पर-हित दोनोमें रत होता है?"

"जीवक! जब आदमी स्वय श्रद्धा-सम्पन्न होता है, और दूसरोको भी श्रद्धा-सम्पन्न बननेकी प्रेरणा देता है, स्वय शीलवान होता है और दूसरोको भी शीलवान बननेकी प्रेरणा देता है, स्वय त्यागी होता है और दूसरोको भी त्यागी बननेकी प्रेरणा देता है, स्वय भिक्षुओके दर्शनकी इच्छा वाला होता है और दूसरोको भी भिक्षुओंके दर्शन करनेकी प्रेरणा देता है, स्वय सद्धर्म सुननेकी इच्छावाला होता है और दूसरोको सद्धर्म सुननेकी प्रेरणा देता है, स्वय सुने हुए धर्मोको (मनमें) धारण करनेवाला होता है और दूसरोको धारण करनेकी प्रेरणा देता है, स्वय सुने हुए धर्मोके अर्थोपर विचार करनेवाला होता है और दूसरोको सुने हुए धर्मोके अर्थोपर विचार करनेकी प्रेरणा देता है, स्वय अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्त कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है और दूसरोको भी धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा देता है। जीवक! इतना होनेसे आदमी आत्म-हित तथा पर-हित दोनोमे रत रहता है।

भिक्षुओ, ये आठ वल है। कौनसे आठ? भिक्षुओ बच्चोका बल है रोना; स्त्रियोका वल क्रोध है, चोरोका वल आयुध (=हथियार) है, राजाओका वल ऐश्वर्य है, मूर्खोका वल असतोष है, पण्डितोका वल सतोष है, बहुश्रुतोका वल विचार (=ज्ञान) है तथा श्रमण-ब्राह्मणोका वल क्षमा है। भिक्षुओ, ये आठ वल है।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान सारिपुत्रको भगवानने यह कहा—"सारिपुत्र! जिन वलोसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होता जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ— क्षीणास्रव भिक्षुके वे वल कौन कौनसे है?"

"भन्ते! जिन वलोसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ— क्षीणास्रव भिक्षुके वे वल आठ है। कौनसे आठ? भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसके द्वारा यथार्थ रूपसे सभी सस्कार अनित्य करके देख लिये गये होते है। भन्ते! यह जो क्षीणास्रव भिक्षु द्वारा यथार्थ रूपसे सभी सस्कारोको अनित्य करके देख लिया जाता है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक वल होता है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है— मैं क्षीणास्रव हूँ।

"फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसके द्वारा यथार्थ रूपसे सभी काम-भोग अगारोंके गढेके समान देखे गये होते हैं। भन्ते! यह जो क्षीणास्रव भिक्षु द्वारा यथार्थ रूपसे सभी काम भोगोको अगारोंके गढेके समान देख लिया जाता है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसका चित्त विवेककी ओर झुका होता है, विवेककी ओर लुढकनेवाला होता है, विवेक-स्थित होता है, निष्कामरत होता है, सभी आस्रवोंसे दूर रहनेवाला होता है। भन्ते! यह जो क्षीणास्रव भिक्षुका चित्त विवेककी ओर झुका होता है, विवेककी ओर लुढकनेवाला होता है, विवेक-स्थित होता है, निष्काम-रत होता है, सभी आस्रवोंसे दूर रहनेवाला होता है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है उसके द्वारा चारो स्मृति-उपस्थान अभ्यस्त होते हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त। भन्ते! यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसके द्वारा चारो ऋद्धिपाद अभ्यस्त होते हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होते हैं......पाँच इन्द्रियाँ अभ्यस्त होती हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होती हैं ...... सात बोधि-अंग अभ्यस्त होते हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होते हैं . आर्य अष्टांगिक मार्ग अभ्यस्त होता है, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होता है। भन्ते! यह क्षीणास्रव भिक्षुके द्वारा आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यस्त होना है, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होना है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

"भन्ते! ये क्षीणास्रव भिक्षुके आठ बल हैं, जिन बलोंके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

भिक्षुओ, अज्ञानी पृथक्-जन कहते हैं कि 'लोक (= विश्व) क्षणिक-इत्य है, लोक क्षणिक-इत्य है।' लेकिन वे नहीं जानते (योग्य-) क्षण कौन-सा होता है, अ (-योग्य) क्षण कौन-सा होता है? भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये ये आठ अ (-योग्य) क्षण हैं, असमय हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, लोकमें

अर्हत, सम्यक् सम्बुद्ध, विद्याचरण-युक्त, सुगत, लोकोके जानकार, अनुपम, (दुष्ट–) पुरुषोका दमन करनेवाले सारथी, देवताओ तथा मनुष्योके शास्ता बुद्ध, भगवान तथागत पैदा होते है और उपशमन-कारक, परिनिर्वाण की ओर ले जानेवाले, सम्बोधि प्राप्त करानेवाले, सुगत-उपदिष्ट धर्मकी देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी निरय (= नरक) मे उत्पन्न हुआ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह पहला अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे अर्हत् भगवान तथागत पैदा होते है। और उपशमन-कारक धर्मकी देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी पशु (= तिरस्कृत)–योनिमे उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह दूसरा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे अर्हत पैदा होते है। और देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी प्रेत-योनिमें पैदा होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह तीसरा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे अर्हत पैदा होते है। और देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी दीर्घजीवी देव-योनिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह चौथा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे . . पैदा होते है। और देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी ऐसे प्रत्यन्त-जनपदमें पैदा होता है, ऐसे अज्ञानियोके म्लेच्छ देशमें (= मिलक्खेसु) जहाँ भिक्षु, भिक्षुओ, उपासको, उपासिकाओ–किसीकी गति नही। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह पाँचवाँ अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे . . पैदा होते है। और देशना भी होती है। और यह आदमी मध्यमण्डलमें भी जन्म ग्रहण करता है। किन्तु वह आदमी मिथ्या-दृष्टि होता है, उल्टी-मति वाला—देना निरर्थक है, यज्ञ करना निरर्थक है, होम करना निरर्थक है, अच्छे-बुरे कर्मोका (अच्छा-बुरा) फल नही होता, न यह लोक है, न परलोक है, न माँ है, न पिता है, न बिना माता-पिताके उत्पन्न होने वाले प्राणी (= ओपपातिक) होते है, लोकमें ऐसे श्रमण-ब्राह्मण नही है जो सम्यक प्रकारका जीवन व्यतीत करते है और इस लोक तथा परलोकको स्वय जानकर, स्वय साक्षात्कर देशना करते है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह छठा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे पैदा होते है। और देशना होती है। और यह आदमी मध्यमण्डलमें भी पैदा होता है। लेकिन वह दुष्प्रज्ञ, जड, वज्रमूर्ख, सुभापित-दुर्भापितका अर्थ समझनेमे भी असमर्थ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह सातवाँ अ (—योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमे अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध भगवान् तथागत पैदा होते हैं। किन्तु उपगमन-कारक परिनिर्वाणकी ओर ले जाने वाले, सुगत उपदिष्ट धर्मकी देशना नही होती है। वह आदमी मध्य-मण्डलमें जन्म ग्रहण करता है। वह प्रज्ञावान होता है, मूर्ख नही होता, वज्रमूर्ख नही होता, सुभापित-दुर्भाषितका अर्थ जाननेके लिये समर्थ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह आठवाँ अ (—योग्य) क्षण है, असमय है।

भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये ये आठ अ (—योग्य) क्षण है, असमय है।

भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये केवल एक ही (योग्य) क्षण है, समय है। वह एक क्षण, समय कौन-सा है? भिक्षुओ, लोकमें अर्हत् सम्यक सम्बुद्ध, विद्या-चरण युक्त, सुगत लोकोंके जानकार, अनुपम, (दुष्ट) पुरुपोका दमन करने वाले सारथी, देवताओ तथा मनुष्योंके शास्ता बुद्ध, भगवान् तथागत पैदा होते है। और उपगमन-कारक, परिनिर्वाणकी ओर ले जाने वाले, सम्बोधि प्राप्त कराने वाले, सुगत-उपदिष्ट धर्मकी देशना भी होती है। यह आदमी मध्य-मण्डलमें जन्म ग्रहण करता है। वह प्रज्ञावान् होता है, मूर्ख नही होता, वज्रमूर्ख नही होता, सुभाषित-दुर्भापितका अर्थ जाननेके लिये समर्थ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने के लिये केवल यही एक (योग्य) क्षण है, समय है।

मनुस्स लाभ लद्धान, सद्धम्मे सुप्पवेदिते।
ये खण नाधिगच्छन्ति, अतिनामेन्ति ते खण ॥

[मनुष्य जन्म प्राप्त करके, धर्मके सम्यक् प्रकार उपदिष्ट रहने पर भी जो (योग्य) क्षणको प्राप्त नही होते, वे (उचित) क्षण से चूक जाते है।]

वहू हि अक्खणा वुत्ता, मग्गस्स अन्तरायिका।
कदाचि करहचि लोके, उप्पज्जन्ति तथागता ॥

[श्रेष्ठ जीवन(= मार्ग) व्यतीत करनेमें बाधक बहुतसे अ (—योग्य) क्षण बनाये गये है। तथागत लोकमें कभी-कभी ही उत्पन्न होते है।]

तयिद सम्मुखीभूत, य लोकस्मि सुदुल्लभ,
मनुस्सपटिलाभो च, सद्धम्मस्स च देसना ।।
अल वायमितु तत्थ, अत्तकामेन जन्तुना ।
कथ विजञ्ञा सद्धम्म, खणो वे मा उपच्चगा ।।
खणातीता हि सोचन्ति, निरयम्हि समप्पिता ।
इध चे न विराधेति, सद्धम्मस्स नियामत ।।

[जिन्हे लोकमे वुद्धके सम्मुख उत्पन्न होनेका सुदुर्लभ अवसर मिला है और मनुष्य-जन्म ग्रहण करनेका सुअवसर मिला है तथा सद्धर्मकी देशना सुननेको मिली है, ऐसे प्राणियोके लिये आत्म-हितकी दृष्टिसे प्रयत्न करना ही उपयोगी है, कि हम सद्धर्मको कैसे जान ले। यह क्षण (=सुअवसर) हाथसे न चला जाय। अवसर चूक जानेसे, नरकको प्राप्त होते है—यदि वह यहाँ सद्धर्मके आश्वासनसे च्युत हो जाता है।]

वाणिजो व अतीतत्थो चिरत्त अनुतपिस्सति ।
अविज्जानिवुतो पोसो, सद्धम्म अपराधिको ।।
जातिमरणससार, चिर पच्चनुभोस्सति ।

[जिस वनियेका अर्थ नष्ट हो गया है, उस वनियेकी तरह वह आदमी चिर काल तक अनुतापको प्राप्त होगा, जो अविद्यासे ग्रस्त है तथा जिसने सद्धर्मका पालन नही किया है। वह चिरकाल तक इस ससारमें जन्म लेता रहेगा, मरता रहेगा।]

ये च लद्धा मनुस्सत्त, सद्धम्मे सुप्पवेदिते ।।
अकसु सत्थुवचन, करिस्सन्ति करोन्ति वा ।
खण पच्चविदु लोके, व्रह्मचरिय अनुत्तर ।।

[जिन्होने मनुष्य होकर जन्म ग्रहण किया ऐसे समय पर जव सद्धर्म उपदिष्ट रहा है और जो या तो शास्ताके वचनके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करते है अथवा करेंगे, वे इस लोकमे अनुपम श्रेष्ठ जीवन व्यतीत कर सकने वाले क्षणको भोगने वाले होगे।]

ये मग्ग पटिपज्जिसु, तथागतप्पवेदित ।
ये सवरा चक्खुमता, देसितादिच्चवन्धुना ।।
तेसु गुत्तो सदा सतो, विहरे अनवस्सुतो ।
सव्वे अनुसये छेत्वा, मारधेय्यपरानुगे ।
ते वे पारगता लोके, ये पत्ता आसवक्खय ।।

[जिन्होंने तथागतके द्वारा दिखाये गये मार्गका अनुसरण किया, जिन्होंने आदित्य-बन्धु चक्षुमान् (बुद्ध) द्वारा दिखाये सयत-जीवनको ग्रहण किया, तो उन-उन विषयोंमे सयत, स्मृति होकर युक्त निर्मल भावसे रहे हैं, जो सभी अनुशयोको छोडकर मार-बधनोंसे मुक्त हुए हैं, उन्ही आस्रव-क्षय करने वालोंके बारेमें कहा जा सकता है कि वे लोक (=ससार-सागर) के पार हो गये।]

एक समय भगवान भग्गके सुसुमार गिरिके भेसकळावन नामके मृगदाय (=मृगोंके जगल) में विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध चेदी जनपदमें प्राचीन (=पूर्वकी ओरके) वसदाय (=अरण्य) मे विहार करते थे।

उस समय एकान्त-वास करते हुए विचारमग्न आयुष्मान् अनुरुद्धके मनमें यह वितर्क पैदा हुआ—'यह धर्म अल्पेच्छके लिये है, महेच्छके लिये नही, यह धर्म सन्तुष्टके लिये है, असन्तुष्टके लिये नही, यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड-भडक्केमें रहनेकी इच्छा रखनेवाले के लिये नही; यह धर्म अप्रमादीके लिये है, आलसीके लिये नही, यह धर्म उपस्थित स्मृतिके लिये है, मूढ-स्मृतिके लिये नही, यह धर्म एकाग्र चित्तके लिये है, विक्षिप्त (=एकाग्रता रहित) चित्तके लिये नही, यह धर्म प्रज्ञावान्के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नही।

तब भगवान् आयुष्मान अनुरुद्धके चित्तकी बात अपने चित्तसे जान, जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुडी हुई बाँहो को फैलाये वा फैली हुई बाँहोको सिकोडे, उसी प्रकार (शीघ्रतासे) भग्गके सुसुमार-गिरिके भेसकळावन नामके मृगदायसे अन्तर्धान हो चेदी (जनपद) में प्राचीन (=पूर्वके) वसदायमें विहार करने वाले आयुष्मान् अनुरुद्धके समान प्रकट हुए। भगवान् बिछे आसन पर बैठे। आयुष्मान् अनुरुद्ध भी भगवान्को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् अनुरुद्धको भगवानने यह कहा—

"अनुरुद्ध! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। अनुरुद्ध यह बहुत अच्छा है कि यह जो तेरे चित्तमें महापुरुषोंके मनमें पैदा होने वाले विचार उत्पन्न हुए है,—यह धर्म अल्पेच्छके लिये है, महेच्छके लिये नही, यह धर्म सतुष्टके लिये है, असन्तुष्टके लिये नही, यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड-भडक्केमें रहनेकी इच्छावालेके लिये नही, यह धर्म अप्रमादी के लिये है, आलसीके लिये नहीं, यह धर्म उपस्थित स्मृतिके लिये है, मूढ स्मृतिके लिये नही, यह धर्म एकाग्र चित्तके लिये है, विक्षिप्त (=एकाग्रता रहित) चित्तके लिये नही, यह धर्म प्रज्ञावान्के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नही।' अनुरुद्ध! तू इस आठवें महापुरुष-वितर्क को भी अपने मनमें जगह दे—

यह धर्म प्रपच-रहितके लिये है, प्रपच न चाहने वालेके लिये है, प्रपच-युक्तके लिये प्रपच चाहने वालेके लिये नही।

अनुरुद्ध, क्योकि तू इन आठ महापुरुप वितर्कोको मनमे जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध ! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक प्रथम ध्यानावस्थामे विहर सकेगा—जो काम-वितर्कसे रहित होगा, जो बुरे विचारोसे रहित होगा, किन्तु जिसमे वितर्क और विचार होगे, जो एकान्त-वाससे उत्पन्न होगा, जिसमे प्रीति और सुख होगे।

अनुरुद्ध, क्योकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोको मनमे जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध ! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक द्वितीय ध्यानावस्थामे विहर सकेगा—जिसमे वितर्क और विचारोका उपशमन हो जायगा, जिसमे भीतरी प्रसन्नता और एकाग्रता रहेगी, जो वितर्क-विचार रहित, समाधिसे उत्पन्न, प्रीति-सुखसे युक्त होगा।

अनुरुद्ध, क्योकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोको मनमें जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध ! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक तृतीय ध्यानावस्थामे विहर सकेगा—जिस अवस्थामें प्रीति से भी विरक्त हो, उपेक्षावान् हो विचरेगा, स्मृतिवान्, ज्ञानवान, कायसे सुखका अनुभव करने वाला, जिसे पण्डित जन उपेक्षावान्, स्मृतिवान्, सुख पूर्वक विहार करनेवाला कहते है।

अनुरुद्ध ! क्योकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोको मनमें जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध ! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक चतुर्थ ध्यानावस्थामे विहर सकेगा—सुख और दु ख दोनोका प्रहाण हो जानेके अनन्तर, सौमनस्य और दौर्मनस्यका पहले ही अस्त हुआ रहनेसे (उत्पन्न), जिसमें न दु ख होता है और न सुख, और होती है (केवल) उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि।

अनुरुद्ध ! क्योकि तू इन आठ महापुरुप वितर्कोको मनमे जगह देगा और क्योकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले चारो ध्यानोका विना कठिनाईसे, विना असुविधाके सहज ही प्राप्त करने वाला होगा, इससे अनुरुद्ध ! तुझे धूलमें फेंके गये चीथडोंसे बना हुआ चीवर ऐसा लगेगा जैसा किसी गृहपति वा गृहपति पुत्रका नाना रक्तवर्ण दुशालोंसे भरा हुआ दुशालोका सन्दूक। क्योकि तू रति (=आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, सतुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध ! क्योकि तू इन आठ महापुरुप-वितर्कोको मनमे जगह देगा और क्योकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले चारो ध्यानोका विना कठिनाईसे, बिना असुविधाके सहज ही प्राप्त करने वाला होगा, इससे अनुरुद्ध ! तुझे भिक्षाटन

से मिला हुआ भोजन ऐसा प्रतीत होगा जैसा किसी गृहपति वा गृहपति पुत्रके यहाँ बना हुआ नानासूपो तथा नाना व्यजनो के साथ, काले धानोसे सर्वथा रहित पका हुआ भात। क्योकि तू रति (=आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, सन्तुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध! क्योकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोको मनमे जगह देगा और क्योकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देनेवाले चारो ध्यानोका विना कठिनाईसे, विना असुविधा, सहज ही प्राप्त करनेवाला होगा, इससे अनुरुद्ध! तुझे वृक्षकी छाया रूपी शयनासन ऐसा लगेगा जैसा किसी गृहपति वा गृहपति पुत्रका लिपा-पुता, सुरक्षित, अर्गला-युक्त, बद झरोखो वाला महल। क्योकि तू रति (=आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, सतुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध! क्योकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोको मनमें जगह देगा और क्योकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले, चारो ध्यानोका विना कठिनाईसे, विना असुविधासे, सहज ही प्राप्त करने वाला होगा, इससे अनुरुद्ध! तुझे घास-फूस का बिछौना ऐसा लगेगा जैसे किसी गृहपति वा गृहपति-पुत्रका पलग हो, जिस पर गोनक आस्तरण, पटिक आस्तरण, पटलिक आस्तरण (बिछे हो), जिस पर कदली मृग की चमडी का बना श्रेष्ठ प्रति-आस्तरण हो, ओढना हो तथा दोनो ओर लालवर्ण की तकिया हो। क्योकि तू रति (=आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, सतुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध! क्योकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोको मनमें जगह देगा और क्योकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले, चारो ध्यानोका विना कठिनाईसे, विना असुविधासे, सहज ही प्राप्त करनेवाला होगा, इससे हे अनुरुद्ध! तुझे दुर्गन्ध-युक्त मूत्र रूपी औषधि भी ऐसी लगेगी, जैसे गृहपति वा गृहपति पुत्रकी घी, मक्खन, तेल, मधु, खाण्ड आदि नाना प्रकारकी दवाइयाँ। क्योकि तू रति (=आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, सतुष्ट-चित्त हो विहार करेगा। तो अनुरुद्ध! तू अपना अगला वर्षावास भी यहीं चेदी (जनपद) के प्राचीन (=पूर्वकी ओर के) वसदायमें करना।"

"भन्ते! अच्छा" कह आयुष्मान् अनुरुद्धने भगवान् को प्रतिवचन दिया।

तब भगवान्, आयुष्मान् अनुरुद्धको यह उपदेश दे चुकनेके अनन्तर, जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको फैलाये वा फैली हुई बाँहको सिकोडे, उसी

प्रकार चेदी (जनपद) के प्राचीन वसदायसे अन्तर्धान हो भग्गके सुसुमार गिरिके भेसकळावनमें प्रकट हुए। भगवान् बिछे आसन पर बैठे। बैठकर भगवान्ने भिक्षुओ को सम्बोधित किया—" भिक्षुओ, आठ महापुरुष वितर्कोकी देशना करता हूँ। इन्हे सुनें . भिक्षुओ, आठ महापुरुष वितर्क कौन से है? भिक्षुओ, यह धर्म अल्पेच्छ के लिये है, महेच्छके लिये नही , यह धर्म सतुष्टके लिये है, असतुप्ट के लिये नही , यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड-भडक्केमे रहनेकी इच्छा वालेके लिये नही , यह धर्म अप्रमादीके लिये है, आलसीके लिये नही , यह धर्म उपस्थित स्मृतिके लिये है, मूढ स्मृतिके लिये नही , यह धर्म एकाग्र-चित्तके लिये है, विक्षिप्त (= एकाग्रता रहित) चित्तके लिये नही, यह धर्म प्रज्ञावान् के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नही, यह धर्म प्रपच-रहित के लिये है, प्रपच न चाहने वालेके लिये है, प्रपच युक्तके लिये, प्रपच चाहने वालेके लिये नही।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म अल्पेच्छ' के लिये है, 'महेच्छके लिये नही', यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु 'अल्पेच्छ' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे भी उसे जानें कि वह 'अल्पेच्छ' है, 'सन्तुष्ट' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे भी उसे जाने कि वह 'सन्तुष्ट' है, 'एकान्त-सेवी' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे भी उसे जानें कि वह 'एकान्त-सेवी' है, 'प्रयत्नशील' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे उसे जानें कि वह 'प्रयत्नशील' है, 'उपस्थित-स्मृति' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे उसे जाने कि वह 'उपस्थित-स्मृति' है, 'एकाग्र-चित्त' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे उसे जाने कि वह 'एकाग्र-चित्त' है, 'प्रज्ञावान्' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे उसे जाने कि वह 'प्रज्ञावान्' है, 'प्रपच रहित' होता हुआ यह नही चाहता कि दूसरे उसे जाने कि वह 'प्रपच-रहित' है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म' 'अल्पेच्छके लिये है, 'महेच्छ' के लिये नही—यह इसी अर्थमे कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म सन्तुष्ट के लिये है, असन्तुष्टके लिये नही,' यह किस अर्थमे कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु जैसे-तैसे चीवर, पिण्ड पात (= भिक्षा), शयनासन, ग्लान-प्रत्यय भैषज्य आदि आवश्यक वस्तुओसे सतुष्ट होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म सन्तुष्ट के लिये है, असन्तुष्टके लिये नही'—यह इसी अर्थमे कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म एकान्त-प्रिय के लिये है, भीड-भडक्केमे रहनेकी इच्छा वालेके लिये नही,' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ,

एक 'एकान्त-सेवी' भिक्षुके पास भिक्षु आते है, भिक्षुणियाँ आती है, उपासक आते है उपासिकायें आती है, राजा आते है, राजाओंके अमात्य आते है, तैर्थिक आते हैं, तैर्थिक श्रावक आते है। उस समय वह भिक्षु विवेक की ओर झुके हुए, विवेक की ओर लुढके हुए, विवेककी ओर अग्रसर हुए, विवेक-स्थित, निष्काम चित्तसे निश्चितरूपसे प्रेरणा देनेवाली बातचीत ही करता हैं। भिक्षुओ, यह जो कहा गया है कि 'यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड भडक्केमें रहनेकी इच्छा वालेके नही—यह इसी अर्थमें कहा गया है।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'अप्रमादी' के लिये है, आलसीके लिये नही,' तो यह किस अर्थमे कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु बुराइयो (=अकुशल धर्मो) को छोडनेके लिये, अच्छाइयो (=कुशल धर्मो) को ग्रहण करनेके लिये प्रयत्नशील होता है। अच्छी बातो (=कुशल धर्मो) के प्रति शक्तिशाली, दृढ-पराक्रमी तथा जुआ कधेपर रखे होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'अप्रमादी' के लिये है, आलसीके लिये नही—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'उपस्थित-स्मृति' के लिये है, 'मूढ-स्मृति' के लिये नही,' तो यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु स्मृतिमान होता है, श्रेष्ठ स्मृतिसे युक्त उसे चिरकालपूर्व किया गया कर्म, चिरकाल पूर्व कही गई बात भी याद रहती है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'उपस्थित -स्मृति' के लिये है, मूढ-स्मृतिके लिये नही—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'एकाग्र-चित्त के लिये है, एकाग्रता रहित चित्तके लिये नही,' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, भिक्षु काम-भोगोंसे पृथक चतुर्थ-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'एकाग्र-चित्त' के लिये है, एकाग्र-रहित चित्तके लिये नही—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'प्रज्ञावान्'के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नही,' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, भिक्षु उदयास्तगामिनी, आर्य, बीधनेवाली, सम्यक् प्रकार दु:खक्षय की ओर ले जाने वाली प्रज्ञासे युक्त होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'प्रज्ञावान्' के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नही—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'प्रपच-रहित'के लिये है, प्रपच न चाहने वालेके लिये है, प्रपच-युक्तके लिये, प्रपच चाहने वालेके लिये नही,' यह किस

अर्थमे कहा गया ? भिक्षुओ, भिक्षुका चित्त प्रपचके निरोधकी ओर अग्रसर होता है, प्रसन्न होता है, स्थिर होता है तथा विमुक्त होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म प्रपच-रहितके लिये है, प्रपच न चाहने वालेके लिये है, प्रपच-युक्तके लिये, प्रपच चाहने वालेके लिये नही; यह इसी अर्थमे कहा गया।

तब आयुष्मान् अनुरुद्धने अपना अगला वर्षावास भी वही चेदी (जनपद) के प्राचीन अरण्यमे व्यतीत किया। तव आयुष्मान् अनुरुद्ध अकेले, एकान्त-सेवी हो, अप्रमादी रह, प्रयत्न कर, कोशिशमे लगे रहकर, जिस (उद्देश्य) के लिये कुल पुत्र घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होते है, उस अनुपम श्रेष्ठ जीवन-युक्त (उद्देश्य) को इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करने लगे। उन्हे लगा कि जन्म (—मरणका वधन) क्षीण हो गया, श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत कर लिया गया, जो करणीय था कर लिया गया, अव शेष कुछ करणीय नही रहा।' आयुष्मान अनुरुद्ध एक अर्हत हुए।

तव उस समय अर्हत्-पद प्राप्त आयुष्मान अनुरुद्धको ये गाथायें सूझी —

मम सकप्पमञ्ञाय, सत्था लोके अनुत्तरो।
मनोमयेन कायेन, इद्धिया, उपसकमि॥
यथा मे अहु सकप्पो, ततो उत्तरि देसयि।
निप्पपञ्चरतो वुद्धो, निप्पपञ्च अदेसयि॥
तस्साह धम्ममञ्ञाय, विहासिं सासने रतो।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कत बुद्धस्स सासन॥

[जो लोक (=विश्व) मे अनुपम शास्ता है, वे (बुद्ध) मेरे सकल्प को जान मनोमय-शरीरसे, ऋद्धि-बलसे मेरे पास आये। मेरे सकल्पके अनुसार मुझे श्रेष्ठ-धर्मका उपदेश दिया। प्रपच-रहित बुद्धने प्रपच-रहित पदका उपदेश दिया। उन बुद्धके धर्मका जानकार हो मै (बुद्ध—) शासन मे अनुरक्त हो रहने लगा। मैने विद्यायें प्राप्त की, बुद्धकी अनुशासना के अनुसार जीवन व्यतीत किया।]

४. दान वर्ग

भिक्षुओ, ये आठ दान है। कौनसे आठ ? (प्रतिग्राहकके) आनेपर दान देता है, डरसे दान देता है, 'मुझे दिया था' यह सोच दान देता है, 'मुझे देगा' यह सोच दान देता है, 'दान देना अच्छा है' सोच दान देता है, 'मै (भोजन) पकाता हूँ ये भोजन नही पकाते है, यह उचित नही है कि पकाने वाला, न पकानेवालेको दान न दे', सोच दान देता है, 'यह दान देनेसे मेरा यश फैलेगा।' सोच दान

देना है, तथा चित्तको अलकृत करनेके लिये, या चित्त को परिष्कृत (परिशुद्ध) करनेके लिये दान देता है। भिक्षुओ, ये आठ दान है।

सद्धा हिरिय कुसल च दान,
धम्मा एते सप्पुरिसानुयाता।
एत हि मग्ग दिविय वदन्ति,
एतेन हि गच्छति देवलोक

[श्रद्धा, लज्जा तथा निर्दोष (=कुशल) दान ये सत्पुरुषोंके गुण है। ये ही दिव्य-पथ कहलाते है। इन ही से (लोग) देव-लोक जाते हैं।]

भिक्षुओ, ये आठ दान-प्रकरण (=वस्तु) है। कौनसे आठ? प्रेम-पूर्वक दान देता है, क्रोधसे दान देता है, मूढतासे दान देता है, भयसे दान देता है, 'पूर्व समयसे पिता-पिता यह दान देते चले आये है, पुरानी वश-परम्पराका त्याग करना उचित नही' सोच दान देता है, 'इस दान देनेसे मै शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होऊँगा, स्वर्ग लोकमें जन्म ग्रहण करूँगा' सोच दान देता है, 'यह दान देनेसे मेरा मन प्रसन्न होता है, सतुष्ट होता है, प्रमुदित होता है' सोच दान देता है, चित्तको अलकृत करनेके लिये, चित्तको परिशुद्ध करनेके लिये दान देता है।

भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बातें होती हैं, उसमें जो बीज बोया जाता है, उसका न महान् फल होता है, न अधिक स्वादिष्ट (=फल) होता है, न अधिक अच्छी फसल होती है। कौनसी आठ बातें? भिक्षुओ, खेत ऊँचा-नीचा होता है, ककड-पत्थर वाला होता है, ऊसर होता है, गहरा हल नही चलाया जा सकता, (पानीके) आनेका रास्ता नही होता, (पानीके) निकलनेका रास्ता नहीं होता, (पानीकी) मातृकाओ (=नालियों) से युक्त नही होता, (खेत की) मर्यादा (=बाड) से युक्त नही होता। भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बाते होती हैं, उसमें जो बीज बोया जाता है, उसका न महान् फल होता है, न अधिक स्वादिष्ट (=फल) होता है और न अधिक अच्छी फसल होती है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणोमें ये आठ बातें होती है उन्हे दिया गया दान न महान् फल-दायक होता है, न यश फैलाने वाला (=द्युतिकारक) और न अधिक विस्तार वाला होता है। कौनसी आठ बाते? भिक्षुओ, श्रमण-ब्राह्मण मिथ्या-दृष्टि वाले होते है, मिथ्या सकल्प वाले होते है, मिथ्या-वाणी वाले होते हैं, मिथ्या कर्मान्त वाले होते हैं, मिथ्या आजीविका वाले होते है, मिथ्या-व्यायाम (=प्रयत्न) वाले

होते हैं, मिथ्या–स्मृतिवाले होते हैं तथा मिथ्या-समाधि वाले होते हैं। इस प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणोमे ये आठ बातें होती हैं, उन्हे दिया गया दान न महान फलदायक होता हैं, न यश फैलाने वाला (= द्युतिकारक) और न अधिक विस्तार वाला होता हैं ।

भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बाते होती हैं, उसमे जो बीज बोया जाता है, उसका महान् फल होता है, स्वादिष्ट फल होता है, अच्छी फसल होती है। कौन-सी आठ बाते ? भिक्षुओ, खेत ऊँचा–नीचा नही होता है, ककड-पत्थर वाला नही होता हैं, ऊसर नही होता हैं, गहरा हल चलाया जा सकता है, (पानीके) आनेका रास्ता होता है, (पानीके) जानेका रास्ता होता है, पानी की मातृकाये (= नालियाँ) होती हैं, (खेतकी) मर्यादा (= वाड) होती है। भिक्षुओ, जिस खेतमे ये आठ बातें होती हैं, उसमें जो वीज वोया जाता है, उसका महान् फल होता है, स्वादिष्ट फल होता है, अच्छी फसल होती हैं ।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणोमें ये आठ बातें होती हैं, उन्हे दिया गया दान महान फलदायक होता है, यश (ज्योति) फैलाने वाला और विस्तार वाला होता है। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, श्रमण-ब्राह्मण सम्यक्-दृष्टि वाले होते हैं, सम्यक् सकल्प वाले होते हैं, सम्यक् वाणी वाले होते हैं, सम्यक् कर्मान्त वाले होते हैं, सम्यक् आजीविका वाले होते हैं, सम्यक् व्यायाम (= प्रयत्न) वाले होते हैं। सम्यक् स्मृति वाले होते हैं तथा सम्यक् समाधि वाले होते हैं। इस प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण ब्राह्मणोमें ये आठ बातें होती हैं, उन्हे दिया गया दान महान् फलदायक होता है, यश (ज्योति) फैलाने वाला होता है और विस्तार वाला होता है।

यथापि खेत्ते सम्पन्ने, पवुत्ता बीजसम्पदा
देवे सम्पादयन्तम्हि, होति धञ्ञस्स सम्पदा।
अनीतिसम्पदा होति, विरूळ्ही भवति सम्पदा।
वेपुल्लसम्पदा होति, फल वे होति सम्पदा॥

[जिस प्रकार सम्पन्न खेतमें बीजरूपी सम्पत्ति बोने पर और देव(= वर्षा) रूपी सम्पत्ति वरसने पर धान रूपी सम्पदा होती है, कीडे-मकोडोसे होने वाली हानिका अभावरूपी सम्पत्ति होती है, विपुलता रूपी सम्पदा होती है, (अधिक–) फल रूपी सम्पदा होती है।]

एव सम्पन्नसीलेसु, दिन्ना भोजन सम्पदा।
सम्पदान उपनेति, सम्पन्न हिस्स त कत॥

तस्मा सम्पदमाकखी, सम्पन्नत्थूध्रपुग्गलो।
सम्पन्नपञ्ञे सेवेथ, एव इज्झन्ति सम्पदा॥
विज्जाचरणसम्पन्ने, लद्धा चित्तस्स सम्पद।
करोति कम्मसम्पद, लभति चत्थसम्पद॥

[इसी प्रकार शीलवानोंको भोजन रूपी सम्पत्तिका दान दिये जाने पर (त्रिविध कुशल) सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, क्योंकि उसका वह कर्म सम्पूर्ण (सम्पन्न) होता है। इसलिये जो व्यक्ति सम्पन्न है और सम्पदा की आकाक्षा करता है, उसे चाहिये कि वह शील-सम्पन्नोंकी सेवा करे। यही सम्पत्ति प्राप्त करनेकी विधि है। (वह) विद्या तथा आचरण युक्तोंकी सेवाके फलस्वरूप चित्त-सम्पत्ति प्राप्त कर सम्पूर्ण कर्म करता है तथा अर्थ रूपी सम्पदा प्राप्त करता है।]

लोक वत्वा यथाभूत, पप्पुय्य दिट्ठिसम्पद।
मग्गसम्पदमागम्म, याति सम्पन्नमानसो॥
धोधुनित्वा मल सब्ब, पत्वा निब्बानसम्पद।
मुच्चति सब्बदुक्खेहि, सा होति सब्बसम्पदा॥

[वह लोक (=विश्व) की यथार्थ जानकारी प्राप्त कर, (सम्यक्-) दृष्टि रूपी सम्पदाको हस्तगत कर, (आर्य-) मार्ग रूपी सम्पदाका अनुसरण कर, सम्पूर्ण चित्तसे (अर्हत्वको) प्राप्त होता है। वह सभी (चित्त-) मलोका नाश कर, निर्वाण-सम्पत्तिको प्राप्त कर, सभी दु खो से मुक्त होता है। यही उसकी सर्व-सम्पत्ति होती है।]

भिक्षुओ, ये आठ दानके फल स्वरूप ग्रहण किये जाने वाले जन्म (=उपपत्तियाँ) हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, एक आदमी श्रमण या ब्राह्मणको अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी), माला गन्ध-विलेप, शयनासन तथा प्रदीप जलानेकी सामग्री दान देता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके लिये मिलनेकी प्रत्याशा करता है। वह देखता है कि महान् ऐश्वर्य वाले क्षत्रिय, ब्राह्मण तथा गृहपति पाँचो इन्द्रियोंके भोगोंसे युक्त हैं, समन्वित हैं, सेव्य हैं। उसके मनमें होता है—क्या अच्छा हो यदि मैं शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर महान् ऐश्वर्य वाले क्षत्रिय, ब्राह्मण तथा गृहपतियोंकी सगतिमें जन्म ग्रहण करूँ! वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है, वैसा दृढ सकल्प करता है, वैसी भावना करता है। क्योंकि वह उस चित्तसे निचले दर्जेकी ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नहीं करता, उसकी वही उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर ऐश्वर्य-शाली क्षत्रियो, ब्राह्मणो वा गृहपतियोंकी सगतिमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, यह मैं शीलवान की

उत्पत्तिकी ही वात करता हूँ, दुश्शील की नही। भिक्षुओ, विशुद्ध भाव होनेसे शील-वान्‌के चित्त-सकल्प पूरे होते हैं।

भिक्षुओ, एक आदमी श्रमणका या ब्राह्मणको अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी), माला-गन्ध-विलेप, शयनासन तथा प्रदीप जलानेकी सामग्री का दान करता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके मिलनेकी प्रत्याशा करता है। उसने सुना होता है कि 'चातुर्महाराजिक देवता दीर्घजीवी होते है, सुवर्ण होते है तथा सुख-वहुल होते हैं।' उसके मनमे होता है—क्या अच्छा हो यदि मैं शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओकी सगतिमें जन्मग्रहण करूँ। वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है, वैसा दृढ सकल्प करता है, वैसी भावना करता हे। क्योकि वह उस चित्तसे निचले दर्जेकी ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नही करता, उसकी वही उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओकी सगतिमे जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, मैं शीलवान्‌की ही उत्पत्ति की वात करता हूँ, दुश्शीलकी नही। भिक्षुओ, विशुद्ध भाव होनेसे शीलवान् के चित्त सकल्प पूरे होते है।

भिक्षुओ, एक आदमी श्रमण वा ब्राह्मणको अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी) माला–गन्ध–विलेप, शय्यासन, प्रदीप जलानेकी सामग्रीका दान करता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके मिलनेकी प्रत्याशा करता है। उमने सुना होता है——त्रयोत्रिंश देवता याम देवता तुषित देवता निर्माणरति देवता . . . परनिर्मित वशवर्ती देवता दीर्घायु होते है, सुवर्ण होते है तथा सुख-बहुल होते हैं। उसके मनमें होता है—क्या अच्छा हो यदि मै शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओकी सगतिमे जन्म ग्रहण करूँ। वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है, वैसा ही दृढ सकल्प करता है, वैसी ही भावना करता है। क्योकि वह इस चित्तसे निचले दर्जेकी ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नही करता, उसकी वही उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओकी सगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, मै शीलवान् की ही उत्पत्ति की बात कहता हूँ, दुश्शील की नही। भिक्षुओ, विशुद्ध-भाव होनेसे शीलवान् के चित्त सकल्प पूरे होते हैं।

भिक्षुओ, एक आदमी श्रमण वा ब्राह्मण को अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी), माला–गन्ध–विलेप, शय्यासन, प्रदीप जलानेकी सामग्रीका दान करता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके मिलनेकी प्रत्याशा करता है। उसने सुना होता

है कि ब्रह्मकायिक देवता दीर्घायु होते है, सुवर्ण होते है, तथा सुख-बहुल होते है, उसके मनमें होता है क्या अच्छा हो, यदि मै शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर ब्रह्मकायिक देवताओकी सगति मे जन्म ग्रहण करूँ! वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है। वैसा ही दृढ सकल्प करता है, वैसी ही भावना करता है। क्योंकि वह इस चित्तमे निचले दर्जेकी की ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नही करता, उसकी वही उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर ब्रह्मकायिक देवताओ की सगतिमें जन्म ग्रहण करता है। मै शीलवानकी ही उत्पत्ति की बात कहता हूँ, दुश्शील की नही, राग-मुक्त व्यक्तिकी उत्पत्ति की ही बात करता हूँ, राग-युक्त की नही। भिक्षुओ, ये आठ दानके फलस्वरूप ग्रहण किये जानेवाले जन्म (= उपपत्तियाँ) है।

भिक्षुओ, ये तीन पुण्य-क्रियाये है। कौनसी तीन? दानमय पुण्य-क्रिया, शीलमय पुण्य-क्रिया, भावनामय (= योगाभ्यास) पुण्य-क्रिया।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया थोडी-सी होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया थोडीसी होती है और भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नही होती है वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर मानवीय दुर्भाग्य (= नीच योनि) को प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया न थोडी न बहुत (= मात्रामें) होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया न थोडी न बहुत (= मात्रामें) होती है, और भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नही होती है। शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर मानवीय सौभाग्य (= सम्पत्ति सहित योनि) को प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावना पुण्य-क्रिया सिद्ध नही होती है। वह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओकी सगतिमे जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, चारों महाराजा विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके चातुर्महाराजिक देवताओमें दस विषयोमें विशेषता प्राप्त करते है—दिव्य आयुके विषयमें, दिव्य वर्णके विषयमें, दिव्य सुखके विषयमें, दिव्य यश (= ऐश्वर्य) के विषयमें, दिव्य आधिपत्यके विषयमें, दिव्य रूपोंके विषयमें, दिव्य शब्दोंके विषयमें, दिव्य गन्धोंके विषयमें, दिव्य रसोंके विषयमें तथा दिव्य स्पर्शोके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, उसकी भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नही होती है। वह शरीर छूटने पर मरनेके अनन्तर त्रयोत्रिंश देवताओकी सगतिमे जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, देवेन्द्र शक्र विशेष मात्रामे दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके त्रयोत्रिंश देवताओमे दस विषयोमे ज्येष्ठता प्राप्त करता है—दिव्य आयुके विषयमे   दिव्य स्पर्शोके विषयमे।

भिक्षुओ, एक आदमी की दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नही होती है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर याम देवताओकी सगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, सुयाम देवपुत्र विशेष मात्रामे दानमय पुण्य-क्रिया करके विशेष मात्रामे शीलमय पुण्य-क्रिया करके, याम देवताओमे दस विषयोमें ज्येष्ठता प्राप्त करता है—दिव्य आयुके विषयमें   दिव्य स्पर्शोके विपयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, उसकी भावनामय-क्रिया सिद्ध नही होती है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर तुषित देवताओकी सगतिमे उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, सतुषित देवपुत्र विशेष मात्रामे दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके तुषित देवताओके दस विषयोमे ज्येष्ठता प्राप्त करता है—दिव्य आयुके विषयमे   दिव्य स्पर्शोके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, उसकी भावनामय पुण्य-क्रिया सिद्ध नही होती है। वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर निर्माणरति देवताओकी सगतिमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, सुनिर्मित देवपुत्र विशेष मात्रामे दानमय-पुण्य-क्रिया करके विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके निर्माणरति देवताओमें दस विषयोमें ज्येष्ठता प्राप्त करता है—दिव्य आयुके विषयमें   दिव्य स्पर्शोके विषयमे।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामे होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय पुण्यक्रिया सिद्ध नही होती है। वह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओ की सगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, वशवर्ती देवपुत्रने विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके परनिर्मित वशवर्ती

देवताओमे दस विपयोमे ज्येष्ठता प्राप्त की है—दिव्य आयुके विपयमे, दिव्य वर्णके विपयमें, दिव्य सुखके विपयमें, दिव्य यश (= ऐश्वर्य) के विपयमें, दिव्य आधिपत्यके विपयमें, दिव्य रूपोंके विषयमें, दिव्य शब्दोके विषयमें, दिव्य गन्धोंके विपयमें, दिव्य रसोके विषयमें तथा दिव्य स्पर्शोंके विपयमें। भिक्षुओ, ये तीन पुण्य-क्रियायें हैं।

भिक्षुओ, ये आठ सत्पुरुष-दान है। कौनसे आठ? पवित्र (वस्तु) का दान करता है, वढिया (= प्रणीत) चीज का दान करता है, समय पर देता है, देने योग्य वस्तुका दान करता है, विचारपूर्वक दान देता है, सतत दान देता है, दान देते समय प्रमुदित होता है तथा दान दे चुकने पर प्रसन्न होता है।

सुचि पणीत कालेन, कप्पिय पानभोजन।
अभिण्ह ददाति दान, सुखेत्तेमु ब्रह्मचारिसु॥
नेव विप्पटिसारिस्स, चजित्वा आमिस वहु।
एव दिन्नानि दानानि, वण्णयन्ति विपस्सिनो॥
एव यजित्वा मेधावी, सद्धो मुत्तेन चेतसा।
अव्यापज्झ सुख लोक, पण्डितो उपपज्जति॥

[जो दान (खाद्य-पेय) पवित्र होते है, प्रणीत होते है, समयोचित होते हैं, योग्य होते हैं, सतत दिये जाते हैं, अधिकारी ब्रह्मचारियोको दिये जाते हैं, जिनका वहुत मात्रामें त्याग करने पर भी दाता के मनमे पश्चात्ताप नही होता—ऐसे दिये गये दानोकी पण्डित जन प्रशसा करते है।]

जो मेधावी पुरुप मुक्त चित्तसे, श्रद्धापूर्वक इस प्रकार दान देता है, वह पण्डित व्यापाद-रहित सुख-लोकमें जन्म ग्रहण करता है।

भिक्षुओ, यदि किसी कुलमें सत्पुरुप जन्म ग्रहण करता हैं, तो वह वहुत जनोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है—माता-पिताके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, स्त्री-वच्चे के अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, दास कमकर लोगोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, मित्र-अमात्योके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, पूर्व-प्रेतो (= मृत व्यक्तियो) के अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, राजाके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, देवताओके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है तथा श्रमण-ब्राह्मणोंके अर्थ, हित तथा सुख के लिये होता है।

भिक्षुओ, जैसे महामेघ सभी खेतियोकी उत्पत्तिका कारण होनेसे वहुत लोगोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, भिक्षुओ, इसी

प्रकार किसी कुल में जो सत्पुरुष जन्म ग्रहण करता है, वह बहुत लोगोके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है—माता-पिताके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, स्त्री-बच्चेके अर्थ; हित तथा सुखके लिये होता है, दास-कमकर लोगोके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, मित्र-अमात्योके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, पूर्व-प्रेतो (=मृत व्यक्तियो) के अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, देव राजाके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, व देवताओके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है तथा श्रमण-ब्राह्मणोके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है।

वहून वत अत्थाय, सप्पञ्ञो घरमावस।
मातर पितर पुब्बे, रत्तिन्दिवमतन्दितो॥
पूजेति सहधम्मेन, पुब्बेकतमनुस्सर।
अनागारे पब्बजिते, अपचे ब्रह्मचारयो॥
निविट्ठसद्धो पूजेति, ञत्वा धम्मे च पेसलो।
रञ्ञो हितो देवहितो, ञातीन सखिन हितो॥
सब्बेस सो हितो होति, सद्धम्मे सुप्पतिट्ठितो।
विनेय्य मच्छेरमल, स लोक भजते सिव॥

[जो प्रज्ञावान् होता है, वह घरमे रहता हुआ वहुतोके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, वह माता (पिता) तथा पूर्व पितरोके प्रति आलस्य रहित हो दिन-रात अपने कर्तव्यका पालन करता है। वह उनके पूर्व उपकारोका स्मरण कर उनको धर्मानुसार पूजता है। वह अनागारिक प्रव्रजितो ब्रह्मचारियोंका भी आदर करता है। वह धर्मके विषयमें प्रज्ञावान् जान कर श्रद्धायुक्त मनसे पूजा करता है। वह राजाओका, देवताओका, ज्ञाति-बन्धुओका हित करने वाला होता है। वह सबका हित करने वाला होता है और सद्धर्ममें सुप्रतिष्ठित होता है। वह मात्सर्य-मलको त्यागकर शिव-लोक (=कल्याण पद) को प्राप्त होता है।]

भिक्षुओ, ये आठ पुण्योके मूल है, कुशल (=शुभ) कर्मों के मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाले है, सुखी बनाने वाले है, सुगति देने वाले है। अच्छाईके लिये, अनुकूलताके लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है। कौनसे आठ? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक बुद्धकी शरण ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह पहला पुण्योका मूल है, कुशल (=शुभ) कर्मोका मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाला है, सुखी

वनाने वाला है, सुगति देने वाला है, अच्छाई के लिये, अनुकूलता के लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है।

भिक्षुओ, फिर आर्य-श्रावक धर्मकी शरण ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह दूसरे पुण्योका मूल है, कुशल (=शुभ) कर्मोका मूल है सुखके लिये है।

भिक्षुओ, फिर आर्य-श्रावक सघकी शरण ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह तीसरे पुण्योका मूल है .. सुखके लिये है।

भिक्षुओ, ये पाँच दान है, महादान है, अग्र है, चिरकालसे ज्ञात है, श्रेष्ठ वशोत्पन्न है, पुराने है, असकीर्ण है, असकीर्ण-पूर्व है, न सकीर्ण होते है, न सकीर्ण होगे तथा विज्ञ श्रमण ब्राह्मणो द्वारा अनिन्दित है। कौनसे पाँच ? भिक्षुओ, आर्य श्रावक प्राणी हिंसाको छोड, प्राणी-हिंसासे विरत हो विचरता है। भिक्षुओ, जो आर्य-श्रावक प्राणी हिंसासे विरत होता है, वह अगणित प्राणियोको अभय-दान देता है, अवैर-दान देता है, तथा अक्रोध-दान देता है। अगणित प्राणियोको अभय, अवैर तथा अक्रोधका दान कर वह अनन्त अभय, अवैर तथा अक्रोधका भागी होता है। भिक्षुओ, यह चौथा महादान है, जो अग्र है, चिरकालसे ज्ञात है, श्रेष्ठ वशोत्पन्न है, पुराना है, असकीर्ण है, असकीर्ण-पूर्व है, न सकीर्ण होता है, न सकीर्ण होगा, तथा विज्ञ-श्रमण-ब्राह्मणो द्वारा अनिन्दित है। भिक्षुओ, चौथा यह पुण्योका मूल है, कुशल (-कर्मो) का मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाला है, सुखी वनाने वाला है, सुगति देने वाला है, अच्छाईके लिये, अनुकूलताके लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है।

फिर भिक्षुओ, आर्य-श्रावक चोरी करना छोड चोरी करनेसे विरत रहता है काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचारको छोड कामभोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहता है झूठ बोलना छोड झूठ बोलनेसे विरत रहता है, सुरा मेरय आदि नशीली चीजें छोड सुरा-मेरय आदिसे विरत हो विचरता है। भिक्षुओ, जो आर्य-श्रावक सुरा मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत रहता है, वह अगणित प्राणियोको अभय दान देता है, अवैर-दान देता है, तथा अक्रोध-दान देता है। अगणित प्राणियोको अभय, अवैर तथा अक्रोधका दान कर वह अनन्त अभय, अवैर तथा अक्रोधका भागी होता है। भिक्षुओ, यह पाचवाँ महादान है, जो अग्र है, जो चिरकालसे ज्ञात है, श्रेष्ठ वशोत्पन्न है, पुराना है, असकीर्ण है, असकीर्ण-पूर्व है, न सकीर्ण होता है, न सकीर्ण होगा तथा विज्ञ श्रमण-ब्राह्मणो द्वारा अनिन्दित है। भिक्षुओ, यह आठवाँ पुण्योका मूल है, कुशल (कर्मो) का मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाला है, सुखी वनाने

वाला है, सुगति देने वाला है, अच्छाई के लिये, अनुकूलताके लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है।

भिक्षुओ, जो प्राणी-हिंसा करता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमे पैदा होता है, या पशु-योनिमे जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। प्राणी-हिंसाका जो कमसे कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमे अल्पायु होना।

भिक्षुओ, जो चोरी करता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमे पैदा होता है, या पशु-योनिमे जन्म-ग्रहण करता है, अथवा प्रेत बनता है। चोरी करनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमे भोग्य-पदार्थो की हानि।

भिक्षुओ, जो काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचार करता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमे पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचार करनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनि विरोधियोका वैर।

भिक्षुओ, जो झूठ बोलता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमे पैदा होता है, या पशु-योनिमे जन्मग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। झूठ बोलनेका जो कम से कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें झूठा दोपारोपण।

भिक्षुओ, जो चुगली खाता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमे पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। चुगली खानेका जो कम से कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें झूठा दोषारोपण।

भिक्षुओ, जो कठोर है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। कठोर बोलनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें अप्रिय वाणी सुननेको मिलना।

भिक्षुओ, जो बेकार बोलता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। बेकार बोलनेका जो कम से कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें अनादर-युक्त वाणी सुननेको मिलना।

भिक्षुओ, जो सुरा मेरय आदि नशीले पदार्थोका सेवन करता है, उनका अभ्यस्त होता है, उनको अधिक बढाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। सुरा मेरय आदि पीनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है वह है मनुष्य-योनिमें पागलपन।

५ उपोसथ वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओको सम्बोधित किया।

—"भिक्षुओ!"

उन भिक्षुओने भगवान् को प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवानने कहा—

"भिक्षुओ! आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार करनेवाला होता है। भिक्षुओ, आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है, तथा महान् विस्तार वाला होता है? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत-गण जीवन भर प्राणी हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाले होकर विचरते हैं। मैं भी आजके रात-दिन प्राणी-हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरण करूँ। इस तरह से मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतो का अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अगसे युक्त होता है।

'अर्हत-गण जीवन भर चोरी करना छोड, चोरी करनेसे विरत रह, दियेको ही लेने वाले, दिये की ही आकाक्षा करने वाले होकर पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं। मैं भी आजके रात दिन चोरी करना छोड, चोरी करनेसे विरत रह, दियेको ही लेने वाला हो, दियेकी ही आकाक्षा करने वाला होकर पवित्र जीवन व्यतीत करूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामे ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह दूसरे अग से युक्त होता है।

'अर्हत-गण जीवनभर अब्रह्मचर्य छोड, ग्राम्य मैथुन-धर्मसे विरत हो, ब्रह्मचारी रहते हैं। मैं भी आजके रात दिन अब्रह्मचर्य छोड, ग्राम्य मैथुन धर्मसे विरत हो, ब्रह्मचारी बन कर रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामे ही अर्हतोका अनुगमन

करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रतका पालन होगा। इस प्रकार वह तीसरे अगसे युक्त होता है।

'अर्हत-गण जीवनभर मृषावाद छोड, मृषावाद (= झूठ बोलने) से विरत रह, सत्यवादी हो, सत्य कथन करने वाले हो, यथार्थवादी हो, विश्वसनीय हो तथा लोकमे अपना वचन पूरा करने वाले होकर रहते है। मै भी आजके रात-दिन मृषा-वाद छोड, मृषावाद (= झूठ बोलने) से विरत रह, सत्यवादी हो, सत्य कथन करने वाला हो, यथार्थवादी हो, विश्वसनीय हो तथा लोकमे अपना वचन पूरा करने वाला होकर रहूँ। इस तरहसे मै इतनी मात्रामे ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह चौथे अगसे युक्त होता है।

'अर्हत गण जीवनभर सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओका व्यवहार छोड सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओके सेवनसे विरत रहते है। मै भी आजके रात दिन सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओका व्यवहार छोड, सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओके सेवनसे विरत रहूँ। इस तरहसे मै इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पाँचवे अगसे युक्त होता है।

'अर्हत गण जीवन भर एक बार भोजन करने वाले, रात्रि-भोजन न ग्रहण करने वाले, रात्रि-भोजन से विरत रहते है। मै भी आजके रात दिन एक वार भोजन करने वाला, रात्रि-भोजन न ग्रहण करने वाला, रात्रि-भोजनसे विरत होकर रहूँ। इस तरहसे मै इतनी मात्रामे ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह छठे अगसे युक्त होता है।

'अर्हत गण जीवन भर नृत्य-गाना-बजाना-तमाशा देखना, माला गन्ध-विलेपन धारण करना तथा वनाव-सिंगारको छोड, नृत्य-गाने—बजाने—तमाशा देखने माला गन्ध—विलेपन धारण करने तथा वनाव-सिंगारसे विरत हो रहते है। मै भी आजके रात-दिन नृत्य—गाना—बजाना, तमाशा देखना, माला गन्ध—विलेपन धारण करना तथा वनाव—सिंगारको छोड, नृत्य, गाने—बजाने, तमाशा देखने, माला—गन्ध—विलेपन धारण करनेसे तथा वनाव सिंगार करनेसे विरत रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह सातवे अगसे युक्त होता है।

अर्हत गण जीवन भर ऊँचे महान् शयनासनको छोड, ऊँचे महान शयनासन से विरत हो नीचे शयनासनका सेवन करते है—चारपाईका या फूसके विछौनेका। मै भी आजके रात दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत

हो नीचे शयनासनका सेवन करूँ—चारपाईका या फूसके बिछौनेका। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अगसे युक्त होता है। भिक्षुओ, आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना इस प्रकार महान् फल-दायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

भिक्षुओ, आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है,महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है। भिक्षुओ, आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फल-दायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत्‌गण जीवन भर प्राणी हिंसाका त्यागकर प्राणी हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करनेवाले होकर विचरते है। मैं भी आजके रात दिन प्राणी-हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरण करूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अगसे युक्त होता है। अर्हत गण जीवन भर ऊँचे महान् शयनासनको छोड, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासन का सेवन करते है—चारपाई या फूस के बिछौनेका। मैं भी आजकी रात-दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासन का सेवन करूँ—चारपाई या फूसके बिछौनेका इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अगसे युक्त होता है। भिक्षुओ, आठ अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन करना इस प्रकार महान फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

यह कितना महान् फलदायी होता है, कितना महान् द्युतिकारक होता है तथा कितना महान् विस्तार वाला होता है?

भिक्षुओ, जैसे कोई प्रभूत सात रत्नो वाले सोलह जनपदोका—अग, मगध, काशी, कोशल, वज्जी, मल्ल, चेदि, वग, कुरु, पचाल, मत्स्य, शूरसेन, अस्सक, अवन्ती, गन्धार तथा कम्बोजका—आधिपत्य, राज्य करे तो यह आठ

अग वाले उपोसथ-व्रत-पालनके (फलके) सोलहवे हिस्सेके बराबर भी नही होता। यह किस लिये ?

भिक्षुओ, दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामे मानुषी राज्य तुच्छ है।

भिक्षुओ, मनुष्य-जीवनके पचास वर्षोके बराबर चातुर्महाराजिक देवताओ-का एक रात-दिन होता है। उन तीस रातोका महीना होता है। उन महीनोसे बारह महीनोका सवत्सर। उन वर्षोसे पाँच सौ वर्ष चातुर्महाराजिक देवताओकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगो-वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओकी सगतिमे उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसी लिये यह कहा गया कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामे मानुषी राज्य तुच्छ है'।

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके सौ वर्ष, त्रयोत्रिंश देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना। उन बारह महीनोका सवत्सर (वर्ष)। उन वर्षोसे एक हजार वर्ष त्रयोत्रिंश देवताओकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर त्रयोत्रिंश देवताओकी सगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसी लिये यह कहा गया कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामे मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके दो सौ वर्ष, याम देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना। उन बारह महीनोका वर्ष। उन वर्षोसे दो हजार वर्ष याम देवताओकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर याम देवताओकी सगतिमे उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसीलिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोक के सुख की तुलनामे मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके चार सौ वर्ष, तुषित देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना। उन बारह महीनोका वर्ष। उन वर्षोसे चार हजार वर्ष तुषित देवताओकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर मरनेके अनन्तर तुषित देवताओकी सगतिमे उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसीलिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोक के सुखकी तुलनामे मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके आठ सौ वर्ष, निर्माण-रति देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना, उन बारह महीनोका एक वर्ष। उन वर्षोसे

आठ हजार वर्ष निर्माण-रति देवताओकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुप आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर निर्माण-रति देवताओकी सगतिमे उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसीलिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोकके सुखकी तुलनामे मानुषी राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य-जीवनके सोलह सौ वर्ष, परनिर्मित-वशवर्ती देवताओका एक रात दिन, उन तीस रातोका एक महीना। उन बारह महीनोका एक वर्ष। उन वर्षोंसे सोलह हजार वर्ष परनिर्मित-वशवर्ती देवताओकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरु आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओकी सगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसी लिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है'।

पाण न हञ्ञे न चदिन्नमादिये।
मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना,
रत्ति न भुञ्जेय्य विकालभोजन॥

माल न धारे न च गन्धमाचरे,
मञ्चे छमाय व सयेथ सन्थते।
एत हि अट्ठगिकमाहुपोसथ,
बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासित॥

चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना
ओभासय अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा,
नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥

एतस्मिं य विज्जति अन्तरे धन,
मुत्ता मणि वेळुरिय च भद्दक।
सिगी सुवण्ण अथ वा पि कञ्चन,
य जातरूप हटक ति वुच्चति॥

अट्ठगुपेतस्स उपोसथस्स
कल पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥

तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा,
अट्ठगुपेत उपवस्सुपोसथ।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि,
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठान' ति॥

[प्राणी-हिंसा न करे, चोरी न करे, झूठ न बोले, शराब न पिये, अब्रह्मचर्य अथवा मैथुन-कर्मसे विरत हो, रातको विकाल भोजन न करे, माला-धारण न करे, सुगन्धियोका लेप न करे, (नीची) चारपाईका (फूसके) आस्तरण पर सोये—इस आठ अग वाले उपोसथके दु खका अन्त करने वाले बुद्धने देशना की है।

चन्द्रमा तथा सूर्य दोनो सुदर्शन है। अन्धकारको नष्ट करने वाले, अन्तरिक्षमे भ्रमण करने वाले, प्रकाशपुज, आकाश-स्थित ये जितने प्रदेशको प्रकाशित करते है, उस प्रदेशमे जितना भी धन है, जितने भी मोती, माणिक्य तथा श्रेष्ठ बिल्लौर है, जितना भी शृगी-स्वर्ण है, जितना भी काचन है, जितना भी जातरूप है, जितना भी हाटक (=सोना) है—ये सब तथा चन्द्रप्रभा और सभी तारागण आठ अग वाले उपोसथ-व्रतके पालनके सोलहवें हिस्सेके भी बराबर नही है।

इसलिये शीलवान् स्त्रियाँ तथा पुरुष आठ अगवाले उपोसथ व्रतका पालन कर, सुखके कारण पुण्य-कर्म कर, अतिदिव्य हो स्वर्गको प्राप्त होते है।]

एक समय भगवान श्रावस्तीके मिगार माताके प्रासाद पूर्वाराममे विहार करते थे। तब विशाखा मिगारमाता भगवानके पास गई। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठी। एक ओर बैठी हुई विशाखा मिगार माताको भगवानने यह कहा—

"विशाखे! आठ अगोवाले उपोसथ व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तारवाला होता है। विशाखे! आठ अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है! विशाखे! आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत्‌गण जीवन भर प्राणी-हिंसाका त्याग कर,

प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र त्यागी, लज्जायुक्त, दयालु, सभी प्राणियोके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरते हैं। मैं भी आज के रात-दिन प्राणी-हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अगसे युक्त होता है। अर्हत् जन जीवन भर ऊँचे महान् शयनास को छोड ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासनका सेवन करते हैं—चारपाईका या फूसके विछौनेका। मैं भी आजके रात-दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड ऊँचे महान् शयनासन से विरत हो नीचे शयनासन का सेवन करूँ—चारपाईका या फूस के विछौनेका। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवे अगसे युक्त होता है। विशाखे! आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना, इस प्रकार महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

यह कितना महान् फलदायी होता है, कितना महान् शुभ परिणाम वाला होता है, कितना महान् द्युतिकारक होता है तथा कितना महान् विस्तार वाला होता है।

विशाखे! जैसे कोई प्रभूत सात रत्नो वाले सोलह जन पदोका—अग, मगध, काशी, कोशल, वज्जी, मल्ल, चेती, वग, कुरु, पञ्चाल, मत्स्य, शूरसेन, अस्सक, अवन्ती, गन्धार तथा कम्बोजका—आधिपत्य करे, राज्य करे, तो यह आठ अगो वाले उपोसथ-व्रत पालनेके (फलके) सोलहवें हिस्सेके वरावर भी नही होता। यह किस लिए? विशाखे! दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।

विशाखे! मनुष्य जीवनके पचास वर्षोके वरावर चातुर्महाराजिक देवताओका एक रात-दिन होता है। उन तीस रातोका महीना होता है। उन महीनोंसे बारह महीनोका सवत्सर। उन वर्षोसे पाँच सौ वर्ष चातुर्महाराजिक देवताओकी आयु-गणना। विशाखे! इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओकी सगतिमें उत्पन्न हो। विशाखे! इसी लिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ है'।

विशाखे! मनुष्य जीवनके सौ वर्ष, त्रयोत्रिंश देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना। उन बारह महीनोका एक वर्ष। उन वर्षोसे एक

हजार वर्ष त्रयोत्रिंश देवताओकी आयु-गणना। विशाखे! इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर त्रयोत्रिंश देवताओकी सगतिमे उत्पन्न हो। विशाखे! इसी लिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामे मानुषी राज्य तुच्छ है।'

विशाखे! मनुष्य जीवनके दो सौ वर्ष चार सौ वर्ष आठ सौ वर्ष सोलह सौ वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना। उन बारह महीनोका एक वर्ष। उन वर्षोसे सोलह हजार वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओकी आयु-गणना। विशाखे! इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओकी सगतिमे उत्पन्न हो। विशाखे! इसी लिए यह कहा गया है कि 'दिव्यलोकके सुखकी तुलनामे मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

पाण न हञ्ञे, न चदिन्नमादिये।
मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना,
रत्ति न भुञ्जेय्य विकालभोजन॥

"माल न धारे न च गन्धमाचरे,
मञ्चे छमाय व सयेथ सन्थते।
एत हि अठ्ठंगिकमाहुपोसथ,
बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासित॥

" चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना,
ओभासय अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा,
नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥

एतस्मि य विज्जति अन्तरे धन,
मुत्ता मणि वेळुरिय च भद्दक।
सिंगी सुवण्ण अथ वा पि कचन,
य जातरूप हटक नि वुच्चति॥

अठ्ठगुपेतस्स उपोसथस्स
कल पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥

तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा,
अट्ठगुपेन उपवस्सुपोसथ।
पुञ्ञानि करवान सुखुद्रयानि,
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति - ठान॥

[अर्थ ऊपर आ ही गया है—अनु]

एक समय भगवान् वैशालीके महावनके कूटागारमे विहार करते थे। तब वासेट्ठ उपासक जहाँ भगवान थे वहाँ आया। पास आकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे वासेट्ठ उपासकको भगवानने यह कहा—"वासेट्ठ! आठ अगोवाले उपोसथ व्रत का पालन करना अनिन्दित हो स्वर्ग को प्राप्त होते है।"

ऐसा कहे जाने पर वासेट्ठ उपासक ने भगवानसे यह कहा—भन्ते! मेरे प्रिय सगे-सम्बन्धी यदि इस आठ अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन करे तो यह दीर्घ काल तक मेरे सम्बन्धियोंके हित, सुखके लिये हो। भन्ते! यदि सभी क्षत्रिय इस आठ अगो वाले उपोसथ व्रतका पालन करे तो यह दीर्घकाल तक उनके हित, सुखके लिये हो। भन्ते! यदि सभी ब्राह्मण यदि सभी वैश्य. शूद्र आठ अगो वाले उपोसक व्रतका पालन करें तो यह दीर्घ काल तक उनके हित सुखके लिये हो।"

"वासेट्ठ! यह ऐसा ही है। वासेट्ठ! यह ऐसा ही है। वासेट्ठ! यदि क्षत्रिय इस आठ अगो वाले उपोसथ व्रतका पालन करें तो यह दीर्घकाल तक उनके हित, सुखके लिये हो। वासेट्ठ! यदि सभी ब्राह्मण यदि सभी वैश्य शूद्र आठ अगो वाले उपोसथ व्रतका पालन करें तो यह दीर्घ काल तक उनके हित, सुखके लिए हो। वासेट्ठ! यदि सदेव, समार, सब्रह्मलोक तथा श्रमण-ब्राह्मणो और देव मनुष्योंसे युक्त यह जनता भी इस आठ अगो वाले उपोसथ व्रतका पालन करे तो यह दीर्घकाल तक सदेव, समार, सब्रह्मलोक तथा श्रमण-ब्राह्मणो और देव-मनुष्योंसे युक्त इस जनताके हित सुखके लिए हो। वासेट्ठ! यदि ये महान् ऐश्वर्य शाली भी आठ अगोवाले उपोसथ व्रतका पालन करे तो यह दीर्घ कालतक इन महान् ऐश्वर्यशालियोंके हित-सुखके लिये हो। यदि इनकी ऐसी स्थिति है तो (सामान्य) मनुष्योंका क्या कहना!

एक समय भगवान् श्रावस्तीमे अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममे विहार करते थे। तव बोज्झा उपासिका जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँची। पास जाकर भगवान्‌को प्रणाम कर एक ओर बैठी। एक ओर बैठी बोज्झा उपासिकाको भगवान्‌ने यह कहा—

"बोज्झे! आठ अगोवाले उपोसथ व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है। बोज्झे! आठ अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तारवाला होता है? बोज्झे! आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत-गण जीवन भर प्राणी-हिंसाका त्याग कर, प्राणी हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोके प्रति अनुकम्पा करने वाले होकर विचरते है। मैं भी आजके रात-दिन प्राणी-हिंसाका त्याग कर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरूँ। इस तरहसे मैं इतना मात्रामें ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अगसे युक्त होता है। . . .

अर्हत्-गण जीवन भर ऊँचे महान् शयनासनको छोड, ऊँचे महान् शयनासन से विरत हो, नीचे शयनासनका सेवन करते है—चारपाईका या फूसके बिछौनेका। मैं भी आजके रात-दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासनका सेवन करूँ—चारपाई या फूसके बिछौनेका। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामे ही अर्हतोका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अगसे युक्त होता है। बोज्झे! आठ अगो वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना, इस प्रकार महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तारवाला होता है।

यह कितना महान् फलदायी होता है, कितना महान् शुभ परिणाम वाला होता है, कितना महान् द्युतिकारक होता है तथा कितना महान् विस्तार वाला होता है?

बोज्झे! जैसे कोई प्रभूत सात रत्नोवाले सोलह जनपदोका—अग, मगध, काशी, कोशल, वज्जी, मल्ल, चेती, वग, कुरु, पञ्चाल, मत्स्य, शूरसेन, अस्सक, अवन्ती, गन्धार तथा कम्बोजका—आधिपत्य करे, राज्य करे, तो यह आठ अगोवाले उपोसथ व्रत पालनेके (फलके) सोलहवे हिस्सेके बरावर भी नही होता। यह किस लिए? बोज्झे! दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।

वोज्झे ! मनुष्य जीवनके पचास वर्षोंके वरावर चातुर्महाराजिक देवताओ का एक रात-दिन होता है। उन तीस रातोका एक महीना होता है। उन महीनोसे वारह महीनोका सवत्सर। उन वर्षोंसे पाँच सौ वर्ष चातुर्माहाराजिक देवताओकी आयु-गणना। वोज्झे ! इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठो अगोवाले उपोसथ-व्रतका पालन करे, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओकी सगतिमें उत्पन्न हो। वोज्झे ! इसीलिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोक के सुखकी तुलनामें मानुपी-राज्य तुच्छ है।'

वोज्झे ! मनुष्य जीवनके सौ वर्ष दो सौ वर्ष चार सौ वर्ष . आठ सौ वर्ष मोलह सौ वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओका एक रात-दिन। उन तीस रातोका एक महीना। उन वारह महीनोका एक वर्ष। उन वर्षोंसे सोलह हजार वर्ष परनिर्मित वगवर्ती देवताओकी आयु-गणना। वोज्झे ! इसकी गुजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुप आठ अगोवाले उपोमथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वगवर्ती देवताओकी सगतिमें उत्पन्न हो। वोज्झे ! इसीलिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोकके के सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।'

पाण न हञ्ञे न चदिन्नमादिये।
मुसा न भामे, न च मज्जपो सिया
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना,
रत्ति न भुञ्जेय्य विकालभोजन ॥

माल न धारे न च गन्धमाचरे,
मञ्चे छमाय व सयेथ सन्थते।
एत हि अट्टगिकमाहुपोमथ,
वुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासित ॥

चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना,
ओभासय अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा,
नभे पभासन्ति दिसाविरोचना ॥

एतस्मि य विज्जति अन्तरे धन,
मुत्ता मणि वेळुरिय च भद्दक।
सिंगी सुवण्ण अथ वा पि कञ्चन,
य जातरूप हटक ति वुच्चति॥

अट्ठगुपेतस्स उपोसथस्स
कल पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥

तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा,
अट्ठगुपेत उपवस्सुपोसथ।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि,
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठान॥

[अर्थ ऊपर आ ही गया है — अनु०]

एक समय भगवान् कोसम्बीके घोसितारामगे विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध दिनमे विहारके भीतर ध्यानारूढ अवस्थामे विराजमान थे। तब बहुतसी मनापकायिका देवियाँ जहाँ आयुष्मान अनुरुद्ध थे, वहाँ उपस्थित हुईं। पास जाकर आयुष्मान् अनुरुद्धको अभिवादन कर एक ओर खडी हुई। एक ओर खडी होकर उन देवियोने आयुष्मान् अनुरुद्धको यह कहा—'भन्ते! हम मनापकायिका देवियाँ है। हम तीन विषयोमें सामर्थ्यवान है। भन्ते अनुरुद्ध! हम जब जैसा चाहे तुरन्त वैसा स्वरूप (= वर्ण) बना सकती है, जब जैसा चाहे तुरन्त वैसा स्वर निकाल सकती है, जब जैसा चाहे तुरन्त वैसा सुख प्राप्त कर सकती है। भन्ते! अनुरुद्ध हम मनापकायिका देवियाँ इन तीन विषयोमें सामर्थ्यवान है।"

तब आयुष्मान् अनुरुद्धके मनमे यह विचार उत्पन्न हुआ—'ये सभी देवियाँ नीले वर्णकी, नीले वस्त्रो वाली तथा नीले अलकारो वाली हो जाएँ।" वे देवियाँ आयुष्माद् अनुरुद्धका विचार जान, सभी नील वर्णकी, नीले वस्त्रो वाली तथा नीले अलकारो वाली हो गईं।

तब आयुष्मान अनुरुद्धके मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—"अरे! ये सब देवियाँ पीत-वर्ण हो जाएँ. सभी रक्त-वर्ण हो जाये सभी श्वेत-वर्ण

श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत अलकारो वाली हो जाएँ।" वे देवियाँ आयुष्मान् अनुरुद्धका विचार जान, सभी श्वेत-वर्ण, श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत अलकारो वाली हो गईं।

तव उन देवियोमेंसे एक ने गाया, एकने नाचा तथा एकने अप्सराओकी तरह वजाया। जैसे पचग तुरिय-वादनका—जो सुविनीत हो, जो सुप्रतिपालित हो, और जो कुशल वादको द्वारा वजाया गया हो–शब्द सुदर होता है, मनोरम होता है, मनोरञ्जन करनेवाला होता है, वाछनीय होता है, प्रेम उत्पन्न करनेवाला होता है तथा उन्मत्त करने वाला होता है, वैसा ही उन देवियोंके अलकारोका शब्द था–सुन्दर, मनोरम, मनोरञ्जन करनेवाला, वाछनीय, प्रेम उत्पन्न करनेवाला तथा उन्मत्त कर देनेवाला। उस समय आयुष्मान् अनरुद्धने अपनी इन्द्रियो (=आँखो) को झुका लिया।

तव यह देख कि 'यह मजा नही ले रहा है,' वे देवियाँ वहीसे अन्तर्धान हो गईं।

तव आयुष्मान् अरुद्ध शामके समय योगाभ्याससे उठ जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे हुए आयुष्मान् अनुरुद्धने भगवान्को यह कहा—

"भन्ते! मैं दिनके समय विहारके भीतर योगाभ्यासमें तल्लीन था। भन्ते! तव वहुतसी मनापकायिका देवियाँ जहाँ मैं था, वहाँ आयी। पास आकर, मुझे प्रणाम कर एक ओर वैठ गईं। एक ओर खडी रह कर भन्ते! उन देवियोने मुझे यह कहा 'भन्ते! अनरुद्ध हम मनापकायिका देवियाँ है। हम तीन विषयोमे सामर्थ्यवान हैं। भन्ते अनुरुद्ध, हम जव जैसा चाहे, तुरन्त वैसा स्वरूप वना सकती है, जव जैसा चाहे तुरन्त वैसा स्वर निकाल सकती है, जव जैसा चाहे, तुरन्त वैसा सुख प्राप्त कर सकती है। भन्ते अनुरुद्ध! हम मनापकायिका देवियाँ इन तीन विषयोमे सामर्थ्यवान् है।"

तव भन्ते! मेरे मनमे यह हुआ–अरे! ये सव देवियाँ नीलवर्ण, नीलवस्त्र तथा नीलालकार वाली हो जाये। भन्ते! तव मेरे चित्तकी वात जानकर वे सभी देवियाँ नीलवर्ण, नीलवस्त्र तथा नीले अलकारो वाली हो गईं।

भन्ते। तव मेरे मनमे यह हुआ—अरे! यह सव देवियाँ पीत-वर्ण, पीत-वस्त्र तथा पीले अलकारोकी हो जाएँ ... सभी लाल-वर्णकी हो जाएँ. . सभी श्वेत-वर्ण, श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत-अलकारोकी हो जाएँ। भन्ते। तव मेरे चित्तकी वात जानकर वे सभी देवियाँ श्वेत-वर्ण, श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत अलकारो वाली हो गईं।

भन्ते! उन देवियोमे से एकने गाया, एक नाची तथा एकने अप्सराओकी तरह बजाया। जैसे पचग तुरिय-वादनका—जो सुविनीत हो, जो सुप्रतिपालित हो और जो कुशल वादको द्वारा बजाया गया हो—शब्द सुन्दर होता है, मनोरम होता है, मनोरजन करनेवाला होता है, वाछनीय होता है, प्रेम उत्पन्न करनेवाला होता है तथा उन्मत्त कर देनेवाला होता है, वैसा ही उन देवियोके अलकारोका शब्द था—सुन्दर, मनोरम, मनोरजन करनेवाला, वाछनीय, प्रेम उत्पन्न करनेवाला तथा उन्मत्त कर देनेवाला। उस समय भन्ते! मैंने अपनी इन्द्रियो(= आँखो) को झुका लिया।

तब भन्ते यह देख कि 'आर्य अनुरुद्ध कुछ मजा नही ले रहे है,' वे देवियाँ वही अन्तर्धान हो गईं।

"भन्ते! किसी स्त्रीमे कौन-कौनसे गुण होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमें उत्पन्न होती है।"

"अनुरुद्ध! स्त्रीमे आठ बाते होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमे उत्पन्न होती है। कौन-सी आठ बाते?

"अनुरुद्ध! अपना कल्याण चाहनेवाले, अपना हित चाहनेवाले, अपनेपर दया करनेवाले माता-पिता दया करके जिस किसी स्वामीको भी सौप दे, वह उससे पहले (सोकर) उठनेवाली होती है, उसके बाद सोने जानेवाली होती है, आज्ञा-कारिणी होती हैं, अनुकूल बरतनेवाली होती है तथा प्रियभाषिणी होती है।

"जो पतिके गौरव-भाजन होते है—माता, पिता या श्रमण-ब्राह्मण—वह उनका आदर करती है, सत्कार करती है, गौरव करती है, मानती है, पूजती है और अतिथियोका आसन तथा जलसे सत्कार करती है।

"जो स्वामीके भीतरके काम—चाहे ऊनका काम हो, चाहे कपासका काम हो—होते है, उनमे वह दक्ष होती है, आलस्य-रहित होती है, उनके विषयमे उपाय-कुशल होती है, उन्हे करने-करानेमें समर्थ।

"जो स्वामीके घरके आदमी होते है—दास, नौकर, चाकर—उनके कृत-अकृत को जाननेवाली होती है, रोगियोका बलाबल जाननेवाली होती है तथा उन्हे जो कुछ खाना-पीना देना होता है वह यथायोग्य बाँट कर देती है।

"जो कुछ धन, धान्य या सोना स्वामी कमाकर लाता है उसे सुरक्षित रखती है, उसको लेकर धूर्त नही होती, चोरी करनेवाली नही होती, शराब पीनेवाली नही होती, उसे नष्ट करनेवाली नही होती।

"उसने बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण ग्रहण की होती है, वह उपासिका होती है।

"वह प्राणी-हिंसासे विरत रहनेवाली, चोरीसे विरत रहनेवाली, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहनेवाली, मृषावादसे विरत रहनेवाली तथा सुरा, मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत रहनेवाली—सदाचारिणी होती है।

"वह त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृह-वास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान-देनेवाली।

"अनुरुद्ध! इन आठ बातोंके होनेसे स्त्री, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमें उत्पन्न होती है।

यो न भरति सब्बदा, निच्च आतापि उस्सुको।
त सब्बकामद पोस, भत्तार नातिमञ्ञति॥
न चा पि सोत्थि भत्तार, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
उट्ठाहिका अनलसा, सगहितपरिज्जना।
भत्तु मनाप चरति, सम्भत अनुरक्खति॥
या एव वत्तति नारी, भत्तु छन्द वसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जति॥

[जो स्वामी प्रयत्नपूर्वक, उत्सुकतापूर्वक उसका हर समय भरण-पोषण करता है, उस सभी कामनाओंकी पूर्ति करनेवाले अपनी पतिकी वह अवहेलना नही करती। अपने कल्याणकी इच्छुक वह ईर्ष्या करके अपने पतिको क्रुद्ध नही करती है। वह पण्डिता, जितने लोग भी स्वामीके गौरव-भाजन होते है, उनकी पूजा करती है। वह (पहले सोकर) उठनेवाली होती है, वह आलस्य-रहित होती है, वह परिजनोंका सग्रह करनेवाली होती है, वह स्वामीके मनोनुकूल आचरण करती है, वह कमाये हुए धनकी रक्षा करती है। जो नारी इस प्रकार पतिकी इच्छाके अनुसार वरतने-वाली होती है, वह 'मनापकायिका देवियो' की सगतिमें उत्पन्न होती है।]

एक समय भगवान् श्रावस्तीके मिगारमाताके प्रासाद पूर्वाराममें विहार करते थे। तब विशाखा मिगारमाता एक ओर बैठी विशाखा मिगार-माताको भगवानने यह कहा—

"विशाखे! स्त्रीमें आठ बातें होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमे उत्पन्न होती है। कौन-सी आठ बातें?

"विशाखे! अपना कल्याण चाहनेवाले, अपना हित चाहनेवाले, अपनेपर दया करनेवाले माता-पिता दया करके जिस किसी स्वामीको भी सौंप दे, वह उससे पहले (सोकर) उठनेवाली होती है, उसके बाद सोनेवाली होती है, आज्ञाकारिणी होती है, अनुकूल बरतनेवाली होती है तथा प्रिय भाषिणी होती है। . . .

"विशाखे! वह त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृह-वास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान देनेवाली।

"विशाखे! इन आठ बातोंके होनेसे स्त्री शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमे उत्पन्न होती है।

यो न भरति सब्बदा, निच्च आतापि उस्सुको,
त सब्बकामद पोस, भत्तार नातिमञ्ञति ॥
न चा पि सोत्थि भत्तार, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेतिपण्डिता ॥
उट्ठाहिका अनलसा, सगहित परिज्जना।
भत्तु मनाप चरति, सम्भत अनुरक्खति ॥
या एव वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जति।

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

एक समय भगवान भग्गमें सुसुमार गिरिके भेसकळावन नामके मृगदायमें विहार करते थे। तब नकुल माता गृहपत्नी जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँची, पहुँचकर ....एक ओर बैठी नकुलमाता गृहपत्नीको भगवानने यह कहा—

"नकुलमाते! स्त्रीमें आठ बातें होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमे उत्पन्न होती है। कौन-सी आठ बातें होनेसे ?

"नकुलमाते! अपना कल्याण चाहनेवाले, अपना हित चाहनेवाले, अपने पर दया करनेवाले माता पिता दया करके, जिस किसी स्वामीको भी सौंप दें, वह उससे पहले सोकर उठनेवाली, उसके बाद सोने जानेवाली होती है, आज्ञा-कारिणी होती है, अनुकूल बरतनेवाली होती है तथा प्रियभाषिणी होती है।

"जो पतिके गौरव-भाजन होते हैं—माता-पिता वा श्रमण-ब्राह्मण—वह उनका आदर करती है, सत्कार करती है, गौरव करती है, मानती है, पूजती है और अतिथियोका आसन तथा जलसे सत्कार करती है।

"जो स्वामीके भीतरके काम—चाहे ऊनका काम हो, चाहे कपासका काम हो—होते हैं, उनमें वह दक्ष होती है, आलस्य-रहित होती है, उनके विषयमें उपाय-कुशल होती है, उन्हें करने-करानेमें समर्थ।

"जो स्वामीके घरके आदमी होते हैं—दास, नौकर-चाकर—उनके कृत-अकृतको जाननेवाली होती है, रोगियोंका बलाबल जाननेवाली होती है तथा उन्हें जो कुछ खाना-पीना देना होता है वह यथायोग्य बाँट कर देती है।

"जो कुछ धन, धान्य या सोना स्वामी कमाकर लाता है, उसे सुरक्षित रखती है, उसको लेकर धूर्त नहीं होती, चोरी करनेवाली नहीं होती, शराब पीनेवाली नहीं होती, उसे नष्ट करनेवाली नहीं होती।

"उसने बुद्ध, धर्म तथा सघकी शरण ग्रहण की होती है, वह उपासिका होती है।

"वह प्राणी-हिंसासे विरत रहनेवाली, चोरीसे विरत रहनेवाली, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहनेवाली, मृषावादसे विरत रहनेवाली तथा सुरा-मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत रहनेवाली—सदाचारिणी होती है।

"वह त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृहवास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान देनेवाली।

नकुलमाते! इन आठ बातोंके होनेसे स्त्री, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियो' की सगतिमें उत्पन्न होती है।"

यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको।
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति॥
न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
उट्ठाहिका अनलसा, सगहितपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जति॥

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें मिगारमाताके प्रासाद पूर्वाराममें विहार करते थे। तब विशाखा मिगारमाता जहाँ भगवान थे, वहाँ गई। एक ओर बैठी हुई विशाखा मिगारमाताको भगवानने यह कहा—

"विशाखे ! जिस स्त्रीमे ये चार बाते होती है, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ होती है और वह इस लोकको प्रसन्न किया होता है। कौन-सी चार बाते ? विशाखे, स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है, अपने परिजनोका सग्रह करनेवाली होती है, स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है तथा कमाए हुए की रक्षा करनेवाली होती है।

विशाखे ! स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक कैसे होती है ? जो स्वामीके भीतरके काम—चाहे ऊनका काम हो, चाहे कपासका काम हो—होते है, उनमें वह दक्ष होती है, आलस्य-रहित होती है, उनके विषयमे उपाय-कुशल होती है, उन्हे करने-करानेमें समर्थ। विशाखे ! इस प्रकार स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है।

विशाखे ! स्त्री अपने परिजनोका सग्रह करनेवाली कैसे होती है ? विशाखे ! जो स्वामीके घरके आदमी होते है—दास, नौकर-चाकर —वह उनके कृत-अकृतको जाननेवाली होती है तथा उन्हे जो कुछ खाना-पीना देना होता है, वह यथायोग्य बाँट कर देती है। विशाखे ! स्त्री इस प्रकार अपने परिजनोका सग्रह करनेवाली होती है।

विशाखे ! स्त्री कैसे स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है ? विशाखे ! जो कुछ पतिकी इच्छाके प्रतिकूल होता है उसे स्त्री अपनी जान बचाने तकके लिए भी नही करती है। विशाखे ! स्त्री इस प्रकार स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है।

विशाखे ! स्त्री कैसे कमाये हुए की रक्षा करनेवाली होती है ? विशाखे ! जो कुछ धन, धान्य या सोना स्वामी कमाकर लाता है, उसे सुरक्षित रखती है, उसको लेकर धूर्त नही होती, चोरी करनेवाली नही होती, शराव पीनेवाली नही होती, उसे नष्ट करनेवाली नही होती। विशाखे ! स्त्री इस प्रकार कमाए हुएकी रक्षा करनेवाली होती है। विशाखे ! जिस स्त्रीमें ये चार वातें होती है, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ होती है और उसने इस लोकको प्रसन्न किए होता है।

विशाखे ! जिस स्त्रीमें ये चार वातें होती है, वह परलोक-विजयके मार्गपर आरूढ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है। कौन-सी चार वातें ?

विशाखे ! स्त्री श्रद्धा-सम्पन्न होती है, शील-सम्पन्न होती है, त्याग-सम्पन्न होती है तथा प्रज्ञा-सम्पन्न होती है।

विशाखे ! स्त्री श्रद्धा-सम्पन्न कैसे होती है ? विशाखे ! श्रद्धावान होती है, तथागत की बोधिके प्रति श्रद्धायुक्त होती है—वे भगवान अर्हत है, सम्यक् सबुद्ध

है, विद्या तथा आचरणमे युक्त है, सुगत है, लोक-विदु है, अनुपम है, (दुष्ट) पुरुषोका दमन करनेवाले सारथी है, देवताओ तथा मनुष्योंके शास्ता है, बुद्ध भगवान है। विशाखे! स्त्री इस प्रकार श्रद्धा-सम्पन्न होती है।

विशाखे! स्त्री शील-सम्पन्न कैसे होती है? विशाखे! स्त्री प्राणी-हिंसासे विरत होती है सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत होती है। विशाखे! स्त्री इस प्रकार शील-सम्पन्न होती है।

विशाखे! स्त्री त्याग-सम्पन्न कैसे होती है? विशाखे! स्त्री त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृहवास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान देनेवाली। विशाखे! इस प्रकार स्त्री त्याग-सम्पन्न होती है।

विशाखे! स्त्री प्रज्ञा सम्पन्न कैसे होती है?

विशाखे! स्त्री प्रज्ञा सम्पन्न होती है विशाखे! स्त्री इस प्रकार प्रज्ञा सम्पन्न होती है।

विशाखे! जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती है, वह परलोक-विजयके मार्ग-पर आरूढ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है।

सुसविहितकम्मन्ता, सगहितपरिज्जना।
भत्तु मनाप चरति, सम्मत अनुरक्खति॥
सद्धा सीलेन सम्पन्ना, वदञ्ञू वीतमच्छरा।
निच्च मग्ग विसोधेति, सोत्थान सम्परायिक॥
इच्चेते अट्ठधम्मा च यस्सा विज्जन्ति नारिया।
तपि सीलवति आहु, धम्मट्ठ सच्चवादिनि॥
सोळसाकार सम्पन्ना, अट्ठगसुसमागता।
तादिसी सीलवती उपासिका,
उपपज्जति देवलोक मनाप॥

[जो अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है, जो परिजनोका सग्रह करनेवाली होती है, जो पतिकी इच्छाके अनुकूल चलती है, जो कमाए हुए की रक्षा करती है, जो श्रद्धायुक्त होती है, जो सदाचारिणी होती है, जो प्रज्ञावान् होती है तथा जो त्यागशील होती है, वह इस प्रकार नित्य परलोक-पथको शुद्ध करती है।

इस प्रकार जिस स्त्रीमें ये आठ बातें हो, वह धर्म-स्थित सत्यवादी नारी शीलवती कहलाती है।

जिस शीलवती उपासिकामें ये सोलह प्रकारके आठ अगोवाले गुण होते हैं, वह मनापकायिक देव-लोकमें जन्म ग्रहण करती है।]

"भिक्षुओ, जिस स्त्रीमे ये चार बाते होती हैं, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ होती है और उसने इस लोकको प्रसन्न किए होता है। कौन-सी चार बाते? भिक्षुओ, स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है, अपने परिजनोका सग्रह-करनेवाली होती है, स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है तथा कमाए हुएकी रक्षा करनेवाली होती है।

भिक्षुओ, स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक कैसे होती है? जो स्वामीके भीतरके काम समर्थ। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है।

भिक्षुओ, स्त्री अपने परिजनोका सग्रह करनेवाली कैसे होती है? भिक्षुओ, जो स्वामीके घरके आदमी देती है। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री अपने परिजनोका सग्रह करनेवाली होती है।

भिक्षुओ, स्त्री कैसे स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है? भिक्षुओ, जो कुछ पतिकी इच्छाके प्रतिकूल होता है उसे स्त्री अपनी जान वचाने तकके लिए भी नही करती है। भिक्षुओ, स्त्री इस प्रकार स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है।

भिक्षुओ, स्त्री कैसे कमाये हुए की रक्षा करनेवाली होती है? भिक्षुओ, जो कुछ धन, धान्य उसे नष्ट करनेवाली नही होती। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री कमाये हुए की रक्षा करनेवाली होती है। भिक्षुओ, जिस स्त्रीमे ये चार बातें रहती है, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ होती है तथा उसने इस लोकको प्रसन्न किए होता है।

भिक्षुओ, जिस स्त्रीमे ये चार बातें होती है, वह परलोक-विजयके मार्गपर आरूढ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है। कौन-सी चार बातें? भिक्षुओ, स्त्री श्रद्धा-सम्पन्न होती है, शील-सम्पन्न होती है, त्याग-सम्पन्न होती है तथा प्रज्ञा-सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, स्त्री श्रद्धा सम्पन्न कैसे होती है? भिक्षुओ, स्त्री श्रद्धावान् होती है बुद्ध भगवान् है। भिक्षुओ, स्त्री इस प्रकार श्रद्धा-सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, स्त्री शील-सम्पन्न कैसे होती है? भिक्षुओ, स्त्री प्राणी-हिंसासे विरत होती है सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओके सेवनसे विरत होती है।

भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री शील-सम्पन्न होती है। भिक्षुओ, स्त्री त्याग-सम्पन्न कैसे होती है? भिक्षुओ, स्त्री त्याग शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृहत्याग करती है दान देनेवाली। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री त्याग-सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, स्त्री प्रज्ञा-सम्पन्न कैसे होती है?

भिक्षुओ! स्त्री प्रज्ञा-सम्पन्न होती है भिक्षुओ! स्त्री इस प्रकार प्रज्ञा सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह परलोक-विजयके मार्गपर आरूढ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है।

सुसविहितकम्मता, सगहितपरिज्जता।
भत्तु मनाप चरति, सम्भत अनुरक्खति ॥
सद्धासीलेन सम्पन्ना, वदञ्ञू वीतमच्छरा।
निच्च मग्ग विसोधेति, सोत्थान सम्परायिक ॥
इच्चेते अट्ठधम्मा च, यस्सा विज्जन्ति नारिया।
त पि सीलवतिं आहु, धम्मट्ठ, सच्चवादिनिं ॥
सोळसाकार सम्पन्ना, अट्ठगसुसमागता।
तादिसी सीलवती उपासिका।
उपपज्जति देवलोक मनाप ॥

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

६ गौतमी वर्ग

एक समय भगवान् शाक्य (जनपद) मे कपिलवस्तुके न्यग्रोधाराममें विहार करते थे। तब महाप्रजापती गौतमी जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँची। जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठी। एक ओर खडी महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोको भी भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना मिले।"

"गौतमी! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

दूसरी बार भी महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते। अच्छा हो, यदि स्त्रियोको भी भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना मिले।"

"गौतमी! वस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

तीसरी बार भी महाप्रजापती गौतमीने भगवान्‌से निवेदन किया—

"भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोको भी भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होना मिले।"

"गौतमी! वस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

तव महाप्रजापती गौतमी यह सोच कि भगवान् स्त्रियोको तथागत द्वारा उपदिप्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नही देते, दुखी हो, चित्त-क्लेगको प्राप्त हुई और अश्रुमुख रोती हुई, भगवान्‌को प्रणाम कर चली गई।

भगवान् कपिलवस्तुमे इच्छाके अनुसार विहार कर वैशाली की ओर चारिका करनेके लिए निकले। क्रमश चारिका करते-करते वैशाली पहुँचे। उस समय भगवान् वैशालीके महावनमे कूटागराशालामे विहार करते थे।

तव महाप्रजापती गौतमी वाल कटवाकर, कापाय वस्त्र धारण कर, वहुत-सी शाक्य स्त्रियोको साथ ले वैशाली की ओर चल दी। क्रमश वैशालीके महावनमें जहाँ कूटागारगाला थी, वहाँ पहुँची। तव वहाँ महाप्रजापती गौतमी सूजे हुए पाँवोसे, धूल-धूसरित देहसे, दुखी मनसे, अश्रुमुख रोती हुई बरामदेमे बाहर जा खडी हुई।

आयुष्मान् आनन्दने देखा कि महाप्रजापती गौतमी सूजे हुए पाँवोसे, धूल-धूसरित देहसे, दुखी मनसे, अश्रुमुख रोती हुई वरामदेमे बाहर खडी है। देखकर महाप्रजापती गौतमीसे पूछा—गौतमी! क्या कारण है कि तू सूजे हुए पाँवोंसे, धूल-धूसरित देहसे, दुखी मनसे, अश्रु-मुख रोती हुई बरामदेमे खडी है?"

"भन्ते! भगवान् स्त्रियोको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नही देते।"

गौतमी! तो तू थोडी देर यही प्रतीक्षा कर। तव तक मै भगवान्‌से स्त्रियोकी ओरसे तथागतके द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे वे-घर हो प्रव्रजित होनेकी याचना करूँ।"

तव आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्‌को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर वैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से यह निवेदन किया—

"भन्ते! यह महाप्रजापती गौतमी सूजे हुए पाँवोसे, धूल-धूसरित देहसे,

दुखी मनसे, अश्रुमुख रोती हुई, बरामदेमे खडी है। उसका कहना है कि, भगवान् स्त्रियोको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नही देते। भन्ते! अच्छा हो यदि स्त्रियोको भी तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुमार घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिले।'

"आनन्द! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुमार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

दूसरी बार भी तीसरी बार भी आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह निवेदन किया—'भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोको भी तथागत द्वारा उपनिदष्ट धर्मके अनसार घरमे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिले।"

"आनन्द! बम। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

तब आयुष्मान् आनन्दके मनमें आया—भगवान् स्त्रियोको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नही देते। क्यो न मैं एक दूसरे ढगसे भी भगवानसे स्त्रियोकी ओरसे तथागतके द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरमे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी याचना करूँ।

तब आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह निवेदन किया—भन्ते! क्या तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुमार स्त्रियाँ भी, घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित हो स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल अथवा अर्हत्-फल साक्षात् कर सकती है?"

"आनन्द! तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार स्त्रियाँ भी, घरसे-बे-घर हो, प्रव्रजित हो, स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल अथवा अर्हत्-फल साक्षात् कर सकती है।"

"भन्ते! यदि तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार स्त्रियाँ भी, घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित हो, स्रोतापत्ति-फल अर्हत्-फल भी साक्षात् कर सकती है, तो भन्ते! महाप्रजापती गौतमी बहुत उपकार करनेवाली है, भगवान्की मौसी है, अभिभाविका है, पोषण करनेवाली है, दूध देनेवाली है, भगवान्की जननीके शरीर-त्याग करनेपर उसने भगवान्को स्तन-पान कराया है। भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोको भी तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित होनेकी, अनुज्ञा मिले।"

"आनन्द! यदि महाप्रजापती गौतमी आठ गम्भीर शर्ते स्वीकार करे, तो यही उसकी उपसम्पदा (=भिक्षु बनानेका सस्कार) हो—

१. चाहे भिक्षुणी सौ वर्षकी भी उपसम्पन्न हो और चाहे भिक्षु उसी दिन उपसम्पन्न हुआ हो, तो भी भिक्षुणीको ही उसका अभिवादन, प्रत्युपस्थान, हाथ-जोडना आदि योग्य-कर्म करना होगा। यह (पहली) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

२. ऐसे आवास (=निवास स्थल) मे नही रहना होगा, जहाँ रहते हुए किसी भिक्षुके पास जाकर धर्म सुन सकनेकी गुजायश न हो। यह (दूसरी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

३ प्रति आधे-महीनेपर उसे भिक्षु सघसे दो धर्मो (=बातो) की आशा रखनी होगी—उपोसथ-प्रश्नोकी तथा उपदेश सुननेकी। यह (तीसरी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

४ वर्षा-वास कर चुकनेपर भिक्षुणीको भिक्षु-सघ तथा भिक्षुणी-सघ—दोनो सघोमें और देखे, सुने तथा सदिग्ध—तीनो प्रकारके दोषोको लेकर प्रवारणा करनी होगी। यह (चौथी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

५ सघादिसेस नामक गम्भीर अपराध हो जानेपर भिक्षुणीको दोनो सघोमें पक्ष-भरका मानत्व (=प्रायश्चित्त) करना होगा। यह (पाँचवी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

६ दो वर्षा-वास तक विकाल भोजनसे विरत रहनेके सम्बन्धमें छठे शील सहित पाँच-शीलो की सतत अभ्यासिनी भिक्षुणीको दोनो सघोमे उपसम्पदा ग्रहण करनी होगी। यह (छठी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

(७) भिक्षुणीको किसी भी स्थितिमे भिक्षुको गाली आदि नही देनी होगी। यह (सातवी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

८ आजके वादसे भिक्षुणियोका भिक्षुओको कुछ कहनेका द्वार वन्द हुआ; किन्तु भिक्षुओका भिक्षुणियोको कुछ कहनेका द्वार खुला है। यह (आठवी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

"आनन्द! यदि महाप्रजापती गौतमी इन आठ गम्भीर धर्मों (=धर्मों) को स्वीकार करती है तो वह उस की उपसम्पदा हुई।'

तब भगवानसे इन आठ गम्भीर धर्मोंको जान लेनेके अनन्तर आयुष्मान् आनन्द जहाँ महाप्रजापती गौतमी थी, वहाँ पहुँचे। पास जाकर महाप्रजापती गौतमी से बोले—

'गौतमी! यदि तू इन आठ गम्भीर धर्मोंको स्वीकार करे तो यह ही तेरी उपसम्पदा होगी चाहे भिक्षुणी सौ वर्षकी भी उपसम्पन्न हो, और चाहे भिक्षु उसी दिन उपसम्पन्न हुआ हो तो भी भिक्षुणीको ही उसका अभिवादन, प्रत्युत्थान, हाथ जोड़ना आदि योग्य कर्म करना होगा। यह पहली गम्भीर धर्म है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा ..आज के बादसे भिक्षुणियोंका भिक्षुओंको कुछ कहनेका द्वार बन्द हुआ, किन्तु भिक्षुओंका भिक्षुणियोंको कुछ कहनेका द्वार खुला है। यह (आठवीं) गम्भीर धर्म है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा। गौतमी! यदि तू इन आठ गम्भीर-धर्मोंको स्वीकार करे तो यह ही तेरी उपसम्पदा होगी।

"भन्ते आनन्द! जैसे कोई शौकीन स्त्री या अल्पवयस्क वा तरुण पुरुष सिरसे स्नान करनेके अनन्तर उत्पल-माला, या जूही-माला अथवा मोतियोंकी मालाको दोनों हाथोंसे स्वीकार कर उसे सिर पर धारण करे, उसी प्रकार आनन्द! मैं इन आठ गम्भीर धर्मोंको स्वीकार करती हूँ—जीवन भर पालन करनेके लिए।

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को अभिवादनकर, एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह कहा—'भन्ते! महाप्रजापती गौतमीने आठो गम्भीर धर्मोंको जीवन भर पालन करनेके लिए स्वीकार कर लिया है।

"आनन्द! यदि स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बेघर हो प्रव्रजित होनेकी अनुमति न मिली होती, तो हे आनन्द! यह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी होता, एक हजार वर्ष तक यह सद्धर्म स्थिर रहता। लेकिन क्योंकि आनन्द! अब स्त्रियाँ तथागतके द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय (=बुद्ध)-शासन में घरसे बेघर हो प्रव्रजित हो गई, सो इसीलिए अब यह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी नहीं होगा। अब यह सद्धर्म केवल पाँच सौ वर्ष ही स्थिर रहेगा।

'आनन्द! जैसे कि बहुतसे कुल—जिनमें पुरुष कम हों और स्त्रियाँ अधिक हों—आसानीसे लुटेरे चोरोंके लिए, घरमें सेंध लगाकर चोरी करनेवाले कुम्भ चोरों

के लिए सहज होता है, उसी प्रकार जिस प्रकार धर्म-विनय(= धार्मिक)-सगठनमे स्त्रियोको घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिल जाती है, वह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी नही रहता।

"आनन्द! जैसे किसी लहलहाते धानके खेतको सफेदा नामका रोग लग जाता है, तो वह धानका खेत चिरस्थायी नही होता, उसी प्रकार आनन्द! जिस धर्म-विनयमे स्त्रियोको घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिल जाती है, वह श्रेष्ठ -जीवन चिरस्थायी नही होता।

"आनन्द! जैसे किसी लहलहाते ईखके खेतको लाल-रोग नामका रोग लग जाता है, तो वह ईखका खेत चिर-स्थायी नही होता, उसी प्रकार आनन्द! जिस धर्म-विनयमे स्त्रियोको घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिल जाती है, वह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी नही होता।

"आनन्द! जैसे कोई आदमी पानीकी रोकथामके लिए पहलेसे ही किसी वडे तालावके गिर्द वाँध वाँध दे, इसी प्रकार आनन्द! मैंने पहलेसे ही भिक्षुणियोके द्वारा जीवन भर पालन किए जानेके लिए आठ गम्भीर धर्म(= नियम) वना दिए।

एक समय भगवान वैशालीके महावनकी कूटागार शालामे विहार करते थे। तव आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्को यह कहा—"भन्ते! कितने गुण होनेपर किसी भिक्षुको भिक्षुणियोको उपदेश देनेकी जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए।"

"आनन्द! किसी भिक्षुमें आठ गुण होनेपर भिक्षुणियोको उपदेश देनेकी जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए। कौनसे आठ? आनन्द, भिक्षु शीलवान होता है . शिक्षापदोको सम्यक् प्रकासे सीखनेवाला, वहुश्रुत होता है (सम्यक्) दृष्टिसे युक्त, उसे भिक्षु प्रातिमोक्ष तथा भिक्षुणी प्रातिमोक्ष दोनो सम्यक् रीतिसे ज्ञात होते है, सूत्र तथा व्यञ्जन की दृष्टिसे भली प्रकार विभक्त भली प्रकार सुप्रवर्तित, भली प्रकार सुविनिश्चित कल्याणी-वाणी वोलनेवाला होता है, हितकर वाणी बोलने वाला, विश्वस्त, स्पष्ट, अर्थ-बोधक मधुर वाणीसे युक्त, भिक्षुणी सघको धार्मिक चर्चा द्वारा विषय स्पष्ट करनेकी, धर्माचरणमें प्रेरित करनेकी, उत्साहित करनेकी, प्रमुदित करनेकी सामर्थ्य रखता है, वहुत करके भिक्षुणियोका प्रिय होता है, उन्हे अच्छा लगनेवाला, जिसने भगवान्के उपदेशके अनुसार प्रव्रज्या ग्रहण की हो, ऐसी किसी काषाय वस्त्रधारिणीके शरीर-स्पर्शसे मुक्त रहा हो, उसे उपसम्पन्न हुए बीस वर्ष वा

वीस वर्षसे अधिक हो गए हो। आनन्द! जिस किसी भिक्षुमे ये आठ गुण हो उस पर भिक्षुणियोको उपदेश देनेकी जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए।

एक समय भगवान् वैशालीके महावनकी कूटागार शालामें विहार करते थे। तब महाप्रजापती गौतमी जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँची। पास जाकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर खडी हुई। एक ओर खडी हुई महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते भगवान्! अच्छा हो आप सक्षेपमें मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें, जिसे सुनकर मै एकान्तसेवी हो, अप्रमादी रह, प्रयत्न करती हुई विहार करूँ।"

"गौतमी! जिन धर्मों (=बातो) को तू जाने कि ये रागको बढानेवाली है, वैराग्यको नही, ये ससारसे सयोग बढानेवाले हैं, वि-सयोग बढानेवाले नही!, महेच्छता के लिए है, अल्पेच्छताके लिए नही, असन्तोष बढानेवाली है, सन्तोष बढानेवाली नही, भीड बढानेवाली है, एकान्त जीवन नही, आलस्य बढानेवाली हैं, अप्रमाद नही, जीवन-यापन दूभर बनानीवाली हैं, सुभर नही—तो हे गौतमी! तू यह निश्चत रूपसे समझ ले कि ये बातें धर्म नही है, विनय नही है, शास्ता (=बुद्ध) का अनुशासन नही है।

"गौतमी! जिन धर्मो (=बातो) को जाने कि ये वैराग्य को बढाने वाली है, रागको नही, ये (ससारसे) विसयोग बढाने वाली हैं, सयोग नही, ये (ससारका) सग्रह घटानेवाली हैं, बढाने वाली नही, अल्पेच्छताके लिये है, महेच्छताके लिये नही, सन्तोष बढाने वाली है, असन्तोष बढानेवाली नही; एकान्त-जीवन बढाने वाली है, भीड बढाने वाली नही, अप्रमाद बढाने वाली है, आलस्य बढाने वाली नही, जीवन-यापन सुभर बनानेवाली है, दूभर नही, तो हे गौतमी! तू यह निश्चित रूप से समझ ले कि ये बातें धर्म है, विनय है, शास्ता (=बुद्ध) का अनुशासन हैं।

एक समय भगवान कोळिय (प्रदेश) में कक्करपत्त नामक कोळिय-निगममें विहार करते थे। तब कोळिय-पुत्र दीर्घजाणु जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। पास आकर, अभिवादन कर, एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए कोळिय-पुत्र दीर्घजाणुने भगवान् से निवेदन किया—"भन्ते! हम गृहस्थ है, काम-भोगी है, पुत्र (—स्त्री) की बाधाओ सहित (घरमे) रहते है, काशीके चन्दनका लेप करते है, माला गन्ध-लेपका धारण करते है, चाँदी-सोनेको उपयोग में लाते है। भन्ते भगवान्! हमको ऐसे धर्मका उपदेश करें जो हमारे लिए इस लोकमें हितकर हो, सुखकर हो, परलोकमें हितकर हो, सुखकर हो।"

"हे व्याघ्रपाद! ये चार धर्म ऐसे है जो कुल-पुत्रके इहलौकिक हित तथा

इहलौकिक सुखका कारण होते हैं। कौनसे चार? उत्थान-सम्पदा, आरक्षा-सम्पदा, कल्याण-मित्रता तथा सम-जीविता।

व्याघ्रपाद! उत्थान-सम्पदा किसे कहते है? व्याघ्रपाद! कोई कुल-पुत्र किसी भी जीविकाके साधनका उपयोग करने वाला हो—चाहे कृषि हो, चाहे वाणिज्य हो, चाहे गो-पालन हो, चाहे धनुर्विद्या हो, चाहे राजकीय चाकरी हो, अथवा कोई शिल्प हो— उसमे वह दक्ष होता है, आलस्य रहित होता है, उसकी मीमासा करनेमे, उसका उपाय करनेमे सलग्न रहता है, उसे करनेमें, उसका सविधान करनेमे समर्थ होता है। व्याघ्रपाद! यही उत्थान-सम्पदा है।

व्याघ्रपाद! आरक्षा–सम्पदा किसे कहते है? व्याघ्रपाद! एक कुल-पुत्रने उत्थान-वीर्यसे, वाहुवलका उपयोग करके, पसीना वहाकर, धर्मानुसार ऐश्वर्यकी प्राप्ति की होती है। वह इसकी सावधानी वरतता है कि उसके ऐश्वर्य को न राजागण छीन कर ले जायें, न चोर चुरा कर ले जायें, न आग जलाये, न पानी वहाए तथा इस पर अप्रिय उत्तराधिकारी भी अधिकार न जमा ले। व्याघ्रपाद! यह आरक्षा सम्पदा है।

व्याघ्रपाद! कल्याण-मित्रता किसे कहते है? व्याघ्रपाद! किसी भी गाँव या निगममें कोई कुल-पुत्र रहता है, और उसमें जो गृहपति वा गृहपति-पुत्र ऐसे होते है जो चाहे अल्प-वयस्क हो और चाहे अधिक आयुके हो, किन्तु शील-वृद्ध होते है—श्रद्धावान्, सदाचारी, त्यागी, प्रज्ञावान्। वह उनके साथ उठता-बैठता है, वातचीत करता है, चर्चा करता है। जैसे वे श्रद्धावान् होते है, उनसे श्रद्धाका पाठ सीखता है . जैसे वे शीलवान् होते है, उनसे शीलका पाठ सीखता है . जैसे वे त्यागी होते है, उनसे त्यागका पाठ सीखता है जैसे वे प्रज्ञावान् होते है, उनसे प्रज्ञाका पाठ सीखता है। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। व्याघ्रपाद! उसे कल्याण-मित्रता कहते है।

व्याघ्रपाद! सम-जीविता किसे कहते है? व्याघ्रपाद! एक कुल-पुत्र अपनी भोग-सम्पत्तिकी आय और व्ययकी जानकारीके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर, ऐसे मेरी आय व्यय से अधिक रहेगी, मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। व्याघ्रपाद! जैसे कोई तुलाधार (=तराजू वाला) या तुलाधारका शिष्य तुला हाथमे पकडता है तो जानता है कि इतनी कमी है, या इतनी अधिकता है। इसी प्रकार व्याघ्रपाद्! एक कुल-पुत्र अपनी (भोग-सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न वहुत ऊँचा स्तर, न वहुत नीचा-स्तर, ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे

अधिक न होगा। व्याघ्रपाद! यदि यह कुल-पुत्र अल्पायु होता हुआ भी जीवनका स्तर ऊँचा रखता है, तो लोग उस के बारेमें कहते हैं कि यह कुल-पुत्र गूलर खानेके समान ऐश्वर्यका भोग करता है अर्थात् खानेसे भी अधिक बिखेरता है। व्याघ्रपाद! यदि यह कुल-पुत्र अधिक आय वाला होता हुआ भी जीवनका स्तर बहुत नीचा रखता है, तो लोग उसके बारेमें कहते हैं कि यह अनाथ-मरण मरनेवाला है। लेकिन व्याघ्रपाद! जब एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा-स्तर, न बहुत नीचा-स्तर। ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। व्याघ्रपाद! इसे सम-जीविता कहते हैं।

व्याघ्रपाद! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके जाने (=नाश) के चार रास्ते हैं—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसंगतिमें रहना। जैसे किसी बड़े तालाबमें पानी आनेके चार रास्ते हों और चार पानी जानेके रास्ते हों। कोई आदमी पानी आनेके रास्तोंको बन्द कर दे, किन्तु पानी जानेके रास्तोंको खोल दे और वर्षा भली प्रकार न हो, तो हे व्याघ्रपाद! उस बड़े तालाबकी हानि की ही उम्मीद रखनी चाहिए, वृद्धिकी नहीं। इसी तरह व्याघ्रपाद! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके जाने (=नाश) के चार रास्ते हैं—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसंगतिमें रहना।

व्याघ्रपाद! इसी प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते हैं—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी संगतिमें रहना। व्याघ्रपाद! जैसे किसी बड़े तालाबमें चार पानी आनेके रास्ते हों और चार पानी जानेके रास्ते हों। कोई आदमी पानी जानेके रास्तेको बन्द कर दे, पानी आनेके रास्तेको खोल दे, और वर्षा भली प्रकार हो तो हे व्याघ्रपाद! उसे बड़े तालाबकी वृद्धि की ही उम्मीद रखनी चाहिए, हानि की नहीं। इसी तरह व्याघ्रपाद! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते हैं—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी संगतिमें रहना। हे व्याघ्रपाद! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्रके इहलौकिक हित तथा इहलौकिक सुखके लिए होते हैं।

व्याघ्रपाद! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्रके चार पारलौकिक हित तथा पारलौकिक सुखके लिए होते हैं। कौनसे चार? श्रद्धा-सम्पदा, शील-सम्पदा, त्याग-सम्पदा तथा प्रज्ञा-सम्पदा। व्याघ्रपाद! श्रद्धा-सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! कुल-पुत्र श्रद्धावान् होता है, वह तथागत की बोधि (=ज्ञान प्राप्ति) के प्रति श्रद्धावान् होता

है—'वे भगवान् अर्हत् है   देव-मनुष्योके सारथी बुद्ध भगवान् है। व्याघ्रपाद ! इसे श्रद्धा-सम्पदा कहते है।

"व्याघ्रपाद ! शील-सम्पदा किसे कहते है ? व्याघ्रपाद ! कुल-पुत्र प्राणी-हिंसासे विरत होता है   सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओके सेवनसे विरत होता है। व्याघ्रपाद ! इसे शील-सम्पदा कहते है।

"व्याघ्रपाद ! त्याग-सम्पदा किसे कहते है ? व्याघ्रपाद ! कुल-पुत्र मल-मात्सर्य रहित चित्तसे गृह-वास करता है, त्यागी, खुले हाथ वाला, दानशील, याचकको देनेवाला, बाँटनेवाला। व्याघ्रपाद। इसे त्याग-सम्पदा कहते है।

"व्याघ्रपाद ! प्रज्ञा-सम्पदा किसे कहते है ? व्याघ्रपाद ! कुल-पुत्र प्रज्ञावान् होता है, उदयास्त सम्वन्धी, आर्य, बीधनेवाली, सम्यक् रूपसे दु खका क्षय करानेवाली प्रज्ञा से युक्त होता है। व्याघ्रपाद ! यह प्रज्ञा-सम्पदा है। व्याघ्रपाद ! ये चारो धर्म कुल-पुत्रके पारलौकिक हित तथा पारलौकिक सुखका कारण होते है।

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
सम कप्पेति जीविक, सम्भत अनुरक्खति ॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्च मग्ग विसोधेति, सोत्थान सम्परायिक ॥
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा ॥
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेत गहट्ठान, चागो पुञ्ञ पवड्ढति ॥

[काम करनेमे उत्साहयुक्त, अप्रमादी व्यवस्थापक, सम-जीवन व्यतीत करनेवाला तथा अर्जित सम्पत्ति का अनुरक्षण करनेवाला। श्रद्धावान्, सदाचारी, प्रज्ञावान् तथा त्यागी होकर वह नित्य पारलौकिक मार्गको विशुद्ध करता है। इस प्रकार तथागत द्वारा, घरमे रहनेवाले श्रद्धावान् व्यक्तिके इहलौकिक तथा पारलौकिक सुखके लिए आठ धर्म वताये गये है। इस प्रकार गृहस्थोका त्याग उनकी पुण्य-बुद्धि का कारण होता है।]

तव उज्जय व्राह्मण भगवान्के पास पहुँचा। पास जाकर भगवान्का कुशल-क्षेम पूछा, कुशल क्षेमका वार्तालाप समाप्त हो जाने पर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उज्जय व्राह्मणने भगवान्को यह कहा—भन्ते ! हम प्रवास पर निकलना

चाहते हैं। आप भगवान् गौतम हमें ऐसे धर्मोका उपदेश दें जो हमारे इहलौकिक हित-सुख तथा पारलौकिक हित-सुखके लिये हो।"

"हे ब्राह्मण! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्र के इहलौकिक हित-सुखके लिये होते हैं। कौनसे चार? उत्थान-सम्पदा, आरक्षा-सम्पदा, कल्याण-मित्रता तथा सम-जीविता। ब्राह्मण! उत्थान-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! कोई कुल-पुत्र किसी भी जीविकाके साधनका उपयोग करनेवाला हो—चाहे कृषि हो, चाहे वाणिज्य हो, चाहे गोपालन हो, चाहे धनुर्विद्या हो, चाहे राजकीय चाकरी हो, अथवा कोई शिल्प हो—उसमें वह दक्ष होता है, आलस्य रहित होता है, , उसकी मीमांसा करनेमें, उसका उपाय करनेमें सलग्न होता है, उसे करनेमें, उसका सविधान करनेमें समर्थ होता है। ब्राह्मण! यही उत्थान-सम्पदा है।

ब्राह्मण! आरक्षा-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! एक कुल-पुत्रने उत्थान-वीर्यसे बाहुबलका उपयोग करके, पसीना बहाकर, धर्मानुसार ऐश्वर्यकी प्राप्ति की होती है। वह इसकी सावधानी बरतता है कि उसके ऐश्वर्यको न राजागण छीनकर ले जाये, न चोर चुराकर ले जाये, न आग जलाये, न पानी बहाये तथा उस पर अप्रिय उत्तराधिकारी भी अधिकार न जमा ले। ब्राह्मण! यह आरक्षा-सम्पदा है।

ब्राह्मण! कल्याण-मित्रता किसे कहते हैं? ब्राह्मण! किसी भी गाँव या निगममें कोई कुल-पुत्र रहता है, और उसमें जो गृहपति या गृहपति-पुत्र ऐसे होते हैं जो चाहे अल्प वयस्क हो और चाहे अधिक आयुके हो, किन्तु शील-वृद्ध होते हैं——श्रद्धावान् सदाचारी, त्यागी, प्रज्ञावान्। वह उनके साथ उठता-बैठता है। बात-चीत करता है, चर्चा करता है। जैसे वे श्रद्धावान् होते हैं उनसे श्रद्धाका पाठ सीखता है जैसे वे शीलवान् होते हैं, उनसे शीलका पाठ सीखता है जैसे वे त्यागी होते हैं, उनसे त्यागका पाठ सीखता है जैसे वे प्रज्ञावान् होते हैं, उनसे प्रज्ञाका पाठ सीखता है। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। ब्राह्मण इसे कल्याण-मित्रता कहते हैं।

ब्राह्मण! सम-जीविता किसे कहते हैं? ब्राह्मण! एक कुल-पुत्र अपनी भोग (सम्पत्ति-) की आय और व्ययकी जानकारीके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर, ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। ब्राह्मण! जैसे कोई तुलाधार (=तराजू वाला) या तुलाधारका शिष्य तुला हाथमें पकड़ता है, तो जानता है कि इतनी कमी है या

इतनी अधिकता है। इसी प्रकार ब्राह्मण! एक कुल-पुत्र अपनी भोग (सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न वहुत ऊँचा-स्तर, न बहुत नीचा स्तर, ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक न होगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। ब्राह्मण! यदि यह कुल-पुत्र अल्पायु होता हुआ भी जीवनका स्तर ऊँचा रखता है तो लोग उसके बारेमे कहते है कि यह कुलपुत्र गूलर खानेके समान ऐश्वर्य का भोग करता है अर्थात् खानेसे भी अधिक विखेरता है। ब्राह्मण! यदि यह कुल-पुत्र अधिक आय वाला होता हुआ भी जीवनका स्तर बहुत नीचा रखता है तो लोग उसके बारेमे कहते है कि यह, अनाथ-मरण मरने वाला है। लेकिन ब्राह्मण! जब एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न वहुत ऊँचा स्तर, न वहुत नीचा स्तर—ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक न रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। ब्राह्मण! इसे सम-जीविता कहते है।

ब्राह्मण! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोके जाने (=नाश) के चार रास्ते है—रण्डीवाज होना, शरावी होना, जुआरी होना, कुसगतिमें रहना। ब्राह्मण! जैसे किसी वडे तालावमे पानी आनेके चार रास्ते हो और चार पानी जानेके रास्ते हो। कोई आदमी पानी आनेके रास्तो को वद कर दे, किन्तु पानी जानेके रास्तोको खोल दे और वर्षा भली प्रकार न हो, तो हे ब्राह्मण! उसे बडे तालाव की हानि की ही उम्मीद रखनी चाहिये, वृद्धिकी नही। इसी तरह ब्राह्मण! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोके जाने (=नाश) के चार रास्ते है—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसगतिमें रहना

ब्राह्मण! इसी प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते है—रण्डीवाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी सगतिमे रहना। ब्राह्मण जैसे किसी बडे तालाबमें पानी आनेके चार रास्ते हो और पानी जानेके चार रास्ते हो। कोई आदमी पानी जानेके रास्तोको बद कर दे, पानी आनेके रास्तोको खोल दे, और वर्षा भली प्रकार हो, तो हे ब्राह्मण! उसे वडे तालाब की वृद्धि की ही उम्मीद रखनी चाहिये, हानि की नही। इसी तरह ब्राह्मण! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोके आगमनके चार रास्ते है—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी सगतिमें रहना। हे ब्राह्मण! ये चार धर्म ऐसे है जो कुल-पुत्र के इहलौकिक हित तथा इहलौकिक सुखके लिये होते है।

ब्राह्मण! ये चार धर्म ऐसे है जो कुल-पुत्रके पारलौकिक हित तथा पार-

लौकिक सुखके लिये होते है। कौनसे चार ? श्रद्धा-सम्पदा, शील-सम्पदा, त्याग-सम्पदा तथा प्रज्ञा-सम्पदा। ब्राह्मण ! श्रद्धा-सम्पदा किसे कहते है ? ब्राह्मण ! कुलपुत्र श्रद्धावान् होता है, वह तथागतकी बोधि (ज्ञान-प्राप्ति) के प्रति श्रद्धावान् होता है— वे भगवान् अर्हत है देव मनुष्योके सारथी बुद्ध भगवान् है। ब्राह्मण ! इसे श्रद्धा-सम्पदा कहते है।

ब्राह्मण ! शील-सम्पदा किसे कहते हैं ? ब्राह्मण ! कुल-पुत्र प्राणी-हिंसा से विरत होता है सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओके सेवनसे विरत होता है। ब्राह्मण ! इसे शील-सम्पदा कहते है।

ब्राह्मण ! त्याग-सम्पदा किसे कहते हैं ? ब्राह्मण ! कुल-पुत्र मल-मात्सर्य रहित चित्त से गृहवास करता है, त्यागी, खुले हाथवाला, दान-शील, याचकोको देनेवाला, बाँटनेवाला। ब्राह्मण ! इसे त्याग-सम्पदा कहते है।

ब्राह्मण ! प्रज्ञा-सम्पदा किसे कहते हैं ? ब्राह्मण ! कुल-पुत्र प्रज्ञावान् होता है, उदयास्त सम्बन्धी, आर्य, बीधने वाली, सम्यक् रूपसे दु खका क्षय कराने वाली प्रज्ञासे युक्त होता है। ब्राह्मण ! यह प्रज्ञा-सम्पदा है ब्राह्मण ! ये चारो धर्म कुल-पुत्रके पारलौकिक हित तथा पारलौकिक सुखका कारण होते है।

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा
सम कप्पेति जीविक, सम्भत अनुरक्खति ॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्च मग्ग विसोधेति, सोत्थान सम्परायिक
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स धरमेसिनो ॥
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा।
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्पराय सुखाय च।
एवमेत गहट्ठान, चागो पञ्ञ पवड्ढति ॥

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

भिक्षुओ "भय" शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ 'दु ख' शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'रोग' शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'फोडा' (= गण्डो) शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'शल्य' शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ 'आसक्ति' (= सग) शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'पक' शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'गर्भ' शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'भय' शब्द काम-भोगोका पर्याय क्यो है ? क्योकि

जो कोई काम-रागमे अनुरक्त होता है, छन्द रागसे अनुबन्ध है, वह न इहलोकमें 'भय' से मुक्त होता है और न परलोकमे भयसे मुक्त होता है, इसलिए 'भय' शब्द काम-भोगोका पर्याय है। भिक्षुओ, 'दु ख' शब्द   भिक्षुओ, 'रोग' शब्द .   , भिक्षुओ, 'फोडा' (= गण्डो) शब्द   , भिक्षुओ 'शल्य' शब्द   , भिक्षुओ, आसक्ति (= सग) शब्द   ., भिक्षुओ, 'पंक' शब्द   , भिक्षुओ, 'गर्भ' शब्द काम-भागोका पर्याय क्यो है? क्योकि जो कोई काम-रागमे अनुरक्त होता है, छन्द-रागसे अनुबन्ध है, वह न इहलोकमे 'गर्भ' से मुक्त होता है और न पर-लोकमे भयसे मुक्त होता है।

भय दुक्ख च रोगो च, गण्डो सल्ल च सगो च।
पको गब्भो च उभय, एते कामा पवुच्चन्ति ॥
यत्थ सत्तो पुथुज्जनो, ओतिण्णो सातरूपेन।
पुन गब्भाय गच्छति ॥
यतो च भिक्खु आतापी, सम्पजञ्ञ न रिच्चति।
सो इम पलिपथ दुग्ग, अतिक्कम्म तथाविधो।
पज जातिजरूपेत, फन्दमान अवेक्खति ॥

[भय, दुख, रोग, गण्ड, शल्य, सग, पक तथा गर्भ—ये शब्द 'काम-भोग' शब्दके ही पर्याय है। इनमे आसक्त हुआ पृथक जन, इनके 'स्वाद' मे उतरा हुआ पृथक जन, फिर-फिर 'गर्भ' को प्राप्त होता है। लेकिन जो भिक्षु प्रयत्नवान होता है, जो अपनी जागरूकताको नही छोडता, वह इस दुर्गमनीय-बाधाको लाँघ जन्म-मरणके चक्करमे पडी, तडपती जनता (= प्रजा) को देखता है।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते है, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, दक्षिणार्ह होता है, हाथ जोडकर अभिवादन करने योग्य होता है, लोगोके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे आठ गुण? भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है   शिक्षा पदोका सम्यक् अभ्यास करता है, बहुश्रुत होता है   बीधनेवाली (सम्यक्-) दृष्टिसे युक्त, सत्सगतिमें उठने-बैठने वाला होता है, कल्याण-मित्रो वाला, सम्यक्-दृष्टि वाला होता है, सम्यक्-दर्शनसे समन्वित, चारो, इसी शरीरमे सुखद, चैतसिक ध्यानोको अनायास ही, सहज ही, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला होता है, नाना प्रकारके पूर्व-जन्मोका अनुस्मरण करता है, जैसे एक जन्म, दो जन्म   इस प्रकार आकार और उद्देश्य सहित अनेक पूर्व-जन्मोका अनुस्मरण करता है, लोकोत्तर दिव्य विशुद्ध चक्षुसे कर्मानुसार नाना योनियोको

प्राप्त प्राणियोको जानता है, आस्रवोका क्षय कर . साक्षात् कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते हैं, वह आदर करने योग्य होता है ..लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते है, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, दक्षिणार्ह होता है, हाथ जोडकर अभिवादन करने योग्य होता है, लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे आठ गुण? भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है . शिक्षापदोका सम्यक् अभ्यास करता है, वहुश्रुत होता है . . वीधने वाली (सम्यक्—) दृष्टिसे युक्त, वीर्य करने वाला होता है, शक्तिशाली, दृढ पराक्रमी, कुशल-धर्मोंका वहन करनेवाला, एकान्त जगलमें रहनेवाला होता है, राग-द्वेष (=आसक्ति-विरक्ति) दोनोको सहन करनेवाला होता है, उत्पन्न विरक्तिसे पराभूत नही होता, भय-भैरवको सहन करनेवाला होता है, उत्पन्न भय-भैरवको पराभूत कर विचरता है, चारो, इसी शरीरमें सुखद, चैतसिक ध्यानोको अनायास ही, सहज ही प्रचुर मात्रामे प्राप्त करनेवाला होता है, आस्रवोका क्षय कर .साक्षात् कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते हैं, वह आदर करने योग्य होता है लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, ये आठ आदमी आदर करने योग्य होते है, सत्कार करने योग्य होते हैं, दक्षिणार्ह होते है, हाथ जोडकर अभिवादन करने योग्य होते है, लोगोके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होते है। कौनसे आठ? स्रोतापन्न, सोतापन्न-फलको साक्षात् करनेमें लगा हुआ, सकृदागामि, सकृदागामि फलको साक्षात् करनेमे लगा हुआ, अनागामि, अनागामि-फलको साक्षात् करनेमें लगा हुआ, अर्हत, अर्हत्वको साक्षात् करनेमें लगा हुआ। भिक्षुओ, ये आठ आदमी आदर करने योग्य होते है, लोगोके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होते हैं।

चत्तारो च पटिपन्ना, चत्तारो च फले ठिता।
एस सघो उजुभूतो, पञ्ञासील समाहितो॥
यजमानान मनुस्सान, पुञ्ञपेक्खान पाणिन।
करोत ओपधिक पुञ्ञ, सघे दिन्न महप्फल॥

[स्रोतापत्ति-मार्ग आदि पर चलनेवाले चार प्रकारके व्यक्ति तथा स्रोतापत्ति-फल-प्राप्त आदि चार प्रकारके व्यक्ति—ये प्रज्ञा तथा शीलसे युक्त, ऋजु-मार्गी सघ है। जो पुण्य की अपेक्षा करनेवाले प्राणी है, जो पुण्य-क्षेत्रमें यज्ञ करने

(=बीज बोने) के इच्छुक है, वे जन्मदायक (=ओपधिक) पुण्य कर्मको करते है। सघको दान देनेका महान फल होता है।]

भिक्षुओ, ये आठ आदमी आदर करने योग्य है लोगोके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। कौनसे आठ ? स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात् करनेमे लगा हुआ . अर्हत्, अर्हत्वको साक्षात् करनेमें लगा हुआ। भिक्षुओ ये आठ आदमी आदर करने योग्य है लोगोके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

चत्तारो च पटिपन्ना, चत्तारो च फले ठिता।
एस सघो समुकट्ठो, सत्तान अट्ठ पुग्गला ॥
यजमानान मनुस्सान, पुञ्ञपेक्खान पाणिन।
करोत ओपधिक पुञ्ञ, एत्थ दिन्न महप्फल ॥

[स्रोतापत्ति-मार्ग आदि पर चलनेवाले तथा स्रोतापत्ति फल प्राप्त आदि आठ प्रकारके व्यक्तियोका समुत्कृष्ट सघ है। जो पुण्यकी अपेक्षा करनेवाले प्राणी है पुण्य कर्मको करते है। सघको दान देनेका महान फल होता है।]

(७) भूमिचाल वर्ग

भिक्षुओ, ससारमे आठ तरहके लोग विद्यमान है। कौनसे आठ ? भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी वस्तुको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेके वावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। उस अप्राप्तिके कारण, वह चिन्तित होता है, दु खी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, वेहोश तक हो जाता है। भिक्षुओ, इसे कहते है—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नही मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्वन्धमे प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है, उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस लाभके कारण मदको, प्रमादको प्राप्त होता है। भिक्षुओ, इसे कहते है—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न

करता-है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्न-शील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है, उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। उस अप्राप्तिके कारण वह चिन्तित होता है, दुखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, वेहोश तक हो जाता है। भिक्षुओ, इसे कहते है—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिए न उठता है, न प्रयत्न करना है और न कोशिश करता है। उसे वह लाभ' नही मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके वावजूद (वह वस्तु) मिल जाती है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। भिक्षुओ, इसे कहते है—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। किन्तु वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को, प्राप्त होता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमे किसी चीजको प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेके वावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। उस अप्राप्तिके कारण, न चिन्तित होता है, न दुखी होता है न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है और न वेहोश होता है। भिक्षुओ, इसे कहते है—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है, उसे वह 'लाभ' नही मिलता है। वह न चिन्तित होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें किसी चीजको प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है।

वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है, उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करनेसे, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस 'लाभ' के कारण 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' हो जाता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। वह उस अप्राप्तिके कारण न चिन्तित होता है, न दुखी होता है, न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है, न बेहोश होता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिए न उठता है, न प्रयत्न करता है न कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नही होता। वह न चिन्तित होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है , न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह वस्तु) मिल जाती है। उस 'लाभ' से वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु 'लाभ' की इच्छा करता है। किन्तु, वह न उठता है, न प्रयत्न करता है और न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता है। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।' भिक्षुओ, ससारमे ये आठ तरहके लोग विद्यमान हैं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये छह बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, और दूसरोका भी हित करनेमे समर्थ होता है। कौन-सी छह ?

भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोंको धारणा करने वाला होता है, धारण किए हुए धर्मोके अर्थपर विचार करने-वाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला होता है, हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने-

वाला होता है, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है,। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह् बातें होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये पाँच बाते होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, तथा दूसरोका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी पाँच बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझने वाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारणा करने-वाला होता है, धारण किए हुए धर्मोके अर्थपर विचार करने वाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला होता है, हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला होता है, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये पाँच बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, किन्तु दूसरे का हित करनेमें समर्थ नही होता। कौन-सी चार बातें ? भिक्षुओ भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोको धारण करने वाला होता है, धारण किए हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, किन्तु हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला नही होता, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला प्रसन्न करनेवाला नही होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, किन्तु दूसरोका हित करनेमें समर्थ नही होता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बाते होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नही। कौन-सी चार बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला होता है, किन्तु धारण किए हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला नही होता, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला नही होता, हितकर प्रिय अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नही।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये तीन बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, दूसरोका नही। कौनसी तीन बातें? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करने वाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला नही होता, अपने साथियोको (रास्ता) दिखाने वाला, प्रेरित करने वाला, उत्साहित करने वाला तथा प्रसन्न करने वाला नही होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये तीन बातें होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, दूसरोका नही।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बाते होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें समर्थ नही होता। कौन सी तीन बाते?

भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझने वाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करने वाला होता है, धारण किये हुए धर्मोके अर्थ पर विचार करने-वाला नही होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तद्नुसार आचरण करने वाला नही होता, हितकर, प्रिय अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बाते होती हैं, वह दूसरोका हित करनेमे समर्थ होता है, अपना नही।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये दो बातें होती है वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमे समर्थ नही होता। कौनसी दो? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करने वाला नही होता, धारण किये हुए धर्मोके अर्थ पर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता हैं, हितकर, प्रिय - अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला नही होता, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला प्रसन्न करनेवाला नही होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमे समर्थ नही होता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बाते होती हैं, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नही। कौनसी दो बातें? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मों को क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला नही होता,

धारण किए हुए धर्मोके अर्थ पर विचार करने वाला नही होता, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला नही होता, हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, वुद्धिसगत, अर्थ-बोधक वाणी वोलनेवाला होता है, अपने साथियो को (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती है, वह दूसरोका हित करनेमे समर्थ होता है, अपना हित करनेमे नही।

एक भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ गया एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने भगवान्से निवेदन किया —"भन्ते! अच्छा हो यदि भगवान मुझे सक्षिप्त रूपमें ऐसा धर्मोपदेश करे कि मैं एकान्त-सेवी हो, अप्रमादी हो, प्रयत्न करता हुआ विहार करूँ।"

"इसी प्रकार (=तेरी ही तरह) कुछ मूर्ख मेरा पीछा नही छोडते। धर्मोपदेश किये जाने पर भी मेरे ही पीछे लगे रहते है।"

"भगवान्! सक्षेपमें धर्मोपदेश दें। सुगत! सक्षेपमे धर्मोपदेश दे। सम्भव है मैं भगवान् के कथनके अर्थको समझ लूं। सम्भव है मै भगवानके धर्मका उत्तराधिकारी वन सकूं।"

"तो भिक्षु! यह सीखना चाहिये कि मेरा चित्त स्थिर रहेगा, सुस्थिर रहेगा। अकुशल पाप-धर्म मेरे चित्तको विचलित न करेंगे।' भिक्षु! यही शिक्षा तुझे ग्रहण करनी चाहिये।"

"भिक्षु! जव तेरा चित्त स्थिर हो जाय, सम्यक् रूपसे स्थिर हो जाय, जब अकुशल पाप-धर्म तेरे चित्तको विचलित न करें, तो हे भिक्षु तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि मै मैत्री-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका अभ्यास करूँगा, बढाऊँगा, अधिकाधिक चालू करूँगा, वास्तविक स्वरूप दूंगा, अनुष्ठान करूँगा, भली प्रकार परिचित होऊँगा तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ करूँगा। भिक्षुओ, इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।'

"भिक्षु! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तव हे भिक्षु! तू इस समाधिको स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (=भावना) कर सकेगा, अ-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, अवितर्क अविचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-रहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, सात (=रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा-सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि 'मैं' करुणा-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका ... मुदिता-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका ... उपेक्षा-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका अभ्यास करूँगा, बढाऊँगा, अधिकाधिक चालू करूँगा। वास्तविकत रूप दूँगा, अनुष्ठान करूँगा, भली प्रकार परिचित होऊँगा तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ करूँगा। भिक्षु ! इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तू इस समाधिका स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (= भावना) कर सकेगा, अवितर्क-सविचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, अ-वितर्क अ-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-रहित भी अभ्यस्त कर सकेगा सात (= रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि-प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि मैं काय (= शरीर) के प्रति कायानुपश्यी होकर, प्रयत्नशील होकर, सम्प्रजन्य से युक्त होकर, स्मृतिमान होकर विचरूँगा और लोकके प्रति मेरे मनमें जो राग-द्वेष है उसका मर्दन करूँगा। भिक्षु ! इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि-प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तू इस समाधिको स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (= भावना) कर सकेगा, अ-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, अ-वितर्क अ-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-रहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, सात (= रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा-सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि मैं वेदनाओं के प्रति ... चित्तके प्रति ... धर्मों (= सस्कृत-असस्कृत धर्मों) के प्रति धर्मानुपश्यी होकर, प्रयत्नशील होकर, सम्प्रजन्यसे युक्त होकर, स्मृतिमान् होकर विचरूँगा और लोकके प्रति मेरे मनमें जो राग-द्वेष है, उसका मर्दन करूँगा।' भिक्षु ! इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।

भिक्षु, जब तेरी यह समाधि, इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि-प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तू इस समाधिको स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (= भावना)

कर सकेगा, अ-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्तका कर सकेगा, अ-वितर्क-अ-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, सात (= रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा-सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त हुई रहेगी, तब हे भिक्षु! तू जहाँ जहाँ भी जायेगा सुख-पूर्वक ही जायगा, जहाँ-जहाँ ठहरेगा, सुख-पूर्वक ही ठहरेगा, जहाँ-जहाँ बैठेगा सुख-पूर्वक ही बैठेगा, जहाँ-जहाँ लेटेगा, सुख-पूर्वक ही लेटेगा।"

इस प्रकार भगवान् द्वारा उपदिष्ट होने पर वह भिक्षु आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर चला गया। तब उस भिक्षुने अकेले रह, एकान्त-सेवन करते हुए, अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न कर जिस उद्देश्यकी प्राप्ति के लिये कुल-पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस लोकोत्तर श्रेष्ठ जीवनको इसी जन्ममें स्वय जान लिया, साक्षात् कर लिया, प्राप्त कर लिया। उसे ज्ञान हो गया कि 'जाति (= जन्म बधन) क्षीण हो गया, ब्रह्मचरिय (= श्रेष्ठ जीवनका) उद्देश्य पूरा हो गया। जो कृत्य था, कर लिया गया। अब यहाँ शेष करणीय नही रहा।' वह भिक्षु भी एक अर्हत् हुआ।

एक समय भगवान् गयामे गयाशीर्ष (पर्वत) पर विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओको सम्बोधित किया कहा—"भिक्षुओ! बोधि प्राप्त करनेसे पूर्व, अ-बुद्ध रहनेकी अवस्थामें, 'बोधिसत्व' रहनेके समय मुझे (देवताओका) प्रभा-मण्डल दिखाई देता था, उनके रूप नहीं दिखाई देते थे।

"भिक्षुओ! तब मेरे मनमे यह विचार उत्पन्न हुआ—"यदि मै देवताओंके प्रभा-मण्डलको भी देखूँ और उनके 'रूप' भी देखूँ, तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

"भिक्षुओ, आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओ का) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया और उनके 'रूप' भी दिखाई देने लग गये, लेकिन उन देवताओंके साथ मेरा उठना-बैठना, बात चीत, चर्चा करना नही था।

"भिक्षुओ, तब मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—'यदि मै (देवताओंके) प्रभा-मण्डलको भी देखूँ, उनके 'रूप' भी देखूँ तथा उनके साथ मेरा उठना-बैठना, बात-चीत, चर्चा करना हो, तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

भिक्षुओ आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओका) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया, उनके 'रूप' भी दिखाई देने लग गये, उन

देवताओके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत, चर्चा करना भी हो गया, किन्तु मैं यह नही जान सका कि ये देवता किस-किस देव-निकाय (देव-समूह) के हैं ?

"भिक्षुओ, तब मेरे मनमे यह विचार उत्पन्न हुआ—"यदि मैं (देवताओके) प्रभा-मण्डलको भी देखूँ, उनके 'रूप' भी देखूँ, उनके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत, चर्चा करना हो तथा मैं यह जान सकूँ कि ये देवता किस किस देव-निकायके हैं तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

भिक्षुओ, आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओका) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया, उनका 'रूप' भी दिखाई देने लग गया, उन देवताओके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत, चर्चा करना हो गया, मैं यह भी जान सका कि ये देवता किस-किस देव-निकायके हैं, लेकिन यह नही जान सका कि ये देवता अमुक कार्यके फलस्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देव-लोकमें) उत्पन्न हुए। यह जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देवलोक) मे उत्पन्न हुए, लेकिन यह नही जान सका कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार खाते पीते हैं और इस प्रकार सुख-दुख भोगते हैं यह जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार सुख-दु ख भोगते है, लेकिन यह न जान सका कि इन देवताओकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है यह जान गया कि इन देवताओकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है, लेकिन यह न जान सका कि इन देवताओके साथ इससे पूर्व सहवास रहा है या नही रहा है ?

भिक्षुओ, तब मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—यदि देवताओके प्रभा-मण्डल को भी देख लूँ, (देवताओंके) रूपो को भी देख लूँ, उनके साथ मेरा उठना-बैठना, बात-चीत, चर्चा करना हो, यह भी जान लूँ कि ये देवता किस किस देव-निकाय के है, यह भी जान लूँ कि ये देवता अमुक कर्मके फल स्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देव-लोक) में उत्पन्न हुए है, यह भी जान लूँ कि ये देवता अमुक वर्ग कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार खाते-पीते हैं और इस प्रकार सुख-दुख भोगते है, यह भी जान लूँ कि इन देवताओकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है तथा यह भी जान लूँ कि इन देवताओके साथ इससे पूर्व सहवास रहा है या नही रहा है ? तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

भिक्षुओ, आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओका) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया, उनका 'रूप' भी दिखाई देने लग गया ; उन देवताओके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत करना, चर्चा करना हो गया,

मैं यह भी जान सका कि ये देवता किस-किस देव-निकाय के है, यह भी जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देवलोकमे) उत्पन्न हुए, यह भी जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार खाते पीते हैं और इस प्रकार मुख-दु ख भोगते है, यह भी जान गया कि इन देवताओकी इतनी लम्वी आयु होती है, इतनी लम्वी स्थिति होती है, तथा यह भी जान गया कि इन देवताओंके साथ इससे पूर्व सहवास रहा है या नही।

भिक्षुओ, जव तक मुझे इस तरह आठ प्रकारसे देवताओ सम्वन्धी,ज्ञान-दर्शन स्पष्ट नही हो गया, तव तक मैंने यह दावा नही किया कि मैंने देव और मार-सहित लोकमें, तथा श्रमण-ब्राह्मण और देव-मनुष्योंसे युक्त प्रजामें सवसे वढकर सम्यक् ज्ञान-को पा लिया, लेकिन जव मुझे इस तरह आठ प्रकारसे देवताओ सम्वन्धी ज्ञान-दर्शन स्पष्ट हो गया, तो मैंने दावा किया कि मैंने देव और मार-सहित लोकमें तथा श्रमण-ब्राह्मण और देव-मनुष्योंसे युक्त प्रजामे मवसे वढकर सम्यक् ज्ञानको पा लिया। मुझे ज्ञान हो गया। मुझे दर्शन उत्पन्न हो गया। मेरी चित्त-विमुक्ति अचल हो गई। यह अन्तिम जन्म है, इमसे आगे पुनर्भव नही।

भिक्षुओ, ये आठ अभिभूत आयतन है। कौनसे आठ? एक योगी अपनेमें रूप-सज्ञा (रूप परिकर्म) वाला होता है, वह वाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको 'निमित्त' (= ध्यानका विषय) कर के देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह पहला अभिभूत-आयतन है।

एक योगी अपनेमे रूप-सज्ञा (= रूप परिकर्म) वाला होता है, वह वाहर असीम मुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको निमित्त (= ध्यानका विषय) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह दूसरा अभिभूत-आयतन है।

एक योगी अपनेमे अरूप-सज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह वाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको 'निमित्त' (= ध्यानका विषय) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह तीसरा अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-सज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह वाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको निमित्त (= ध्यानका विषय) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह चौथा अभिभूत-आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-सज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह वाहर नीले, नील वर्णके, नीले रगके, नीली शक्लके रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती

है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह पाँचवाँ अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-सञ्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर पीले, पीत-वर्ण, पीले रगके पीली शक्लके रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह छठा अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमे अरूप सञ्ञावाला होता है, वह बाहर लाल, लाल वर्णके, लाल शक्लके रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह सातवाँ अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमे अरूप-सञ्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर सफेद, सफेद वर्ण, सफेद रगके सफेद शक्लके रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह आठवाँ अभिभूत आयतन है।

भिक्षुओ, आठ विमोक्ष है। कौनसे आठ? रूपवान् (= रूपी) रूपोको देखता है। यह पहला विमोक्ष है।

एक योगी अपनेमे अरूप-सञ्ञा वाला (= अरूप परिकर्म) होता है, वह बाहर रूप देखता है। यह दूसरा विमोक्ष है।

एक योगी मैत्री-भावना आदि शुभ-भावनाओकी भावना करके विमोक्ष लाभ करता है। यह तीसरा विमोक्ष है।

एक योगी सब रूप-सञ्ञाओको पार कर, प्रतिघ-सञ्ञाओको अस्तकर, नानत्त्व सञ्ञाको मनसे निकाल 'आकाश अनत है' करके 'आकाशानन्त्यायतन' को प्राप्त हो विचरता है। यह चौथा विमोक्ष है।

एक योगी सब आकाश-सञ्ञाओको पार कर, 'विज्ञान अनत है' करके 'विज्ञानात्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। यह पाँचवाँ विमोक्ष है।

एक योगी सब विज्ञानानन्त्यायतनको पार कर 'कुछ नही है' करके 'आकिञ्चन्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। यह छठा विमोक्ष है।

एक योगी सब 'आकिञ्चन्यायतन' को पार कर "नेवसञ्ञा न असञ्ञा-आयतन" को प्राप्त हो विचरता है। यह सातवाँ विमोक्ष है।

एक योगी सब 'नेवसञ्ञा-न असञ्ञा-आयतन' को पारकर सञ्ञा-वेदना के निरोधको प्राप्त हो विचरता है। यह आठवाँ विमोक्ष है। भिक्षुओ, ये आठ विमोक्ष है।

भिक्षुओ, ये आठ अनार्य-व्यवहार है। कौनसे आठ? जो नही देखा है, उसे देखा कहना, जो नही सुना है, उसे सुना कहना, जो नही सूंघा-चखा-स्पर्श

किया गया है, उसे सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया (= मुत) कहना, जो नही जाना गया है, उसे ज्ञात कहना, जो देखा है, उसे नही देखा कहना, जो सुना है, उसे नही सुना कहना, जो सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया है, उसे नही सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया कहना, जो ज्ञात है, उसे नही जाना गया कहना। भिक्षुओ, ये आठ अनार्य व्यवहार है।

भिक्षुओ, ये आठ आर्य व्यवहार है। कौनसे आठ? जो नही देखा है, उसे नही देखा कहना, जो नही सुना है, उसे नही सुना कहना, जो नही सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया है, उसे नही सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया (= मुत) कहना, जो नही जाना गया है, उसे अज्ञात कहना, जो देखा है, उसे देखा कहना; जो सुना है, उसे सुना कहना, जो सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया है, उसे सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया कहना, जो ज्ञात है, उसे ज्ञात कहना। भिक्षुओ, ये आठ आर्य-व्यवहार है।

भिक्षुओ, परिषद आठ प्रकारकी होती है। कौन-सी आठ प्रकारकी? क्षत्रिय-परिपद, व्राह्मण-परिपद, गृहपति-परिषद, श्रमण-परिषद, चातुर्महाराजिक परिपद, त्रयोत्रिंश परिपद, मार-परिपद, तथा व्रह्म-परिपद।

भिक्षुओ, मै सैकडो क्षत्रिय-परिपदोमें गया हूँ। वहाँ मै वैठा हूँ, वातचीतकी है, चर्चा की है। वहाँ जैसा उनका वर्ण होता था, वैसा मेरा वर्ण होता था, जैसा उनका स्वर होता था, वैसा मेरा स्वर होता था। मै उन्हे धार्मिक प्रवचनसे (रास्ता) दिखाता था, प्रेरित करता था, उत्साहित करता था, प्रमुदित करता था। जव मै वोलता था, तव वे नही जानते थे कि यह कोई मनुष्य वोल रहा है या देवता। मै उन्हे धार्मिक-प्रवचन से (रास्ता) दिखा, प्रेरित कर, उत्साहित कर, प्रमुदित कर अन्तर्धान हो जाता था। मेरे अन्तर्धान होने पर वे नही जानते थे कि कौन अन्तर्धाम हुआ—देवता या मनुष्य?

भिक्षुओ, मै सैकडो व्राह्मण-परिपदोमें गया हूँ गृहपति-परिषदोमें गया हूँ श्रमण-परिपदोमे गया हूँ चातुर्महाराजिक-परिपदो में गया त्रयोत्रिंश-परिपदोमें गया हूँ मार-परिपदोमे गया हूँ तथा व्रह्म-परिपदोमे गया हूँ। वहाँ मै वैठा हूँ, वातचीत की है, चर्चा की है। वहाँ जैसा उनका वर्ण होता था, वैसा मेरा वर्ण होता था, जैसा उनका स्वर होता था, वैसा मेरा स्वर होता था। मै उन्हे धार्मिक-प्रवचनसे (रास्ता) दिखाता था, प्रेरित करता था, उत्साहित करता था, प्रमुदित करता था। जव मै वोलता था, तव वे नही जानते थे कि यह कोई मनुष्य वोल रहा है, या देवता। मै उन्हे धार्मिक-प्रवचनसे (रास्ता)

दिखा, प्रेरित कर, उत्साहित कर, प्रमुदित कर अन्तर्धान हो जाता था। मेरे अन्तर्धान होनेपर वे नही जानते थे कि कौन अन्तर्धान हुआ है–देवता या मनुष्य ? भिक्षुओ, परिषद आठ प्रकार की होती है।

एक समय भगवान वैशालीके महावनकी कूटागार शालामे निवास करते थे। तव भगवान पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, वैशालीमे भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए। वैशालीमे भिक्षाटन कर भिक्षाटनसे लौट, भोजन (= पिण्डपात) ग्रहण कर चुकनेके अनन्तर भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दको कहा—"आनन्द ! आसन ले। दिनमें विहार करनेके लिए, जहाँ चापाल चेतिय है, वहाँ चलेगे।" "भन्ते ! वहुत अच्छा", कह आयुष्मान् आनन्दने आसन उठाया और भगवान्के पीछे-पीछे हो लिये।

तव भगवान जहाँ चापाल चेतिय है वहाँ पहुँचे। जाकर विछे आसन पर वैठे। वैठकर भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"आनन्द ! वैशाली रमणीय है, उदेन चेतिय रमणीय है, गोतमक चेतिय रमणीय है, वहुपुत्तक चेतिय रमणीय है, सत्तम्व चेतिय रमणीय है, सारन्दद चेतिय रमणीय है तथा चापाल चेतिय रमणीय है। आनन्द ! जिस किसीके ने चारो ऋद्धिपादोका अभ्यास किया हो, वृद्धिकी हो, अधिकाधिक चालू किया हो,वास्तविक स्वरूप दिया हो, अनुष्ठान किया हो, भली प्रकार परिचित हुआ हो तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ किया हो, यदि वह इच्छा करे तो वह कल्प भर तक या उससे भी अधिक जीवित रह सकता है। आनन्द ! तथागतने चारो ऋद्धिपादोका अभ्यास किया, वृद्धि की है, अधिकाधिक चालू किया है, वास्तविक स्वरूप दिया है, अनुष्ठान किया है, भली प्रकार परिचित किया है तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ किया है। आनन्द ! यदि तथागत इच्छा करें तो कल्प तक अथवा उससे भी अधिक समय जीवित रह सकते हैं।

भगवानके इस प्रकार स्पष्ट सकेत करने पर, स्पष्ट इशारा करने पर भी आनन्द कुछ न समझ सका। उसने भगवानसे याचना की नही—"भन्ते ! भगवान कल्प भर तक जीवन धारण करें। सुगत ! वहुत जनोके हितके लिए, सुखके लिए, लोगोपर अनुकम्पा करनेके लिए, देव-मनुष्योके अर्थ, हित, सुख के लिए कल्प भर तक जीवन धारण करें। ऐसा लगता है जैसे उस पर 'मार' का आवेश हो।

दूसरी वार भी और तीसरी वार भी भगवानने आनन्दसे कहा–आनन्द ! वैशाली रमणीय है, उदेन चेतिय रमणीय है, गोतमक चेतिय रमणीय है, वहुपुत्तक चेतिय रमणीय है, सत्तम्व चेतिय रमणीय है, सारन्दद चेतिय रमणीय है तथा चापाल

चैतिय रमणीय है। आनन्द! जिस किसीने चारो ऋद्धिपादोका अभ्यास किया हो, वृद्धि की हो, अधिकाधिक चालू किया हो, वास्तविक स्वरूप दिया हो, अनुष्ठान किया हो, भली प्रकार परिचित हुआ हो तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ किया हो, यदि वह इच्छा करे तो वह कल्प भर तक, या उससे भी अधिक जीवित रह सकता है। आनन्द! तथागतने चारो ऋद्धिपादोका . . . .आरम्भ किया है। आनन्द! यदि तथागत . . . सकते हैं।"

भगवान्‌के इस प्रकार स्पष्ट संकेत पर, स्पष्ट इशारा करने पर भी आनन्द कुछ न समझ सका। उसने भगवानसे याचना नही की—"भन्ते! भगवान कल्प भर तक जीवन धारण करें। सुगत! बहुत जनोंके हितके लिए, सुखके लिये, लोगों पर अनुकम्पा करनेके लिए, देव-मनुष्योंके अर्थ, हित, सुखके लिए कल्प भर तक जीवन धारण करें।' ऐसा लगता है जैसे उस पर 'मार' का आवेश हो।

तब भगवानने आयुष्मान आनन्दको सम्बोधित किया—"आनन्द! तू जा, (वह काम कर) जिसका तू अब समय समझे।" "बहुत अच्छा भन्ते!" कह आयुष्मान् आनन्दने भगवानको प्रतिवचन दिया है, और आसनसे उठ, भगवानको अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, भगवानसे नातिदूर एक वृक्षके नीचे जा बैठे। आयुष्मान् आनन्दके चले जानेके थोडी ही देर बाद पापी 'मार' ने भगवान से कहा—

"भन्ते! भगवान अब परिनिर्वाण को प्राप्त हों। सुगत! अब परिनिर्वाण को प्राप्त हों। भन्ते! भगवान् के लिए अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है। भन्ते भगवानने यह कहा था—'पापी मार! मैं तब तक परिनिर्वाणको प्राप्त नहीं होऊँगा जबतक मेरे भिक्षु शिष्य पण्डित, विनीत, विशारद, योग-क्षेम (=निर्वाण) प्राप्त, बहुश्रुत, धर्मधर, धर्मके अनुसार आचरण करने वाले, सम्यक् प्रकार विचरने वाले, धर्मका अनुकरण वाले न होंगे। और जब तक अपने आचार्यसे सीख कर (उसे) कहने वाले, देशना करने वाले, प्रख्यापित करने वाले, व्याख्या करने वाले, विभक्त करने वाले, उलटेको सीधा कर देने वाले, दूसरेके मतका धर्मानुसार खण्डन करने वाले तथा प्रातिहार्य सहित धर्म की देशना करने वाले नही होंगे।

'भन्ते! अब आप भगवान्‌के भिक्षु शिष्य पण्डित हैं, विनीत हैं, विशारद हैं, योग-क्षेम-प्राप्त हैं, बहुश्रुत हैं, धर्मधर हैं, धर्मके अनुसार आचरण करनेवाले हैं, सम्यक् प्रकार विचरनेवाले हैं, धर्मका अनुकरण करनेवाले हैं और अपने आचार्यसे सीखकर (उसे) कहने वाले, देशना करनेवाले, प्रज्ञाप्ति करनेवाले, प्रख्यापित करनेवाले, व्याख्या करनेवाले, विभक्त करनेवाले, उलटेको सीधा कर देनेवाले,

दूसरेके मतका धर्मानुसार खण्डन करनेवाले तथा प्रातिहार्य सहित धर्मकी देशना करनेवाले हैं। भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। सुगत! अब परि-निर्वाणको प्राप्त हो। भन्ते! भगवान्‌के लिए अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है।

"भन्ते! भगवान्‌ने यह कहा था—'पापी मार! मैं तब तक परि-निर्वाणको प्राप्त नही होऊँगा जब तक मेरी भिक्षुणी शिष्याये जब तक मेरे उपासक शिष्य .जब तक मेरी उपासिका शिष्यायें पण्डिता, विनीता, विशारदा, योग-क्षेम (=निर्वाण) प्राप्त, बहुश्रुता, धर्मधरा, धर्मके अनुसार आचरण करनेवाली, सम्यक् प्रकार विचरनेवाली, धर्मका अनुकरण करने वाली न होगी। भन्ते, अब आप भगवान् की भिक्षुणी शिष्याये सीखकर (उसे) कहनेवाली, देशना करनेवाली, प्रज्ञाप्ति करनेवाली, प्रस्थापित करनेवाली, व्याख्या करनेवाली, विभक्त करनेवाली, उलटेको सीधा कर देनेवाली, दूसरेके मतका धर्मानुसार खण्डन करनेवाली तथा प्रातिहार्य सहित धर्मकी देशना करनेवाली है। भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हो। सुगत! अब परिनिर्वाणको प्राप्त हो। भन्ते! भगवान्‌के लिये अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है।

"भन्ते! भगवान्‌ने यह कहा था—'पापी मार! मैं तब तक परि-निर्वाण प्राप्त नही करूँगा, जब तक मेरा यह ब्रह्मचर्य्य (=बुद्ध-शासन) समृद्ध तथा पुष्पित, ऐश्वर्यशाली नही हो जाएगा, विस्तृत नही हो जायेगा, बहुत जनो तक फैल नही जायगा—देव-मनुष्यो तक सुप्रकाशित नही हो जायगा। भन्ते! इस समय भगवान्‌का ब्रह्मचर्य (=बुद्धशासन) समृद्ध तथा पुष्पित है, विस्तृत है, बहुत जनो तक फैला है—देव मनुष्यो तक सुप्रकाशित है।

"भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हो। सुगत! अब परि-निर्वाणको प्राप्त हो। भन्ते! भवगवान्‌के लिये अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है।"

"हे पापी मार! तू अधिक व्यग्र न हो। अचिर कालमें ही तथागतका परिनिर्वाण होगा। अबसे तीन महीनेके अनन्तर तथागत परिनिर्वाणको प्राप्त होगे।

तब भगवानने चापाल चेतियमें ही विहार करते समय आयु-सस्कार (=जीवित रहनेके सकल्प) को ढीला कर दिया भगवान्‌के आयु-सस्कारको शिथिल करते ही भयानक, लोमहर्षक, महान् भूकम्प हुआ, देवताओकी दुदुभियाँ टूट गईं। भगवान्‌को यह बात ज्ञात हुई, तो उन्होने उस समय यह 'उदान' कहा—

तुलमतुलं च सम्भव
भवसखारमवस्सजि मुनि।
अज्झत्तरतो समाहितो,
अभिन्दि कवचमिवत्तसम्भव ॥

[मुनि (=बुद्ध) ने तुल (=समान) तथा असमान पुनरुत्पत्ति-कर्म स्वरूप भव-संस्कारको त्याग दिया। आत्मरत एकाग्र चित्त (बुद्ध) ने जन्म रूपी कवचको तोड दिया।]

तब आयुष्मान् आनन्दके मनमें यह हुआ—यह महान् भूकम्प हुआ, यह बडा भारी भूकम्प हुआ—भयानक, लोमहर्षक, देव दुदुभियाँ टूट गईं। इस महान् भूकम्पके होनेका क्या हेतु है, और क्या कारण है?

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्को यह कहा—यह महान् भूकम्प हुआ, यह बडा भारी भूकम्प हुआ—भयानक, लोमहर्षक, देव-दुदुभियाँ टूट गईं। इस महान् भूकम्पके होनेका क्या हेतु है और क्या कारण है?

"आनन्द! भारी भूकम्पके होनेके आठ हेतु हैं, आठ कारण हैं। आनन्द! यह पृथ्वी पानी पर स्थित है, पानी हवा पर स्थित है, हवा आकाश पर स्थित है। आनन्द! ऐसा समय आता है जब भारी हवा चलती है, भारी हवाके चलनेसे पानीमें हलचल होती है, पानीमें हलचल होनेसे भूचाल आता है। आनन्द! भूकम्पका यह पहला हेतु है, पहला कारण है।

"फिर आनन्द! कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्त-विजयी श्रमण या ब्राह्मण-अथवा कोई महान् ऋद्धिवाला, महान प्रतापी देवता होता है। उसने सीमित पृथ्वी संज्ञाकी भावना की होती है, असीम जल-संज्ञा की। वह इस पृथ्वीको कँपाता है, हिलाता है, अच्छी तरह कँपाता है। आनन्द! भूकम्पका यह दूसरा हेतु है, दूसरा कारण है।

फिर आनन्द! जब बोधिसत्व तुपितलोकसे च्युत होकर स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त हो माता की कोखमें प्रवेश करते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह तीसरा हेतु है, तीसरा कारण है।

फिर आनन्द! जब बोधिसत्व स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त हो माताकी कोखसे बाहर आते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह चौथा हेतु है, चौथा कारण है।

फिर आनन्द! जब तथागत अनुपम सम्यक् सम्बोधिको प्राप्त होते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह पाँचवाँ हेतु है, पाँचवाँ कारण है।

फिर आनन्द! तथागत अनुपम धर्मचक्रका प्रवर्तन करते है, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह छठा हेतु है, छठा कारण है।

फिर आनन्द! जब तथागत स्मृति-सम्प्रजन्ययुक्त होकर आयु-सस्कारको शिथिल करते है, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह सातवाँ हेतु है, सातवाँ कारण है।

फिर आनन्द! जब तथागत निरुपाधिशेष परिनिर्वाण-धातुके अनुसार परिनिर्वृत्त होते हैं, तो यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह आठवाँ हेतु है, आठवाँ कारण है। आनन्द! भूचालके ये आठ हेतु हैं, आठ कारण हैं।

(८) यमक वर्ग

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, किन्तु शीलवान् न हो, तो यह उसकी कमी होती है, उसे उसकी कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, तथा शीलवान् भी होऊँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान भी होता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, शीलवान् हो, किन्तु वहुश्रुत न हो, तो उसकी यह कमी होती है, उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, शीलवान् भी होऊँ तथा वहुश्रुत भी होऊँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् होता है, शीलवान् होता है तथा वहुश्रुत होता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

"भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् होता है, शीलवान् होता है, वहुश्रुत होता है, किन्तु धर्मकथिक नही होता धर्मकथिक होता है किन्तु परिषद् (= जनता) में विचरनेवाला नही होता परिषद् (= जनता) में विचरनेवाला होता है किन्तु परिषद् (= जनता) को उपदेश देनेमें पण्डित नही होता उपदेश देनेमें पण्डित होता है, किन्तु इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको विना कठिनाईके, सरलतासे, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला नही होता इसी शरीरमें सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको विना कठिनाईके,

सरलतासे, प्रचुर मात्रामे प्राप्त करनेवाला होता है, किन्तु आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको, इसी शरीरमें स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर नही विहार करता है, तो उसकी यह कमी होती है। उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मै श्रद्धावान् भी होऊँ, शीलवान् भी होऊँ, बहुश्रुत भी होऊँ, धर्मकथिक भी होऊँ, परिषद्मे विचरनेवाला भी होऊँ, परिषद्को उपदेश देनेवाला पण्डित भी होऊँ, इसी शरीरमे सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको विना कठिनाईके, सरलतासे, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला भी होऊँ तथा आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करूँ।

भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान् भी होता है, बहुश्रुत भी होता है, धर्मकथिक भी होता है, परिषद्मे विचरनेवाला भी होता है, परिषद्को उपदेश देनेवाला पण्डित भी होता है, इसी शरीरमे सुखद चारो चैतसिक ध्यानोको विना कठिनाईके, सरलतासे, प्रचुर मात्रामे प्राप्त करने वाला भी होता है तथा आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बातें होती है, वह सबको अच्छा लगने वाला होता है और हर तरहसे परिपूर्ण।

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, किन्तु शीलवान न हो, तो यह उसकी कमी होती है, उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ तथा शीलवान् भी होऊँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान् भी होता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् होता है, शीलवान् होता है किन्तु बहुश्रुत नही होता ... बहुश्रुत होता है, किन्तु धर्मकथिक नही होता ... धर्म-कथिक होता है, किन्तु परिषद् (=जनता) में विचरनेवाला नही होता ... परिषद् (=जनता) में विचरने वाला होता है, किन्तु परिषदको उपदेश देनेवाला पण्डित नही होता ... परिषद्को उपदेश देनेवाला पण्डित होता है, किन्तु जो रूपोका अतिक्रमण कर शान्त, अरूप विमोक्ष है उन्हे (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार नही करता ... जो रूपोका अतिक्रमण कर शान्त, अरूप विमोक्ष है उन्हे (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार करता है, किन्तु आस्रवोका क्षय कर,

अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर-प्राप्त कर विहार नही करता—यह उसकी कमी होती है। उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, शीलवान् भी होऊँ, बहुश्रुत भी होऊँ, धर्म, कथिक भी होऊँ, परिषदमें विचरनेवाला भी होऊँ, परिषदमे उपदेश देनेवाला पण्डित भी होऊँ, रूपोका अतिक्रमण कर जो शान्त, अरूप विमोक्ष है, उन्हे (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार करनेवाला भी होऊँ तथा आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करूँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान् भी होता है, बहुश्रुत भी होता है, धर्मकथिक भी होता है, परिषद् (=जनता) में विचरनेवाला भी होता है, परिषदको उपदेश देनेवाला पण्डित भी होता है, रूपोका अतिक्रमण कर जो शान्त अरूप विमोक्ष है उन्हे (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार करने वाला भी होता है तथा आस्रवोका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमे स्वय जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ बाते होती है, वह सबको अच्छा लगने वाला होता है और हर तरहसे परिपूर्ण।

एक बार भगवान् नातिकाके गिञ्जिका आवासमे विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ!" भिक्षुओने प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवान्ने कहा—भिक्षुओ, मरणानुस्मृति की भावनाकी जाय, वृद्धि की जाय तो वह महान फलको देने वाली होती है, महान शुभ परिणामकारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा। भिक्षुओ! तुम मरणानुस्मृति की भावना करो।"

ऐसा कहने पर एक भिक्षुने भगवान्से कहा "भन्ते! मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।" "भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?" "भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं रात-दिन जीता हूँ, भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है! भन्ते! मैं इस प्रकार "मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवानसे कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं दिनभर जीता हूँ, भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं आधा-दिन जीता हूँ। भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है!!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृति की भावना कैसे करता है।"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमे एक बार भोजन किया जा सकता है। भगवानके शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है!!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृति की भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमें आधा भोजन किया जा सकता है। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है।!!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृति की भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ, जितनी देरमें चार-पांच कौर खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है।!!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्‌से कहा—"भन्ते ! मैं भी मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु ! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है ?"

"भन्ते ! मेरे मनमे ऐसा होता है कि मै उतनी ही देर जीता हूँ, जितनी देरमे एक और खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह वहुत वडी वात है ! ! ! भन्ते ! मै इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्‌से कहा—"भन्ते ! मै भी मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु ! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता हूँ ?"

"भन्ते ! मेरे मनमे ऐसा होता है कि मै उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमें एक साँस भीतर लेकर वाहर निकाल सकूँ, जितनी देरमें एक साँस वाहर निकाल कर भीतर ले सकूँ। भगवान्‌के शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह बहुत वडी बात है। ! ! ! भन्ते ! मै इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

ऐसा कहनेपर भगवान्‌ने उन भिक्षुओको कहा—जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मै रात-दिन जीता हूँ, भगवानके शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह वहुत वडी बात है, और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मेरे मनमें ऐसा होता है कि मै दिन भर जीता हूँ। भगवानके शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह वहुत बडी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मेरे मनमें ऐसा होता है कि मै आधे दिन जीता हूँ, भगवान्‌के शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी वात है। और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मै उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमे एक वार भोजन किया जा सकता है। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह कितनी वडी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मै उतनी देर जीता हूँ, जितनी देरमें आधा भोजन किया जा सकता है। भगवान्‌के शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह कितनी वडी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकारकी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मै उतनी देर जीता हूँ कि जितनी देरमे चार-पाँच कौर खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमे जगह देता हूँ, तो यह कितनी वडी वात है,—तो भिक्षुओ, ऐसे भिक्षुओंके बारेमें यही कहा जा सकता है कि ये प्रमादपूर्वक विहार करते है, ये आस्रवोका क्षय करनेके लिये उग्र भावसे मरणानुस्मृति की भावना नही करते।

"किन्तु भिक्षुओ, जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मैं उतनी ही देर जीता हूँ, जितनी देरमें एक कौर खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी ही देर जीता हूँ जितनी देरमें एक साँस भीतर लेकर बाहर निकाल सकूँ, जितनी देरमें एक साँस बाहर निकाल कर भीतर ले सकूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बडी बात है—तो भिक्षुओ, ऐसे भिक्षुओंके बारेमें यही कहा जा सकता है कि ये अप्रमादपूर्वक विहार करते है, ये आस्रवोंके क्षय के लिये उग्र-भावसे मरणानुस्मृति की भावना करते है।

तो भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि अप्रमादी रह कर विचरेंगे और आस्रवोंका क्षय करनेके लिये उग्र-भावसे मरणानुस्मृति की भावना करेंगे।

एक समय भगवान् नातिकाके गिञ्जकावसथमे विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ।" भिक्षुओंने प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवान्ने कहा—"भिक्षुओ, मरणानुस्मृति की भावना की जाय, वृद्धि की जाय तो वह महान् फल देनेवाली होती है, महान् शुभपरिणाम कारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा।"

"भिक्षुओ, किस प्रकार भावना करनेसे, वृद्धि करनेसे मरणानुस्मृति महान् फल देनेवाली होती है, महान् शुभपरिणाम कारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा। भिक्षुओ, भिक्षु दिनके अस्त होनेपर रात्रिके आगमन होनेपर इस प्रकार विचार करता है—'मेरे मरनेके नाना कारण हो सकते है—मुझे साँप भी डस ले सकता है, विच्छू भी डस ले सकता है, कानखजूरा भी डस ले सकता है—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरा लिये बडा खतरा हो सकता है। मैं पाँव फिसल कर गिर भी सकता हूँ, मुझे भोजन भी नही पच सकता है, मेरा पित्त प्रकुप्त हो सकता है, मेरा कफ भी प्रकुप्त हो सकता है, अग प्रत्यगको काटनेवाला वायु प्रकुप्त हो सकता है, मुझ पर मनुष्य आक्रमण कर सकते हैं, मुझ पर मनुष्येतर आक्रमण कर सकते है—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरे लिये बडा खतरा हो सकता है। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिये—अभी मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण है। यदि रात्रिमें ही मेरा निधन हो जाये, तो ये मेरे लिये खतरनाक हो सकते है।

"भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर भिक्षुको ऐसा लगे कि मेरे पाप-पूर्ण अकुशल-धर्म अभी अप्रहीण है, जो रात्रिमे मेरा निधन हो जानेपर मेरे लिये खतरनाक

हो सकते है, तो उस भिक्षुको, उन पापपूर्ण अकुशल-धर्मोके प्रहाण (=नाश) के लिये ही विशेष सकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिये।

भिक्षुओ, जिस प्रकार किसीके कपडो या सिर (के वालो) मे आग लग गई हो, तो वह उन कपडो अथवा सिर (के वालो) मे लगी आगको बुझानेके लिये ही विशेष सकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करे, इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको उन पापपूर्ण अकुशल-धर्मोके प्रहाण (=नाश) के लिये ही विशेष सकल्प प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिये।

"भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर भिक्षुको ऐसा लगे कि अव मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण नही है, जो रात्रिमे मेरा निधन हो जानेपर मेरे लिये खतरनाक हो, तो भिक्षुओ! उस भिक्षुको चाहिये कि वह दिन रात कुशल-कर्मोमे लगा रहकर उसी प्रीति-प्रमुदतासे आनन्दित रहे।

"भिक्षुओ, भिक्षु रात्रिके अस्त होनेपर दिन का उदय होनेपर इस प्रकार विचार करता है—मेरे मरनेके नाना कारण हो सकते है—मुझे साँप भी डस ले सकता है, विच्छू भी डस ले सकता है, कानखजूरा भी डस ले सकता है—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरे लिये वडा खतरा हो सकता है। मै पाँव फिसल कर गिर भी सकता हूँ, मुझे भोजन भी नही पच सकता है, मेरा पित्त प्रकुप्त हो सकता है, मेरा कफ भी प्रकुप्त हो सकता है, अग-प्रत्यगको काटने वाला वायु प्रकुप्त हो सकता है। मुझ पर मनुष्य आक्रमण कर सकते है। मनुष्येतर आक्रमण कर सकते है—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरे लिये वडा खतरा हो सकता है। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिए—अभी मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण है। यदि दिनमे मेरा निधन हो जाय तो ये मेरे लिये खतरनाक हो सकते है।

"भिक्षुओ, यदि विचार करने पर भिक्षुको ऐसा लगे कि मेरे पापपूर्ण अकुशल धर्म अभी अप्रहीण है, जो दिनमे मेरा निधन हो जाने पर, मेरे लिए खतरनाक हो सकते है, तो उस भिक्षुको उन पापपूर्ण अकुशल-धर्मोके प्रहाणके लिये ही विशेष सकल्प प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिए।

भिक्षुओ, जिस प्रकार किसीके कपडो या सिरके (वालोमे) आग लगी हो, तो वह उन कपडो अथवा सिरके (वालोमें) लगी आगको वुझानेके लिये ही विशेष

सकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करे, इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको उन पापपूर्ण अकुशल धर्मोके प्रहाण (= नाश) के लिये ही विशेष सकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिए।

"भिक्षुओ, यदि विचार करने पर भिक्षुको ऐसा लगे कि अब मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण नही है, जो दिनमे मेरा निधन हो जाने पर मेरे लिये खतरनाक हो, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिये कि वह दिन-रात कुशल-कर्मोमें लगा रहकर उसी प्रीति-प्रमुदितासे आनन्दित रहे। भिक्षुओ, इस प्रकार भावना करनेसे, वृद्धि करनेसे, मरणानुस्मृति महान् फल देनेवाली होती है, महान् शुभपरिणाम कारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा।"

भिक्षुओ, आठ सम्पत्तियाँ है। कौनसी आठ ? उत्थान-सम्पत्ति, आरक्षा-सम्पत्ति, कल्याण-मित्रता (= सत्सगति) समजीविता, (= समताका जीवन), श्रद्धा-सम्पत्ति, शील-सम्पत्ति, त्याग-सम्पत्ति तथा प्रज्ञा-सम्पत्ति। भिक्षुओ, ये आठ सम्पत्तियाँ है—

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
सम कप्पेति जीविक, सम्भत अनुरक्खति॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्च मग्ग विसोधेति, सोत्थान सम्परायिक।
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्पराय सुखाय च।
एवमेत गहट्ठान, चागो पुञ्ञ पवड्ढति॥

(अर्थ ऊपर आ गया है—अनु)

भिक्षुओ, आठ सम्पदायें (= सम्पत्तियाँ) है। कौन-सी आठ ? उत्थान-सम्पदा, आरक्षा-सम्पदा, कल्याण-मित्रता, सम-जीविता, श्रद्धा-सम्पदा, शील-सम्पदा, त्याग-सम्पदा तथा प्रज्ञा-सम्पदा। भिक्षुओ, उत्थान-सम्पदा किसे कहते है ? भिक्षु ! कोई कुल-पुत्र किसी भी जीविकाके साधनका उपयोग करने वाला हो—चाहे कृषि हो, चाहे वाणिज्य हो, चाहे गोपालन हो, चाहे धनुर्विद्या हो, चाहे राजकीय चाकरी हो अथवा कोई शिल्प हो—उसमें वह दक्ष होता है, आलस्य-रहित होता है, उसकी मीमासा करनेमे, उसका उपाय करनेमें सलग्न होता है, उसे करनेमे, उसका सविधान करनेमें समर्थ होता है। भिक्षुओ, यही उत्थान-सम्पदा है।

भिक्षुओ, आरक्षा-सम्पदा किसे कहते हैं ? भिक्षुओ, एक कुल-पुत्रने उत्थान वीर्यसे, बाहुबलका उपयोग करके, पसीना बहाकर, धर्मानुसार ऐश्वर्यकी प्राप्ति की होती है। वह इसकी सावधानी बरतता है कि उसके ऐश्वर्य को न राजागण छीन कर ले जाएँ, न चोर चुराकर ले जाएँ, न आग जलाए, न पानी बहाए, तथा उस पर अप्रिय उत्तराधिकारी भी अधिकार न जमा ले। भिक्षुओ, यह आरक्षा-सम्पदा है।

भिक्षुओ, कल्याण-मित्रता किसे कहते हैं ? भिक्षुओ, किसी भी गाँव या निगममें कोई कुल-पुत्र रहता है, और उस (गाँव या निगम) में जो गृहपति या गृहपति-पुत्र ऐसे होते हैं, जो चाहे अल्पवयस्क हो और अधिक आयुके हो, किन्तु शीलवृद्ध होते हैं—श्रद्धावान्, सदाचारी, त्यागी, प्रज्ञावान्। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। जैसे वे श्रद्धावान् होते हैं, उनसे श्रद्धाका पाठ सीखता है जैसे वे शीलवान् होते हैं, उनसे शीलका पाठ सीखता है, जैसे वे त्यागी होते है, उनसे त्यागका पाठ सीखता है जैसे वे प्रज्ञावान् होते है, उनसे प्रज्ञाका पाठ सीखता है। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बात-चीत करता है, चर्चा करता है। भिक्षुओ, इसे कल्याण-मित्रता कहते है।

भिक्षुओ, सम-जीविता (=समताका जीवन) किसे कहते हैं ? भिक्षु ! एक कुल-पुत्र अपनी भोग-सम्पत्ति की आय और व्यय की जानकारीके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर , ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। भिक्षुओ ! जैसे कोई तुलाधार (=तराजू वाला) या तुलाधार का शिष्य तुला हाथमें पकडता है, तो जानता है कि इतनी कमी है वा इतनी अधिकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ ! एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्तिकी) आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा स्तर , ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक न होगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। भिक्षुओ ! यदि यह यह कुल-पुत्र अल्पायु होता हुआ भी जीवनका स्तर ऊँचा रखता है तो लोग उसके बारेमें कहते हैं कि यह कुल-पुत्र गूलर खानेके समान ऐश्वर्यका भोग करता है, अर्थात् खानेसे भी अधिक बिखेरता है। भिक्षुओ, यदि यह कुल-पुत्र अधिक आय वाला होता हुआ भी जीवनका स्तर बहुत नीचा रखता है तो लोग उसके शरीरके बारेमें कहते हैं कि यह अनाथ-मरण मरने वाला है। लेकिन भिक्षुओ, ! जब एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत

करता है—न वहुत ऊँचा स्तर, न वहुत नीचा स्तर—ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आय से अधिक न होगा। भिक्षुओ! इसे सम-जीविता कहते हैं।

भिक्षुओ, श्रद्धा-सम्पदा किसे कहते है? भिक्षुओ! कुल-पुत्र श्रद्धावान् होता है, वह तथागत की वोधि (= ज्ञान-प्राप्ति) के प्रति श्रद्धावान् होता है वे भगवान् अर्हत् है . देव-मनुष्योंके सारथी वुद्ध भगवान हैं भिक्षुओ, इसे श्रद्धा-सम्पदा कहते है।

भिक्षुओ, शील-सम्पदा किसे कहते है? भिक्षुओ, कुल-पुत्र प्राणी हिंसासे विरत होता है सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओके सेवनसे विरत होता है। भिक्षुओ, इसे शील-सम्पदा कहते है।

भिक्षुओ, त्याग-सम्पदा किसे कहते है? भिक्षुओ, कुल-पुत्र मल-मात्सर्य रहित चित्तसे गृहवास करता है, त्यागी, खुले हाथवाला, दान-शील, याचको को देनेवाला, वाँटनेवाला। भिक्षुओ, इसे त्याग-सम्पदा कहते है।

भिक्षुओ, प्रज्ञा-सम्पदा किसे कहते है? भिक्षुओ, कुल-पुत्र प्रज्ञावान् होता है, उदयास्त सम्वन्धी, आर्य, वीधनेवाली, सम्यक् रूपसे दु खका क्षय करानेवाली प्रज्ञासे युक्त होता है। भिक्षुओ, इसे प्रज्ञा-सम्पदा कहते है। भिक्षुओ, ये आठ सम्पदाये है।

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा,
सम कप्पेति जीविक, सम्भत अनुरक्खति॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्च मग्ग विसोधेति, सोत्थान सम्परायिक॥
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स, घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ मुखावहा॥
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्पराय मुखाय च।
एवमेत गहट्ठान, चागो पुञ्ञ पवड्ढति॥

[अर्थ ऊपर आ ही गया है— अनु ।]

आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओको सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ।" उन भिक्षुओंने "आयुष्मान्" कह आयुष्मान् सारिपुत्र को प्रतिवचन दिया। आयुष्मान् सारिपुत्रने यह कहा—

"आयुष्मानो! ससारमे आठ तरहके लोग विद्यमान है। कौन-से आठ? आयुष्मानो! एक भिक्षु है जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्वन्धमें प्रयत्नशील है,

उसके मनमे (किसी वस्तुको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेके बावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। उस अप्राप्तिके कारण वह चिन्तित होता है, दुःखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, बेहोश तक हो जाता है। आयुष्मान् इसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न करना है, कोशिश करता है। उसे वह वह 'लाभ' नही मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

"आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्वन्धमे प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस लाभके कारण मदको, प्रमादको प्राप्त होता है। इसे कहते है —वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' मिलता है। इससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। वह सद्धर्म से 'च्युत' हो गया।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्वन्धमे प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। उस अप्राप्ति के कारण वह चिन्तित होता है, दुखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, बेहोश तक हो जाता है। आयुष्मानो, इसे कहते हैं— 'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिये न उठता है, न प्रयत्न करता है, और न कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नही मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्वन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह

वस्तु) मिल जाती है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। आयुष्मानो ! इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। किन्तु, वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसे वह 'लाभ' मिलता है। इससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

आयुष्मानो ! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमे प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर प्रयत्न करने, कोशिश करनेके बावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। उस अप्राप्तिके कारण, वह न चिन्तित होता है, न दुखी होता है, न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है और न बेहोश होता है। आयुष्मानो ! उसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नही मिलता है। वह न चिन्तित होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।

आयुष्मानो ! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करनेसे, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस 'लाभ' के कारण 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। आयुष्मानो ! इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' मिल जाता है। इससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। वह सद्धर्मसे 'च्युत' नही हुआ।

आयुष्मानो ! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नही होती। वह उस अप्राप्तिके कारण न चिन्तित होता है, न दुखी होता है, न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है, न बेहोश होता है। आयुष्मानो ! इसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिये न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नही मिलता। वह न चिन्तित

होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमे प्रयत्नशील है, उसके मनमे (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह वस्तु) मिल जाती है। उस 'लाभ' से वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। आयुष्मानो! इसे कहते है—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। किन्तु वह न उठता है, न प्रयत्न करता है और न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नही होता। वह सद्धर्मसे च्युत नही हुआ।

आयुष्मानो! ससारमे ये आठ तरहके लोग विद्यमान है।

आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओको सम्बोधित किया .आयुष्मानो! जिस भिक्षुमे ये छह बाते होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, और दूसरोका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी छह? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धि-सगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है, अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो, जिस भिक्षुमे ये छह बातें होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमे समर्थ होता है।

आयुष्मानो! जिस भिक्षुमे ये पाँच बाते होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है तथा दूसरोका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी पॉच बाते? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, हितकर प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये पाँच बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमे समर्थ होता है।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह अपना हित करनेमे

समर्थ होता है, किन्तु दूसरेका हित करनेमें समर्थ नही होता। कौन-सी चार बातें? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, किन्तु हितकर बोलने वाला नही होता, अपने साथियो प्रसन्न करनेवाला नही होता। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, किन्तु दूसरोका हित करनेमें समर्थ नही होता।

आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नही। कौन-सी चार बातें? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोका धारण करनेवाला होता है, किन्तु धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला नही होता, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला नही होता, हितकर • अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है, अपने साथियोको (रास्ता) दिखाने वाला प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नही।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये तीन बाते होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोका नही। कौन-सी तीन बातें? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, हितकर . बोलने-वाला नही होता, अपने प्रसन्न करने वाला नही होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती है, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोका नही।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये तीन बाते होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें समर्थ नही होता। कौन सी तीन बातें? आयुष्मानो, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोके अर्थ पर विचार करनेवाला नही होता, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला नही होता, हितकर, प्रिय अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला होता है, अपने साथियोको प्रसन्न करनेवाला होता है, आयुष्मानो, जिस भिक्षुमे ये तीन बातें होती है, वह दूसरोका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नही।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमे ये दो बाते होती है, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमे समर्थ नही होता। कौन-सी दो ? आयुष्मानो, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला नही होता, धारण किये हुए धर्मोके अर्थ पर विचार करने वाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला होता है , हितकर, प्रिय अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला नही होता, अपने साथियोको (रास्ता) दिखाने वाला प्रसन्न करने वाला नही होता। आयुष्मानो ! जिस भिक्षुमे ये दो बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमे समर्थ होता है, दूसरोका हित करनेमे समर्थ नही होता।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमे ये दो बातें होती है वह दूसरोका हित करनेमे समर्थ होता है, अपना हित करनेमे नही। कौन-सी दो बातें ? आयुष्मानो, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझने वाला नही होता, समझे हुए धर्मोको धारण करनेवाला नही होता , अथ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसर आचरण करनेवाला नही होता, हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धि-सगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला होता है. अपने साथियोको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो ! जिस भिक्षुमे ये दो बाते होती है, वह दूसरोका हित करनेमे समर्थ होता है, अपना नही।

भिक्षुओ, आठ बाते शैक्ष भिक्षुको पतनोन्मुख बताती है। कौन-सी आठ ? दुनियाके काम-काज मे लगे रहना, बातचीतमे लगे रहना, सोते रहना, मण्डली-प्रेम, इन्द्रियोका असयम, भोजनमे मात्रज्ञ न होना, ससर्ग-प्रियता तथा प्रपचमे लगे रहना। भिक्षुओ, ये आठ बाते शैक्ष भिक्षु को पतनोन्मुख बनाती है।

भिक्षुओ, ये आठ बाते शैक्ष भिक्षुको पतनोन्मुख नही बनाती। कौन-सी आठ ? दुनियाके काम-काजमें न लगे रहना, बातचीतमें न लगे रहना, सोते न रहना, मण्डली-प्रेमका न होना, इन्द्रियोका सयम, भोजन में मात्रज्ञ होना, ससर्ग-प्रियताका न होना तथा प्रपचमे न लगे रहना। भिक्षुओ, ये आठ बातें शैक्ष भिक्षुको पतनोन्मुख नही बनाती।

भिक्षुओ, ये आठ आलस्य-वार्तायें हैं। कौन-सी आठ ? भिक्षुओ, भिक्षुको कुछ काम करना होता है। वह सोचता है—'मुझे काम करना होगा। काम करनेसे शरीर क्लान्त होगा। मैं लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त की प्राप्तिके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतका साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह पहली आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, भिक्षुने कुछ काम किया होता है। वह सोचता है–'मैंने काम किया है। काम करनेसे शरीर क्लान्त हो गया है। मै लेट जाऊँ'। वह लेट जाता है। वह अप्राप्तकी प्राप्तिके लिये, ला-हासिल को हासिल करनेके लिए, असाक्षात्कृतका साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह दूसरी आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, फिर भिक्षुको रास्ता चलना होता है। वह सोचता है–'मुझे रास्ता चलना होगा। रास्ता चलनेसे मेरा शरीर क्लान्त होगा। मै लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त की प्राप्तिके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृत को साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह तीसरी आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, भिक्षु द्वारा रास्ता चला गया होता है। वह सोचता है—'मैं रास्ता चला हूँ। रास्ता चलनेसे मेरा शरीर क्लान्त हो गया है। मै लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त की प्राप्ति के लिये, ला-हासिल को हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतका साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह चौथी आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमें या निगममे भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नही मिला। वह सोचता है–'मुझे गाँवमे या निगममें भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामे नही मिला। मेरा शरीर क्लान्त हो गया है, काम करने योग्य नही है। मै लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त ... प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह पाँचवी आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामे मिला। वह सोचता है–'मुझे गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामे मिला। मेरा शरीर क्लान्त हो गया है, काम करने योग्य नही है। मै लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त ... प्रयत्न नही करता भिक्षुओ, यह छठी आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको कोई मामूली बीमारी होती है। वह सोचता है—"मुझे यह मामूली बीमारी हुई है। मेरा लेटना योग्य है। मै लेटता हूँ। वह लेट जाता है। वह अप्राप्त ... प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह सातवीं आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको रोग-शय्यासे उठे थोडा ही समय हुआ होता है।

वह सोचता है—'मुझे रोग-शय्यासे उठे थोडा ही समय हुआ है। मेरा शरीर दुर्वल है, काम करनेके योग्य नहीं है। मै लेटता हूँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त प्रयत्न नही करता। भिक्षुओ, यह आठवी आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, ये आठ उत्साह-वार्तायें है। कौन-सी आठ? भिक्षुओ, भिक्षुको कुछ काम करना होता है। वह सोचता है—मुझे काम करना होगा। किन्तु काम-धाम करते समय मेरे लिये वुद्धोके अनुशासनकी ओर ध्यान देना सहज न होगा। इस-लिए मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये तथा असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिये तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करूँ। वह अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न आरम्भ करता है। भिक्षुओ, यह प्रथम उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, जो भिक्षु कुछ काम किए होता है। वह सोचता है– मैंने काम-धाम किया। किन्तु काम-धाम करते समय मैं वुद्धोके अनुशासनकी ओर ध्यान न दे सका। इसलिये मै अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिए असाक्षातकृतको साक्षात करनेके लिए प्रयत्न आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह दूसरी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको रास्ता चलना होता है। वह सोचता है—मुझे रास्ता तय करना होगा। रास्ता चलते समय वुद्धोके शासनकी ओर ध्यान दे सकना सहज नही। मै अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिए आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह तीसरी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु रास्ता चला होता है। वह सोचता है—मैंने रास्ता तय किया है। रास्ता तय करते समय मैं वुद्धोके शासनकी ओर ध्यान दे सकनेमे असमर्थ रहा हूँ। अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ,यह चौथी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमे या निगममें भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नही मिला। उसके मनमें होता है—मुझे गाँव या निगममें भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नही मिला। इसके कारण मेरा शरीर हल्का है, काम करने योग्य है। मैं अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह पाँचवी उत्साह-वार्ता है।

"फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमे या निगममे भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें मिलता है। वह सोचता है—मुझे गाँव या निगममें भिक्षाटन करते समय वढिया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामे मिला है।

इसलिए मेरा शरीर बलवान् है, कामके योग्य है। मैं अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये

आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह छठी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको कोई मामूली बीमारी होती है। वह सोचता है—मुझे यह मामूली बीमारी हुई है। इसकी सम्भावना है कि मेरा यह रोग बढ भी जाय। इसलिये मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिये तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह सातवी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको रोग-शय्यासे उठे थोडा ही समय हुआ होता है। वह सोचता है—मुझे रोग शय्यासे उठे थोडा ही समय हुआ है। लेकिन इसकी सम्भावना है कि मेरा यह रोग पुन लौट आये। इसलिये मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिए तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करता हूँ। वह अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिए, असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिए तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करता है। भिक्षुओ, यह आठवी उत्साह-वार्ता है।

भिक्षुओ, ये आठ उत्साह-वार्तायें है।

९ स्मृति-वर्ग

भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्यके न रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य विहीन व्यक्तिकी लज्जा और (पाप कर्मसे) भयकी सम्भावना जाती रहती है। लज्जा और (पाप-कर्मसे) भयके न रहने पर लज्जा और पाप-भीरुता से रहित व्यक्तिकी इन्द्रिय-सवर की सभावना भी जाती रहती है। इन्द्रिय-सवरके न रहने पर, इन्द्रिय-सवर रहित व्यक्तिकी शीलकी सभावना भी जाती रहती है। शीलके न रहने पर, शील-विरहित व्यक्तिकी सम्यक् समाधि की सभावना भी जाती रहती है। सम्यक् समाधिके न रहने पर, सम्यक् समाधि-विरहित व्यक्तिकी यथार्थ ज्ञान-दर्शन की सभावना भी जाती रहती है। यथार्थ ज्ञान-दर्शनके न रहने पर यथार्थ-ज्ञान-दर्शन विरहित व्यक्तिकी निर्वेद-वैराग्यकी सभावना भी जाती रहती है। निर्वेद-वैराग्यके न रहने पर, निर्वेद-वैराग्य विरहित व्यक्तिकी विमुक्ति ज्ञान-दर्शन की सभावना भी जाती रहती है।

भिक्षुओ, जैसे शाखा और पत्तोसे विहीन वृक्ष की पपडी भी ठीक नही होती, त्वचा भी नही, फेगु (=फल्गु) भी नही तथा सार भी नही। इसी प्रकार भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्यके न रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य विहीन व्यक्ति की लज्जा और (पाप-कर्मसे) भयकी सम्भावना भी जाती रहती है। लज्जा और भयके न रहने पर . . . विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन की सम्भावना भी जाती रहती है।

भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्यके रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त व्यक्तिकी लज्जा और पाप-भीरुताकी सम्भावना वनी रहती है। लज्जा और पाप-भीरुताके रहने पर, लज्जा और पाप-भीरुता युक्त व्यक्तिकी इन्द्रिय-सयमकी सभावना वनी रहती है। इन्द्रिय-सयमके रहने पर, इन्द्रिय सयम-युक्त व्यक्तिके शीलकी सभावना बनी रहती रहती है। शीलके रहने पर, शील-युक्त व्यक्तिकी सम्यक् समाधिकी सभावना बनी रहती है। सम्यक् समाधिके रहने पर, सम्यक् समाधि-युक्त व्यक्तिकी यथार्थ ज्ञान-दर्शनकी सभावना वनी रहती है। यथार्थ ज्ञान-दर्शनके रहने पर, यथार्थ ज्ञान-दर्शन युक्त व्यक्तिकी निर्वेद-वैराग्यकी सभावना वनी रहती है। निर्वेद-वैराग्यके रहने पर निर्वेद-वैराग्य युक्त व्यक्तिकी विमुक्ति ज्ञान-दर्शनकी सभावना वनी रहती है।

भिक्षुओ, जैसे शाखा और पत्तोसे सहित वृक्ष की पपडी भी ठीक रहती है, त्वचा भी, फेग्गु (= फलगु) भी तथा सार भी। इसी प्रकार भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्य के रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य-युक्त व्यक्तिकी लज्जा और पाप-भीरुता की सभावना वनी रहती है। लज्जा और पाप-भीरुताके रहने पर विमुक्ति ज्ञान-दर्शनकी सभावना बनी रहती है।

तव आयुष्मान् पुण्णिय जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर वैठे। एक ओर वैठे आयुष्मान् पुण्णियने भगवान्से यह निवेदन किया—"भन्ते! क्या हेतु है, क्या कारण है कि कभी तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित होती है, कभी प्रवर्तित नही होती है?"

"हे पुण्णिय! यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, लेकिन (तथागतके) समीप न आये, तो तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित नही होती। पुण्णिय! जब भिक्षु श्रद्धावान् होता है और तथागतके समीप आता है, तब तथागतकी देशना प्रवर्तित होती है। पुण्णिय, भिक्षु श्रद्धावान् हो, समीप आनेवाला भी हो, किन्तु आश्रममें रहनेवाला न हो आश्रममें रहने वाला हो, किन्तु जिज्ञासा न हो जिज्ञासा हो, किन्तु ध्यानसे सुनता न हो ध्यानसे सुनता हो, किन्तु सुनकर (मनमें) धारण न करता हो सुनकर (मनमे) धारण करता हो, किन्तु धारण किये हुए धर्मोके अर्थ पर विचार न करता हो धारण किये हुए धर्मोके अर्थ पर विचार करता हो, किन्तु अर्थ तथा धर्मको जानकर तदनुसार आचरण न करता हो—ऐसी हालतमे तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित नही होती।

पुण्णिय, जव भिक्षु श्रद्धावान् होता है, समीप आता है, सेवामे रहता है, प्रश्न करता है, ध्यानसे सुनता है, सुने हुए धर्मको धारण करता है, धारण किए हुए

धर्मोके अर्थपर विचार करता है तथा अर्थ और धर्मको जानकर धर्मानुसार आचरण करता है, तब तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित होती है। पुण्णिय! इस प्रकार तथागत की धर्म-देशना इन आठ बातोंके होनेसे निश्चय रूपसे प्रतिवर्तित (=प्रतिभाषित) होती है।

भिक्षुओ, यदि दूसरे मतोंके परिव्राजक प्रश्न करें—आयुष्मानो! सभी (संस्कृत-) धर्मोंका मूल क्या है? सभी धर्मोकी उत्पत्ति क्या है? सभी धर्मोंका उदय कहाँसे होता है,? सभी धर्म कहाँ एकत्र होते हैं? सभी धर्मोंमें प्रमुख क्या है? सभी धर्मोंमें अधिपति क्या है? सभी धर्मोंमे श्रेष्ठतम क्या है? सभी धर्मोंका सार क्या है?—तो इस प्रकार पूछे जानेपर तुम दूसरे मतोंके परिव्राजकोंको क्या उत्तर दोगे!

"भन्ते! हमारे धर्म-ज्ञानका मूल आप भगवान् ही है, भगवान् ही हमारे नेता है, हम भगवान्की ही शरण हैं। भन्ते! अच्छा हो यदि भगवान् ही इस कथनकी व्याख्या कर दें। भगवान् से सुनकर भिक्षु ग्रहण करेंगे।"

"तो भिक्षुओ, देशना करता हूँ। ध्यानसे सुनो। कहता हूँ।"

"भन्ते! बहुत अच्छा" कह उन भिक्षुओंने भगवान्को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा —भिक्षुओं! यदि दूसरे मतोंके परिव्राजक ऐसे प्रश्न करे कि सभी (संस्कृत-) धर्मोंका मूल क्या है? सभी धर्मोंकी उत्पत्ति क्या है? सभी धर्मोंका उदय कहाँसे होता है? सभी धर्म कहाँ एकत्र होते है? सभी धर्मोंमें प्रमुख क्या है? सभी धर्मोंका अभिप्राय क्या है? सभी धर्मोंमें श्रेष्ठतम क्या है? सभी धर्मोंका सार क्या है?—तो इस प्रकार पूछे जाने पर, तुम दूसरे मतोंके साधुओंको इस प्रकार उत्तर दे सकते हो—आयुष्मानो! सभी धर्मोंका मूल छन्द (=संकल्प) है। सभी धर्म स्पर्शसे उत्पन्न होते हैं। सभी धर्मोंका उदय स्पर्शसे होता है। सभी धर्म तीनों प्रकारकी वेदना में एकत्र होते है। सभी धर्मोंमें समाधि प्रमुख है। सभी धर्मोंमें स्मृति अधिपति (=प्रधान) है। सभी धर्मोंमें प्रज्ञा श्रेष्ठतम है। सभी धर्मोंमे सार वस्तु विमुक्ति है। भिक्षुओ, यदि तुमसे दूसरे मतोंके परिव्राजक पूछें तो तुम उन्हें इस प्रकार उत्तर दे सकते हो।

भिक्षुओ, जिन महाचोरोंमें ये आठ बातें होती है, वह शीघ्र ही समाप्त हो जाता है, चिरस्थायी नहीं होता। कौन-सी आठ? आक्रमण न करने वालेपर आक्रमण करता है, सर्वस्व छीन लेता है, स्त्रियोंकी हत्या कर डालता है, तरुणियोंको भ्रष्ट करता है, प्रव्रजित को लूटता है, राज-कोषको लूटता है, अति समीप ही (चोर-) कर्म करता है तथा चोरीके सामानको सम्हाल कर रखनेमे कुशल नहीं होता। भिक्षुओ,

जिस महाचोरमे ये आठ बाते होती है, वह शीघ्र ही समाप्त हो जाता है, चिरस्थायी नही होता।

भिक्षुओ, जिस महाचोरमे ये आठ बाते होती है, वह शीघ्र ही समाप्त नही होता, चिरस्थायी होता है। कौन-सी आठ ? आक्रमण न करने वाले पर आक्रमण नही करता, सर्वस्व नही छीनता, स्त्रियोकी हत्या नही करता, कुमारियोको भ्रष्ट नही करता, प्रव्रजितोको नही लूटता, राज-कोषको नही लूटता, अति समीप ही (चौर-) कर्म नही करता तथा चोरीके सामानको सम्हाल कर रखनेमें समर्थ होता है। भिक्षुओ, जिस महाचोरमे ये आठ बाते होती है, वह शीघ्र ही समाप्त नही होता, चिरस्थायी होता है।

भिक्षुओ 'श्रमण' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका ही पर्याय है। भिक्षुओ, 'ब्राह्मण' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'वेदगू' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'भिषक्' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'निर्मल' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'विमल' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'ज्ञानी' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'विमुक्त' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है।

य समणेन पत्तब्ब, ब्राह्मणेन वुसीमता।
ये वेदगुना पत्तव्व, भिसक्केन अनुत्तर॥
य निम्मलेन पत्तव्व, विमलेन सुचीमता।
य ञाणिना च पत्तव्व विमुत्तेन अनुत्तर॥
सोह !विजितसगामो, मुत्तो मोचेमि वन्धना।
नागोम्हि परमदन्तो, असेखो परिनिब्बुतो॥

[जो श्रमणका प्राप्य है, जो वशी ब्राह्मणका प्राप्य है, जो वेदगूका प्राप्य है, जो भिषक्का प्राप्य है, जो निर्मल का प्राप्य है, जो पवित्र विमलका प्राप्य है, जो ज्ञानीका प्राप्य है तथा जो अनुपम पद विमुक्त द्वारा प्राप्य है, उसे सग्राम-विजयी, मुक्त मैने प्राप्त कर लिया है। मै परम-दन्त नाग, अशैक्ष हूँ और परिनिर्वाण प्राप्त हूँ। मै दूसरोको बन्धन मुक्त करता हूँ।]

एक समय महान् भिक्षु सघके साथ भगवान् कोशल जनपदमे चारिका करते हुए जहाँ कोशल (जनपद) का इच्छानगल नामक ब्राह्मण-ग्राम था, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान इच्छानगलके वन-खण्डमें विहार करते थे। इच्छानगलके

ब्राह्मण-गृहपतियोने सुना कि शाक्य-कुल प्रव्रजित शाक्य-पुत्र श्रमण गौतम इच्छानगल पधारे हैं और इच्छानगलके वन-खण्डमें विहार कर रहे है। उन भगवान् गौतमका इस प्रकारका यश, इस प्रकारकी कीर्ति सुनाई देती है कि वे भगवान अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं . ऐसे अर्हतोंका दर्शन करना अच्छा होता है।"

तव इच्छानगलके ब्राह्मण-गृहपति उस रातके वीत जानेपर, वहुत-सी खाद्य-भोज्य सामग्री ले, जहाँ इच्छानगल वन-खण्ड था, वहाँ पहुँचे। जाकर हल्ला करते हुए, शोर मचाते हुए दरवाजे वाले प्रकोष्ठके बाहर खडे हुए। उस समय आयुष्मान् नागित भगवानके उपस्थापक (= सेवक) थे। तव भगवानने आयुष्मान् नागितको सम्बोधित किया—"नागित! ये कौन हैं जो इतना हल्ला मचा रहे है, इतना शोर मचा रहे है, मानो मछवे मछलियोंके लिये लेन-देन कर रहे है।

भन्ते! ये इच्छानगलके ब्राह्मण-गृहपति है जो आपके तथा भिक्षु-सघके लिये वहुत-सी खाद्य-भोज्य सामग्री लेकर आये है और दरवाजे वाले कोठेके बाहर खडे हैं।"

"नागित! मुझे ऐश्वर्य (= यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रखो। नागित! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख, तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मात्रामे प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, वहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवाछित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशसा रूपी सुखका स्वागत करे।"

"भगवान्! इस समय इसे स्वीकार करें, सुगत! इस समय इसे ग्रहण करे। भन्ते! यह आपके इसे सहन करनेका समय है। भन्ते! अब आप जिस-जिस ओर भी पधारेंगे, उस-उस ओरके ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकी ओर झुक जायेंगे। जिस प्रकार मूसलाधार वर्षाके होनेपर, जिधर ढलान होता है, पानी उधर ही वह जाता है, इसी प्रकार आप जिस-जिस ओर भी पधारेंगे, उस-उस ओर ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकी ओर झुक जायेंगे। ऐसा किसलिये? भगवान आपका शील तथा प्रज्ञा ऐसी ही है।"

"नागित! मुझे ऐश्वर्य (= यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रहने दो। नागित! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मात्रामें प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, वहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवाछित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशसा रूपी सुखका स्वागत करे।

"नागित ! कोई-कोई देवता भी इस निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुखसे वचित है। वह उन्हे इतनी प्रचुर मात्रामें, सरलतासे, वहुलतासे प्राप्त नही है, जिस प्रचुर मात्रामे, जिस सरलतासे, जिस वहुलतासे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुख मुझे प्राप्त है। नागित ! मण्डलीमें विचरण करनेवाले तुम्हारे मनमे भी ऐसा होता है—निश्चयसे आयुष्मानोने इस निस्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुखको प्रचुर मात्रामें, सरलता-से, वहुलतासे प्राप्त नही किया है। इसीलिए यह आयुष्मान् एक जगह एकत्र हो, मण्डलीमें विहार करते है।

"नागित ! मै यहाँ भिक्षुओको देखता हूँ जो परस्पर एक दूसरेको उँगली गडा-गडाकर, हँसी-मजाक कर खेलते है। नागित ! तव मेरे मनमे होता है—निश्चयसे ये आयुष्मान् इस निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुखके इस प्रचुर मात्रामे, सरलतासे, वहुलतासे लाभी नही है, जिस प्रचुर मात्रामे, सरलतासे, वहुलतासे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुख मुझे प्राप्य है। इसीलिये ये आयुष्मान् परस्पर एक दूसरेको उँगली गडा-गडाकर रगड-रगडकर खेलते है।

"नागित ! मै यहाँ भिक्षुओको देखता हूँ कि पेट भर खाकर, भोजन कर, शय्या-सुख, लेटनेका सुख तथा आलस्यके सुखका अनुभव करते है। नागित ! तव मेरे मनमे होता है—निश्चयसे ये आयुष्मान् इस निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुखके इस प्रचुर मात्रामे, सरलता से, वहुलतासे लाभी नही है, जिस प्रचुर मात्रामे, सरलतासे, वहुलतासे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख शान्ति-सुख तथा सम्वोधि-सुख मुझे प्राप्य है। इसीलिये ये आयुष्मान् पेट भर भोजन कर, शय्या-सुख, लेटनेके सुख तथा आलस्यके सुखका अनुभव करते है।

"नागित ! मै एक भिक्षुको देखता हूँ जो ग्रामकी सीमापर एकाग्र-चित्त वैठा होता है। तव नागित ! मेरे मनमें होता है कि अव विहारमे रहनेवाला भिक्षु या श्रमण वननेकी प्रतीक्षा करनेवाला इस आयुष्मान्के पास आयेगा और इसके चित्तकी एकाग्रताको नष्ट कर देगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे ग्रामकी सीमा परके विहरणसे मै सन्तुष्ट नही होता।

नागित ! मै एक भिक्षुको देखता हूँ जो जगलमे वैठा ऊँघ रहा है। उस समय नागित ! मेरे मनमे यह होता है—अव यह आयुष्मान् इस निद्रा-तन्द्राको

जीत कर एकान्त आरण्य-वासका ही ध्यान करेगा। हे नागित! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरण से मैं प्रसन्न होता हूँ।

नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो जगलमे अस्थिर चित्त बैठा है। उस समय नागित! मेरे मनमे यह होता है—अब यह आयुष्मान् (अपने) अस्थिर चित्तको स्थिर करेगा अथवा स्थिर-चित्तको स्थिर बनाये रखेगा। हे नागित! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मैं प्रसन्न होता हूँ।

नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो गाँवकी सीमा पर रहता है। उसे चीवर, पिण्डपात (=भोजन) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य-परिष्कार आदिकी प्राप्ति होती है। वह इस लाभ-सत्कारकी कामनासे ध्यान-मार्गका त्याग करता है, आरण्यवासके एकान्त-जीवनका त्याग करता है, ग्राम-निगम-राजधानियोमें आकर रहने लग जाता है। नागित! मै ऐसे भिक्षुके इस गाँवकी सीमापर रहनेसे प्रसन्न नही होता।

नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो आरण्यमें रहता है। उसे चीवर, पिण्डपात (=भोजन) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य-परिष्कार आदिकी प्राप्ति होती है। वह इस लाभ-सत्कारकी उपेक्षा कर ध्यान-मार्गका त्याग नही करता आरण्यवासके एकान्त-जीवनका त्याग नही करता। नागित! मैं उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे प्रसन्न होता हूँ।

"नागित! जब मै रास्ते चलता हूँ और मुझे आगे-पीछे कोई नही दिखाई देता, तो मुझे अच्छा लगता है, यदि और किसी दृष्टिसे नही तो कम-से-कम मल-मूत्र त्यागनेकी सुविधा होनेकी दृष्टिसे ही।

भिक्षुओ, जिस उपासकमें ये आठ दुर्गुण हो, यदि सघ इच्छा करे तो उसके विरुद्ध अपना (भिक्षा-) पात्र ढक दे।[1] कौनसे आठ? वह भिक्षुओको हानि पहुँचानेका प्रयास करता है, वह भिक्षुओका अहित करनेका प्रयास करता है, वह भिक्षुओ-को उनके निवास-स्थानोंसे हटानेका प्रयास करता है, भिक्षुओंको गाली देता है, मजाक करता है, भिक्षुओ-भिक्षुओंमे झगडा लगाता है, बुद्धकी निन्दा करता है, धर्मकी निन्दा करता है तथा सघकी निन्दा करता है। भिक्षुओ, जिस उपासकमें ये आठ दुर्गुण हो, यदि सघ इच्छा करे, तो उसके विरुद्ध अपना (भिक्षा-) पात्र ढक दे।

---

[1] किसी गृहस्थ द्वारा दी जानेवाली भिक्षाको न स्वीकार करना उसका सामूहिक बहिष्कार है।

भिक्षुओ, जिस उपासकमे ये आठ सद्गुण हो, यदि सघ इच्छा करे तो उसके प्रति अपना (भिक्षा–) पात्र खुला कर दे। कौनसे आठ ? वह भिक्षुओको हानि पहुँचानेका प्रयास नही करता, वह भिक्षुओका अहित करनेका प्रयास नही करता, वह भिक्षुओको उनके निवास-स्थानोसे हटानेका प्रयास नही करता, वह भिक्षुओको गाली नही देता, मजाक नही करता, वह भिक्षुओ-भिक्षुओमे झगडा नही लगाता, वह बुद्धकी, धर्मकी, सघकी निन्दा नही करता। भिक्षुओ, जिस उपासकमे ये आठ सद्गुण हो, यदि सघ इच्छा करे तो उसके प्रति अपना (भिक्षा–) पात्र खुला कर दे।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ दुर्गुण हो, यदि उपासक चाहे तो उसके विरुद्ध अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर सकते है। कौनसे आठ ? वह गृहस्थोको हानि (= अलाभ) पहुँचानेका प्रयास करता है, वह गृहस्थोका अहित करनेका प्रयास करता है, वह गृहस्थोको उनके स्थानोसे हटानेका प्रयास करता है, वह गृहस्थोको गाली देता है—उपहास करता है, वह गृहस्थो-गृहस्थोमे झगडा लगानेका प्रयास करता है, वह बुद्ध, धर्म तथा सघकी निन्दा करता है तथा वह अयोग्य स्थानोमें विचरता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ दुर्गुण हो, यदि उपासक चाहे तो उसके विरुद्ध अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर सकते है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ सद्गुण हो, यदि उपासक चाहे, तो उसके प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट कर सकते है। कौनसे आठ ? वह गृहस्थोको हानि पहुँचानेका प्रयास नही करता है, वह गृहस्थोका अहित करनेका प्रयास नही करता है, वह गृहस्थोको उनके स्थानसे हटानेका प्रयास नही करता है, वह गृहस्थोको न गाली देता—न हँसी उडाता है, वह गृहस्थो-गृहस्थोमे झगडा लगानेका प्रयास नही करता, वह बुद्ध, धर्म तथा सघकी निन्दा नही करता तथा वह अयोग्य स्थानोमें नही विचरता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ सद्गुण हो, यदि उपासक चाहे तो उसके प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट कर सकते है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ दुर्गुण हो, यदि सघ चाहे तो उसे प्रति-स्मरणीय-कर्म करे। कौन-से आठ ? गृहस्थोको हानि पहुँचानेका प्रयास करता है, गृहस्थोका अहित करनेका प्रयास करता है, गृहस्थोको गाली देता है—उपहास करता है, गृहस्थो-गृहस्थोमे झगडा लगाता है, बुद्ध, धर्म तथा सघकी निन्दा करता है, धार्मिक गृहस्थके प्रति-वचनका विश्वास नही करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ दुर्गुण हो, यदि सघ चाहे तो उसे प्रति-स्मरणीय कर्म[1] करे।

---

१ भिक्षुको दिया जाने वाला एक प्रकार का दण्ड-कर्म।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमे ये आठ सद्‌गुण हो, यदि सघ चाहे तो उसके प्रति किये गये प्रति-स्मरणीय कर्मको वापस ले ले। कौन-से आठ? - वह गृहस्थोको हानि पहुँचानेका प्रयास नही करता है, वह गृहस्थोका अहित करनेका प्रयास नही करता है, वह गृहस्थोको उनके स्थानसे हटानेका प्रयास नही करता है, वह गृहस्थोको न गाली देता है—न हँसी उडाता है, वह गृहस्थो-गृहस्थोमें झगडा लगानेका प्रयास नही करता है, वह बुद्ध, धर्म तथा सघकी निन्दा नही करता है, वह धार्मिक गृहस्थके प्रति-वचनका विश्वास करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ सद्‌गुण हो, यदि सघ चाहे तो उसके प्रति किये गये प्रति-स्मरणीय-कर्मको वापस ले ले।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुके विरुद्ध तस्सपापियसिक दण्ड-कर्मकी घोषणा हुई हो, उसे इन आठ विषयोमें सम्यक् व्यवहार करना चाहिये—उसे किसी दूसरे भिक्षुको उपसम्पन्न नही करना चाहिये, उसे किसी दूसरे भिक्षुको आश्रय (= निश्रय) नही देना चाहिये, उसे किसी श्रामणेर के द्वारा की गई सेवा नही स्वीकार करनी चाहिये, उसे भिक्षुणियोको उपदेश देनेका 'भार' नही स्वीकार करना चाहिये, 'भार' लाद भी दिया जाय तो भी उसे भिक्षुणियोंको उपदेश नही देना चाहिये, संघ-सम्मति (= प्रस्ताव)को अगीकार नही करना चाहिये, उसे किसी प्रमुख स्थानपर नही बैठना चाहिये, उस की प्रधानतामें कोई कार्य नही होना चाहिये। भिक्षुओ, जिस भिक्षु के विरुद्ध तस्सपापियसिक दण्ड-कर्मकी घोषणा हुई हो, उसे आठ विषयोमें सम्यक् व्यवहार करना चाहिये।

१० श्रामण्य-वर्ग

[१–२६]

तत्र बोज्झा उपासिका, सिरीमा, पदुमा, सुतना, मनुजा, उत्तरा, मुत्ता, खेमा, रुची, चुन्दी, बिम्बी, सुमना, मल्लिका, तिस्सा, तिस्समाता, सोणा, सोणाय माता, काणा, काणमाता, उत्तरा नन्दमाता, विसाखा मिगारमाता, खुज्जुत्तरा उपासिका, सामावती उपासिका, सुप्पवासा कोलियधीता, सुप्पिया उपासिका, नकुलमाता गहपतानि।

[यहाँ इन सबके अष्ट शील-ग्रहण करनेका ही वर्णन है—अट्ठकथा।]

भिक्षुओ, रागको जाननेके लिए आठ धर्मोका अभ्यास करना चाहिये। कौन-से आठ? सम्यक्-दृष्टि, सम्यक् सकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि। भिक्षुओ, रागको जाननेके के लिये इन आठ धर्मोका अभ्यास (= भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागको जाननेके लिए आठ धर्मोका अभ्यास (= भावना) करना चाहिये। कौनसे आठ? स्वय रूप सज्ञा (= रूप परिकर्म) वाला होकर बाहर सीमित सुवर्ण, दुर्वर्ण रूपोको ध्यानका विषय (= निमित्त) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै इन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। स्वय 'रूप'

सञ्ज्ञावाला होकर वाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। अपने मे अरूप-सञ्ज्ञावाला होकर, वह वाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। अपनेमे अरूप-सञ्ज्ञा वाला होकर वाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। अपनेमें अरूप सञ्ज्ञा होकर वाहर नीले, नीले वर्णके, नीले रगके, नीली शक्लके रूपोको देखता है पीले, पीले वर्णके लाल, लालवर्णके सफेद, सफेद वर्णके, सफेद रगके सफेद शक्लके रूपोको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मै उन रूपोको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। भिक्षुओ रागके जाननेके लिये इन आठ धर्मोका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागकी पहचानके लिये इन आठ धर्मोका अभ्यास करना चाहिये। किन आठ धर्मोका? रूपवान् रूपोको देखता है। अपने अरूप सञ्ज्ञा वाला होकर, वाहर रूप देखता है। वह मैत्री-भाव आदि शुभ-भावनाओकी भावना करके मोक्ष लाभ करता है। वह सव रूप-सञ्ज्ञाओको पार कर, प्रतिघ सञ्ज्ञाओको अस्तकर, नानात्व सञ्ज्ञाको मनसे निकाल, 'आकाश अनत है' करके 'आकाशान्न-त्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। सव आकाश सञ्ज्ञाओको पार कर, 'विज्ञान अनत है' करके 'विज्ञाना-नन्त्यायतनको प्राप्त हो विचरता है। सव विज्ञानानन्त्यायतनको पार कर 'कुछ नही' है' करके 'आकिचन्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। सव 'आकिचन्यायतन को पार कर नेवसञ्ज्ञा-न-असञ्ज्ञायतन' को प्राप्त हो विचरता है। सव 'नेवसञ्ज्ञा-न-असञ्ज्ञा-आयतन' को पारकर सञ्ज्ञा-वेदनाके निरोधको प्राप्त हो विचरता है। भिक्षुओ, रागकी पहचान (=अभिञ्ञा) के लिये इन आठ धर्मोका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागके परिज्ञानके लिये परिक्षयके लिये प्रहाणके लिये क्षयके लिये व्ययके लिये वैराग्यके लिये निरोधके के लिये त्यागके लिये प्रतिनिसर्ग (परित्याग) के लिये इन आठ धर्मोका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ द्वेष (=दोष)के मोहके क्रोधके उपनाह (=शत्रुता)के मक्ष (=डाह) के प्लास (=निर्दयता)के ईर्ष्याके मात्सर्यके मायाके शठताके धर्म (=ऊष्णता) के सारम्भ (=कलह) के मानके अतिमानके मदके प्रमादके अभिज्ञानके लिये परिज्ञानके लिये परिक्षयके लिये प्रहाण के लिये क्षयके लिये व्ययके लिये वैराग्यके लिये निरोधके लिये त्यागके लिये परित्यागके लिये इन आठ धर्मोका अभ्यास करना चाहिये।